पत्थाना

तिपिटक >> अभिधम्म पिटक >> **पत्तन**

अंतर्वस्तु

पत्थाना
(संबंधों की पुस्तक)
यह अभिधम्म की अंतिम (सातवीं) पुस्तक है। यह पुस्तक कारण-कार्य संबंधों का विस्तृत अध्ययन है, जिसमें धम्मसंगनी की मतिका (तालिका) में दिए गए वर्गीकरणों के संदर्भ में 24 प्रकार के संबंधों का विश्लेषण किया गया है।

पाली संस्करण: पथन-पाली-अंग्रेजी-संस्करण और पथन-पाली-देवनागरी-संस्करण

यहां पत्थाना के दो संस्करण प्रस्तुत किए गए हैं:

संस्करण 1 - पथानुद्देसा दिपानी
महाथेरा लेदी सयाडॉ द्वारा और अनुवाद सयाडॉ यू न्याना द्वारा

संस्करण 2 - पट्टाना धम्म

हटू नाइंग द्वारा

तिपिटक >> अभिधम्म पिटक >> पत्तन >> **परिचय-पत्थनुद्देस दिपनि**

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

प्रस्तावना

'पत्थाना' शब्द का अर्थ "पधानं थानं ति पत्थानां" से जाना जाता है: पत्थाना सर्वोत्कृष्ट या प्रमुख कारण है। इस परिभाषा में 'पधान' का अर्थ 'सर्वोत्कृष्ट' और 'थान' का अर्थ 'स्थिति' या 'कारण' है। अतः संपूर्ण अभिव्यक्ति का अर्थ "सर्वोत्कृष्ट कारण", "वास्तविक कारण" या "अपरिहार्य कारण" है। यह इसके अपरिहार्य प्रभाव या परिणाम के संदर्भ में कहा गया है।[33] प्रभाव दो प्रकार के होते हैं, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष। "प्रत्यक्ष" से तात्पर्य प्राथमिक या वास्तविक प्रभाव से है, और "अप्रत्यक्ष" से तात्पर्य परिणामी या आकस्मिक प्रभाव से है। इन दोनों प्रकारों में से, केवल प्रत्यक्ष प्रभाव को ही यहाँ अपरिहार्य कहा गया है, और इसका कारण यह है कि जब इसका उचित कारण स्थापित हो जाता है या क्रियाशील हो जाता है, तो यह अनिवार्य रूप से उत्पन्न होता है। और अप्रत्यक्ष प्रभाव को "अपरिहार्य" समझा जाना चाहिए, क्योंकि यह अपने कारण के पूर्ण रूप से स्थापित होने पर भी उत्पन्न हो सकता है या नहीं भी हो सकता है। अत: अपरिहार्य कारण को अपरिहार्य परिणाम के संदर्भ में यह नाम दिया गया है। अतः इस "महान ग्रंथ" में केवल अपरिहार्य या मुख्य कारण की ही व्याख्या की जानी है। इसी कारण चौबीस संबंधों के संपूर्ण संग्रह और "महान ग्रंथ" को 'पत्थाना' नाम दिया गया है।

अब, इस विषय को और अधिक स्पष्ट और सरल बनाने के लिए:

मान लीजिए कि धन और अनाज प्राप्त करने की इच्छा से एक व्यक्ति के मन में लोभ उत्पन्न होता है। लोभ के प्रभाव में आकर वह एक जंगल में जाता है, जहाँ वह एक ज़मीन साफ़ करके खेत, आँगन और बगीचे बनाता है और कड़ी मेहनत करने लगता है। अंततः अपनी मेहनत के फलस्वरूप वह प्रचुर धन और अनाज प्राप्त करता है। वह अपनी कमाई से अपने परिवार का पालन-पोषण करता है और अनेक पुण्य कर्म करता है, जिनका फल उसे भविष्य में भी मिलेगा। इस उदाहरण में, लोभ के साथ विद्यमान सभी मानसिक और भौतिक अवस्थाओं को प्रत्यक्ष फल कहा जाता है। इनके अतिरिक्त, भविष्य में मिलने वाले सभी परिणाम, फल और पुरस्कार अप्रत्यक्ष फल कहलाते हैं। इन दो प्रकार के फलों में से केवल पहले प्रकार के फलों का वर्णन पत्थाना में किया गया है। परन्तु दूसरे प्रकार के फल सुत्तंत प्रवचनों में मिलते हैं। यदि यह होता है, तो वह होता है; या, इसके घटित होने के कारण, वह भी घटित होता है। इस प्रकार की व्याख्या को सुत्तंत के माध्यम से व्याख्या कहा जाता है। वास्तव में, तीन अवस्थाओं (लोभ, घृणा और अज्ञान) को हेतु या परिस्थितियाँ कहा जाता है, क्योंकि ये वे मूल हैं जिनसे सजीव जगत, निर्जीव जगत और अंतरिक्ष जगत के सभी दोष उत्पन्न होते हैं। अन्य तीन विपरीत अवस्थाओं (निराकारता, मित्रता और ज्ञान) को भी हेतु या परिस्थितियाँ कहा जाता है, क्योंकि ये वे मूल हैं जिनसे शुद्धि उत्पन्न होती है। इसी प्रकार शेष पथाना संबंधों को भी उनके विभिन्न अर्थों में समझा जाना चाहिए। इस प्रकार हमें यह समझना चाहिए कि जो कुछ भी घटित होता है, घटित होता है, या परिवर्तन उत्पन्न करता है, वह केवल इन चौबीस पथाना संबंधों या कारणों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव, परिणाम या उत्पाद हैं।

बौद्ध धर्म निर्वाण और परिणति को छोड़कर, संसार को क्षणभंगुर, दुखदायी और आत्मा-सार रहित मानता है। अतः बौद्ध दर्शन, शाश्वत परिवर्तन के नियम के संदर्भ में क्षणभंगुरता को स्पष्ट करने के लिए, प्रारंभ से ही सभी चीजों, सभी मानसिक और भौतिक घटनाओं को, पंचम नियम के अंतर्गत, मन और पदार्थ की अवस्थाओं (सभाव) की निरंतर श्रृंखला में विलीन कर देता है। ये घटनाएँ अपने मूल स्वरूप और अन्य घटनाओं दोनों के लिए अनेक तरीकों से निर्धारित और निर्धारक होती हैं, जिन्हें बौद्ध दर्शन 'पच्चय' या 'संबंध' शब्द से व्यक्त करता है। मानसिक और भौतिक अवस्थाओं की एक जटिल घटना, जिसमें समय के तीन चरण होते हैं - उत्पत्ति या जन्म, समाप्ति या मृत्यु और इनके बीच का स्थिर अंतराल - के बाद एक और घटना घटित होती है, जिसमें हमेशा एक कारण-कार्य संबंध श्रृंखला होती है। कुछ भी आकस्मिक या संयोगवश नहीं होता। जब एक घटना अपने उद्भव, निरंतरता, समाप्ति, प्राथमिकता और परवर्तीता के द्वारा दूसरी घटना द्वारा निर्धारित होती है और उसे उत्पन्न करने (जनक), समर्थन करने (उपतम्भक) और बनाए रखने (अनुपालन) के माध्यम से निर्धारित करती है, तो पहली घटना को संबंधकारी वस्तु (पच्चया-धम्म) और दूसरी घटना को संबंधित वस्तु (पच्चयायुप्पन्न-धम्म) कहा जाता है, और निर्धारण, प्रभाव या विशिष्ट कार्य को सहसंबंधीता (पच्चयासत्ति) कहा जाता है। जैसा कि विभिन्न प्रकार के प्रभाव स्पष्ट रूप से ज्ञात हैं, संबंधों को निम्नलिखित 24 प्रजातियों में वर्गीकृत किया गया है:

1. हेतु--स्थिति या मूल
2. अरम्मना--वस्तु
3. अधिपति--प्रभुत्व
4. अनंतरा--निकटता
5. समनंतरा--निकटता
6. सहजलि--सहअस्तित्व
7. अन्नमन्ना--पारस्परिकता
8. निस्सय--निर्भरता

9. उपनिषय--पर्याप्त स्थिति
10. पुरेजात--पूर्व-अस्तित्व
11. पच्छजात--समय में पश्चवर्ती कारण संबंध
12. असेवना--आदतन पुनरावृत्ति
13. कर्म--कर्म या क्रिया
14. विपाक--प्रभाव
15. आहार/--भोजन
16. इंद्रिय--नियंत्रण
17. झान--झान या परमानंद
18. 19. मग्गा--पथ
20. सम्पायुत्त--सहयोग 21.
विप्पयुत्त--वियोग
22. अत्ति--उपस्थिति
23. नत्थि--अनुपस्थिति
24. विगत--स्थगन
24. अवगत--निरंतरता।

बौद्ध धर्मग्रंथ अभिधम्म पिटक के सातवें और अंतिम विश्लेषणात्मक ग्रंथ, जिसे पत्थाना ('उत्कृष्टता') या महा-पकरण ('महान ग्रंथ') कहा जाता है, में इन 24 प्रकार के संबंधों की विस्तृत और पूर्ण व्याख्या की गई है।

तिपिटक >> अभिधम्म पिटक >> पथन >> **अध्याय 1.पत्थनुद्देस दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

1. हेतु-पच्चय या मूल के माध्यम से संबंध

हेतु-संबंध क्या है? लोभ, द्वेष, आलस्य और इनके विपरीत गुण, अर्थात् निस्वार्थता, प्रेम और बुद्धि, ये सभी हेतु-संबंध हैं।

इन हेतु-संबंधों से कौन सी वस्तुएँ संबंधित हैं? वे मानसिक गुण और मानसिक अवस्थाएँ जो लोभ, द्वेष, आलस्य, निस्वार्थता, प्रेम और बुद्धि के साथ सह-अस्तित्व में हैं, साथ ही वे भौतिक गुण जो इनके साथ सह-अस्तित्व में हैं, वे वस्तुएँ इस प्रकार संबंधित हैं। इन सभी को हेतुपच्चयप्पन्न धम्म कहा जाता है, क्योंकि ये हेतु-संबंध के कारण उत्पन्न होते हैं या अस्तित्व में आते हैं।

उपरोक्त व्याख्या में, "एक ही के साथ विद्यमान भौतिक गुणों के समूह" से तात्पर्य उन भौतिक गुणों से है जो किसी नए प्राणी की हेतु-युक्त गर्भाधान की प्रारंभिक अवस्था में कर्म द्वारा उत्पन्न होते हैं, साथ ही उन भौतिक गुणों से भी जो हेतु-युक्त मन द्वारा जीवनकाल के दौरान उत्पन्न हो सकते हैं। यहाँ "गर्भाधान का क्षण" से तात्पर्य पुनर्जन्म-गर्भाधान के प्रारंभिक क्षण से है, और "जीवनकाल" से तात्पर्य पुनर्जन्म-गर्भाधान के स्थिर क्षण से लेकर मृत्यु-विचार के क्षण तक की अवधि से है।

हेतु को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? और पच्चय को किस अर्थ में? हेतु को मूल (मूलात्थ) के अर्थ में समझा जाना चाहिए; और पच्चय को पच्चयुप्पन्न धम्म या उपकारत्थ के उद्‌भव या अस्तित्व में आने में सहायक के अर्थ में समझा जाना चाहिए। इन दोनों में से, मूलात्थ मूल की मूल अवस्था है, लोभ-अत:, जैसा कि मूलयमक में दर्शाया गया है। हमने मूलात्त्व को मूल-यमक-दीपनी में वृक्ष के उपमा से समझाया है। फिर भी, हम यहाँ इस पर दोबारा चर्चा करेंगे।

मान लीजिए एक पुरुष किसी स्त्री से प्रेम करता है। जब तक वह अपने कामुक विचार को दूर नहीं करता, उस स्त्री के प्रति उसके सभी कर्म, वचन और विचार, कामवासना (या लोभ) में सहायक होंगे, जो साथ ही साथ उसी विचार से उत्पन्न भौतिक गुणों को भी अपने वश में रखती है। तब हम देखते हैं कि इन सभी मानसिक और भौतिक गुणों की जड़ उस स्त्री के प्रति कामुक लोभ में निहित है। अत:, हेतु (क्योंकि यह जड़ का काम करता है) और पच्चय (क्योंकि यह मन और शरीर की उन अवस्थाओं के उत्पन्न होने में सहायक है) होने के

कारण, लोभ हेतु-पच्चय है। शेष को भी इसी प्रकार समझाया और समझा जा सकता है - अर्थात्, वांछनीय वस्तुओं की इच्छा से लोभ का उत्पन्न होना; घृणित वस्तुओं के प्रति घृणा से घृणा का उत्पन्न होना; और नीरस वस्तुओं के विषय में ज्ञान की कमी से सुस्ती का उत्पन्न होना।

एक पेड़ का उदाहरण लीजिए—हम देखते हैं कि पेड़ की जड़ें ज़मीन में मज़बूती से जम जाती हैं और मिट्टी व पानी दोनों से रस सोखकर पेड़ के ऊपरी हिस्से तक पहुँच जाती हैं, जिससे पेड़ लंबे समय तक बढ़ता और विकसित होता रहता है। ठीक इसी तरह, लालच भी मनभावन वस्तुओं में दृढ़ हो जाता है और उनसे सुख और आनंद का सार सोखकर उसे मन के अन्य तत्वों में समाहित कर लेता है, जिससे अनैतिक कर्म और वचन उत्पन्न होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि लालच नैतिक कर्म और वचन के उल्लंघन का कारण बनता है। यही बात घृणा पर भी लागू होती है, जो अरुचि के कारण अप्रसन्नता और असुविधा का सार सोख लेती है, और यही बात अज्ञानता पर भी लागू होती है, जो ज्ञान की कमी के कारण अनेक विषयों पर व्यर्थ विचारों के सार को पनपने देती है।

इस प्रकार सार तत्व का परिवहन करते हुए, लोभ, दोष और मोह तीनों तत्व, घटक भागों पर इस प्रकार कार्य करते हैं कि वे (एक प्रकार से) प्रसन्न और आनंदित हो जाते हैं, जो वांछनीय वस्तुओं आदि से प्रसन्न होते हैं। घटक भाग भी उन पर कार्य करने के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं, जबकि सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुण भी उसी प्रभाव को साझा करते हैं। यहाँ, सम्पायुत्त-धम्मे अभिहारति शब्दों से यह समझा जाना चाहिए कि लोभ सुख और आनंद के सार को सहवर्ती तत्वों तक पहुँचाता है।

अब सकारात्मक पक्ष की ओर आते हैं—मान लीजिए कि पुरुष को इंद्रिय सुख में खतरा दिखाई देता है, और वह स्त्री के प्रति उस कामुक विचार का त्याग कर देता है। ऐसा करने से, उसके भीतर स्त्री के प्रति अनासक्ति उत्पन्न होती है। इससे पहले, भ्रम को मूल मानकर अशुद्ध कर्म, शब्द और विचार थे; लेकिन वर्तमान में वे अनुपस्थित हैं और उनके स्थान पर अनासक्ति को मूल मानकर शुद्ध कर्म, शब्द और विचार उत्पन्न होते हैं। इसके अलावा, त्याग, आत्म-संयम, ध्यान अभ्यास या उच्चतर आनंदमय विचार भी उत्पन्न होते हैं। अत: निःसंकोच (अलोभ) को हेतु-पच्चय कहा जाता है, क्योंकि यह हेतु है, मूल तत्व के रूप में कार्य करता है, जबकि सहवर्ती तत्व के उत्पन्न होने में सहायक होने के कारण यह पच्चय है। यही व्याख्या निःसंकोच के शेष भाग पर भी लागू होती है, और साथ ही मित्रता और बुद्धि पर भी, जो क्रमशः लोभ, घृणा और अज्ञान के विपरीत हैं।

यहां, जैसे वृक्ष की जड़ पूरे तने और उसके भागों को उत्तेजित करती है, वैसे ही निःसंकोच भाव में होता है। यह वांछनीय वस्तुओं की इच्छा को दूर करता है और लोभ रहित आनंद के सार को बढ़ावा देकर, उस सार से जुड़े अन्य तत्वों का भी पोषण करता है, जिससे वे इतने सुखी और आनंदित हो जाते हैं कि वे ध्यानिक, पथिक या फलदायक आनंद की चरम सीमा तक पहुँच जाते हैं। इसी प्रकार, मित्रता और बुद्धि क्रमशः घृणा और अज्ञान को घृणा और सुस्ती से दूर करते हैं और घृणा और सुस्ती से रहित आनंद के सार को बढ़ावा देते हैं। इस प्रकार तीनों तत्वों (आलोभ, अदोष और अमोह) का प्रभाव लंबे समय तक बना रहता है, जिससे उनके मानसिक सहवर्ती तत्व सुखी और आनंदित होते हैं। सहवर्ती तत्व भी प्रभावित होते हैं, जबकि भौतिक गुणों के सह-अस्तित्व वाले समूह भी उसी प्रकार प्रभावित होते हैं।

यहां लोभविवेकसुखरसम् शब्द लोभ, विवेक, सुख और रस का मिश्रण है। विवेक अनुपस्थिति की अवस्था है। लोभविवेक वह है जो लोभ से रहित है, या लोभ का अभाव है। लोभविवेक-सुख लोभ के अभाव से उत्पन्न होने वाला आनंद है। अतः संपूर्ण यौगिक को इस प्रकार परिभाषित किया गया है: लोभविवेकसुखरासा लोभ के अभाव से प्राप्त होने वाले आनंद का सार है।

अभिधम्म में वर्णित पथाना का नियम यही है। सुत्तंत के नियम की ओर मुड़ते हुए, सुस्ती और लोभ के दो तत्व, जिन्हें क्रमशः अज्ञान और भोग कहा जाता है, तीनों चक्रों के संपूर्ण मूल हैं। घृणा, लोभ का आकस्मिक परिणाम होने के कारण, केवल बुराई का मूल है। बुद्धि और निस्वार्थता के दो तत्व, जिन्हें क्रमशः ज्ञान और त्याग कहा जाता है, दुखों के चक्रों के निवारण के संपूर्ण मूल हैं। मित्रता, निस्वार्थता का आकस्मिक परिणाम होने के कारण, केवल अच्छाई का मूल है। इस प्रकार छह मूल तत्व मन और शरीर की सभी अवस्थाओं के कारण बन जाते हैं, जो या तो सहअस्तित्व में होती हैं या गैर-सहअस्तित्व में। अब जो कहा गया है वह सुत्तंत का नियम है।

हेतु-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 2.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

2. **अरम्मना-पच्चया या वस्तु का संबंध**

अरम्मना-संबंध क्या है? चेतना के सभी वर्ग, मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं की सभी अवस्थाएँ, भौतिक गुणों के सभी प्रकार, निर्वाण की सभी अवस्थाएँ, अवधारणाओं को व्यक्त करने वाले सभी शब्द अरम्मना-संबंध हैं। वास्तव में, कोई भी ऐसी वस्तु (धम्म) नहीं है जो मन और मानसिक तत्वों की वस्तु न बन जाए। संक्षेप में, वस्तु छह प्रकार की होती है: दृश्य वस्तु, श्रव्य वस्तु, गंधयुक्त वस्तु, स्वादयुक्त वस्तु, स्पर्शनीय वस्तु और बोधगम्य वस्तु।

वे कौन सी वस्तुएँ हैं जो अरम्मना-संबंधों से संबंधित हैं? मन के सभी वर्ग और उनके सहवर्ती वे वस्तुएँ हैं जो अरम्मना-संबंधों से संबंधित हैं। वास्तव में, चेतना का कोई भी वर्ग ऐसा नहीं है जो विद्यमान (भूतेन) या गैर-विद्यमान (अभूतेन) वस्तु के बिना विद्यमान हो सके। (भूतेन और अभूतेन का अनुवाद यहाँ क्रमशः 'वास्तविक' और 'अवास्तविक' या 'वर्तमान' और 'गैर-वर्तमान' के रूप में भी किया जा सकता है)।

यहाँ वर्तमान दृश्य वस्तु अरम्मन-पच्चय है, और यह दृष्टि की चेतना के दो वर्गों, अच्छे और बुरे, से कारणवश संबंधित है। इसी प्रकार, वर्तमान श्रव्य वस्तु ध्वनि की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान सुगंधित वस्तु गंध की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान स्वादयुक्त वस्तु स्वाद की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान स्पर्शनीय वस्तुओं के तीन वर्गों से, और वर्तमान पाँच इंद्रिय वस्तुओं को बोध के त्रिविध तत्व के रूप में ज्ञात चेतना के तीन वर्गों से कारणवश संबंधित है। ये सभी पाँचों इंद्रिय विषय, वर्तमान, भूतकाल या भविष्य, और विचार के सभी विषय, वर्तमान, भूतकाल, भविष्यकाल या समय से परे, अरम्मन-पच्चय हैं और चेतना के उन छिहत्तर वर्गों से कारणिक रूप से संबंधित हैं जिन्हें मन-ज्ञान (या बोध के तत्व) के रूप में जाना जाता है।

'अरम्मन' को किस अर्थ में और 'पच्चय' को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? अरम्मन को 'अलम्बितब्बा' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है वह जो मन और मानसिक तत्वों द्वारा धारण किया जाता है या जिस पर टिका रहता है। पच्चय को 'उपकारक' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है वह जो (पच्चयप्पन्नधम्म के उद्भव में) सहायता करता है।[3]

'आलंबितब्बा' शब्द के संदर्भ में, मन और उसके मानसिक कारकों के 'आलंबन' का कार्य किसी वस्तु को पकड़ना या उससे जुड़ना है। उदाहरण के लिए, इस भौतिक जगत में एक प्रकार की धातु है जिसे लोहे के प्रति उसकी स्पष्ट इच्छा के कारण 'अयोकांतक' (शाब्दिक रूप से, लोहे की इच्छा) कहा जाता है। जब वह लोहे के टुकड़े के पास आती है, तो वह मानो उसे पाने की इच्छा से कांपती है। इसके अलावा, वह आगे बढ़ती है और लोहे से दृढ़ता से जुड़ जाती है। अन्य मामलों में, वह लोहे को आकर्षित करती है, और इस प्रकार लोहा कांपता है, चुंबक के पास आता है, और उससे दृढ़ता से जुड़ जाता है। यहाँ हम चुंबक की शक्ति देखते हैं, जिसे मन और मानसिक कारकों के 'आलंबन' का एक प्रभावशाली उदाहरण माना जा सकता है।

वे (मन और उसके सहवर्ती) न केवल वस्तुओं से जुड़ते हैं, बल्कि किसी व्यक्ति के भीतर उनके अस्तित्व में आने के चरण में, हर क्षण उठते और समाप्त होते हैं, जबकि वस्तुएँ छह द्वारों के रास्तों पर विद्यमान रहती हैं[4]। इस प्रकार, यह उदय और थमना ठीक उसी प्रकार है जैसे घंटा बजता है, जो केवल उसकी सतह पर प्रहार करने पर उत्पन्न होता है और उसके तुरंत बाद मौन हो जाता है। यह वायलिन की ध्वनि के समान भी है, जो केवल उसके तारों पर धनुष से प्रहार करने पर उत्पन्न होती है और फिर तुरंत थम जाती है।

सोते हुए व्यक्ति के लिए—जब जीवन-निरंतरता (विचारों की धारा में) प्रवाहित हो रही होती है—कर्म, कर्म का चिन्ह और आने वाले जीवन में उसके भाग्य का चिन्ह—जो पिछले जन्म में मृत्यु के निकट आने पर स्पष्ट रूप से छह द्वारों के मार्ग में प्रवेश कर चुके थे—आरंभ संबंध हैं, और जीवन-निरंतरता के रूप में ज्ञात चेतना (उन्नीस श्रेणियों) से कारणिक रूप से संबंधित हैं।

आरंभ संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 3.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

3: अधिपति-पच्चय या प्रभुत्व का संबंध

प्रभुत्व का संबंध दो प्रकार का होता है: वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व और सह-अस्तित्व वाला प्रभुत्व। इन दोनों में से वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का संबंध क्या है? अरम्मन-संबंध पर चर्चा किए गए खंड में जिन वस्तुओं का उल्लेख किया गया है, उनमें से कुछ वस्तुएँ अत्यंत सुखद, अत्यंत प्रेमपूर्ण, अत्यंत मनभावन और अत्यंत सम्माननीय हैं। ऐसी वस्तुएँ वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का संबंध प्रदर्शित करती हैं। यहाँ वस्तुएँ स्वाभाविक रूप से सुखद या अप्रिय हो सकती हैं; लेकिन 'अत्यंत सुखद वस्तुएँ' शब्द से केवल उन्हीं वस्तुओं का तात्पर्य है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा सबसे अधिक सम्मान दिया जाता है और जो इस संबंध को प्रदर्शित करती हैं। घृणा में निहित चेतना के दो वर्गों, अज्ञान में निहित चेतना के दो वर्गों और पीड़ा से ग्रस्त स्पर्श चेतना को छोड़कर, इन सभी के सहवर्ती तत्वों सहित, विश्लेषणात्मक रूप से[6] यह दिखाया जा सकता है कि काम-चेतना, रूप-चेतना, अरूप-चेतना और पारलौकिक चेतना के शेष सभी वर्ग, अपने-अपने सहवर्ती तत्वों और सभी सबसे सुखद भौतिक गुणों सहित, पच्चय-धम्म हैं।

इनमें से, काम-विषयों को केवल तभी वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का कारण संबंध प्रदर्शित करने वाला कहा जाता है जब उन्हें अत्यधिक सम्मान दिया जाता है, अन्यथा वे ऐसा नहीं करते। लेकिन जो लोग ध्यान अवस्थाओं तक पहुँचते हैं, वे अपने द्वारा प्राप्त उदात्त ध्यान के प्रति उच्च सम्मान में कभी कमी नहीं करते। आर्य शिष्य भी अपने द्वारा प्राप्त और आनंदित पारलौकिक धम्म[7] के प्रति अपने महान सम्मान में कभी कमी नहीं करते।

इस संबंध से कौन सी वस्तुएँ संबंधित हैं? लोभ से ग्रस्त चेतना के आठ वर्ग, कमलोक की नैतिक चेतना के आठ वर्ग, ज्ञान से जुड़ी निष्क्रिय कमलोक चेतना के चार वर्ग और पारलौकिक चेतना के आठ वर्ग—ये सभी इस संबंध से संबंधित हैं। यहाँ छह प्रकार की सांसारिक वस्तुएँ[8] इच्छा से ग्रस्त चेतना के आठ वर्गों से कारणवश संबंधित हैं। सांसारिक नैतिक चेतना के सत्रह वर्ग ज्ञान से विरक्त नैतिक काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित हैं। मार्ग और फल के पहले तीन युग्म और निर्वाण, सांसारिक नैतिक चेतना के उन सभी वर्गों के साथ, ज्ञान से जुड़ी नैतिक काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित हैं। उच्चतम—अरहंतत्व के मार्ग और फल का चौथा चरण—निर्वाण के साथ ज्ञान से जुड़ी निष्क्रिय काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित है। और निर्वाण पारलौकिक चेतना के आठ वर्गों से संबंधित है।

अरम्मना को किस अर्थ में और अधिपति को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? अरम्मना को अलम्बितब्बा (अरम्मना-पच्चय देखें) के अर्थ में और अधिपति को अधिपच्चत्त के अर्थ में समझा जाना चाहिए। तो अधिपच्चत्त क्या है? अधिपच्चत्त वस्तुओं की वह क्षमता है जो मन की उन अवस्थाओं और मानसिक गुणों को नियंत्रित करती है जिनके कारण वस्तुओं को अत्यधिक सम्मान दिया जाता है। यह समझा जाना चाहिए कि अरम्मनाधिपति से संबंधित वस्तुएँ (पच्चय-धम्म) अधिपति के समान हैं, जबकि संबंधित वस्तुएँ (पच्चयप्पन्न-धम्म) मानव समाज में दासों के समान हैं।

सुतसोमा जातक में, राजा पोरिसदा ने मानव मांस के प्रति अत्यधिक आकर्षण के कारण, केवल मानव मांस के स्वाद के लिए अपना राज्य त्याग दिया और वन में घुमंतू जीवन व्यतीत किया। यहाँ मानव मांस का स्वाद अरम्मनाधिपति का पच्चयधम्म है; और राजा पोरिसाद की भोग-प्रसंग में निहित चेतना ही पच्चयुप्पन-धम्म है। फिर, राजा सुतसोमा, सत्य के प्रति अत्यधिक श्रद्धा रखते हुए[9], सत्य के लिए अपनी संप्रभुता, अपने पूरे राजपरिवार और यहाँ तक कि अपने प्राणों का भी त्याग कर पोरिसाद के चरणों में स्वयं को समर्पित कर दिया। इस स्थिति में, सत्य ही पच्चयधम्म है और राजा सुतसोमा की नैतिक चेतना ही पच्चयुप्पन-धम्म है। इसी प्रकार हमें उन सभी इंद्रिय-संबंधी विषयों को समझना चाहिए जिनके प्रति अत्यधिक श्रद्धा होती है।

सह-अस्तित्व का प्रभुत्व क्या है? अभिशय या करने की इच्छा, मन[10] या संकल्प, ऊर्जा या प्रयास, और तर्क या अन्वेषण, जो प्रभुत्वशाली अवस्था में पहुँच चुके हैं, इस संबंध से संबंधित हैं।

इस संबंध से कौन सी वस्तुएँ जुड़ी हुई हैं? मन और मानसिक गुणों के वर्ग जो प्रभुत्वशाली तत्वों के सहायक हैं, और प्रभुत्वशाली विचारों द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण, वे वस्तुएँ हैं जो इस संबंध से जुड़ी हुई हैं।

सहजता को किस अर्थ में और अधिपति को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? सहजता को सहुप्पदानत्थ के अर्थ में और अधिपति को अभिभवनत्थ के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यहाँ, कोई घटना जब प्रकट होती है, तो वह न केवल अकेली प्रकट होती है, बल्कि साथ ही साथ अपने सहायक तत्वों को भी प्रकट करती है। घटना की इस कारणिक क्रिया को सहुप्पदानत्थ कहा जाता है। अभिभवनत्थ का अर्थ है विजय प्राप्त करना। उदाहरण के लिए, राजा चक्कवत्ती अपनी शक्ति या योग्यता से पूरे महाद्वीप के निवासियों पर विजय प्राप्त करते हैं और उनके स्वामी बन जाते हैं, जिनका वे अपनी इच्छा अनुसार नेतृत्व कर सकते हैं। वे भी उनके नेतृत्व के अनुसार ही व्यवहार

करते हैं। इसी प्रकार, वे चार प्रभाव जो प्रबल अवस्था में पहुँच चुके हैं, अपने-अपने सहायक तत्वों के स्वामी बन जाते हैं और उन्हें अपने-अपने कार्यों में अपनी इच्छा के अनुसार नेतृत्व प्रदान करते हैं। सहायक तत्व भी उनके नेतृत्व के अनुसार ही व्यवहार करते हैं। एक और उदाहरण लें तो, पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु, इन सभी पिंडों में हम देखते हैं कि चार तत्व—विस्तार, संसंजन, ऊष्मा और गति—क्रमशः प्रमुख हैं, और प्रत्येक अन्य तीन घटकों पर श्रेष्ठता रखता है और उन्हें अपने आंतरिक स्वभाव के अनुरूप ढालता है[11]। चार 'तत्वों' के समूह के अन्य तीन सदस्यों को भी प्रमुख तत्व के स्वभाव का अनुसरण करना पड़ता है। इसी प्रकार, ये चार प्रमुख तत्व, जो अपनी शक्ति के बल पर प्रमुख अवस्था तक पहुँच चुके हैं, अपने सहायक तत्वों को अपने आंतरिक स्वभाव के अनुरूप ढालते हैं। और उनके सहायक तत्वों को भी प्रमुख तत्वों के स्वभाव का अनुसरण करना पड़ता है। अभिभावना का यही अर्थ है। यहाँ कुछ लोग कह सकते हैं: "यदि इन चीजों को, इरादे को छोड़कर, सहायक तत्वों पर विजय प्राप्त करने के कारण प्रमुख कहा जाता है, तो लोभ को भी प्रमुख कहा जाना चाहिए, क्योंकि स्पष्ट रूप से इसमें इरादे की तुलना में सहायक तत्वों पर कहीं अधिक प्रबल शक्ति होती है।" लेकिन इसके जवाब में हम यह कह सकते हैं: बेशक, लालच इरादे से अधिक शक्तिशाली है, लेकिन केवल साधारण और नासमझ लोगों के लिए। बुद्धिमानों के मामले में, इरादा लालच से अधिक शक्तिशाली होता है और उनके सहायक तत्वों पर हावी हो जाता है। यदि यह मान लिया जाए कि लालच अधिक शक्तिशाली है, तो लालच के चंगुल में फंसे लोग अपने सुखमय जीवन और धन की परिपूर्णता को त्यागकर, त्याग के मार्ग अपनाकर और दुख के चक्र से कैसे बाहर निकल पाएंगे? लेकिन, क्योंकि इरादा लालच से अधिक शक्तिशाली है, इसलिए लालच के चंगुल में फंसे लोग सुखमय जीवन और धन की परिपूर्णता को त्यागकर, त्याग के मार्ग अपनाकर और दुख के चक्र से बाहर निकल पाते हैं। अतः, इरादा ही सच्चा प्रवर्तक है, न कि लालच। इसी प्रकार, जब इरादे की तुलना घृणा आदि से की जाती है, तब भी यही बात ध्यान में रखनी चाहिए।

आइए इसे और स्पष्ट रूप से समझाते हैं। जब कोई महान और कठिन मानवीय कार्य सामने आता है, तो ऐसे कार्यों की सफलता के लिए इन चार प्रमुख गुणों का उत्पन्न होना आवश्यक हो जाता है। कैसे? जब बुरे इरादों वाले लोग ऐसे किसी कार्य का सामना करते हैं, तो उनका इरादा पीछे हट जाता है। वे उसे करने के लिए तैयार नहीं होते। वे उसमें कोई रुचि न होने के कारण उसे छोड़ देते हैं और यहाँ तक कहते हैं: "यह कार्य हमारी क्षमता से परे है।" वहीं अच्छे इरादों वाले लोग ऐसे महान कार्य को देखकर उत्साह से भर जाते हैं। वे उसे करने के लिए बहुत उत्सुक होते हैं। वे कार्य को पूरा करने का निश्चय कर लेते हैं और कहते हैं: "यह कार्य हमारी क्षमता के दायरे में है।" इस प्रकार का व्यक्ति अपने इरादे से इतना दृढ़ हो जाता है कि जब तक कार्य पूरा नहीं हो जाता, तब तक वह उसे छोड़ नहीं पाता। और इसी कारण वह कार्य किसी दिन पूर्ण रूप से पूरा हो ही जाता है, चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो।

अब, आइए आलसी वर्ग के लोगों के मामले पर विचार करें। जब वे ऐसे किसी महान कार्य का सामना करते हैं, तो वे तुरंत उससे पीछे हट जाते हैं। वे इससे पीछे हट जाते हैं क्योंकि उन्हें पहले से ही पता होता है कि इसे पूरा करने के लिए उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और शारीरिक व मानसिक पीड़ा सहनी पड़ेगी। वहीं, कर्मठ व्यक्ति इसे देखकर ऊर्जा से भर उठता है और इसे पूरा करने की इच्छा रखता है। वह हर परिस्थिति में, चाहे कितना भी समय लगे, इस कार्य को करता रहता है। वह कभी भी अपने प्रयासों से पीछे नहीं हटता और न ही निराश होता है। वह केवल यही सोचता है कि इतना बड़ा कार्य दिन-रात अथक परिश्रम के बिना पूरा नहीं हो सकता। और ऐसा होने पर, यह बड़ा कार्य एक दिन अवश्य पूरा होगा।

अब कमजोर मन वाले व्यक्ति की बात करते हैं। वे भी ऐसे बड़े कार्य को देखकर मुंह मोड़ लेते हैं। वे निश्चित रूप से इसके बारे में फिर कभी नहीं सोचेंगे। लेकिन दृढ़ मन वाले व्यक्ति के साथ ऐसा बिल्कुल नहीं होता। जब वह ऐसा कार्य देखता है तो उसमें अत्यधिक रुचि उत्पन्न होती है। वह इसके विचार को अपने मन से निकाल ही नहीं पाता। वह हर समय कार्य के बारे में सोचता रहता है, और उसके आदेश पर लंबे समय तक उसमें लगा रहता है, शारीरिक और मानसिक पीड़ा के सभी प्रकारों को सहन करता है। शेष भाग को आगे उसी प्रकार समझाया जाएगा जैसे ऊपर प्रमुख उद्देश्य को समझाया गया है।

एक बार फिर, बुद्धिहीन लोगों के बारे में कुछ शब्द। जब उन्हें ऐसा कोई कार्य सौंपा जाता है, तो वे असमंजस में पड़ जाते हैं। उन्हें न तो शुरुआत करने का तरीका पता होता है, न ही काम को आगे बढ़ाने का, और न ही उसे पूरा करने का। उन्हें ऐसा लगता है मानो वे अंधेरे में आ गए हों, जहाँ काम को पूरा करने के लिए मार्गदर्शन करने वाली कोई रोशनी भी नहीं है। दूसरी ओर—अधिक बुद्धिमान व्यक्ति की बात करें—जब ऐसे व्यक्ति को इतना बड़ा कार्य करना पड़ता है, तो वह मानो अपनी बुद्धि के शिखर पर पहुँच जाता है, जहाँ से वह शुरुआत करने और अंत करने का तरीका समझ जाता है। उसे यह भी पता होता है कि इस कार्य को पूरा करने से उसे क्या लाभ और आशीर्वाद प्राप्त होंगे। वह इसे आसानी से पूरा करने के लिए कई उपाय ईजाद करता है। वह लंबे समय तक काम करता रहता है, और यह सिलसिला चलता रहता है। बाकी बातों को भी उसी तरह समझाया जा सकता है जैसे मुख्य प्रयास को समझाया गया है—बस 'अटूट प्रयासों' के स्थान पर 'अत्यधिक गहन शोध के साथ' शब्द जोड़ दें।

इस प्रकार, जब कोई महान और कठिन मानवीय कार्य उत्पन्न होते हैं, तो उनकी सिद्धि के साधनों में ये चार प्रमुख तत्व सर्वोपरि हो जाते

हैं। इन चार प्रमुख तत्वों के अस्तित्व के कारण सर्वज्ञ बुद्ध, पच्चेक बुद्ध,[12] सर्वोत्कृष्ट शिष्य, महान शिष्य और साधारण शिष्य जैसे विशिष्ट या प्रतिष्ठित व्यक्ति (पुरुष) अस्तित्व में आते हैं। ऐसे व्यक्तियों के प्रकट होने के कारण, मानव जाति की सामान्य समृद्धि और कल्याण के लिए अनेक कलाएँ और विज्ञान, साथ ही सामान्य साज-सामान भी प्रकट होते हैं, जो सभ्यता के आवरण के अंतर्गत मानवीय आवश्यकताओं और इच्छाओं को पूरा करते हैं।[13]

अधिपति-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

4. अनंतार-पच्चय या निकटता का संबंध

अनंतार-पच्चय क्या है? चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, जो अभी-अभी (ठीक पिछले क्षण में) समाप्त हुए हैं, अनंतार-पच्चय हैं। इस पच्चय से कौन से संबंधित हैं? चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, जो अभी-अभी (ठीक अगले क्षण में) उत्पन्न हुए हैं, इस पच्चय से संबंधित हैं।

किसी प्राणी के एक जन्म में, पुनर्जन्म-चेतना प्रथम जीवन-सम्बद्धता से निकटता के माध्यम से संबंधित होती है, और प्रथम जीवन-सम्बद्धता फिर से द्वितीय जीवन-सम्बद्धता से संबंधित होती है; और इसी प्रकार शेषों के साथ भी।

अब, अभिधम्म के छठे खंड के नौवें अध्याय, धम्म-यमक में वर्णित "जब शुद्ध (शुद्ध निवास, अर्थात् शुद्धवास) में दूसरी अनैतिक चेतना उत्पन्न होती है, आदि" पाठ के संदर्भ में, हम समझते हैं कि जैसे ही कोई व्यक्ति अपने नए शरीर के प्रति सचेत होता है, उसके नए जीवन में उत्पन्न होने वाली पहली विचार प्रक्रिया अनैतिक विचार की प्रक्रिया होती है, जिसके साथ नए जीवन को जीने की प्रबल इच्छा होती है, इस विचार के साथ: 'यह मेरा है; यह मैं हूँ; यह मैं ही हूँ।" जब यह प्रक्रिया शुरू होने वाली होती है, तो जीवन-संचलन पहले दो क्षणों के लिए कंपन करता है। इसके बाद मन-द्वार बोध होता है, और फिर सात बोधों की एक श्रृंखला आती है, जिसके साथ नए जीवन को जीने की तीव्र इच्छा होती है। इसके बाद, जीवन-संचलन फिर से प्रवाहित होने लगता है।

वास्तव में, यह प्राणी[14] अपने वर्तमान नए जीवन के बारे में कुछ भी नहीं जानता। वह पिछले जन्म में अपने अनुभवों पर चिंतन करते हुए जीता है। हालाँकि, मन का आधार इतना कमजोर होता है कि वस्तु भी स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित नहीं हो पाती। वस्तु के इस प्रकार अस्पष्ट होने के कारण, सामान्यतः चेतना के ऐसे वर्ग ही उत्पन्न होते हैं जो उलझन से जुड़े होते हैं।

गर्भाधान के लगभग दो महीने बाद, जिस दौरान व्यक्ति का धीरे-धीरे विकास होता है, आँख, कान आदि की नियंत्रण शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित हो जाती हैं। लेकिन माँ के गर्भ में प्रकाश आदि न होने के कारण, चारों प्रकार की अनुभूतियाँ—दृश्य, श्रवण आदि—विकसित नहीं होतीं। केवल स्पर्श और मानसिक अनुभूतियाँ ही विकसित होती हैं। माँ के शरीर की हर मुद्रा में परिवर्तन से शिशु को बहुत पीड़ा और कष्ट होता है, और जन्म के समय तो यह पीड़ा और भी बढ़ जाती है। बाह्य जगत में आने के बाद भी, जब तक उसका कोमल शरीर इतना मजबूत (परिपक्व) नहीं हो जाता कि वह स्वयं को संभाल सके, तब तक उसे बहुत दुर्बलता से पीठ के बल लेटना पड़ता है। इस दौरान वह वर्तमान वस्तुओं को नहीं देख पाता, बल्कि उसका मन सामान्यतः अपने पूर्व जन्म की वस्तुओं की ओर उन्मुख होता है। यदि वह नरकलोक से आया है, तो उसका चेहरा सामान्यतः अप्रिय होता है, क्योंकि वह अभी भी नरकलोक में अनुभव की गई अनुभूतियों को महसूस करता है। यदि वह देवलोक से आता है, तो उसका मनमोहक चेहरा न केवल मुस्कान से दमकता है, बल्कि उसकी आनंदमयी हंसी में मानो देवलोक की वस्तुओं के विचार से उत्पन्न प्रसन्नता झलकती है। इसके

अलावा, उसके शरीर के अंग धीरे-धीरे बलवान होते जाते हैं और उसकी इंद्रिय अनुभूतियाँ स्पष्ट होती जाती हैं। इसलिए वह शीघ्र ही अपने प्यारे छोटे-छोटे तरीकों से आनंदपूर्वक खेलने लगता है। इस प्रकार उसके लिए एक सुखी जीवन का आरंभ होता है; और वह अपने नए जीवन में रुचि लेने लगता है। वह अपनी माँ की वाणी को अपनाता है और उसकी नकल करता है। वह उससे बातें करता है। इस प्रकार उसकी इंद्रियाँ लगभग पूरी तरह से वर्तमान संसार की ओर मुड़ जाती हैं, और उसके पिछले जीवन के सभी विचार लुप्त हो जाते हैं। अर्थात्, वह अपने पिछले जन्म को भूल जाता है।

क्या सभी प्राणी अपने पिछले जन्मों को केवल इसी अवस्था में भूल जाते हैं? नहीं, सभी नहीं। कुछ जो गर्भधारण की पीड़ा से अत्यधिक पीड़ित होते हैं, वे गर्भावस्था के दौरान अपने पिछले जन्मों को भूल जाते हैं, कुछ जन्म के समय, कुछ ऊपर बताई गई अवस्था में; कुछ युवावस्था में, और कुछ वृद्धावस्था में। कुछ असाधारण पुरुष अपने पूरे जीवन भर अपने पिछले जन्मों को नहीं भूलते, और कुछ तो दो-तीन जन्मों को भी याद रख सकते हैं। इन्हें जातिसरसत्ता कहा जाता है, यानी वे लोग जिन्हें अपने पिछले जन्मों की स्मृति प्राप्त होती है।

अब, अपने विषय पर लौटते हैं। यद्यपि छह द्वार वाली विचार प्रक्रियाएँ बच्चे के जन्म के बाद ही कार्य करना शुरू कर देती हैं, फिर भी ये प्रक्रियाएँ पूर्णतः तभी क्रियाशील होती हैं जब बच्चा वर्तमान विषयों को ग्रहण करने में सक्षम हो जाता है। इस प्रकार, प्रत्येक विचार प्रक्रिया में, प्रत्येक पूर्ववर्ती चेतना जो अभी-अभी समाप्त हुई है, निकटता के माध्यम से प्रत्येक आगामी चेतना से संबंधित होती है जो तुरंत उत्पन्न हुई है। और निकटता का यह संबंध व्यक्ति के आवर्ती जन्मों के संपूर्ण कालखंड में, अनाप्य आरंभ से ही, अटूट निरंतरता के साथ बना रहता है। लेकिन अरहंतत्व के मार्ग को प्राप्त करने और खन्ध-परिनिर्वाण (अर्थात पंच स्कंधों के अंतिम विनाश) में प्रवेश करने के बाद ही यह निरंतरता टूटती है, या अधिक सटीक रूप से कहें तो, हमेशा के लिए समाप्त हो जाती है।

अनंतार को अनंतार क्यों कहा जाता है, और पश्चात क्यों? अनंतार को अनंतार इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह अपने समान घटनाओं को तुरंत बाद उत्पन्न करता है। पश्चात को पश्चात इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह सहायता प्रदान करता है। 'अपने समान' वाक्यांश में, 'समान' शब्द का अर्थ किसी वस्तु के प्रति सचेत होने की क्षमता के संदर्भ में समानता व्यक्त करना है। और सरम्मन्त का अर्थ है एक ऐसी घटना जो किसी वस्तु की उपस्थिति के बिना घटित नहीं होती। इसलिए इसे 'क्षमता के संदर्भ में समान' आदि के रूप में अनुवादित किया गया है।

इसी प्रकार, "धम्मन्तरस्स-उप्पदानत्थेन" वाक्यांश का अर्थ निम्नलिखित है: "यद्यपि पिछला विचार समाप्त हो जाता है, तब भी उसकी सचेत क्षमता तब तक समाप्त नहीं होती जब तक कि वह अगले विचार को उत्पन्न न कर दे।"

यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस संबंध के पच्चय-धम्मों की श्रृंखला पिछली माताओं की श्रृंखला के समान है, और पच्चय्युप्पन्न-धम्मों की श्रृंखला अगली पुत्रियों की श्रृंखला के समान है। ऐसा होने पर, अरहंत के अंतिम मरणविराम विचार से भी पुनर्जन्म-चेतना का उदय होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होता, क्योंकि अस्तित्व के विकास के अंत में, सभी इच्छा-संबंधी और अशुद्धियाँ (कर्म-किलेसा) पूरी तरह से समाप्त हो जाती हैं, और अंतिम मरणशील विचार अंतिम, परम शांति की अवस्था में पहुँच जाता है।

अनंतार-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

5. समनंतर-पच्चय या निकटवर्ती निकटता का संबंध:

इस संबंध के पच्चय-धम्म और पच्चयुप्पन्न-धम्म का वर्गीकरण, अनंतरपच्चय के वर्गीकरण के समान ही है।

समनंतर को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? समनंतर को 'पूर्ण निकटता' के अर्थ में समझा जाना चाहिए। कैसे? एक पत्थर के स्तंभ में, यद्यपि उसमें मौजूद पदार्थ के समूह एक पिंड में एकजुट प्रतीत होते हैं, फिर भी उनमें सीमा या स्थान का भौतिक गुण मौजूद होता है, क्योंकि पदार्थ सारगर्भित और सृजनशील होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि पदार्थ की किन्हीं भी दो इकाइयों के बीच एक स्थान होता है, जिसे मध्यस्थ या गुहा कहा जाता है। परन्तु अभौतिक गुणों के साथ ऐसा नहीं है। मन और मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं के दो क्रमिक समूहों के बीच कोई स्थान, मध्यस्थ या गुहा नहीं होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि वे (मन और मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं के समूह) पूरी तरह से किसी भी मध्यस्थता से रहित होते हैं, क्योंकि मानसिक अवस्था सारगर्भित और सृजनशील नहीं होती है। दो क्रमिक मानसिक समूहों और मानसिक सहवर्ती तत्वों के बीच की मध्यस्थता भी संसार को ज्ञात नहीं है। अतः यह माना जाता है कि मन स्थायी, स्थिर, गतिहीन और अपरिवर्तनीय है। अतः 'समानंतर' को 'पूर्ण तात्कालिकता' के अर्थ में समझा जाना चाहिए।

अनंतरत्थ को उपरोक्त संबंध में इस प्रकार भी समझाया गया है: अत्तनो अनंतरे अत्तसदिसस धम्मंतरस उप्पादनत्थेन; ऐसा इसलिए है क्योंकि यह अपने समान घटनाओं की अवस्थाओं को तुरंत बाद घटित होने का कारण बनता है। ऐसा होने पर, निम्नलिखित सुझाव दिया जा सकता है: 'स्थायी विराम'[15] (निरोधसमापत्ति) के समय, पूर्ववर्ती चेतना न तो चेतना है और न ही अचेतना, और अनुवर्ती चेतना आर्य फल की है। चेतना के इन दो वर्गों के बीच, विचार का पूर्ण निलंबन एक दिन, दो दिन, तीन दिन... या यहाँ तक कि सात दिनों के लिए भी होता है। अचेतन प्राणियों के निवास में, पूर्ववर्ती चेतना पिछले कमललोक से मृत्यु (चटचित्त, मरणशील विचार) की होती है; और अनुवर्ती चेतना अगले कमललोक में पुनर्जन्म (पतिसंधिचित्त) की होती है। चेतना के इन दो वर्गों के बीच, अचेतन प्राणी के विचार पूर्णतः पाँच सौ कल्पों के जीवनकाल तक निलंबित रहते हैं।

अतः, क्या यह कहना सही नहीं है कि पूर्ववर्ती चेतना के दोनों वर्गों में तुरंत बाद अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता नहीं होती? इसका उत्तर है: नहीं, उनमें यह क्षमता नहीं होती। कुछ गहन चिंतन और संकल्पों के कारण यह क्षमता कुछ समय के लिए बाधित हो जाती है। जब पूर्ववर्ती विचार समाप्त होते हैं, तो वे अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता के साथ समाप्त हो जाते हैं। और बाद के विचार, उस क्षण में निरंतरता में उत्पन्न होने में असमर्थ होने के कारण, उक्त समय बीतने के बाद ही उत्पन्न होते हैं। यह कहना उचित नहीं है कि उनमें (पूर्ववर्ती विचारों में) अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता नहीं होती, या वे अनंत-संबंध नहीं हैं, केवल इस क्षमता के निष्क्रिय होने के कारण। क्योंकि, हम राजा की सेनाओं की बात तब नहीं करते जब वे वास्तव में युद्ध में न हों या लड़ाई की क्रिया में न हों, या जब वे इधर-उधर घूम रही हों और राजा द्वारा उन्हें लड़ने के लिए न कहा गया हो, क्योंकि ऐसे समय में राजा कह सकता है, "मेरे सैनिकों, अभी तुम्हारे लड़ने का उचित समय नहीं है। लेकिन तुम अमुक समय पर लड़ोगे।" तब हम यह नहीं कहते कि वे सेनाएँ नहीं हैं या उनमें युद्ध क्षमता नहीं है। ठीक इसी प्रकार, उपरोक्त दो विचारों के बीच संबंध को समझा जाना चाहिए।

यहाँ कुछ लोग कह सकते हैं: 'इस संबंध में अभी-अभी कहा गया है कि संबंध स्थापित करने वाली और संबंधित वस्तुएँ, निराकार गुण होने के कारण जिनका कोई रूप नहीं है और जिनका बीच में आने वाली किसी भी भौतिक सीमा (स्थान) से कोई संबंध नहीं है, पूरी तरह से मध्यस्थता या रिक्ति से रहित हैं। यदि ऐसा है, तो हम चेतना के हर क्षण उत्पन्न होने और समाप्त होने पर कैसे विश्वास करेंगे, जिसे अरम्मन-पच्चय में घंटा और वायलिन की ध्वनि के उदाहरण से समझाया गया है?' हम इस प्रश्न का उत्तर इस तथ्य को प्रतिपादित करके दे सकते हैं, जो मनोवैज्ञानिक जगत में सर्वथा स्पष्ट है, कि चेतना के विभिन्न वर्ग निरंतर परिवर्तनशील अवस्था में हैं, अर्थात् निरंतर परिवर्तन के क्रम में हैं। चित्त यमका पर लिखे निबंधों में भी इसका विस्तृत वर्णन किया गया है।

समनंतर-संबंधों का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 6.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

6. सहजता-पच्चय या सहअस्तित्व का संबंध:

इस संबंध के पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्मों के वर्गीकरण पर अब चर्चा की जाएगी। चेतना के सभी सहअस्तित्व वाले वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। इसी प्रकार, पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय और मन का आधार, जो पुनर्जन्म के साथ सहअस्तित्व में रहते हैं; और इसी प्रकार, महा तत्व भी परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। पुनर्जन्म के समय कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण और जीवन के दौरान, चेतना की प्रत्येक क्षणिक अवस्था (जो भौतिक गुण उत्पन्न करने में सक्षम है) के आरंभिक क्षण में मन से उत्पन्न सभी भौतिक गुण, उस सहअस्तित्व वाली चेतना के पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। महा तत्वों से व्युत्पन्न सभी भौतिक गुणों को महा तत्वों के पच्चयुप्पन्न-धम्म कहा जाता है।

सहजता को किस अर्थ में और पच्चय को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? सहजता का अर्थ सहअस्तित्व है, और पच्चय का अर्थ सहायता प्रदान करना है। यहाँ सहअस्तित्व का अर्थ है कि जब कोई घटना उत्पन्न होती है, तो वह अपने प्रभाव के साथ उत्पन्न होती है; या दूसरे शब्दों में, अपने प्रभाव को भी साथ-साथ उत्पन्न करती है। सहअस्तित्व का यही अर्थ यहाँ निहित है। उदाहरण के लिए, जब सूर्य उदय होता है, तो वह अपनी ऊष्मा और प्रकाश के साथ उदय होता है। और जब मोमबत्ती जलती है, तो वह अपनी ऊष्मा और प्रकाश के साथ जलती है। इसी प्रकार, यह संबंधित वस्तु भी उत्पन्न होने पर संबंधित वस्तुओं के साथ उत्पन्न होती है।

इस उदाहरण में, सूर्य प्रत्येक मानसिक अवस्था के समान है; सूर्य की ऊष्मा सहअस्तित्व वाली मानसिक अवस्थाओं के समान है; और सूर्य का प्रकाश सहअस्तित्व वाले भौतिक गुणों के समान है। इसी प्रकार, सूर्य प्रत्येक महा तत्व के समान है; उसकी ऊष्मा सहअस्तित्व वाले महा तत्वों के समान है; और उसका प्रकाश उनसे उत्पन्न सहअस्तित्व वाले भौतिक गुणों के समान है। मोमबत्ती के उदाहरण में भी इसे इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

सहजता-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

7. अन्नमन्न-पच्चय या पारस्परिकता का संबंध

सहअस्तित्व के वर्गीकरण में जिन पच्चय-धम्मों का उल्लेख किया गया है, वे यहाँ (इस संबंध में) पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म दोनों हैं। चेतना की सभी अवस्थाएँ और उनके मानसिक सहवर्ती, परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं; इसी प्रकार सहअस्तित्व में रहने वाले महा तत्व हैं; पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय हैं; और इसी प्रकार मन का आधार या हृदय-आधार है जो पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय के साथ सहअस्तित्व में रहता है।

यहाँ निहित अर्थ को समझना आसान है। हालाँकि, एक उदाहरण देना रोचक होगा। जब तीन छड़ियों को उनके ऊपरी सिरों पर एक दूसरे के सहारे सीधा खड़ा किया जाता है, तो उनमें से प्रत्येक अन्य दो पर निर्भर होती है और अन्य दो से निर्भर होती है। जब तक उनमें से एक इस प्रकार सीधी स्थिति में रहती है, तब तक सभी उसी स्थिति में रहेंगी। और, यदि उनमें से एक भी गिर जाए, तो सभी एक साथ गिर जाएँगे। इस पारस्परिक संबंध को ठीक इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

यहाँ, यदि कोई यह दावा करे कि चेतना के बिना मानसिक गुण उत्पन्न नहीं हो सकते, तो हम इस बात को स्वीकार करेंगे। क्यों? क्योंकि मानसिक गुणों के संपर्क आदि कार्यों में जानने का कार्य सर्वोपरि है, और सर्वज्ञ बुद्ध द्वारा प्रतिपादित धम्मपद में, 'मन सर्वोपरि है' (मनोपुब्बंगम धम्म, आदि)। और फिर यदि कोई यह मानता है कि मानसिक गुणों के बिना चेतना भी उत्पन्न नहीं हो सकती, तो हम इस दृष्टिकोण का समर्थन करेंगे। वे (मानसिक गुण) चेतना के सहवर्ती कारक हैं; इसलिए, चेतना भी अपने सहवर्ती मानसिक गुणों के बिना उत्पन्न नहीं हो सकती। इसी प्रकार चार महा तत्व भी समझे जाने चाहिए। लेकिन उनसे व्युत्पन्न मानसिक गुणों को सहवर्ती कारक नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि वे केवल व्युत्पन्न हैं। तो क्या जीवन के भौतिक गुण और भोजन से उत्पन्न गुण सहवर्ती कारक नहीं हैं, यह देखते हुए कि वे व्यक्तिगत रूप से नियंत्रण और भोजन के कारण-कार्य संबंध को क्रियान्वित कर सकते हैं? नहीं, वे नहीं हैं। उन्हें सहवर्ती कारक तभी माना जा सकता है जब विकास पूर्ण गति से चल रहा हो, न कि तब जब चीजें केवल उत्पत्ति की अवस्था में हों। इस पारस्परिकता के संबंध में, उत्पत्ति की अवस्था में सहवर्ती कारकों का उत्पन्न होना एक आवश्यक कारक है।

अन्नमन्ना-संबंध का अंत।

रिश्तों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

8. निस्साय पच्चय या आश्रितता संबंध

आश्रितता संबंध तीन प्रकार के होते हैं: सहअस्तित्वगत आश्रितता, पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता और पूर्व-वस्तुगत आधारभूत आश्रितता।

इनमें से सहअस्तित्वगत आश्रितता संबंध क्या है? सहअस्तित्वगत आश्रितता संबंध में वे सभी तत्व समाहित होते हैं जो पहले से ही सहअस्तित्व संबंध में शामिल हैं। अतः, संबंध और संबंधित वस्तुओं के वर्गीकरण को यहाँ उसी प्रकार समझा जाना चाहिए जैसे सहअस्तित्व संबंध अनुभाग में बताया गया है।

और पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता संबंध क्या है? छह आधार हैं - आँख, कान, नाक, जीभ, शरीर और हृदय। ये छह आधार, जीवन के दौरान, पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता के माध्यम से, सात ज्ञान तत्वों से कारणिक रूप से संबंधित होते हैं। भौतिक आधार स्वयं पूर्व-अस्तित्व में होता है और आधार या आधारभूत तत्व के रूप में कार्य करता है, इसलिए इसे 'पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता' कहा जाता है। यहां 'आधार' शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है क्योंकि यह मन और मानसिक गुणों के लिए एक आधार या आधारभूत तत्व है। 'पूर्व-अस्तित्व' का अर्थ है पहले से विद्यमान होना—अपने संबंधित विषय से एक विचार-क्षण पहले।

यहां पुनर्जन्म चेतना हृदय आधार[16] पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होती है, क्योंकि उस क्षण कोई पूर्व-अस्तित्व वाला भौतिक आधार नहीं होता। और प्रथम जीवन-सम्क्रम उसी हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो पुनर्जन्म चेतना के साथ सह-अस्तित्व में होता है। द्वितीय जीवन-सम्क्रम भी हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो प्रथम जीवन-सम्क्रम के साथ सह-अस्तित्व में होता है, और इसी प्रकार शेष भी, अर्थात् तृतीय जीवन-सम्क्रम हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो द्वितीय जीवन-सम्क्रम के साथ सह-अस्तित्व में होता है, और इसी प्रकार मृत्यु के क्षण तक चलता रहता है। इस प्रकार 'आधारभूत पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' को समझा जाना चाहिए जो संज्ञान के दो तत्वों, बोध तत्व और समझ तत्व से संबंधित है।

जैसे वायलिन तभी बजता है जब वायलिन का धनुष उसके तारों पर चलता है, अन्यथा नहीं, उसी प्रकार पाँचों इंद्रियाँ तभी जागृत होती हैं जब पाँच प्रकार की इंद्रिय-वस्तुएँ पाँच आधारों में प्रवेश करती हैं, अन्यथा नहीं।

यह अनुभूति केवल वस्तु और आधार की स्थिर अवस्था में ही संभव है। इस अनुभूति के कारण जीवन-सम्प्रवाह दो क्षणों के लिए कंपन करता है। और जीवन-सम्प्रवाह के कंपन के कारण बोध उत्पन्न होता है। बोध के कारण पाँचों इंद्रिय-ज्ञान उत्पन्न हो पाते हैं। इसलिए, पाँच इंद्रिय-आधार (आँख, कान, आदि) जो भूतकाल की अवचेतन अवस्था के आरंभिक क्षण में उत्पन्न हुए थे, वे पाँच इंद्रिय-ज्ञान तत्वों के 'मूल पूर्व-अस्तित्व वाले आधार' हैं।

अब, मृत्यु के समय सभी छह आधार सत्रहवीं अवचेतना के आरंभिक क्षण में ही अस्तित्व में आते हैं, जिसकी गणना मरणशील चेतना से पीछे की ओर की जाती है। उस सत्रहवीं अवचेतना के बाद कोई नया आधार उत्पन्न नहीं होता। अतः, मृत्यु के समय, सभी अवचेतना, सभी छह द्वार-प्रक्रिया-ज्ञान और मृत्यु की चेतना इन पर, उनके संबंधित आधारों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती हैं, जो उनसे पहले उत्पन्न हुई सत्रहवीं अवचेतना के साथ अस्तित्व में आए थे। यही 'आधारभूत पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारण-कार्य संबंध है।

'आधारभूत वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारण-कार्य संबंध क्या है? जब कोई चिंतन कर रहा होता है और यह विचार रखता है कि 'मेरा मन लालसा, अहंकार और त्रुटि के कारण स्वयं को उस पदार्थ पर निर्भर पाता है जो मेरा है, या मैं स्वयं, या मेरा अत्ता है'; या जब कोई इस प्रकार तर्क या चिंतन कर रहा हो: 'मेरा मन स्वयं को उस पदार्थ पर निर्भर पाता है जो अनित्य, निर्जीव और आत्माहीन है", तब निर्धारण आदि जैसी मानसिक अनुभूतियाँ उत्पन्न होती हैं। उस समय, प्रत्येक भौतिक आधार प्रत्येक मानसिक अनुभूति का आधार और वस्तु बन जाता है। अतः, अमुक हृदय-आधार अमुक चेतना और उसके सहवर्ती तत्वों से मूलभूत वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित है। यह 'बुनियादी वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारणिक संबंध है। अतः निर्भरता का संबंध तीन प्रकार का होता है।

यहाँ, सुत्तंत के माध्यम से निर्भरता का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। हम जानते हैं कि मनुष्य, पशु, वृक्ष आदि पृथ्वी पर स्थित या विश्राम करते हैं; पृथ्वी बदले में, वायु के विशाल द्रव्यमान पर; और वायु, नीचे के असीम रिक्त स्थान पर। हम यह भी जानते हैं कि मनुष्य घरों में निवास करते हैं; विहारों या मठों में भिक्षु; स्वर्गलोकों में देवता; और इसी प्रकार संपूर्ण ब्रह्मांड। इस प्रकार हमें यह समझना चाहिए कि प्रत्येक वस्तु किसी न किसी प्रकार से कारणवश संबंधित है।

निस्साय-संबंध का समापन।

9. उपनिषय-पच्चय या पर्याप्तता का संबंध

पर्याप्तता का संबंध तीन प्रकार का होता है: वस्तुनिष्ठ पर्याप्तता, निकटवर्ती पर्याप्तता और प्राकृतिक पर्याप्तता। इन तीनों में से, पहली वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व के समान है, और दूसरी निकटता के समान है।

'प्राकृतिक पर्याप्तता' क्या है? चेतना के सभी भूतकाल, वर्तमान और भविष्य के वर्ग, आंतरिक और बाह्य, उनके सहवर्ती तत्वों सहित, सभी भौतिक गुण, निर्वाण और अवधारणाएँ (पन्नत्ति), प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं, जो वर्तमान चेतना के सभी वर्गों और उनके सहवर्ती तत्वों से अलग-अलग रूप से संबंधित हैं।

यहाँ, निर्वाण प्राप्त कर चुके बुद्ध, उनका धम्म, उनके पवित्र शिष्यों का समुदाय और मान्यता प्राप्त समुदाय की परंपराएँ, हम बाद की पीढ़ियों के लिए अच्छे कर्मों की खेती के लिए प्राकृतिक पर्याप्तता के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। इसी प्रकार, हमारे पूर्वज, माता-पिता, शिक्षक, ज्ञानी भिक्षु और ब्राह्मण, प्रख्यात दार्शनिक और शक्तिशाली एवं महान राजाओं के रूप में, आने वाली पीढ़ियों से स्वाभाविक रूप से जुड़े हुए हैं, चाहे वह अच्छे या बुरे गुणों के विकास के लिए हो या सुख या दुख के अनुभव के लिए। इसी कारण उन्होंने आने वाली पीढ़ियों के कल्याण और अन्य लाभों के लिए विभिन्न नैतिक और अनैतिक नियम और कहावतें तथा सांसारिक संस्थाएँ स्थापित कीं या प्रतिपादित कीं। आने वाली पीढ़ियाँ भी उनके मार्ग का अनुसरण करती हैं और दान-पुण्य करके, उपदेशों का पालन करके, संसार के नैतिक और सामाजिक नियमों का अभ्यास करके, विभिन्न धार्मिक मान्यताओं का पालन करके, विभिन्न प्रकार के व्यवसाय अपनाकर, कला और विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन करके, गाँवों, कस्बों और शहरों का शासन करके, खेतों में कृषक बनकर, झीलें, तालाब और कुएँ खोदकर, घर बनाकर, गाड़ियाँ और रथ बनाकर, नावें, स्टीमर और जहाज बनाकर, और चाँदी, सोना, बहुमूल्य पत्थर, मोती आदि धन की खोज और संचय करके उनकी परंपराओं को अपनाती हैं। इस प्रकार संसार का निरंतर विकास हुआ है।

भविष्य के बुद्ध (मत्तेय), उनका धम्म और उनका बंधुआ समुदाय वर्तमान पीढ़ी से कारणवश संबंधित होने के कारण सद्गुणों की प्राप्ति और पुण्य कमाने के लिए स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं। सर्वोच्चता, धन, शक्ति, समृद्धि—जो भविष्य में प्राप्त होने वाली हैं—वे भी वर्तमान पीढ़ी के लिए सभी प्रकार के प्रयासों को करने हेतु स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं। सुखमय जीवन और धन की प्राप्ति तथा पथ, फल और निर्वाण की प्राप्ति—जो भविष्य में प्राप्त होने वाली हैं—वे भी वर्तमान पीढ़ी के लिए दान, सद्गुण आदि गुणों के विकास हेतु स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं।

सर्दियों में फसल काटने की उम्मीद में, लोग बरसात के मौसम में ज़मीन जोतते और बीज बोते हैं, या श्रम और बुद्धि से प्रेरित कई तरह के काम करते हैं, इस उम्मीद में कि काम पूरा होने पर उन्हें धन मिलेगा। अब, फसल काटना और धन प्राप्त करना, भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं, जो फसल और धन की प्राप्ति से संबंधित हैं। इसी प्रकार, अधिकांश लोग वर्तमान जीवन में कई अच्छे कर्म करते हैं, यह जानते हुए कि उन्हें परलोक में अपने कर्मों का फल मिलेगा। इस स्थिति में, भविष्य में प्राप्त होने वाले फल, वर्तमान जीवन में किए गए कर्मों से संबंधित भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं। अतीत में किए गए कर्म भी भविष्य में प्राप्त होने वाले फलों से संबंधित अतीत की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तता अतीत की तरह ही व्यापक और विस्तृत है।

जीवित बुद्ध, उनका धर्म, इत्यादि वर्तमान प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति हैं, क्योंकि वे वर्तमान जीवित मनुष्यों, देवताओं और ब्रह्माओं से संबंधित हैं, और इस प्रकार जीवित पुत्रों और पुत्रियों के जीवित माता-पिता हैं, इत्यादि। इस प्रकार वर्तमान प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति स्पष्ट और समझने में आसान है।

आंतरिक प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति वे हैं जो किसी सजीव व्यक्ति में विद्यमान होती हैं, जैसे बुद्ध, इत्यादि। बाह्य प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति वे स्थितियाँ हैं, जैसे भूमि, पर्वत, नदियाँ, महासागर, इत्यादि, जो जीवन (चेतन प्राणियों) के अस्तित्व के लिए विश्राम स्थल के रूप में कार्य करती हैं; या जैसे वन, वृक्ष, घास, अनाज, फलियाँ, इत्यादि; या जैसे चंद्रमा, सूर्य, ग्रह, तारे, इत्यादि; या जैसे वर्षा, अग्नि, वायु, शीत, ताप, इत्यादि, जो किसी न किसी रूप में जीवन के लिए उपयोगी और लाभकारी हैं। ये सभी अधिक शक्तिशाली पर्याप्तता की स्थितियाँ हैं, चाहे अच्छे कर्मों की प्राप्ति के लिए हों या बुराई के प्रसार के लिए। या तो सुखों के भोग के लिए या दुखों के कष्ट सहने के लिए।

जो लोग वर्तमान जीवन में निर्वाण प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रखते हैं, वे ज्ञानोदय के कारकों पर कार्य करते हैं। जो लोग आने वाले जन्मों में, जब बुद्ध प्रकट होंगे, निर्वाण प्राप्त करने की प्रबल आशा रखते हैं, वे पूर्णता की प्राप्ति करते हैं। यहाँ, निर्वाण इन कार्यों के अभ्यास के लिए अधिक शक्तिशाली पर्याप्त शर्त है।

बुद्ध के त्रिपिटकों में पाए जाने वाले या आमतौर पर प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के विचार या नाम-और-अवधारणाएँ भी अनेक चीजों को समझने के लिए पर्याप्त शर्तें हैं।

वास्तव में, यहाँ सभी सशर्त वस्तुएँ तभी अस्तित्व में आती हैं जब उनके लिए वर्तमान कारण या परिस्थितियाँ मौजूद हों, अन्यथा नहीं। और वे तभी स्थिर रहती हैं जब उनके अस्तित्व के लिए वर्तमान कारण हों; अन्यथा वे नहीं रहतीं। इसलिए, उनके उद्भव और उनके रखरखाव के लिए कारणों या परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। हालाँकि, निर्वाण और विचार ऐसी वस्तुएँ हैं, जो बिना शर्त, बिना जन्म और उत्पत्ति के, शाश्वत और अनंत हैं। इसलिए, उनके उद्भव और रखरखाव के लिए किसी कारण की आवश्यकता नहीं है।[17]

नैतिक, नैतिक से कारणिक रूप से संबंधित है, जो एक पर्याप्त शर्त है। इसका स्पष्ट वर्णन पट्टाना में मिलता है, जहाँ कहा गया है: "विश्वास के द्वारा दान दिया जाता है, नियमों का पालन किया जाता है, इत्यादि।" इसी प्रकार, नैतिक और अनैतिक—या अनिर्दिष्ट[18] या अनैतिक—के बीच पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक संबंध इन व्याख्याओं से स्पष्ट होता है: "वासना के कारण हत्या, चोरी इत्यादि की जाती है," और "उपयुक्त जलवायु और भोजन के द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य इत्यादि प्राप्त होता है।" नैतिक, अनैतिक से भी एक अधिक सशक्त पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित है। यह निम्नलिखित व्याख्या से समझा जा सकता है: "कोई दान दे सकता है और इस प्रकार स्वयं को श्रेष्ठ और दूसरों को नीचा दिखा सकता है। उसी प्रकार, नियमों का पालन करके, मन की एकाग्रता प्राप्त करके और ज्ञान अर्जित करके, कोई स्वयं को श्रेष्ठ और दूसरों को नीचा दिखा सकता है।"

नैतिक गुण अनैतिक गुणों से भी अधिक प्रबल कारणवश संबंधित हैं। चारों लोकों (काम, रूप, अरूप और लोकउत्तर) में किए गए सभी अच्छे कर्म और अच्छे कर्मों से जुड़े सभी कार्य, अधिक प्रबल कारणवश, भविष्य में उत्पन्न होने वाले अनैतिक गुणों से संबंधित हैं। दान की सिद्धि का अभ्यास करने वाले शारीरिक और मानसिक पीड़ा सहते हैं। इसी प्रकार, नैतिकता, त्याग, ज्ञान, दृढ़ता, धैर्य, निष्ठा, संकल्प, प्रेम और त्याग जैसे अन्य गुणों (परमिता) का अभ्यास करने वाले भी यही पीड़ा सहते हैं। ध्यान और मार्ग (अलौकिक विचार और आध्यात्मिक मार्ग) का अभ्यास करने वालों के साथ भी यही स्थिति है।

अनैतिक गुण भी अधिक प्रबल कारणवश नैतिक गुणों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए, इस पृथ्वी पर कुछ लोग, गलत कर्म करके, अपने कर्मों का पश्चाताप करते हैं और दान, धर्मोपदेशों का पालन, ध्यान और ध्यान जैसे नैतिक कार्यों को अपनाकर ऐसे सभी बुरे कर्मों से दूर रहने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार, उनके द्वारा किए गए बुरे कर्म, एक प्रबल कारण के रूप में, उनके द्वारा बाद में अपनाए गए नैतिक कर्मों से संबंधित हैं।

इसी प्रकार, अनैतिक कर्म, एक अधिक प्रबल कारण के रूप में, अनैतिक कर्मों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए, इस संसार में बहुत से लोग, बुरे कर्मों के दोषी होने के कारण, दुख के चार लोकों में से किसी एक में गिरने और वहाँ व्याप्त कष्टों को भोगने के लिए नियत हैं। यहाँ तक कि वर्तमान जीवन में भी, कुछ लोगों को अपने या दूसरों के कुकर्मों के कारण अत्यधिक कष्ट सहना पड़ता है। वहीं, कुछ लोग अपने कुकर्मों से अर्जित धन से अनेक प्रकार के सुखों का आनंद लेते हैं। ऐसे भी बहुत से लोग हैं जो काम, घृणा, त्रुटि, अहंकार आदि के कारण बहुत कष्ट भोगते हैं।

अनैतिकताएँ भी नैतिक गुणों से अधिक प्रबल पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। अपार धनवान होने पर व्यक्ति दान करता है, अच्छे नैतिक गुणों की पूर्णता के लिए अभ्यास करता है, ज्ञान का संवर्धन करता है और किसी उपयुक्त स्थान, जैसे कि मठ, एकांत स्थान, गुफा, वृक्ष, वन, पहाड़ी या गाँव में धार्मिक अनुष्ठान करता है, जहाँ की जलवायु अनुकूल हो और भोजन उपलब्ध हो।

अनैतिकताएँ भी अनैतिकता से अधिक प्रबल पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। आँखों के होने से अनेक बुराइयाँ स्वयं में दृष्टि के कारण उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार हमारे कानों आदि के संबंध में भी यही व्याख्या लागू होती है; इसी प्रकार हाथों, पैरों, तलवारों, शस्त्रों आदि के संबंध में भी। इस प्रकार पर्याप्त शर्त तीन प्रकार की होती है।

सुत्तंत[19] के अनुसार पर्याप्त शर्त का उल्लेख भी यहाँ किया जा सकता है। पिटक ग्रंथों में अनेक ऐसे अंश मिलते हैं, जैसे "पुण्य मित्रों

के साथ संगति से", "पापी साथियों के साथ संगति से", "गाँव में निवास करने से", "वन में निवास करने से", इत्यादि। संक्षेप में, पंच-नियमधम्म (पाँच ब्रह्मांडीय व्यवस्थाएँ) सजीव जगत, निर्जीव जगत और आकाश जगत - इन तीनों लोकों के लिए युगों-युगों तक निरंतर बने रहने के लिए प्रबल और पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं।

अरम्मनुपनिस्सय को ऐसा क्यों कहा जाता है? क्योंकि प्रमुख वस्तु कर्ता (अरम्मनिक) के लिए मुख्य आधार का कार्य करती है।

अनतरूपनिस्सय को ऐसा क्यों कहा जाता है? क्योंकि पूर्ववर्ती चेतना अपने तत्काल अनुवर्ती चेतना के उद्‌भव के लिए मुख्य आधार का कार्य करती है। पूर्ववर्ती चेतना माता के समान है, और अनुवर्ती चेतना पुत्र के समान। यहां, जैसे माता पुत्र को जन्म देती है जिसका अस्तित्व विशेष रूप से माता पर निर्भर करता है, वैसे ही पूर्ववर्ती चेतना अनुवर्ती चेतना को जन्म देती है जिसका अस्तित्व विशेष रूप से पूर्ववर्ती पर निर्भर करता है।

पकातुपानिसया को ऐसा क्यों कहा जाता है? इसे ऐसा इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह स्वाभाविक रूप से बुद्धिमानों द्वारा एक विशिष्ट पर्याप्त स्थिति के रूप में जाना जाता है। यहां, कुछ और कहना आवश्यक है। निकटता में एक पर्याप्त स्थिति का प्रभाव केवल उसके तत्काल अनुवर्ती को ही प्रभावित करता है, जबकि एक प्राकृतिक पर्याप्त स्थिति का प्रभाव कई दूरस्थ स्थितियों को प्रभावित कर सकता है। इसलिए, जो कुछ इस वर्तमान जीवन में दिनों, महीनों, वर्षों पहले देखा, सुना, सूंघा, चखा, छुआ और अनुभव किया गया है, वह सौ वर्षों के बाद भी मन के द्वार पर पुनः प्रकट होता है, यदि कोई पर्याप्त कारण उपलब्ध हो। और इसलिए लोग अपने अतीत को याद करते हैं, और "मैंने इसे पहले देखा था", "मैंने इसे पहले सुना था", आदि जैसे भाव व्यक्त कर सकते हैं। ये प्राणी, जिनका जन्म आभासीय[21] है, अपने पूर्व जन्मों को भी याद करते हैं; इसी प्रकार, कुछ मनुष्य, जिन्हें अपने पूर्व जन्मों की स्मृति का वरदान प्राप्त है, ऐसा कर सकते हैं। यदि पूर्व में अनुभव की गई एक लाख वस्तुओं में से एक भी वस्तु बाद में फिर से मिल जाए, तो कई या शायद,ये सभी विचार प्रक्रिया में पुनः प्रकट होते हैं।

उपनिषय संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 10.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

10. पुरेजात-पच्चय या पूर्व-अस्तित्व का संबंध

पूर्व-अस्तित्व के संबंध तीन प्रकार के होते हैं: मूल पूर्व-अस्तित्व, वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व और मूल वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व।

इनमें से पहले और अंतिम प्रकार पर निस्साय-संबंध पर पिछले खंड में निस्साय शीर्षक के अंतर्गत चर्चा की जा चुकी है।

वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व वर्तमान अठारह प्रकार के भौतिक गुणों को दिया गया नाम है जो निप्पन्न श्रेणी के हैं। इनमें से, वर्तमान पाँच वस्तुएँ (दृश्य रूप, ध्वनि, इत्यादि) वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व के माध्यम से उन विचारों से कारणिक रूप से संबंधित हैं जो पंचद्वार प्रक्रियाओं में भाग लेने में सक्षम हैं। जैसे वायलिन की ध्वनि केवल धनुष से बजाने पर ही उत्पन्न होती है, और ध्वनि उत्पन्न होने के लिए वायलिन के तारों और धनुष दोनों का पूर्व अस्तित्व आवश्यक है, उसी प्रकार वे विचार जो पंच-द्वार प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं, पाँच इंद्रियों के पाँच द्वारों पर पाँच वस्तुओं की उपस्थिति के कारण उत्पन्न होते हैं, जो पाँच आधारों के अलावा और कुछ नहीं हैं। यह उपस्थिति तभी संभव है जब द्वार और वस्तु अपनी स्थिर अवस्था में हों। वे पाँच वस्तुएँ न केवल उस स्थिर अवस्था में पाँच इंद्रियों के पाँच द्वारों पर प्रकट होती हैं, बल्कि वे मन के द्वार पर भी प्रकट होती हैं। इसी कारण जीवन-संचलन दो क्षणों के लिए कंपन करता है, और फिर रुक जाता है; और जीवन-संचलन का रुकना चेतना-श्रृंखला को जन्म देता है। ऐसा होने पर, किसी भी प्रक्रिया में चेतना-श्रृंखला वस्तुओं और आधारों के पूर्व अस्तित्व के बिना उत्पन्न नहीं हो सकती। अठारह प्रकार के निर्धारित भौतिक गुण या तो भूतकाल के होते हैं, क्योंकि वे समाप्त हो चुके हैं; या भविष्यकाल के होते हैं, क्योंकि वे अभी उत्पन्न नहीं हुए हैं; या वर्तमान काल के होते हैं, क्योंकि वे अभी विद्यमान हैं। ये सभी, बिना किसी भेद के, मन के ज्ञान के विषय हो सकते हैं। परन्तु, इनमें से केवल वर्तमान काल के विषय ही वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व के रूप में कार्य करते हैं। और यदि कोई वस्तु जो किसी दूर स्थान पर हो, या दृष्टि से छिपी हो, स्वयं विद्यमान होकर मन का विषय बन जाती है, तो उसे भी वर्तमान काल का विषय कहा जा सकता है।

पुरेजात संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

11. पच्छाजात-पच्चया या उत्तर-अस्तित्व का संबंध:

प्रत्येक परवर्ती चेतना जो अस्तित्व में आती है, वह चार मूलों[22] (कर्म, चित्त, उतु, आहार) से उत्पन्न पूर्ववर्ती शारीरिक गुणों के समूह से परवर्ती अस्तित्व के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होती है, और उनके विकास और संवर्धन में सहायता करती है। उदाहरण के लिए, प्रत्येक वर्ष गिरने वाला वर्षाजल, पिछले वर्षों में उगी वनस्पतियों को परवर्ती अस्तित्व के माध्यम से उनकी वृद्धि और विकास में सहायता करता है।

यहाँ, "प्रत्येक परवर्ती चेतना" से तात्पर्य प्रथम जीवन-निरंतरता से लेकर अंतिम मृत्यु-विचार तक की सभी चेतनाओं से है। और, "पूर्ववर्ती शारीरिक गुणों" से तात्पर्य चार मूलों से उत्पन्न सभी शारीरिक गुणों से है, जो कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों के समूह से शुरू होते हैं, जो पुनर्जन्म की अवधारणा के साथ सह-अस्तित्व में हैं।

पुनर्जन्म-गर्भधारण के बाद उत्पन्न होने वाली पहली जीवन-गर्भधारण अवस्था से क्रमानुसार प्रारंभ होने वाली जीवन-गर्भधारण की पंद्रह अवस्थाएँ, पुनर्जन्म-गर्भधारण के साथ सह-अस्तित्व में रहने वाले कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों के समूह से उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। पुनर्जन्म-गर्भधारण के संबंध में, यह उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक संबंध नहीं हो सकता, क्योंकि यह कर्म से उत्पन्न शारीरिक गुणों के समूह के साथ सह-अस्तित्व में रहता है। इसी प्रकार, सोलहवीं जीवन-गर्भधारण अवस्था उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक संबंध नहीं बन सकती, क्योंकि यह तभी अस्तित्व में आती है जब भौतिक गुणों का वह समूह विघटन की अवस्था में पहुँच जाता है। अतः, ये "जीवन-गर्भधारण की पंद्रह अवस्थाएँ" हैं जो उपरोक्त अनुसार कारणिक रूप से संबंधित हैं।

पुनर्जन्म-गर्भधारण के स्थिर क्षण में, कर्म से उत्पन्न और ताप से उत्पन्न भौतिक गुणों के दो समूह उत्पन्न होते हैं;[23] और यही स्थिति रुके हुए क्षण में भी होती है। लेकिन जीवन की पहली निरंतरता के आरंभिक क्षण में, तीन समूह उत्पन्न होते हैं: कर्म से उत्पन्न, तापमान से उत्पन्न और मन से उत्पन्न। जब खाए गए भोजन का ओज (पोषक तत्व) पूरे शरीर में फैलता है, तो शारीरिक पोषक तत्व उत्तेजक को अवशोषित कर लेता है और भौतिक गुणों का एक समूह उत्पन्न करता है। उस समय से, चारों मूलों द्वारा उत्पन्न समूह जलते हुए दीपक की लौ की तरह निरंतर उत्पन्न होते रहते हैं। आरंभिक क्षण को छोड़कर, जब तक ये समूह अपनी स्थिर अवस्था में रहते हैं, चेतना के बाद के पंद्रह वर्ग उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से उनकी सहायता करते हैं।

वुद्धिविरुल्लाह का अर्थ है "चार मूलों से उत्पन्न शारीरिक गुणों की श्रृंखला के क्रमिक विकास और प्रगति के लिए।" इसलिए, यदि वे चारों प्रकार के शारीरिक समूह, परलोक के कारण-कार्य संबंध से बार-बार संबंधित होते हैं (शाब्दिक रूप से, बार-बार प्राप्त करते हैं), तो वे अपने भौतिक जीवन काल की समाप्ति के बाद एक शक्तिशाली ऊर्जा छोड़ जाते हैं - एक ऐसी ऊर्जा जो बाद के समूहों की श्रृंखला के विकास, प्रगति और समृद्धि को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त होती है।

पचजाता-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

12. असेवन-पच्चय या आनुवांशिक पुनरावृत्ति का संबंध

बारह प्रकार की अनैतिक चेतना, सत्रह प्रकार की नैतिक चेतना और अठारह प्रकार की निष्क्रिय चेतना (बीस में से दो प्रकार की चेतना, जिन्हें अवज्जन कहा जाता है, को छोड़कर प्राप्त) सहित सैंतालीस प्रकार की सांसारिक अनुभूतियों को यहाँ आनुवांशिक पुनरावृत्ति का कारण-कार्य संबंध कहा गया है। जब इनमें से कोई भी अनुभूति प्रक्रिया (अर्थात, विचार प्रक्रिया में चेतना की सात समान अवस्थाओं का क्रम) तक पहुँचता है, तो प्रत्येक पूर्ववर्ती अनुभूति आनुवांशिक पुनरावृत्ति के माध्यम से प्रत्येक अनुवर्ती अनुभूति से कारण-कार्य संबंध स्थापित करती है। संबंधित वस्तुएँ, पच्चयुप्पन-धम्म, ऊपर वर्णित अनुवर्ती अनुभूतियों के साथ-साथ चार मार्गों को भी समाहित करती हैं।

असेवन शब्द को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसका अर्थ है निरंतर दोहराव से अभ्यस्त होना या अपने पच्चयुप्पन्न-धम्म में इसकी प्रेरणा को ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना, ताकि वे अधिकाधिक निपुणता, ऊर्जा और बल प्राप्त कर सकें। यहाँ 'पगुणभाव' का अर्थ है बाद के बोधात्मक विचारों की बोधात्मक क्रियाओं और अवस्थाओं में निपुणता; जैसे कोई व्यक्ति किसी पाठ को कई बार पढ़ता है तो प्रत्येक बार पढ़ने पर अधिक निपुण हो जाता है।

'परिवासो' का शाब्दिक अर्थ है सुगंधित करना या प्रेरित करना। जैसे रेशमी वस्त्र को मीठी सुगंधों से सुगंधित किया जाता है, वैसे ही विचार शरीर भी, एक प्रकार से, काम, घृणा आदि से; या अनासक्ति (अरज्जन), मित्रता (अदुस्सना) आदि से सुगंधित या प्रेरित होता है। यद्यपि पूर्ववर्ती बोध समाप्त हो जाता है, उसकी बोधात्मक शक्ति समाप्त नहीं होती; अर्थात्, उसकी शक्ति बाद के विचार में व्याप्त रहती है। इसलिए, प्रत्येक आगामी बोध, अस्तित्व में आने पर, पूर्ववर्ती बोध की अभ्यस्तता के कारण अधिक प्रबल हो जाता है। इस प्रकार, तत्काल पूर्ववर्ती विचार अपने तत्काल अनुवर्ती विचार को अभ्यस्त कर देता है या उसे अपनी अभ्यस्तता स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। हालांकि, अभ्यस्त पुनरावृत्ति की प्रक्रिया आमतौर पर सातवें विचार पर रुक जाती है, जिसके बाद या तो विचार प्रतिधारण के परिणामी क्षण आते हैं, या जीवन-निरंतरता में समाहित हो जाते हैं।

यहां, सुत्तंत में वर्णित नियमित पुनरावृत्ति का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। सुत्त पिटक के विभिन्न भागों में अनेक श्लोक मिलते हैं। जैसे: सतिपथानां भवेति: "मनन में गंभीर परिश्रम का अभ्यास करना"; सम्मप्पधानं भवेति: "सर्वोच्च प्रयास का अभ्यास करना"; सति-संबोज्जंगं भवेति: "ज्ञान प्राप्ति के कारक, मनन का अभ्यास करना"; धम्मविचय-संबोज्जंगं भवेति: "ज्ञान प्राप्ति के कारक, सत्य की खोज का अभ्यास करना"; सम्मदित्तिम भवेति: "सही दृष्टिकोण का अभ्यास करना"; सम्मसंकप्पं भवेति: "सही आकांक्षा का अभ्यास करना" आदि। इन अंशों में, "भवेति" से तात्पर्य है प्रयास को एक दिन, सात दिन, एक माह, सात माह, एक वर्ष या सात वर्षों तक दोहराना।

नैतिक और अनैतिक कर्म, जो बार-बार किए गए हों या पूर्व जन्मों में अनेक बार किए गए हों, वर्तमान जन्म के नैतिक और अनैतिक कर्मों से आनुवांशिक पुनरावृत्ति के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होते हैं, जिससे उनमें क्रमशः अधिक सुधार और गिरावट आती है।

वह संबंध जो किसी दूर के समय या भविष्य के जन्म में ऐसे नैतिक और अनैतिक कर्मों में क्रमशः सुधार और गिरावट लाता है, उसे पर्याप्तता कहा जाता है, परन्तु वह संबंध जो केवल प्रत्यक्ष अनुभव के दौरान ऐसा करता है, उसे आनुवांशिक पुनरावृत्ति कहा जाता है।

इस संसार में, कला, विज्ञान, साहित्य आदि में महान उपलब्धियों के अनेक आकस्मिक परिणाम या प्रभाव स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं, जो विचार, वचन और कर्म द्वारा निरंतर, बार-बार और निरंतर रूप से किए गए हैं।

इस प्रकार सभी क्षणभंगुर घटनाओं में पुनरावृत्ति का ऐसा ही संबंध पाया जाता है, और लंबे समय तक किए गए पुरुष उत्साह और प्रयास से इतनी उच्च कोटि का विकास हुआ है कि अनेक महान और कठिन कार्य पूर्ण रूप से संपन्न हुए हैं और यहाँ तक कि बुद्धत्व भी प्राप्त हुआ है।

असेवन-संबंध का अंत।

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

13. **कर्म-पच्चय या कर्म का संबंध (संस्कृत: कर्म)**

कर्म का संबंध दो प्रकार का होता है: सह-अस्तित्व वाला कर्म और अतुल्यकालिक कर्म।

इन दोनों में से, सभी इच्छाएँ, नैतिक, अनैतिक और अनैतिक, जो तीन काल-अवस्थाओं से युक्त हैं, सह-अस्तित्व वाले कर्म के कारण-कार्य संबंध का निर्माण करती हैं। इनसे संबंधित वस्तुएँ हैं: चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती जो इच्छा के साथ सह-अस्तित्व में हैं; कर्म से उत्पन्न भौतिक गुण, जो पुनर्जन्म के साथ ही उत्पन्न होते हैं, और जीवनकाल के दौरान मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण।

भूतकाल की नैतिक और अनैतिक इच्छाएँ अतुल्यकालिक कर्म के कारण-कार्य संबंध का निर्माण करती हैं। इनसे संबंधित वस्तुएँ सांसारिक परिणामी चेतना के सैंतीस वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, और कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण हैं।

कर्म को ऐसा क्यों कहा जाता है? इसे इसके विशिष्ट कार्य के कारण ऐसा कहा जाता है। यह विशिष्ट कार्य स्वयं इच्छाशक्ति (या संकल्प) ही है, और यह प्रत्येक क्रिया पर हावी रहती है। जब भी विचार, शब्द या शरीर की कोई क्रिया होती है, तो इच्छाशक्ति (या संकल्प) ही उसके साथ होने वाली क्रियाओं को निर्धारित करती है, उन्हें आकार देती है या उन्हें एक साथ अपने-अपने कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। इसी कारण, सभी क्रियाओं में इच्छाशक्ति को सर्वोपरि कहा जाता है। अतः, कर्म को उसके विशिष्ट कार्य के कारण ऐसा कहा जाता है। या, इसे दूसरे शब्दों में कहें तो, कर्म वह है जिसके द्वारा प्राणी क्रिया करते हैं। तो वे क्या करते हैं? वे शारीरिक कार्य, वाक् कार्य और मानसिक कार्य करते हैं। यहाँ, "शारीरिक कार्य" से तात्पर्य खड़े होना, बैठना आदि; आगे-पीछे चलना आदि; और यहाँ तक कि पलकों का खुलना और बंद होना भी है। वाक् कार्य का अर्थ है ध्वनि उत्पन्न करना। मानसिक कार्य का अर्थ है बुद्धिमानी से या बुरी तरह सोचना, और संक्षेप में, पाँचों इंद्रियों द्वारा देखना, सुनना आदि क्रियाएँ करना। इस प्रकार, प्राणियों की सभी क्रियाएँ इसी इच्छाशक्ति द्वारा निर्धारित होती हैं। अतः इसे कर्म कहा जाता है।

सहजता वह है जो अपने संबंधित पदार्थों के साथ एक साथ अस्तित्व में आती है। सहजतकम्मा सह-अस्तित्ववान पदार्थ होने के साथ-साथ कर्म भी है। सहजतकम्मा-पच्चय सह-अस्तित्ववान कर्म के माध्यम से (अपने प्रभावों से) स्थापित एक कारण-कार्य संबंध है।

नानकणिकम् वह पदार्थ है जो अपने प्रभावों से समय के संदर्भ में भिन्न होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस समय संकल्प उत्पन्न होता है वह एक समय है और जिस समय उसके प्रभाव घटित होते हैं वह दूसरा समय है; दूसरे शब्दों में, संकल्प अतुल्यकालिक है। अतः अतुल्यकालिक संकल्प वह संकल्प है जो अपने प्रभावों से समय के संदर्भ में भिन्न होता है। इसलिए नानकणिककम्मापच्चय अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से (अपने प्रभावों से) स्थापित एक कारण-कार्य संबंध है। आर्य पथ के साथ सह-अस्तित्व में रहने वाला संकल्प, उसके समाप्त होने के क्षण में ही, तुरंत अपना प्रभाव उत्पन्न करता है, अतः वह भी अतुल्यकालिक है।

यहां, उदाहरण के लिए, दान जैसी नैतिक इच्छाशक्ति, अपने सह-अस्तित्व वाले मन और मानसिक गुणों के साथ-साथ उसी मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से सह-अस्तित्व वाले कर्म के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी होती है। यह अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से उस कर्म से उत्पन्न मन और भौतिक गुणों के परिणामी समुच्चय से भी कारणिक रूप से जुड़ी होती है, जो भविष्य में एक दूर के समय में अस्तित्व में आएगा। इस प्रकार, एक इच्छाशक्ति, जो नैतिक और अनैतिक परिणामों वाले कर्म में परिवर्तित होती है, दो अलग-अलग समयों पर दो अलग-अलग संबंधों के माध्यम से अपने संबंधित पदार्थों से कारणिक रूप से जुड़ी होती है।

इस अतुल्यकालिक कर्म संबंध में, कर्म एक विशिष्ट ऊर्जा का प्रतीक है। यह इच्छाशक्ति के समाप्त होने पर भी समाप्त नहीं होती, बल्कि मन के अनुक्रमों का अप्रत्यक्ष रूप से अनुसरण करती है। जैसे ही इसे अनुकूल अवसर मिलता है, यह मरणशील विचार के समाप्त होने के तुरंत बाद, अगले जन्म में स्वयं को एक व्यक्ति के रूप में परिवर्तित करके प्रभावी हो जाती है। लेकिन, यदि इसे कोई अनुकूल अवसर न मिले, तो यह सैकड़ों जन्मों तक उसी सुप्त अवस्था में रहता है। यदि इसे अनुकूल अवसर मिल जाए, तो ब्रह्मलोक में अगले जन्म में "उत्कृष्ट कर्म" का प्रभाव दिखाई देता है, जब यह स्वयं को ब्रह्मदेव के रूप में रूपांतरित कर लेता है, और इतना परिपक्व हो जाता है कि इस दूसरे जन्म के अंत में यह स्वयं को समाप्त कर लेता है और आगे नहीं बढ़ता।

कर्म-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

14. विपाक-पच्चय या प्रभाव का संबंध:

परिणामी चेतना के छत्तीस वर्ग और उनके सहवर्ती, प्रभाव का संबंध हैं। चूंकि वे एक दूसरे से परस्पर संबंधित हैं, इसलिए संबंधित वस्तुएं उन सभी को समाहित करती हैं, साथ ही गर्भाधान के समय कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों और जीवनकाल में परिणामी चेतना द्वारा उत्पन्न गुणों को भी।

विपाक किस अर्थ में लागू होता है? यह विपच्चन के अर्थ में लागू होता है, जिसका अर्थ है शैशवावस्था या युवावस्था से परिपक्वता की अवस्था में परिवर्तन। किसकी कोमलता और परिपक्वता का तात्पर्य है? पूर्व से तात्पर्य अतीत की इच्छा की शैशवावस्था से है, जिसे अतुल्यकालिक कर्म के रूप में जाना जाता है। परिपक्वता से भी उसी कर्म की परिपक्वता का तात्पर्य है।

यहां यह समझा जाना चाहिए कि प्रत्येक इच्छा की चार अवस्थाएं या समय-चरण होते हैं - चेतना अवस्था, या इच्छा की उत्पत्ति; कर्म अवस्था, या इच्छा की निरंतरता; निमित्तवत्था, यानी इच्छा का निरूपण, और विपकवत्था, यानी अंतिम परिणाम। यहाँ, यद्यपि इच्छा स्वयं समाप्त हो जाती है, उसका विशिष्ट कार्य समाप्त नहीं होता, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से विचारों की श्रृंखला का अनुसरण करता है। इसे कर्मवत्था, या इच्छा की निरंतरता कहा जाता है।

जब कर्म को फलित होने का अनुकूल अवसर मिलता है, तो वह मरने वाले व्यक्ति को स्वयं को प्रकट करता है। अर्थात्, वह स्वयं ऐसा अनुभव करता है जैसे वह दान दे रहा हो, नियमों का पालन कर रहा हो, या शायद किसी प्राणी का वध कर रहा हो। यदि यह कर्म स्वयं को प्रकट करने में विफल रहता है, तो उसका एक प्रतीक प्रकट होता है। अर्थात्, वह स्वयं ऐसा अनुभव करता है जैसे उसके पास भेंट, उपहार, शस्त्र आदि हों; या कोई भी ऐसी वस्तु जिससे उसने अतीत में ऐसा कर्म किया हो। या, कभी-कभी, उसे अगले जन्म का संकेत प्रकट होता है जहाँ उसे अपना नया जीवन प्रारंभ करना होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि देवों के निवास या महल, निरय लोक की अग्नि, या ऐसी ही अन्य वस्तुएँ, जिन्हें अगले जन्म में प्राप्त करना या अनुभव करना उसके भाग्य में लिखा होगा, छह द्वारों से होकर प्रस्तुति के क्षेत्र में प्रवेश करती हैं। इन्हें निमित्तवत्थ कहा जाता है, जो संकल्प का निरूपण है।

अब, हम विपकवत्थ को कैसे समझें? यदि कोई व्यक्ति इन तीन प्रकार की वस्तुओं में से किसी एक पर ध्यान केंद्रित करते हुए मर जाता है, चाहे कर्म पर, उसके चिन्ह पर, या भाग्य के चिन्ह पर, तो कहा जाता है कि कर्म ने नए जन्म में अपना प्रभाव डाला है, या फलीभूत हुआ है। यह एक व्यक्तित्व में रूपांतरित हो जाता है, और नए जन्म में एक प्राणी के रूप में प्रकट होता है। इसे विपकवत्थ, या अंतिम परिणाम कहा जाता है। यहाँ, पहले तीन अवस्थाओं में, इच्छाशक्ति को शैशवावस्था या युवावस्था में कहा गया है।[24] अंतिम अवस्था दर्शाती है कि इच्छाशक्ति परिपक्व हो गई है, और अपना प्रभाव डाल सकती है। इसलिए, जैसा कि कहा गया है, विपच्चन का अर्थ है शैशवावस्था या युवावस्था से परिपक्वता की अवस्था में परिवर्तन। इस प्रकार विपक चेतना की अवस्थाओं और उनके सहवर्ती तत्वों का नाम है, जो इच्छाओं के परिणाम हैं, या स्वयं परिपक्व इच्छाओं का नाम है।

जैसे पके हुए आम बेहद नरम और कोमल होते हैं, वैसे ही उनसे उत्पन्न अवस्थाएँ भी अत्यंत शांत होती हैं, क्योंकि वे निष्क्रिय होती हैं और उनमें कोई उत्तेजना नहीं होती। वे इतनी शांत होती हैं कि अवचेतन मन के विषय हमेशा धुंधले और अस्पष्ट होते हैं। अवचेतन मन से जागृत होने पर व्यक्ति को यह चेतना नहीं रहती कि वह विषय क्या था। इसी कारण, ऐसी विचार प्रक्रिया का होना संभव नहीं है जो अवचेतन के विषय को इस प्रकार प्रतिबिंबित कर सके: "अमुक वस्तु का सामना पिछले जन्म में हुआ था"—यद्यपि, रात्रि के समय नींद में, अवचेतन तीन प्रकार की वस्तुओं (कर्म, कर्म के प्रतीक और भविष्य के भाग्य के प्रतीक) में से किसी एक को अपना विषय बना लेता है, जिसका अनुभव मृत्यु के निकट आने पर, ठीक पिछले जन्म में हुआ था। अतः, व्यक्ति को पिछले जन्म की किसी भी वस्तु के बारे में, चाहे नींद में हो या जागते हुए, कुछ भी ज्ञात नहीं होता। इस प्रकार निष्क्रियता, उत्तेजनाहीनता और शांति के माध्यम से होने वाले पारस्परिक संबंध को विपाक का कार्य कहा जाता है।

विपाक-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

15. आहार-पच्चय या भोजन का संबंध

भोजन का संबंध दो प्रकार का होता है: भौतिक और अभौतिक। इनमें से, भौतिक भोजन का अर्थ पोषक तत्व (या जिसे खाद्य भोजन कहा जाता है) है, जिसे फिर से दो प्रकारों में विभाजित किया गया है: आंतरिक और बाह्य।

खाद्य भोजन पर निर्भर रहने वाले प्राणियों से संबंधित चारों कारणों से उत्पन्न सभी प्राकृतिक गुण, यहाँ भौतिक भोजन के दो प्रकारों से संबंधित पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

अभौतिक भोजन तीन प्रकार का होता है: संपर्क, मन की इच्छाशक्ति और चेतना। ये अभौतिक भोजन, या पच्चय धम्म, सह-अस्तित्व वाले मानसिक और भौतिक गुणों से कारणिक रूप से संबंधित हैं, जो उनके संबंधित पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

आहार को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? आहार को 'मजबूती से थामे रखना' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है "दृढ़ता से अस्तित्व में लाना"। कहने का तात्पर्य यह है कि एक संबंधित वस्तु दूसरी संबंधित वस्तु को पोषण प्रदान करती है ताकि वह दीर्घायु हो सके, विकसित हो सके, फल-फूल सके और समृद्ध हो सके। यद्यपि भोजन का कारण-कार्य संबंध उत्पादक शक्ति रखता है, यहाँ समर्थन शक्ति सर्वोपरि है।

यहाँ दो भौतिक खाद्य पदार्थों को आहार कहा जाता है, क्योंकि वे चार कारणों से उत्पन्न आंतरिक भौतिक गुणों के समूह को दृढ़ता से धारण करते हैं, उन्हें पोषण प्रदान करते हैं ताकि वे दृढ़ता से विद्यमान रहें, दीर्घायु हों और अपने जीवनकाल की सीमाओं तक निर्बाध रूप से पहुँचें।

स्पर्श भी एक आहार है, क्योंकि यह अपने सह-अस्तित्व वाली वस्तुओं को दृढ़ता से धारण करता है और वांछनीय और अवांछनीय वस्तुओं से प्राप्त सार से उन्हें पोषण प्रदान करके उन्हें दृढ़ता से खड़े रहने और दीर्घायु होने में सक्षम बनाता है। मन की इच्छाशक्ति, या (संक्षेप में) संकल्प, एक आहार है क्योंकि यह कर्मों, शब्दों और विचारों के निष्पादन के लिए साहस प्रदान करती है। और चेतना भी एक आहार है, क्योंकि यह किसी वस्तु के बारे में सभी चिंतन में सर्वोपरि है। ये तीनों अमूर्त खाद्य पदार्थ, सह-अस्तित्व वाले मानसिक तत्वों को पोषण प्रदान करने के साथ-साथ सह-अस्तित्व वाले भौतिक तत्वों को भी प्रभावित करते हैं।

यहां आहार की व्याख्या सुत्तंत पद्धति के अनुसार भी की जा सकती है। जिस प्रकार पक्षी अपना निवास स्थान ज्ञात करके अपने पंखों से एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष और एक लट्ठे से दूसरे लट्ठे तक उड़ते हैं और अपनी चोंच से फल चुगते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं, उसी प्रकार प्राणी भी—चेतना के छह वर्गों के द्वारा, वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करके; मन की छह प्रकार की इच्छाशक्ति से, किसी वस्तु को वस्तु के रूप में प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयास करके; और छह प्रकार के स्पर्शों से, वस्तुओं के सार को प्रकट करके—या तो सुख का अनुभव करते हैं या दुःख भोगते हैं। या, केवल चेतना के छह वर्गों के द्वारा, वस्तुओं को समझकर, वे शरीर और मन का निर्माण करते हैं। या, केवल स्पर्शों से, वस्तुओं को प्रकट करके, ताकि उनके द्वारा भाव उत्पन्न हों, वे तृष्णा का विकास करते हैं। या, इच्छाशक्ति से प्रेरित होकर विभिन्न प्रकार के कर्म करके, वे एक जन्म से दूसरे जन्म में विचरण करते हैं। इस प्रकार विभिन्न आहारों की व्यापक कार्यप्रणाली को समझा जा सकता है।

आहार-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

16. इंद्रिय-पच्चय या नियंत्रण का संबंध

नियंत्रण का संबंध तीन प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, पूर्वअस्तित्व और भौतिक जीवन।

इनमें से, प्रथम प्रकार के पच्चय-धम्म[26] पंद्रह सहअस्तित्व वाले नियंत्रण हैं, अर्थात्, मानसिक जीवन, चेतना, सुख, दुख, आनंद, शोक, सुखवादी उदासीनता, विश्वास, ऊर्जा, सजगता, एकाग्रता, तर्क, "मैं अज्ञात को जानूंगा (निर्वाण)" का विचार, "मैं जानता हूं" का विचार और "मैं जान चुका हूं" का विचार। पच्चयुप्पन्न-धम्म इनके सहअस्तित्व वाले गुण हैं, मानसिक और भौतिक दोनों।

द्वितीय प्रकार के पच्चय-धम्म पांच संवेदी अंग हैं: आंख, कान, नाक, जीभ और शरीर। पच्चयुप्पन्न-धम्म पांच इंद्रियां और उनके सहवर्ती तत्व हैं।

तीसरे प्रकार का सिद्धय-धम्म केवल एक ही है, अर्थात् स्वयं भौतिक जीवन। और भौतिक जीवन को छोड़कर कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण इसके सिद्धयप्पन्न-धम्म हैं।

इंद्रिय को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसे "नियंत्रण रखने" के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यह किस पर नियंत्रण रखता है? यह अपने सिद्धयप्पन्न-धम्मों पर नियंत्रण रखता है। किस कार्य में? उनके संबंधित कार्यों में। मानसिक जीवन अपने सह-अस्तित्व वाले मानसिक गुणों पर जीवन प्रदान करने में, अर्थात् निरंतरता द्वारा उनके विस्तार के मामले में नियंत्रण रखता है। चेतना किसी वस्तु के बारे में चिंतन करने के मामले में नियंत्रण रखती है। शेष के कार्य को हमारी हाल ही में प्रकाशित पुस्तक इंद्रिय-यमक-दीपानी में समझाया गया है।

यहाँ, कुछ लोग इस प्रकार का प्रश्न पूछ सकते हैं: "नियंत्रण की श्रेणी में शामिल दो लिंगों - स्त्री और पुरुष - को सिद्धय-धम्मों के रूप में इस संबंध में क्यों नहीं लिया जाता?" उत्तर है: क्योंकि उनमें सिद्धय के कोई कार्य नहीं होते। पच्चया के तीन प्रकार के कार्य होते हैं, अर्थात्, सृजन, पालन और रखरखाव। यहाँ, यदि A, B की उत्पत्ति में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य सृजनात्मक कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B की उत्पत्ति असंभव होती। अनंतार के कार्य का उदाहरण यहाँ दिया जा सकता है। फिर, यदि A, B के अस्तित्व, विकास और समृद्धि में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य पालन और समर्थन करना कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B का अस्तित्व, विकास और समृद्धि संभव नहीं होती। पच्चाजात का संबंध यहाँ एक उदाहरण के रूप में उपयुक्त होगा। और, यदि A, B की निरंतरता में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य पालन और समर्थन करना कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B की निरंतरता बाधित होती और उसकी निरंतरता भी टूट जाती। भौतिक जीवन का कार्य इसे स्पष्ट करेगा।

अब, दोनों लिंग उक्त तीनों कार्यों में से किसी का भी निष्पादन नहीं करते। इसलिए, उन्हें नियंत्रण के इस संबंध में पच्चय-धम्म के रूप में नहीं लिया जाता। यदि ऐसा है, तो क्या उन्हें अभी भी नियंत्रक कहा जाना चाहिए? हाँ, उन्हें नियंत्रक कहा जाना चाहिए। क्यों? क्योंकि उनमें कुछ हद तक नियंत्रक शक्ति होती है। वे शरीर को उसकी यौन संरचना (लिंग), उसके स्वरूप (निमित्त), उसके चरित्र (कुत्त) और उसके बाह्य स्वभाव (अकप्प) में नियंत्रित करते हैं। इसलिए, गर्भाधान के समय, यदि किसी प्राणी में स्त्री लिंग उत्पन्न होता है, तो उसका संपूर्ण व्यक्तित्व, अर्थात् चार कारणों से उत्पन्न पाँच समुच्चय (कर्म आदि), स्त्रीत्व की ओर प्रवृत्त होता है। वास्तव में, संपूर्ण शरीर केवल स्त्री संरचना, स्त्री स्वरूप, स्त्री चरित्र और स्त्री बाह्य स्वभाव को ही प्रदर्शित करता है। यहाँ, न तो स्त्री लिंग इन गुणों को उत्पन्न करता है, न उनका समर्थन करता है और न ही उन्हें बनाए रखता है। लेकिन वास्तव में, जब शरीर (अर्थात पाँचों तत्व) अस्तित्व में आ जाता है, तो लिंग उस पर इस प्रकार नियंत्रण रखता है मानो वह (लिंग) उसे ऐसा बनने का आदेश दे रहा हो। सभी तत्व भी लिंग के अनुरूप हो जाते हैं, न कि उसके विपरीत। स्त्री संरचना में स्त्री की यही नियंत्रण शक्ति है। इसी प्रकार पुरुष संरचना में पुरुष का नियंत्रण होता है। इस प्रकार दोनों लिंग संरचनाओं में नियंत्रणकारी कार्य करते हैं, इसलिए इन्हें नियंत्रक कहा जा सकता है।

हृदय-आधार के संबंध में, यद्यपि यह मन-ज्ञान के दो तत्वों का आधार है, यह उन्हें किसी भी प्रकार से नियंत्रित नहीं करता है। क्योंकि हृदय निर्मल हो या न हो, सुप्रशिक्षित मन वाले व्यक्ति में मन-ज्ञान के तत्व कभी भी इसके अनुरूप नहीं होते।

इंद्रिय-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

17. **झाना-पकाया या झाना का संबंध**

झाना के सात घटक झना के संबंध में पक्काया-धम्म हैं। वे हैं:-- वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचारा (निरंतर अनुप्रयोग), पीति (सुखद रुचि), सोमनस्सा (आनंद), डोमनस्सा (शोक), उपेक्षा (सुख संबंधी उदासीनता) और एकग्गता (व्यक्तिगतकरण की क्षमता के अर्थ में एकाग्रता)। चेतना के सभी वर्ग (पांच इंद्रियों को छोड़कर), उनके सहवर्ती और सात घटकों के साथ सह-अस्तित्व में भौतिक गुण, यहाँ पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

ध्यान को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? ध्यान को निकट से देखने या सक्रिय रूप से देखने के अर्थ में समझा जाना चाहिए; अर्थात्, वस्तु के निकट जाकर उसे मानसिक रूप से देखना। जैसे एक धनुर्धारी—जो दूर से एक छोटे लक्ष्य के मध्य बिंदु पर तीर चला सकता है—तीर को अपने हाथ में मजबूती से पकड़कर, उसे स्थिर रखते हुए, लक्ष्य की ओर निर्देशित करते हुए, लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए, और ध्यानपूर्वक देखते हुए, या बल्कि निशाना साधते हुए, तीर को मध्य बिंदु पर पहुंचा देता है। जिस प्रकार ध्यान किसी वस्तु पर केंद्रित होता है या उसे उसमें समाहित करता है, उसी प्रकार योगी या ध्यान का अभ्यास करने वाले व्यक्ति के बारे में बात करते समय हमें यह कहना चाहिए कि वह अपने मन को वस्तु की ओर निर्देशित करके, उसे स्थिर रखते हुए और कसिना-वस्तु को ध्यान में रखते हुए, ध्यान के इन सात घटकों के माध्यम से अपने मन को उसमें समाहित करता है। इस प्रकार, इन पर ध्यानपूर्वक ध्यान देकर, व्यक्ति अपने शरीर, वचन और मन की क्रियाओं को बिना किसी असफलता के संपन्न करता है। यहाँ, "शरीर की क्रिया" का अर्थ है आगे-पीछे चलना आदि; "वचन की क्रिया" का अर्थ है मौखिक अभिव्यक्ति करना, जैसे अक्षर, शब्द आदि की ध्वनियाँ; "मन की क्रिया" का अर्थ है किसी भी प्रकार की वस्तु के प्रति सचेत रहना। अतः दान देना या जीवन लेना जैसे किसी भी कर्म को कमजोर मन द्वारा नहीं किया जा सकता जिसमें ध्यान के आवश्यक घटक न हों। यही बात सभी नैतिक और अनैतिक कर्मों पर भी लागू होती है।

इसके अर्थ को स्पष्ट रूप से समझने के लिए, ध्यान के प्रत्येक घटक की प्रमुख विशेषता को अलग-अलग समझाया जाना चाहिए। वितक्का की विशेषता है सहवर्ती गुणों को वस्तु की ओर निर्देशित करना। और इसलिए यह मन को विषय पर दृढ़ता से स्थिर कर देता है। विचार की विशेषता है विषय का बार-बार पुनरावलोकन करना, और यह मन को विषय से दृढ़ता से जोड़ देता है। पीति की विशेषता है विषय में रुचि उत्पन्न करना, और मन को उससे प्रसन्न और संतुष्ट करना। वेदना के तीन प्रकार, अर्थात् आनंद, दुःख और उदासीनता, विषय को महसूस करने की विशेषता रखते हैं, और ये भी मन को वांछनीय, अवांछनीय और तटस्थ वस्तुओं के सार का अनुभव करने के लिए स्थिर कर देते हैं। एकाग्ता की विशेषता एकाग्रता है और यह भी मन को विषय पर दृढ़ता से स्थिर रखता है।

ध्यान-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

18. **मार्ग-पच्चय या पथ का संबंध:**

मार्ग के इस संबंध में बारह पथ-घटक पच्चय-धम्म हैं। वे हैं: सही विचार, सही आकांक्षा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता, सही एकाग्रता, गलत विचार, गलत आकांक्षा, गलत प्रयास और गलत एकाग्रता। हालांकि, गलत वाणी, गलत कर्म और गलत आजीविका को अलग-अलग मानसिक गुणों से नहीं जोड़ा जा सकता। ये चार अनैतिक स्कंधों (अकुसला-खंड) के ही

अन्य नाम हैं, जो झूठ आदि के नाम से प्रकट होते हैं। इसलिए इन्हें अलग-अलग पथ-घटक नहीं माना जाता। हेतु से वातानुकूलित चेतना और मानसिक सहवर्ती सभी वर्ग, और हेतु से वातानुकूलित मन के साथ सहअस्तित्व में रहने वाले सभी भौतिक गुण पच्चयुप्पन-धम्म हैं।

मार्ग को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसे मार्ग के अर्थ में समझा जाना चाहिए, अर्थात् दुर्भाग्य के क्षेत्र या निर्वाण के क्षेत्र तक पहुँचने के साधन के रूप में। आठ मार्ग-घटक (सही दृष्टिकोण आदि) निर्वाण की ओर ले जाते हैं। चार गलत मार्ग-घटक दुर्भाग्य के क्षेत्र की ओर ले जाते हैं।

अब ध्यान का कार्य मन को विषय में सीधा, स्थिर और परमानंदित करना है।[28] "परमानंदित मन" का अर्थ है वह मन जो कसिना-विषय में इस प्रकार डूब जाता है जैसे मछली गहरे पानी में। मार्ग का कार्य कर्मिक संकल्प को अस्तित्व के चक्र में प्रवेश के मार्ग में और भावनिक संकल्प को चक्र से बाहर निकलने के मार्ग में सीधा और स्थिर करना है, जिससे एक कार्य-प्रणाली उत्पन्न हो, विकसित हो, फले-फूले और समृद्ध हो, और उच्चतर स्तर तक पहुँचे। यही इन दोनों संबंधों के बीच अंतर है।

यहां, कर्मिक इच्छाशक्ति, जो पुनर्जन्म उत्पन्न कर सकती है—क्योंकि यह नैतिक और अनैतिक कर्मों जैसे कि जीवन लेना आदि में परिणत हुई है—को कर्मपथपत्त कहा गया है। और भावनिक इच्छाशक्ति, जो उच्चतर अवस्थाओं तक पहुँचती है, अर्थात् इंद्रिय अवस्था से पारलौकिक अवस्था तक, उच्चतर अवस्थाओं के अनुक्रम से होकर, व्यवस्थित प्रशिक्षण-अभ्यासों (भावनानुकाम्मा) की शक्ति से, एक शारीरिक मुद्रा के संक्षिप्त समय में भी, आगे बढ़ती है—को भूमंतरपत्त कहा गया है।

इस संबंध को समझने के लिए, प्रत्येक मार्ग-घटक की विशिष्ट पहचान को भी ध्यान के संबंध में दर्शाए गए तरीके से अलग से समझाया जाना चाहिए।

मार्ग-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 19.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

19. **सम्पायुत्त-संबंध या सहभागिता का संबंध**

सहभागिता और वियोग के संबंध एक युग्म बनाते हैं। इसी प्रकार उपस्थिति और अनुपस्थिति तथा स्थगन और निरंतरता के संबंध भी युग्म बनाते हैं। ये तीनों युग्म विशेष नहीं हैं। इनका उल्लेख केवल यह दर्शाने के लिए किया गया है कि उपरोक्त संबंधों में, कुछ सिद्धय-धर्म अपने सिद्धयप्पन्न-धर्मों से सहभागिता द्वारा, और अन्य वियोग द्वारा, कारणवश संबंधित होते हैं; कुछ उपस्थिति द्वारा, अन्य अनुपस्थिति द्वारा; कुछ स्थगन द्वारा, अन्य निरंतरता द्वारा।

यहाँ भी, "अत्थि ति खो, कच्चना, अयम एको अंतो; नत्थि ति खो दुतियो अंतो ति"[29] जैसे वाक्यों में, अत्ति और नत्थि शब्द शाश्वतवाद और विनाशवाद के विधर्मी विचारों को इंगित करने के लिए हैं। अतः, ऐसी व्याख्याओं को रोकने के लिए, संबंधों के अंतिम युग्म का उल्लेख किया गया है।

चेतना और मानसिक गुणों के सभी वर्ग सहभागिता के माध्यम से एक दूसरे से परस्पर संबंधित होते हैं। संपयुत्त को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? संपयुत्त को चार साहचर्य साधनों, अर्थात् समकालिक उत्पत्ति, समकालिक समाप्ति, एकमूलत और एकवस्तु, के द्वारा सहभागिता या विलय के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यहाँ, एकिभवं गति (या विलय) से तात्पर्य है कि दृष्टि की चेतना अपने सात मानसिक गुणों के साथ इस प्रकार समाहित हो जाती है कि उन सभी को संयुक्त रूप से दृष्टि कहा जाता है। इन आठ मानसिक अवस्थाओं को अब उनके विशेष नामों से नहीं पुकारा जाता, क्योंकि वास्तव में इन्हें अलग-अलग जानना कठिन है। यही व्याख्या चेतना के अन्य वर्गों पर भी लागू होती है।

संपयुत्त संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

20. विपयुत्त-पच्चय या वियोग का संबंध:

वियोग का संबंध चार प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, मूल पूर्वअस्तित्व, मूल वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व और उत्तरअस्तित्व। इन चारों में से, सहअस्तित्व वाले वियोग के पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म सहअस्तित्व के संबंध में बताए गए अनुसार मानसिक या भौतिक हो सकते हैं। अतः सहअस्तित्व वाले वियोग के माध्यम से मानसिक, भौतिक से कारणिक रूप से संबंधित होता है, और इसके विपरीत भी। यहाँ "मानसिक" शब्द का प्रयोग पच्चय के रूप में किया जाता है, जिसका अर्थ है जीवनकाल के दौरान चार मानसिक समुच्चय, अर्थात् संवेदना, बोध, मानसिक क्रियाएँ और चेतना; और "भौतिक" शब्द का प्रयोग पच्चयुप्पन्न के रूप में किया जाता है, जिसका अर्थ है मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण। फिर से, जब "भौतिक" को पच्चया कहा जाता है, तो इसका अर्थ गर्भाधान के समय का हृदय-आधार होता है, और जब "मानसिक" को पच्चयुप्पन्ना कहा जाता है, तो इसका अर्थ पुनर्जन्म से संबंधित चार मानसिक समुच्चय होते हैं।

शेष तीन प्रकार के वियोगों की व्याख्या पहले ही की जा चुकी है।

विपयुत्त संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

21. अत्ति-पच्चय या उपस्थिति का संबंध

उपस्थिति का संबंध सात प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, मूल पूर्वअस्तित्व, वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व, मूल वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व, उत्तरअस्तित्व, भौतिक भोजन और भौतिक जीवन-नियंत्रण।

इनमें से सहअस्तित्व का संबंध मात्र सहअस्तित्व का है। शेष छह के लिए भी यही व्याख्या की जानी चाहिए, जिनके लिए पहले से ही वर्णित समतुल्य संबंधों का संदर्भ लिया जाना चाहिए। संबंधित और संबंधित वस्तुओं के वर्गीकरण पर प्रत्येक संबंधित संबंध में ऊपर चर्चा की जा चुकी है।

अत्ति-पच्चय क्यों कहा जाता है? अत्ति-पच्चय इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह खान नामक समय के तीन चरणों में उपस्थित होकर अपने प्रभाव से कारणिक रूप से संबंधित होता है।

अत्ति-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

22. नत्थी-पच्चया या स्थगन का संबंध
23. विगत-पच्चया या अनुपस्थिति का संबंध
24. अवगत-पच्चया या निरंतरता का संबंध

अनुपस्थिति का संबंध पूर्णतः निकटता का संबंध है; स्थगन का संबंध भी ऐसा ही है। निरंतरता का संबंध भी उपस्थिति के संबंध के समान ही है। "अत्थी" और "अवगत" शब्दों का अर्थ एक ही है; इसी प्रकार "नत्थी" और "विगत" शब्दों का भी।

नत्थी, विगत और अवगत संबंधों का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 25.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

25. पक्काया-सभागो या संबंधों का संश्लेषण

अब संबंधों का संश्लेषण बताया जाएगा।

सहजता (सहअस्तित्व) के संबंध को पंद्रह प्रकार के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है, यानी चार श्रेष्ठ सहजता, चार मध्यम सहजता, और सात निम्न सहजता। चार श्रेष्ठ सहजताओं में साधारण सहजता, सहजतानिसया (सह-अस्तित्व में निर्भरता), सहजतथि (सह-अस्तित्व में उपस्थिति), और सहजता-अविगत (सह-अस्तित्व में निरंतरता) शामिल हैं। चार मध्यम सहजताओं में अन्नमन्ना (पारस्परिकता), विपाक (प्रभाव), सम्पायुत्त (संघ), और सहजता-विप्पयुत्त (सहअस्तित्व पृथक्करण) शामिल हैं। सात अवर सहजता में हेतु (स्थिति), सहजता-धिपति (सहअस्तित्व प्रभुत्व), सहजता-कम्मा (सहअस्तित्व कम्मा), सहजतारा (सहअस्तित्व भोजन), सहजतंद्रिय (सहअस्तित्व नियंत्रण), झाना और मग्गा (रास्ता) शामिल हैं।

रूपाहार, या भौतिक भोजन तीन प्रकार का होता है: रूपाहार (साधारण भौतिक भोजन), रूपाहरत्ती, और रूपाहारविगत।

रूपा-जीवितिन्द्रिय, या शारीरिक जीवन-नियंत्रण तीन प्रकार का होता है: रूप-जीवितिन्द्रिय, जीवितिन्द्रियत्थि, और रूप-जीवितिन्द्रिय-अविगत।

प्योरजटा (पूर्व-अस्तित्व) के संबंध को सत्रह प्रकारों के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है: छह वत्थु-प्योरजटास (बुनियादी पूर्व-अस्तित्व), छह अरम्मना-प्यूरजटास (उद्देश्य पूर्व-अस्तित्व), और पांच वत्थरमण-प्यूरजटास (बुनियादी उद्देश्य पूर्व-अस्तित्व)। इनमें से छह वत्थु-पुरेजातस हैं वत्थु-पुरेजटा, वत्थुपुरेजातनिस्साय, वत्थु-पुरेजतनिन्द्रिय, वत्थु-पुरेजटा-विप्पयुत्त, वत्थु-पुरेजटाट्ठथि, और वत्थु-पुरेजात-अविगता। छह अरम्मना-पुरेजटा हैं: अरम्मना-पुरेजटा, कुछ अरम्मना, कुछ अरम्मनाधिपति, कुछ अरम्मना-अरम्मनुपनिसया, अरम्मना-पुरेजटाथि, और अरम्मना-पुरेजटा-अविगाटा। किंची अरम्मनम आदि में "किन्सी" और "कोसी" शब्दों का उपयोग केवल वर्तमान निप्पन्न-रूप (कर्म और वातावरण द्वारा निर्धारित भौतिक गुण) को लेने के लिए किया जाता है। पांच वत्थरम्मना-पुरेजटा हैं वत्थरम्मना-पुरेजटा, वत्थरम्मना-पुरेजटा-निस्साय, वत्थरम्मना-पुरेजटा-विप्पयुत्त, वत्थरम्मना-पुरेजटाथि, और वत्थरम्मना-पुरेजटा-अविगटा।

पचजता या उत्तर-अस्तित्व के संबंध को चार प्रकारों के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है: पचजता, पचजता-विप्पयुत्त, पचजतथि, और पचजता-अविगता।

अनंतर (संपन्नता) का संबंध सात प्रकार का है: अनंतर, समानंतर, अनंतापनिसया, असेवन, अनंत-कम्मा, नत्थि और विगत। इनमें से, अनंतर कर्म वह इच्छा है जो एरियन पथ से संबंधित है। यह अपना प्रभाव अर्थात एरियन फल समाप्त होने के तुरंत बाद उत्पन्न करता है।

ऐसे पांच रिश्ते हैं जो किसी भी विशिष्टता में शामिल नहीं होते हैं। ये हैं: शेष अरम्मना, शेष अरम्मनाधिपति, शेष अरम्मनुपनिस्साय, सभी पकतुपनिस्साय, और शेष प्रकार के कर्म जो अतुल्यकालिक कम्म हैं।

इस प्रकार, महान ग्रंथ (पत्थाना) में वर्णित संबंध कुल मिलाकर चौवन प्रकार के हैं।

इन संबंधों में, सभी प्रकार के शुद्धजात, सभी प्रकार के पच्छजात, भौतिक भोजन और शारीरिक जीवन-नियंत्रण वर्तमान संबंध हैं। सभी प्रकार के अनंतार और नानकखानिक कर्म भूतकाल के संबंध हैं। निर्वाण और पद-और-अवधारणा, पन्नत्ति को छोड़कर—अरम्मन और पकातुपनिस्सय के संबंधों को तीन कालों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है: भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल। लेकिन निर्वाण और पद-और-अवधारणा हमेशा समय से परे होते हैं।

इन दो धम्मों—निर्वाण और पन्नत्ति (अवधारणा)—को अप्पच्चया (कारण संबंध से रहित) और असंखत (अप्रतिबंधित) कहा जाता है।[30] क्यों? क्योंकि वे पूर्णतः उत्पत्ति से रहित हैं। जिन वस्तुओं या घटनाओं का जन्म या उत्पत्ति होती है, उन्हें सप्पच्चया (संबंधित वस्तुएँ), संखत (प्रतिबंधित वस्तुएँ) और प्रतीत्यसमुप्पन्न (परिस्थितियों के संयोग से उत्पन्न वस्तुएँ) कहा जाता है। अत: वे दो धर्म, जो न तो उत्पन्न होते हैं और न ही घटित होते हैं, वास्तव में अप्पच्चय और असंखत कहलाते हैं।

संबंधित और परिबद्ध वस्तुओं में एक भी घटना ऐसी नहीं है जो स्थायी, स्थाई, शाश्वत और अपरिवर्तनीय हो। वास्तव में, सभी क्षणभंगुर हैं, क्योंकि वे विघटन के योग्य हैं। क्यों? क्योंकि, अस्तित्व में आने पर, वे किसी न किसी कारण से संबंधित होते हैं, और उनके कारण भी स्थायी नहीं होते।

क्या निर्वाण और अवधारणा पच्चय-धर्म या संबंधित वस्तुएँ नहीं हैं? क्या वे स्थायी और स्थाई नहीं हैं? हाँ, वे हैं, लेकिन कोई भी घटना केवल निर्वाण या अवधारणा के कारण ही पूरी तरह से घटित नहीं होती। घटनाएँ अनेक कारणों से घटित होती हैं या उत्पन्न होती हैं, जो स्थायी और स्थाई नहीं होते।

जो वस्तुएँ स्थायी नहीं होतीं, वे तीनों प्रकार के कष्टों से ग्रसित प्राणियों के लिए सदा कष्टदायी और पीड़ादायक होती हैं। अत: उन्हें उनके भयावह होने के कारण बुरा माना जाता है। यहां तीन प्रकार के कष्ट हैं: "दुःख-दुःखता" (कष्ट के कारण), "संस्कार-दुःखता" (परिस्थितियों के कारण) और "विपरीत-दुःखता" (परिवर्तनशीलता के कारण)। सभी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं और प्रत्येक क्षण विलीन हो रही हैं, यहाँ तक कि एक ही स्थिति में रहते हुए भी।[31] अतः प्राणियों और व्यक्तियों में कोई मूल आत्मा या सार कैसे हो सकता है, जबकि वे अपने पूरे जीवन स्वयं को स्थायी मानते हैं? सब कुछ कष्टों के अधीन है। अतः प्राणियों और व्यक्तियों में कोई मूल आत्मा या सार कैसे हो सकता है जो कष्टों के अधीन हैं और फिर भी सुख की कामना करते हैं? अतः सभी वस्तुएँ सारहीन हैं क्योंकि उनमें कोई मूल नहीं है।

संक्षेप में कहें तो, बुद्ध ने चौबीस संबंधों की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित तथ्य प्रकट किए हैं: सभी बद्ध वस्तुएँ अपने घटित होने, बनने या अस्तित्व में आने के लिए कारणों और परिस्थितियों पर निर्भर हैं, न कि केवल प्राणियों की इच्छा, संकल्प या आदेश पर। और सभी कारणों और परिस्थितियों के अधीन वस्तुओं में से कोई भी ऐसी नहीं है जो कुछ कारणों से अस्तित्व में आती हो; वे वास्तव में अनेक कारणों से ही उत्पन्न होती हैं। अतः, यह व्याख्या आत्माहीनता के सिद्धांत को प्रकट करते हुए अपने चरम पर पहुँचती है।

संबंधों का संश्लेषण समाप्त।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 26.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

26. पच्चया-घटना या संबंधों का समकालिकता:

अब संबंधों के समकालिकता का वर्णन किया जाएगा।

किसी एक संबंधित वस्तु में कारण-संबंधों की समकालिकता को संबंधों का समकालिकता या पच्चया-घटना कहते हैं। सभी घटनाओं को स-पच्चया (कारणों से संबंधित), संखता (कारणों से बद्ध) और प्रतीत्यसमुप्पन (परिस्थितियों के संयोग से उत्पन्न) कहा जाता है,

क्योंकि उत्पन्न होने और बने रहने में वे इन चौबीस कारण-संबंधों के साथ सहअस्तित्व में होती हैं, या उनसे बद्ध होती हैं। तो वे घटनाएँ क्या हैं? वे हैं: चेतना के एक सौ इक्कीस वर्ग, मानसिक गुणों के बावन प्रकार और भौतिक गुणों के अट्ठाईस प्रकार।

इनमें से, चेतना के एक सौ इक्कीस वर्गों को धातु (तत्वों) की श्रेणी के अंतर्गत सात भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

1. दृश्य बोध का तत्व
2. श्रवण बोध का तत्व
3. गंध बोध का तत्व
4. स्वाद बोध का तत्व
5. स्पर्श बोध का तत्व
6. बोध का तत्व
7. समझ का तत्व।

इनमें से:

1. दृष्टि-चेतना के दो वर्गों को दृश्य बोध के तत्व कहा जाता है;
2. ध्वनि-चेतना के दो वर्गों को श्रवण बोध के तत्व कहा जाता है;
3. गंध-चेतना के दो वर्गों को गंध बोध के तत्व कहा जाता है;
4. स्वाद-चेतना के दो वर्गों को स्वाद बोध के तत्व कहा जाता है;
5. स्पर्श-चेतना के दो वर्गों को स्पर्श बोध के तत्व कहा जाता है।
6. "पाँच द्वारों में से किसी एक की ओर मन का ध्यान" (पंचद्वर्वज्जन) और "अनुभूतियों की स्वीकृति" (संपच्चन) के दो वर्ग बोध के तत्व कहलाते हैं;
7. चेतना के शेष एक सौ आठ वर्ग बोध के तत्व कहलाते हैं।

बावन प्रकार के मानसिक गुणों को भी समूहों में विभाजित किया गया है:

- सात सार्वभौमिक
- छह विवरण
- चौदह अनैतिक
- पच्चीस दीप्तिमान।

चौबीस संबंधों में से

पंद्रह संबंध सभी मानसिक अवस्थाओं में समान हैं: अरम्मन, अनंतार, समानंतार, सहजता, अन्नम्मन, निस्सय, उपनिषय, कम्म, आहार, इंद्रिय, सम्पायुत्त, अत्ति, नत्थि, विगत और अविगत।

चेतना या मानसिक गुण का एक भी वर्ग ऐसा नहीं है जो अरम्मन (वस्तु) के कारण संबंध के बिना उत्पन्न होता हो। यही बात अनंतार, समानंतार, सहजता आदि के शेष कारण संबंधों पर भी लागू होती है।

केवल आठ संबंध—हेतु, अधिपति, पुरेजात, असेवन, विपाक, ध्यान, मार्ग और विपायुत्त—कुछ मानसिक अवस्थाओं में समान हैं। इनमें से, हेतु का संबंध केवल हेतु द्वारा निर्धारित चेतना के वर्गों में समान है; अधिपति का संबंध भी केवल अधिपति के साथ सह-अस्तित्व वाले बोधों (जावनों) में समान है। शुद्धजात का संबंध केवल कुछ प्रकार के मनों में ही पाया जाता है; असेवन का संबंध केवल नैतिक, अनैतिक और निष्क्रिय चेतना के बोधगम्य वर्गों में ही पाया जाता है; विपाक का संबंध भी केवल परिणामी मनों में ही पाया जाता है; ध्यान का संबंध चेतना और मानसिक सहवर्ती तत्वों के उन वर्गों में पाया जाता है जो बोध और समझ के तत्वों के अंतर्गत आते हैं; मार्ग का संबंध हेतु द्वारा नियंत्रित मनों के वर्गों में पाया जाता है; विपयुत्त का संबंध अरुपलोक में स्थित मनों के वर्गों में नहीं पाया जाता है। पच्छजात का केवल एक विशेष संबंध भौतिक गुणों में पाया जाता है।

यहाँ इसका विस्तृत विवरण दिया गया है। सात सार्वभौमिक, मानसिक गुण हैं: फस्सा (संपर्क), वेदना (संवेदना), सन्ना (बोध), चेतना

(इच्छाशक्ति), एकग्गत (व्यक्तिगतकरण की क्षमता में एकाग्रता), जीवता (मानसिक जीवन) और मानसिक (ध्यान)।

इनमें से, चेतना अधिपति का संबंध हो सकती है; यह आहार का संबंध हो सकता है, और यह इंद्रिय का संबंध भी हो सकता है; संपर्क केवल आहार का संबंध है; संवेदना इंद्रिय का संबंध हो सकती है, और यह ध्यान का संबंध भी हो सकता है; इच्छाशक्ति कर्म का संबंध हो सकती है, और यह आहार का संबंध भी हो सकता है; एकाग्ता इंद्रिय का संबंध हो सकती है; यह ध्यान का संबंध हो सकती है; और यह मार्ग का संबंध भी हो सकती है; मानसिक जीवन केवल इंद्रिय का संबंध है; शेष दो अवस्थाएँ—बोध और ध्यान—किसी विशेष संबंध में नहीं बँटतीं।

दृष्टि के माध्यम से चेतना सात सार्वभौमिक मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं को प्राप्त करती है, और इस प्रकार वे आठ मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। ये सभी सात संबंधों के माध्यम से एक दूसरे से परस्पर संबंधित हैं: चार उच्चतर सहजता और तीन मध्यम सहजताएँ, वियोग के संबंध को छोड़कर। इन आठ मानसिक अवस्थाओं में, चेतना आहार और इंद्रियों के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होती है। स्पर्श आहार के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है; संवेदना केवल इंद्रियों के माध्यम से शेष अवस्थाओं से संबंधित होती है; संकल्प कर्म और आहार के माध्यम से; एकाग्ता केवल इंद्रियों के माध्यम से; और मानसिक जीवन इंद्रियों के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है। नेत्र का आधार छह प्रकार की वात-पुरेजात अवस्थाओं के माध्यम से इन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है। वर्तमान दृश्य वस्तुएँ, जो उस नेत्र-आधार के मार्ग में प्रवेश करती हैं, चार प्रकार की अरम्मन पुरेजात अवस्थाओं के माध्यम से उन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। चेतना, जिसे दृष्टि चेतना के उदय से ठीक पहले, समाप्ति के क्षण में पंच द्वारों की ओर मुड़ना कहा जाता है, अनंतार की पाँच प्रजातियों के माध्यम से इन आठ मानसिक अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित है। पूर्व जन्मों में किए गए नैतिक और अनैतिक कर्म, अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से क्रमशः इन आठ परिणामी अच्छे और बुरे अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित हैं। अज्ञान (अविज्जा), तृष्णा (तन्हा) और आलिंगन (उपादान) - जो पिछले जन्म में इच्छाशक्ति (कर्म) के साथ सहक्रिया करते थे, और इस वर्तमान जीवन के निवास स्थान, व्यक्ति, ऋतुएँ, भोजन आदि - पकातुपानिस्सय (प्राकृतिक पर्याप्तता) के माध्यम से इन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित हैं। छह संबंध - हेतु, अधिपति, पच्छजात, असेवन, ध्यान और मार्ग - इस प्रकार की चेतना में भाग नहीं लेते हैं, बल्कि केवल शेष अठारह संबंध ही भाग लेते हैं। जिस प्रकार छह संबंध दृष्टि के माध्यम से चेतना में भाग नहीं लेते—केवल अठारह संबंध ही भाग लेते हैं—उसी प्रकार वे श्रवण, गंध आदि के माध्यम से चेतना में भाग लेते हैं।

पांचों इंद्रियों में संबंधों की समकालिकता यहीं समाप्त होती है।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

27. हेतु के बिना चेतना में संबंधों का समकालिक होना:

छह मानसिक गुण हैं जिन्हें विशिष्ट (पकिन्नक) कहा जाता है - वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचार (निरंतर अनुप्रयोग), अधिमोक्खा (निर्णय), वीर्य (प्रयास), पीति (सुखद रुचि), चंदा (कर्म करने की इच्छा)। इनमें से, प्रारंभिक अनुप्रयोग ध्यान और मार्ग के संबंध में भाग लेता है। निरंतर अनुप्रयोग केवल ध्यान में भाग लेता है। प्रयास अधिपति, इंद्रिय और मार्ग के संबंध में भाग लेता है। सुखदद ध्यान में भाग लेता है। कर्म करने की इच्छा अधिपति में भाग लेती है। निर्णय किसी विशिष्ट संबंध में भाग नहीं लेता है।

दस सहवर्ती तत्व, अर्थात् सात सार्वभौमिक तत्व, प्रारंभिक अनुप्रयोग, निरंतर अनुप्रयोग और विशिष्ट तत्वों से निर्णय लेना—चेतना के पाँच वर्गों में पाए जाते हैं, अर्थात् पंच द्वारों की ओर उन्मुख होना, स्वीकृति का द्विगुणित वर्ग और सुखवादी उदासीनता के साथ अन्वेषण का द्विगुणित वर्ग। ये एक संयोजन में ग्यारह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इन तीनों वर्गों में ध्यान क्रिया होती है। संवेदना, एकाग्गत, प्रारंभिक अनुप्रयोग और निरंतर अनुप्रयोग ध्यान संबंध का कार्य करते हैं। चेतना (पंच द्वारों की ओर उन्मुख होना) निष्क्रिय वर्ग से संबंधित है, इसलिए यह विपाक संबंध में नहीं पाई जाती। अतुल्यकालिक कर्म उपनिषय के स्थान पर कार्य करता है। अतः, ऊपर दर्शाए गए पाँच इंद्रियों में अप्राप्य संबंधों से ध्यान को हटाकर और विपाक को शामिल करके, पंच द्वारों की ओर उन्मुख चेतना में भी छह अप्राप्य और अठारह प्राप्य संबंध हैं। चेतना के शेष चार परिणामी वर्गों के संबंध में, विपाक को छोड़ने से पांच संबंध अप्राप्य हो जाते हैं,

और विपाक और ध्यान को जोड़ने से उन्नीस संबंध प्राप्त हो जाते हैं।

आनंद से परिपूर्ण अन्वेषणात्मक चेतना ग्यारह मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं को प्राप्त करती है, अर्थात् उपर्युक्त दस अवस्थाओं के साथ-साथ सुखदायक रुचि। चेतना (मन द्वार की ओर उन्मुख) में ग्यारह सहवर्ती अवस्थाएँ सह-अस्तित्व में होती हैं, और वे प्रयास के साथ होती हैं। वे चेतना के साथ मिलकर बारह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। बारह सहवर्ती अवस्थाएँ, अर्थात् उपर्युक्त दस अवस्थाएँ, सुखदायक रुचि और प्रयास के साथ, सौंदर्यबोधक आनंद की चेतना के साथ सह-अस्तित्व में होती हैं। वे चेतना के साथ मिलकर तेरह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। अन्वेषणात्मक चेतना के तीन वर्गों में से, आनंद से परिपूर्ण वर्ग में अन्य दो वर्गों की तुलना में ध्यान कारकों के संबंध में एक अधिक मानसिक गुण (अर्थात सुखदायक रुचि) होता है: इसलिए, अप्राप्य पाँच और प्राप्त करने योग्य उन्नीस संबंध, सुखवादी उदासीनता से परिपूर्ण अन्वेषणात्मक चेतना के दो वर्गों के समान हैं। चेतना (मन द्वार की ओर उन्मुख) में, प्रमुख गुण केवल "प्रयास" है, जो इंद्रिय और ध्यान के कार्यों को पूरा करता है, लेकिन अधिपति और मार्ग के कार्यों को नहीं। यह चेतना, निष्क्रिय वर्ग की होने के कारण, विपाक संबंध प्राप्त नहीं करती। अतः, विपाक सहित अप्राप्य छह और ध्यान सहित प्राप्य अठारह, पाँच द्वारों की ओर उन्मुख चेतना के समान ही हैं। सौंदर्यबोध की चेतना में भी विपाक संबंध प्राप्त नहीं होता, क्योंकि यह निष्क्रिय वर्ग की है। परन्तु प्रत्यक्ष वर्ग होने के कारण, यह असेवन संबंध में प्राप्त होता है। अतः, विपाक सहित पाँच संबंध अप्राप्य हैं, तथा असेवन सहित उन्नीस संबंध प्राप्य हैं।

हेतु के साथ न होने वाली चेतना में संबंधों की समकालिकता का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **पत्थनुद्देसा दिपनी-अनैतिक चेतना**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

अनैतिक चेतना वर्ग में संबंधों का समकालिकता:

अनैतिक चेतना के बारह वर्ग हैं: दो अज्ञान में निहित, आठ इच्छा में निहित और दो घृणा में निहित। चौदह अनैतिक मानसिक गुण हैं: मोह (सुस्ती), अहिरिका (निर्लज्जता), अनोत्तप्पा (परिणामों की परवाह न करना) और उद्दच्च (विचलित होना) - इन चारों को मोह-चतुर्भुज कहा जाता है; लोभ (लालच), दिठ्ठी (त्रुटि) और मन (अहंकार) - इन तीनों को लोभ-त्रुधि कहा जाता है; दोष (घृणा), इस्सा (ईर्ष्या), मच्छरिया (स्वार्थ) और कुक्कुच्च (चिंता) - इन चारों को दोष-चतुर्भुज कहा जाता है; थिना (आलस्य), मिद्धा (सुस्ती) और विचिचिच्च (भ्रमित) - इन तीनों को पकिन्नक त्रुधि कहा जाता है। इनमें से तीन मूल भाव—लोभ, घृणा और सुस्ती—हेतु संबंध हैं। त्रुटि मार्ग संबंध है। शेष दस मानसिक गुण किसी विशिष्ट संबंध में नहीं आते।

यहाँ, सुस्ती में निहित चेतना के दो वर्ग हैं: उलझन से जुड़ी चेतना और विचलितता से जुड़ी चेतना। इन दोनों में से पहले के साथ पंद्रह मानसिक सहवर्ती भाव विद्यमान होते हैं। इनमें सात सार्वभौमिक भाव, आरंभिक क्रिया, निरंतर क्रिया, प्रयास (विशिष्ट भावों से), मोह-चतुर्भुज और उलझन (अनैतिक भावों से) शामिल हैं। ये चेतना के साथ मिलकर सोलह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इस चेतना में, अर्थात् उलझन से जुड़ी चेतना में, हेतु और मार्ग संबंध भी प्राप्त होते हैं। अर्थात्, सुस्ती हेतु संबंध के रूप में कार्य करती है; आरंभिक क्रिया और प्रयास मार्ग संबंध के रूप में; और एकाग्ता के संबंध में, क्योंकि उलझन से इसके कार्य में बाधा उत्पन्न होती है, यह इंद्रिय और मार्ग के कार्यों का निष्पादन नहीं करती, बल्कि ध्यान के कार्य का निष्पादन करती है। अत: तीन संबंध (अधिपति, पच्छजात, विपाक) प्राप्त नहीं होते; और शेष इक्कीस संबंध इस व्याकुल चेतना में प्राप्त होते हैं जो दुविधा से जुड़ी हुई है।

विचलित चेतना में पंद्रह मानसिक गुण भी होते हैं—"दुविधा" को छोड़कर और "निर्णय" को जोड़कर। ये सभी मिलकर चेतना के साथ सोलह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इस चेतना में, एकग्गत इंद्रिय, ध्यान और मार्ग के कार्य करता है। अत: तीन संबंध प्राप्त नहीं होते, जबकि इक्कीस प्राप्त होते हैं।

सात सार्वभौमिक, छह विशिष्ट, मोह-चतुर्गुण, लोभ-त्रिगुण, आलस्य और सुस्ती—कुल मिलाकर बाईस, ये सभी आठ प्रकार की चेतनाओं के साथ सह-अस्तित्व में हैं, जो इच्छा पर आधारित हैं। इनमें से दो मूल—लालच और सुस्ती—हेतु संबंध हैं; और तीन मानसिक अवस्थाएँ—कर्म की इच्छा, चेतना और प्रयास—अधिपति संबंध हैं। यहाँ अरम्मनधिपति भी प्राप्त होता है। संकल्प कर्म का संबंध है। तीन खाद्य पदार्थ आहार के संबंध हैं। पाँच मानसिक अवस्थाएँ: मन, संवेदना, एकाग्गत, मानसिक जीवन और प्रयास—इंद्रिय

संबंध हैं। पाँच ध्यान कारक, अर्थात् प्रारंभिक क्रिया, निरंतर क्रिया, सुखदायक रुचि, संवेदना और एकाग्रता, ध्यान संबंध हैं। चार मार्ग घटक, अर्थात् प्रारंभिक क्रिया, एकाग्रता, त्रुटि और प्रयास, मार्ग संबंध हैं। अतः केवल दो संबंध (पच्छजात और विपाक) प्राप्त नहीं होते हैं। शेष बाईस प्राप्त होते हैं।

अनैतिक चेतना वर्ग में संबंधों की समकालिकता का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **पथनुद्देसा दीपनी-मन की अवस्थाएँ**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

मन की अवस्थाओं में संबंधों का समकालिकीकरण:

चेतना के इक्यावन "दीप्तिमान" वर्ग हैं। वे हैं: काम-चेतना के चौबीस "दीप्तिमान" वर्ग, रूप-चेतना के पंद्रह वर्ग, अरूप-चेतना के बारह वर्ग और पारलौकिक चेतना के चालीस वर्ग। इनमें से काम-चेतना के चौबीस "दीप्तिमान" वर्ग हैं: नैतिक चेतना के आठ वर्ग, परिणामी प्रकार की "दीप्तिमान" चेतना के आठ वर्ग और निष्क्रिय प्रकार की "दीप्तिमान" चेतना के अन्य आठ वर्ग।

शोभन ("उज्ज्वल") मानसिक गुण पच्चीस प्रकार के होते हैं: अलोभा (निःस्वार्थता), अदोसा (मैत्री), अमोह (बुद्धिमत्ता) - इन तीन को नैतिक हेतस कहा जाता है - सद्धा (विश्वास), सती (दिमागीपन), हिरी (विवेक), ओट्टप्पा (विवेक), तत्रमजहट्टा (मन का संतुलन), कायापसाधि (मानसिक गुणों की स्थिरता), चित्तपसाधि (मन की शांति), काया-लहुता (मानसिक गुणों की उपयुक्तता), चित्त-लहुता (मन की प्रसन्नता), कयामुदुता (मानसिक गुणों की कोमलता), चित्त-मुदाता (मन की कोमलता), कयाकम्मनता (मानसिक गुणों के कार्य की उपयुक्तता), चित्त-कम्मनता (मन के कार्य की उपयुक्तता), काया-पगुन्नता (मानसिक गुणों की दक्षता), चित्त-पगुन्नता (प्रवीणता) मन की), कयुजुकाता (शुद्धता की)। मानसिक गुण (मानसिक गुण), चित्तुजुकाता (मन की शुद्धता), सम्म-वाच (सही वाणी), सम्म-कम्मंत (सही कर्म), सम्म-अजीव (सही आजीविका) - अंतिम तीन को तीन संयम कहा जाता है; करुणा (दया) और मुदिता (सहानुभूतिपूर्ण प्रशंसा) - अंतिम दो को दो असीम कहा जाता है।

इनमें से, तीन नैतिक हेतु हेतुपच्चय हैं। बुद्धि अधिपति संबंध में विमंसा के नाम से, इंद्रिय संबंध में पन्ना के नाम से, और मार्ग संबंध में सम्मदित्ति के नाम से प्रकट होती है। श्रद्धा या विश्वास इंद्रिय संबंध है। सती या सजगता इंद्रिय संबंध में सतिन्द्रिय है, और मार्ग संबंध में सम्मसती है। तीन संयम (सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका) मार्ग संबंध हैं। शेष सत्रह मानसिक अवस्थाएँ विशिष्ट संबंध नहीं हैं।

अड़तीस मानसिक गुण काम-चेतना (काम = इंद्रिय-संबंधी इच्छाएँ) के आठ नैतिक वर्गों के साथ संयोजन में आते हैं। ये हैं: सात सार्वभौमिक, छह विशिष्ट और पच्चीस शोभना। इनमें से, सुखदायक रुचि केवल आनंद से युक्त चेतना के चार वर्गों के साथ संयोजन में आती है। बुद्धि भी ज्ञान से जुड़े चार वर्गों के साथ संयोजन में आती है। तीन संयम केवल नैतिक नियमों या उपदेशों का पालन करने पर ही संयोजन में आते हैं। दो असीम गुण केवल जीवों के दुख के प्रति सहानुभूति रखने या उनके सुख में भागीदार होने पर ही उत्पन्न होते हैं। चेतना के इन आठ वर्गों में, द्वैत या त्रिमूल हेतु संबंध हैं। चार प्रकार के अधिपति, अर्थात् कर्म-इच्छा, मन, प्रयास और अन्वेषण, में से प्रत्येक बारी-बारी से एक अधिपति है। संकल्प कर्म का संबंध है। तीन भोजन आहार के संबंध हैं। आठ मानसिक अवस्थाएँ, अर्थात् मन, संवेदना, एकाग्रता, मानसिक जीवन, विश्वास, सजगता, प्रयास और बुद्धि, इंद्रिय के संबंध हैं। पांच ध्यान कारक, अर्थात् आरंभिक अभ्यास, निरंतर अभ्यास, सुखदायक रुचि, संवेदना और एकाग्रता, ध्यान के संबंध हैं। आठ मार्ग-घटक, अर्थात् अन्वेषण, आरंभिक अभ्यास, तीन संयम, सजगता, प्रयास और एकाग्रता, मार्ग के संबंध हैं। अतः, चेतना के इन आठ वर्गों में केवल दो संबंध (पच्छाजात और विपाक) प्राप्त नहीं होते हैं, और शेष बाईस प्राप्त होते हैं। निष्क्रिय चेतना के आठ शोभना वर्गों में तीन संयम प्राप्त नहीं होते हैं। जैसे नैतिक चेतना में, दो संबंध अप्राप्य होते हैं और बाईस प्राप्त होते हैं। परिणामी चेतना के आठ सुंदर वर्गों में भी तीन संयम और दो असीम प्राप्त नहीं होते हैं। अप्राप्य संबंध तीन हैं, अर्थात् अधिपति, पच्छाजात और असेवन; और शेष इक्कीस प्राप्त होते हैं।

रूप, अरूप और पारलौकिक चेतना के उच्च वर्गों में बाईस से अधिक संबंध प्राप्त नहीं होते हैं। संबंधों की समकालिकता को ज्ञान से जुड़े काम-चेतना के चार नैतिक वर्गों में विद्यमान समझा जाना चाहिए। यदि ऐसा है, तो चेतना के वे वर्ग काम-चेतना से अधिक श्रेष्ठ और पारलौकिक क्यों हैं? इसका कारण आसेवन की महानता है। ये विशेष अभ्यासों द्वारा निर्मित होते हैं, इसलिए आसेवन इनसे श्रेष्ठ है; इसी कारण इंद्रिय, ध्यान, मार्ग और अन्य संबंध भी श्रेष्ठ हो जाते हैं। जब ये संबंध श्रेष्ठ हो जाते हैं—प्रत्येक दूसरे से उच्चतर—तो चेतना

के वे वर्ग भी काम-चेतना से अधिक श्रेष्ठ और पारलौकिक हो जाते हैं।

मन की अवस्थाओं में संबंधों की समकालिकता का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता

अब भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता का वर्णन किया जाएगा। भौतिक गुणों के अट्ठाईस प्रकार हैं:-

अ. चार आवश्यक भौतिक गुण:
1. दृढ़ता का तत्व (पथवी)
2. संसंजन का तत्व (अपो)
3. गतिज ऊर्जा का तत्व (तेजो)
4. गति का तत्व (वायो); स्पर्शनीय (फोत्थब्बा): यह भौतिक गुण तीन आवश्यक तत्वों से बना है, अर्थात् विस्तार का तत्व, गतिज ऊर्जा का तत्व और गति का तत्व।

ब. पाँच संवेदी भौतिक गुण:

1. आँख (चक्खु)
2. कान (सोता)
3. नाक (गण)
4. जीभ (जीव)
5. शरीर (काया)।

ग. पाँच इंद्रिय-क्षेत्रों के भौतिक गुण:

1. दृश्य रूप (रूप)
2. ध्वनि (सद्दा)
3. गंध (गंध)
4. स्वाद (रस)।

D. लिंग के दो भौतिक गुण:

1. स्त्रीलिंग (इत्तिभाव)
2. पुरुषलिंग (पुम्भव)।

E. जीवन का एक भौतिक गुण (जीवित)।

F. हृदय-आधार का एक भौतिक गुण (हृदय-वत्थु)।

G. पोषण का एक भौतिक गुण (आहार)।

H. सीमितता का एक भौतिक गुण (आकाश-धातु)।

I. संचार के दो भौतिक गुण:

1. शरीर द्वारा सूचना (कयविन्नत्ति)
2. वाणी द्वारा सूचना (वाचिविन्नत्ति)।

J. लचीलेपन के तीन भौतिक गुण:

1. हल्कापन (लहुता)
2. लचीलापन (मुदुत)
3. अनुकूलनशीलता (कम्मन्नत)।

K. प्रमुख विशेषताओं के चार भौतिक गुण:

1. एकीकरण (उपचय)
2. निरंतरता (संतति)
3. क्षय (जरत)
4. अनित्यता (अनिकट)।

इनमें से छह प्रकार के भौतिक गुण—अर्थात्, चार आवश्यक तत्व, जीवन का भौतिक गुण और पोषण का भौतिक गुण—भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। यहाँ भी, चार आवश्यक तत्व पाँच संबंधों द्वारा परस्पर संबंधित हैं: सहजता, अन्नमन्न, निस्सय, अत्ति और अविगत; और वे बाद वाले से उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से चार संबंधों द्वारा संबंधित हैं (अर्थात् उपरोक्त पाँच में अन्नमन्न को छोड़कर)। जीवन का भौतिक गुण इंद्रिय के माध्यम से कर्म द्वारा उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित है। पोषण का भौतिक गुण आहार के माध्यम से सह-अस्तित्व वाले और गैर-अस्तित्व वाले दोनों भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित है।

तेरह प्रकार के भौतिक गुण कुछ विशेष संबंधों द्वारा मानसिक अवस्थाओं से कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। ये भौतिक गुण हैं: पाँच प्रकार के संवेदी भौतिक गुण, सात प्रकार के इंद्रिय क्षेत्र और हृदय। इनमें से, जिस प्रकार एक माँ अपने पुत्र से संबंधित होती है, उसी प्रकार पाँच प्रकार के संवेदी भौतिक गुण पाँच इंद्रिय-ज्ञान से वस्तु-पुरेजात, वस्तु-पुरेजातिंद्रिय और वस्तु-पुरेजात-विप्पयुत्त के द्वारा कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। और जिस प्रकार एक पिता अपने पुत्र से संबंधित होता है, उसी प्रकार सात इंद्रिय क्षेत्र पाँच इंद्रिय-ज्ञान और बोध के तीन तत्वों से अरम्मनपुरेजात के द्वारा कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। इसी प्रकार, जैसे एक वृक्ष उसमें निवास करने वाले देवता से संबंधित होता है, वैसे ही हृदय-आधार पुनर्जन्म के समय सहजतनिस्य के माध्यम से और जीवनकाल में वात्तुपुरेजात और वात्तुपुरेजात-विप्पयुत्त के माध्यम से बोध और बोध के दो तत्वों से कारणिक रूप से संबंधित होता है।

भौतिक गुणों के तेईस समूह हैं। इन्हें समूह इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये उत्पादन (जाति-रूप) के भौतिक गुण से समूहों में बंधे होते हैं, जैसे बाल या घास धागे से बंधे होते हैं। इनमें से आठ प्रकार के भौतिक गुण, जैसे चार आवश्यक तत्व, रंग, गंध, स्वाद और पोषक तत्व, सभी भौतिक गुणों के प्राथमिक अष्टक का निर्माण करते हैं।

कर्म द्वारा उत्पन्न नौ समूह हैं: प्राणिक नौपद, आधारभूत दसपद, देह-पद, स्त्री-पद, पुरुष-पद, नेत्र-पद, कान-पद, नाक-पद और जीभ-पद। इनमें से, प्राणिकता के भौतिक गुण सहित प्राथमिक अष्टपद को प्राणिक नौपद कहा जाता है। यह प्राथमिक नौपद, आठ भौतिक गुणों (अर्थात हृदय-आधार आदि) में से प्रत्येक के साथ मिलकर, अन्य आठ दसपदों (अर्थात आधार-पद आदि) का निर्माण करता है। यहाँ चार समूह: प्राणिक नौपद, देह-पद और द्विलिंगी यौन-पद, एक प्राणी में स्थित होते हैं और पूरे शरीर में व्याप्त होते हैं। यहाँ प्राणिक नौपद, परिपक्वता अग्नि (पचकाग्गी) और देह अग्नि (कयग्गी) का नाम है। पचकाग्गी, या परिपक्वता अग्नि, वह है जो पेट में स्थित होती है और खाए, पिए, चबाए और चाटे गए भोजन को परिपक्व या पचाती है। कायग्गल, या शारीरिक अग्नि, वह है जो पूरे शरीर में व्याप्त होकर स्वयं को स्थापित करती है और अशुद्ध पित्त, कफ और रक्त को शुद्ध करती है। इन दो तत्वों की असंगत क्रिया से जीव अस्वस्थ हो जाते हैं, और इनकी सामंजस्यपूर्ण क्रिया से वे स्वस्थ हो जाते हैं। यही द्वैत अग्नि (या वह प्राणिक अग्नि) जीवों को जीवन और उत्तम रंग प्रदान करती है।

शरीर-संबंधी काल सुखदायक और पीड़ादायक संपर्क प्रदान करता है। द्विविध यौन काल स्त्रियों को सभी स्त्रीत्व संबंधी गुण और पुरुषों

को सभी पुरुषत्व संबंधी गुण प्रदान करता है। शेष पाँच काल आंशिक काल कहलाते हैं। इनमें से हृदय-संबंधी काल, जो हृदय गुहा में स्थित होता है, अनेक प्रकार के नैतिक और अनैतिक विचारों को उत्पन्न करता है। आँख-संबंधी काल इत्यादि, जो क्रमशः आँख की पुतली, कान के भीतरी भाग, नाक के भीतरी भाग और जीभ की सतह पर स्थित होते हैं, दृष्टि, श्रवण, गंध और स्वाद की क्षमता प्रदान करते हैं।

मन द्वारा निर्मित आठ समूह हैं: प्राथमिक अष्टक, ध्वनि-अनाड, शरीर-संचार का अनाड और वाक्-संचार का ध्वनि-संबंधी काल। इन चारों को हल्कापन, लचीलापन और अनुकूलनशीलता के साथ मिलाकर चार और समूह बनते हैं: प्लास्टिसिटी का अदशक, प्लास्टिसिटी का ध्वनि-दशक, प्लास्टिसिटी के साथ शारीरिक संचार का दशक, और प्लास्टिसिटी के साथ वाक् संचार का ध्वनि-त्रुकक। अंतिम चार समूहों को प्लास्टिक समूह कहा जाता है, और पहले चार समूहों को प्राथमिक समूह कहा जाता है।

इनमें से, जब शरीर के अंग सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य नहीं कर रहे होते हैं, तो एक बीमार व्यक्ति में केवल चार प्राथमिक समूह ही प्रकट होते हैं, जिसके भौतिक गुण भारी, खुरदुरे और अनुकूलनीय नहीं रह जाते हैं, और परिणामस्वरूप उसके लिए अपनी इच्छानुसार शारीरिक मुद्रा बनाए रखना, शरीर के अंगों को हिलाना और यहां तक कि मौखिक प्रतिक्रिया देना भी मुश्किल हो जाता है। लेकिन जब शरीर के अंग सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य कर रहे होते हैं - एक स्वस्थ व्यक्ति में भारीपन आदि जैसे शरीर के कोई दोष नहीं होते हैं - तो चार प्लास्टिक समूह अस्तित्व में आते हैं। इन चारों में से, शारीरिक संचार के दो समूह मन के माध्यम से या शरीर के किसी भी अंग को हिलाने के द्वारा प्रकट होते हैं। बोलने की इच्छा होने पर, मन की क्रिया के कारण ही वाक्-संचार के अन्य दो समूह भी उत्पन्न होते हैं; परन्तु जब हँसने या रोने के कारण अशाब्दिक ध्वनि उत्पन्न होती है, तब केवल दो सामान्य ध्वनि समूह ही उत्पन्न होते हैं। अन्य समयों पर, परिस्थितियों के अनुसार पहले दो समूह, प्राथमिक अष्टक और अष्टक ध्वनि, उत्पन्न होते हैं।

भौतिक परिवर्तन से चार समूह उत्पन्न होते हैं: दो प्राथमिक समूह (अर्थात प्राथमिक अष्टक और ध्वनि अनाड) और दो प्लास्टिक समूह (अर्थात प्लास्टिकता का अष्टक और प्लास्टिकता का ध्वनि द्वादश)। अब हमारा यह शरीर जीवन भर, शारीरिक मुद्राओं के एक लंबे क्रम के माध्यम से, स्वयं को बनाए रखता है। अतः, प्रत्येक क्षण, इस शरीर में तत्वों की सामंजस्यपूर्ण और असामंजस्यपूर्ण क्रियाएँ होती रहती हैं, जो मुद्राओं में परिवर्तन, तापमान में परिवर्तन, भोजन, वायु और ऊष्मा में परिवर्तन, शरीर के अंगों की स्थिति में परिवर्तन के माध्यम से होती हैं। और स्वयं के और दूसरों के प्रयासों में परिवर्तन के माध्यम से। यहाँ भी, सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करते समय, दो प्लास्टिक समूह उत्पन्न होते हैं; और असामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करते समय, अन्य दो प्राथमिक समूह उत्पन्न होते हैं। चार समूहों में से, दो ध्वनि-समूह तब उत्पन्न होते हैं जब मन द्वारा उत्पन्न ध्वनि के अलावा विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

भोजन द्वारा दो समूह उत्पन्न होते हैं: प्राथमिक अष्टक और अष्टक। इन दो समूहों को क्रमशः उपयुक्त और अनुपयुक्त भोजन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों की सामंजस्यपूर्ण और असामंजस्यपूर्ण घटनाओं के रूप में समझा जाना चाहिए।

पाँच भौतिक गुण, अर्थात्, अंतरिक्ष तत्व और पदार्थ की चार प्रमुख विशेषताएँ, समूहीकरण से बाहर हैं। इनमें से, अंतरिक्ष तत्व समूहीकरण से बाहर है क्योंकि यह समूहों की सीमा है। प्रमुख विशेषताओं के भौतिक गुणों के संबंध में, उन्हें समूहीकरण से अलग रखा गया है, क्योंकि वे केवल सशर्त वस्तुओं के चिह्न या संकेत हैं, जिनके माध्यम से हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि वे वास्तव में सशर्त वस्तुएँ हैं।

ये तेईस समूह एक व्यक्ति में उपलब्ध हैं। बाहरी वस्तुओं में उपलब्ध समूह केवल दो हैं, जो भौतिक परिवर्तन द्वारा उत्पन्न समूहों के अलावा और कुछ नहीं हैं। भौतिक गुण, आंतरिक और बाह्य। इन दोनों में से, आंतरिक गुण किसी सजीव प्राणी के स्थान को दर्शाता है और बाह्य गुण पृथ्वी, पहाड़ियाँ, नदियाँ, महासागर, वृक्ष आदि को दर्शाता है। अतः हमने कहा है कि किसी व्यक्ति में तेईस समूह, या सभी अट्ठाईस प्रकार के भौतिक गुण, विद्यमान होते हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा और उससे संबंधित मानसिक अवस्थाएँ, गर्भाधान के समय कर्म द्वारा उत्पन्न समूहों से छह विभिन्न संबंधों के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं: चार श्रेष्ठ सहजत, विपाक और विपयुत्त। परन्तु हृदय-आधार से वे सात संबंधों के माध्यम से जुड़ी हुई हैं, अर्थात् उपरोक्त संबंधों के साथ-साथ अन्नमन्न का संबंध भी। पुनर्जन्म के समय की मानसिक अवस्थाओं में, मूल अवस्थाएँ हेतु संबंध के माध्यम से, संकल्प आहार संबंध के माध्यम से, नियंत्रण इंद्रिय संबंध के माध्यम से, ध्यान घटक ध्यान संबंध के माध्यम से और पथ घटक पथ संबंध के माध्यम से कर्म द्वारा उत्पन्न समूहों से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं। भूतकाल की नैतिक और अनैतिक संकल्पियाँ केवल कर्म के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं। प्रथम पश्चवर्ती जीवन-क्रम, द्वितीय, तृतीय, और इसी प्रकार आगे के सभी क्रम, कर्म द्वारा उत्पन्न पूर्ववर्ती भौतिक गुणों से पच्छाजात के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित हैं। पच्छाजात से तात्पर्य पच्छाजात की सभी प्रजातियों से है। भूतकाल की इच्छाएँ केवल कर्म के माध्यम से ही कारणिक रूप से संबंधित हैं। इस प्रकार, मानसिक

अवस्थाएँ कर्म द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से चौदह विभिन्न संबंधों द्वारा कारणिक रूप से संबंधित हैं। यहाँ दस संबंध प्राप्त नहीं होते हैं, अर्थात् अरम्मन, अधिपति, अनंतर, समनन्तर, उपनिषय, पुरेजात, असेवन, सम्पायुत्त, नत्थि और विगत।

जीवनकाल के दौरान, भौतिक गुणों को उत्पन्न करने में सक्षम मानसिक अवस्थाएँ, उनके द्वारा उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से पाँच विभिन्न संबंधों द्वारा कारणिक रूप से संबंधित होती हैं: चार श्रेष्ठ सहजात और विपायुत्त। इन मानसिक अवस्थाओं में, हेतु, अधिपति के द्वारा प्रभुत्व, कर्म के द्वारा संकल्प, विपाक के द्वारा परिणाम, आहार के द्वारा भोजन, इंद्रिय के द्वारा नियंत्रण, ध्यान के द्वारा ध्यान कारक और मार्ग के घटक मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। सभी परवर्ती मानसिक अवस्थाएँ पच्छाजात के द्वारा मन द्वारा उत्पन्न पूर्ववर्ती भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। इस प्रकार, मानसिक अवस्थाएँ चौदह विभिन्न संबंधों द्वारा मन द्वारा उत्पन्न भौतिक समूहों से कारणवश संबंधित हैं। यहाँ भी दस संबंध अप्राप्य हैं: अरम्मन, अनंतार, समनन्तार, अन्नम्मन, उपनिषय, पुरेजात, असेवन, सम्पायुत्त, नत्थि और विगत।

जीवनकाल के दौरान, गर्भाधान की स्थिर अवस्था से शुरू होकर, सभी मानसिक अवस्थाएँ भोजन से उत्पन्न भौतिक समूहों और शारीरिक परिवर्तन से उत्पन्न भौतिक समूहों से केवल पच्छाजात के माध्यम से ही कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। यहाँ फिर से, पच्छाजात से तात्पर्य पच्छाजात की सभी चार प्रजातियों से है। शेष बीस संबंध प्राप्त नहीं किए जा सकते।

भौतिक गुणों के तेईस समूहों में, चार आवश्यक गुण पाँच विभिन्न संबंधों से आपस में संबंधित हैं, अर्थात् चार श्रेष्ठ सहजत और एक अन्नमन्न; लेकिन सह-अस्तित्व वाले व्युत्पन्न भौतिक गुणों से केवल चार श्रेष्ठ सहजत संबंधों से ही संबंधित हैं। पोषण तत्व का भौतिक गुण आहार के माध्यम से सह-अस्तित्व वाले और गैर-सह-अस्तित्व वाले शारीरिक भौतिक गुणों से कारण संबंध रखता है। कर्म द्वारा उत्पन्न नौ समूहों में भौतिक जीवन का भौतिक गुण इंद्रिय के माध्यम से केवल सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से कारण संबंध रखता है। इस प्रकार शारीरिक भौतिक गुण सात विभिन्न संबंधों से शारीरिक पदार्थों से कारण संबंध रखते हैं। जहाँ तक बाह्य भौतिक गुणों का संबंध है, वे भौतिक परिवर्तन द्वारा उत्पन्न दो बाह्य समूहों से पाँच विभिन्न संबंधों से परस्पर संबंधित हैं।

भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता यहीं समाप्त होती है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **द पथनुद्देसा दीपनी-फुटनोट्स**
द बुद्धिस्ट फिलॉसफी ऑफ रिलेशंस
बाई महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट.
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

फुटनोट:

[3] इस संबंध में, "पच्चया" को आम तौर पर "अरम्मना" =
"हैंगर" (जैसे पॉट-हुक) = "ऑब्जेक्ट" के रूप में जाना जाता है; और पकायुप्पन्ना" को
"अराम्मनिका" = "हैंगर-ऑन" = "विषय" के रूप में जाना जाता है। (अनुवादक।)
[4] इंद्रियों के छह द्वार - मन, बौद्ध दर्शन में,
छठा "इंद्रिय" बनाते हैं।
[6] अनुवादक द्वारा नोट। धम्मतो वत्थुतो या सरूपतो या पाबेदातो के बराबर है
। चित्तुप्पदा के अर्थ के तीन पहलू हैं।
सबसे पहले, इसका अर्थ है "चेतना", जैसा कि:
"तेसम" चित्तवियुत्तनं यथियोगम् इतो परम,
चित्तुप्पादेसु पच्चेकम् संपायोगो पवुक्कति।"
(भाग II, संगहा देखें)।
दूसरे, इसका अर्थ है "विचार की उत्पत्ति", जैसे:
"विथिचित्तनि सत्तैव: चित्तुप्पदा कैटुद्दसा:
कैटुपन्नासा विठ्ठरा पंचादवारे यथारहम्"
(भाग IV, संगहा देखें।)
तीसरा, इसका अर्थ है "मन और इसका सहवर्ती," जैसा कि:

"चित्तुप्पादानम" इक्केवम् कट्व संगहम" उत्तरम्,
भूमिपुग्गलाभेदेन पुब्बपरण्यमितम्।"
(भाग IV, संगहा देखें।)
इनमें से प्रत्येक उदाहरण में, यौगिक
"चित्तुप्पादा" के निर्माण पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। पहले उदाहरण में, इसका
निर्माण इस प्रकार किया गया है: उप्पज्जतिति उप्पदो। चित्तम्"एव उप्पदो
सिट्टुप्पादो; दूसरे उदाहरण में, चित्तस्सा उप्पदो चित्तुप्पदो:
तीसरे उदाहरण में, उप्पज्जति एतेनाति उप्पदो धम्मसामुहो।
सिट्टंका उप्पादो सीए सिट्टुप्पादो.
[7] अनुवादक द्वारा नोट लोकुत्तरधम्म का अर्थ यहां है, यानी,
पथ के चार चरणों से बने चार जोड़े,
उसी के फल और निब्बान के साथ।
[8] दृश्य, ध्वनियाँ, गंध, स्वाद, संपर्क, विचार।
[9] यहाँ सत्य का तात्पर्य उनके द्वारा दिए गए वादे की निष्ठा से है।
[
10] यहाँ मन से तात्पर्य उन बोधों में से एक से है जो सामान्यतः
कुल पचपन होते हैं, परन्तु इस संदर्भ में हमें
मंद चेतना और सौंदर्यबोध के दो वर्गों को भी छोड़ देना चाहिए।
अन्य तीन प्रमुख तत्व अपने-अपने सहवर्ती हैं।
[11] पृथ्वी, जल, अग्नि या वायु के किसी भी पिंड में ये "तत्व"
पूर्ण शुद्धता की अवस्था में विद्यमान नहीं होते। अन्य "तत्व"
सदा उपस्थित रहते हैं, परन्तु बहुत ही गौण अनुपात में।
[12] वह है जो निब्बान को बिना किसी सहायता के प्राप्त करता है।
[13] यहाँ विज्ञान, कला और हस्तशिल्प का तात्पर्य है। [14] लेडी सयादाव यहाँ गर्भ से जन्म लेने वाले प्राणी
के जीवनकाल की व्याख्या करते प्रतीत होते हैं । [15] इसे "स्थायी समाप्ति" के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ समाप्ति का तात्पर्य न केवल चेतना की है, बल्कि मानसिक सहवर्ती क्रियाओं की भी है।

और मन से उत्पन्न मानसिक गुण। (अनुवादक)
[16] यहाँ (हदयम) विचार का (चित्त) स्थान है।
[17] कहने का तात्पर्य यह है कि निर्वाण और अवधारणाएँ (या अधिक उचित रूप से, अवधारणा-
पद) समय में प्रवेश नहीं करते हैं, और इसलिए समय के
स्वभाव, परिवर्तन के अधीन नहीं हैं। वे "उत्पन्न" नहीं होते; इसलिए वे
"समाप्त" नहीं होते। वे समय से परे होने के अर्थ में "शाश्वत और शाश्वत" हैं , न कि समय में अनंत रूप से निरंतर
होने के सामान्य अर्थ में । [18] यहाँ अभ्यकत का अनुवाद "अनिर्दिष्ट" या "अनैतिक" के रूप में किया गया है। टीका में इसकी व्याख्या इस प्रकार की गई है: कुसला-अक्षलभावन अकथिता, अन्नभावन अकथिता; अर्थात्, इसे नैतिक या अनैतिक नहीं कहा जाना चाहिए, बल्कि "दोनों से अलग", अर्थात् अनैतिक या अनिर्दिष्ट कहा जाना चाहिए। अभ्यकतधम्म हैं—परिणामी और अक्रियाशील चेतना के सभी वर्ग और सभी भौतिक गुण, साथ ही निर्वाण। [19] यह "पर्याप्त शर्त" है जैसा कि बुद्ध के सूत्रों या सामान्य प्रवचनों में वर्णित है , शास्त्रों के अभिधम्म खंड में वर्णित तरीके से भिन्न है । [21] वे प्राणी जिनका अस्तित्व माता-पिता से जन्म लेने के सामान्य तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से होता है; जिन्हें पाश्चात्य "अलौकिक प्राणी" कह सकते हैं, हालांकि उनमें से सभी को किसी भी जीवन संबंधी पहलू में मनुष्य से श्रेष्ठ नहीं समझा जाना चाहिए। कई मनुष्य से शक्ति और क्षमता में, साथ ही निर्वाण प्राप्त करने के अवसरों में भी हीन हैं। [22] यहाँ, भौतिक गुणों की उत्पत्ति का तात्पर्य है। "उत्पत्ति" शब्द का प्रयोग डार्विन के अर्थ में किया गया है, जैसा कि " प्रजातियों की उत्पत्ति" में है। [23] यहाँ, उतु (शाब्दिक अर्थ, ऋतु) को "तापमान" के रूप में अनुवादित किया गया है। इसे आम तौर पर "भौतिक परिवर्तन," "कैलोरी ऊर्जा," "गर्मी और ठंड," आदि के रूप में भी अनुवादित किया जा सकता है। [24] लेडी सयादाव ने चेतनावस्था की व्याख्या नहीं की है। लेकिन इसे समझना काफी आसान है, क्योंकि यह प्रारंभिक इच्छा या कर्म का क्रियान्वयन है। [25] चार कारण हैं (1) कर्म, (2) चित्त (चेतना), (3) उतु (तापमान) और (4) आहार (पोषण)। [26] इनमें से, अंतिम तीन केवल लोकउत्तरा तक ही सीमित हैं। और इन तीनों में से, पहला प्रथम मार्ग से संबंधित ज्ञान है , दूसरा अंतिम तीन मार्गों और पहले

तीन फलों से संबंधित है, और तीसरा केवल अंतिम फल से संबंधित है। [28] इनमें से अलग,या फिर, इसके सामान्य मोड से आगे बढ़कर।
[29] "निश्चित रूप से हे कच्चाना, (आत्मा) का अस्तित्व एक चरम सीमा है, और
(आत्मा) का अस्तित्व नहीं है, यह दूसरी चरम सीमा है।"
यह एक ऐसा अंश है जहाँ आत्मा, स्वयं या अहंकार की समस्या पर एक वास्तविक व्यक्तिगत सत्ता
के रूप में उसके अस्तित्व या गैर-अस्तित्व के संबंध में चर्चा की गई है। [30] यहाँ, अप्पचया शब्द कम्मधरय यौगिक नहीं है, बल्कि बहुबबिहि वर्ग का है - इस प्रकार: नत्थि पच्चया एतेसम ति अप्पचया। असंखता कम्मधरय यौगिक है - इस प्रकार: संकारियन्ते ति संखता; न संखता ति असंखता। [31] सभी प्राणियों के लिए चार मुद्राएँ हैं: बैठना, खड़ा होना, चलना और लेटना। [33] अन्यत्र "पच्चयुप्पना" शब्द का अनुवाद "संबंधित वस्तुएँ" के रूप में किया गया है ।

तिपिटक >> अभिधम्म पिटक >> पत्तन >> **परिचय-पत्थनुद्देस दिपनि**

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

प्रस्तावना

'पत्थाना' शब्द का अर्थ "पधानं थानं ति पत्थानां" से जाना जाता है: पत्थाना सर्वोत्कृष्ट या प्रमुख कारण है। इस परिभाषा में 'पधान' का अर्थ 'सर्वोत्कृष्ट' और 'थान' का अर्थ 'स्थिति' या 'कारण' है। अतः संपूर्ण अभिव्यक्ति का अर्थ "सर्वोत्कृष्ट कारण", "वास्तविक कारण" या "अपरिहार्य कारण" है। यह इसके अपरिहार्य प्रभाव या परिणाम के संदर्भ में कहा गया है।[33] प्रभाव दो प्रकार के होते हैं, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष। "प्रत्यक्ष" से तात्पर्य प्राथमिक या वास्तविक प्रभाव से है, और "अप्रत्यक्ष" से तात्पर्य परिणामी या आकस्मिक प्रभाव से है। इन दोनों प्रकारों में से, केवल प्रत्यक्ष प्रभाव को ही यहाँ अपरिहार्य कहा गया है, और इसका कारण यह है कि जब इसका उचित कारण स्थापित हो जाता है या क्रियाशील हो जाता है, तो यह अनिवार्य रूप से उत्पन्न होता है। और अप्रत्यक्ष प्रभाव को "अपरिहार्य" समझा जाना चाहिए, क्योंकि यह अपने कारण के पूर्ण रूप से स्थापित होने पर भी उत्पन्न हो सकता है या नहीं भी हो सकता है। अत: अपरिहार्य कारण को अपरिहार्य परिणाम के संदर्भ में यह नाम दिया गया है। अतः इस "महान ग्रंथ" में केवल अपरिहार्य या मुख्य कारण की ही व्याख्या की जानी है। इसी कारण चौबीस संबंधों के संपूर्ण संग्रह और "महान ग्रंथ" को 'पत्थाना' नाम दिया गया है।

अब, इस विषय को और अधिक स्पष्ट और सरल बनाने के लिए:

मान लीजिए कि धन और अनाज प्राप्त करने की इच्छा से एक व्यक्ति के मन में लोभ उत्पन्न होता है। लोभ के प्रभाव में आकर वह एक जंगल में जाता है, जहाँ वह एक ज़मीन साफ़ करके खेत, आँगन और बगीचे बनाता है और कड़ी मेहनत करने लगता है। अंततः अपनी मेहनत के फलस्वरूप वह प्रचुर धन और अनाज प्राप्त करता है। वह अपनी कमाई से अपने परिवार का पालन-पोषण करता है और अनेक पुण्य कर्म करता है, जिनका फल उसे भविष्य में भी मिलेगा। इस उदाहरण में, लोभ के साथ विद्यमान सभी मानसिक और भौतिक अवस्थाओं को प्रत्यक्ष फल कहा जाता है। इनके अतिरिक्त, भविष्य में मिलने वाले सभी परिणाम, फल और पुरस्कार अप्रत्यक्ष फल कहलाते हैं। इन दो प्रकार के फलों में से केवल पहले प्रकार के फलों का वर्णन पत्थाना में किया गया है। परन्तु दूसरे प्रकार के फल सुत्तंत प्रवचनों में मिलते हैं। यदि यह होता है, तो वह होता है; या, इसके घटित होने के कारण, वह भी घटित होता है। इस प्रकार की व्याख्या को सुत्तंत के माध्यम से व्याख्या कहा जाता है। वास्तव में, तीन अवस्थाओं (लोभ, घृणा और अज्ञान) को हेतु या परिस्थितियाँ कहा जाता है, क्योंकि ये वे मूल हैं जिनसे सजीव जगत, निर्जीव जगत और अंतरिक्ष जगत के सभी दोष उत्पन्न होते हैं। अन्य तीन विपरीत अवस्थाओं (निराकारता, मित्रता और ज्ञान) को भी हेतु या परिस्थितियाँ कहा जाता है, क्योंकि ये वे मूल हैं जिनसे शुद्धि उत्पन्न होती है। इसी प्रकार शेष पथाना संबंधों को भी उनके विभिन्न अर्थों में समझा जाना चाहिए। इस प्रकार हमें यह समझना चाहिए कि जो कुछ भी घटित होता है, घटित होता है, या परिवर्तन उत्पन्न करता है, वह केवल इन चौबीस पथाना संबंधों या कारणों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव, परिणाम या उत्पाद हैं।

बौद्ध धर्म निर्वाण और परिणति को छोड़कर, संसार को क्षणभंगुर, दुखदायी और आत्मा-सार रहित मानता है। अतः बौद्ध दर्शन, शाश्वत परिवर्तन के नियम के संदर्भ में क्षणभंगुरता को स्पष्ट करने के लिए, प्रारंभ से ही सभी चीजों, सभी मानसिक और भौतिक घटनाओं को, पंचम नियम के अंतर्गत, मन और पदार्थ की अवस्थाओं (सभाव) की निरंतर श्रृंखला में विलीन कर देता है। ये घटनाएँ अपने मूल स्वरूप और अन्य घटनाओं दोनों के लिए अनेक तरीकों से निर्धारित और निर्धारक होती हैं, जिन्हें बौद्ध दर्शन 'पच्चय' या 'संबंध' शब्द से व्यक्त

करता है। मानसिक और भौतिक अवस्थाओं की एक जटिल घटना, जिसमें समय के तीन चरण होते हैं - उत्पत्ति या जन्म, समाप्ति या मृत्यु और इनके बीच का स्थिर अंतराल - के बाद एक और घटना घटित होती है, जिसमें हमेशा एक कारण-कार्य संबंध श्रृंखला होती है। कुछ भी आकस्मिक या संयोगवश नहीं होता। जब एक घटना अपने उद्भव, निरंतरता, समाप्ति, प्राथमिकता और परवर्तीता के द्वारा दूसरी घटना द्वारा निर्धारित होती है और उसे उत्पन्न करने (जनक), समर्थन करने (उपतम्भक) और बनाए रखने (अनुपालन) के माध्यम से निर्धारित करती है, तो पहली घटना को संबंधकारी वस्तु (पच्चया-धम्म) और दूसरी घटना को संबंधित वस्तु (पच्चयायुप्पन्न-धम्म) कहा जाता है, और निर्धारण, प्रभाव या विशिष्ट कार्य को सहसंबंधीता (पच्चयासत्ति) कहा जाता है। जैसा कि विभिन्न प्रकार के प्रभाव स्पष्ट रूप से ज्ञात हैं, संबंधों को निम्नलिखित 24 प्रजातियों में वर्गीकृत किया गया है:

1. हेतु--स्थिति या मूल
2. अरम्मना--वस्तु
3. अधिपति--प्रभुत्व
4. अनंतरा--निकटता
5. समनंतरा--निकटता
6. सहजलि--सहअस्तित्व
7. अन्नमन्ना--पारस्परिकता
8. निस्सय--निर्भरता
9. उपनिषय--पर्याप्त स्थिति
10. पुरेजात--पूर्व-अस्तित्व
11. पच्छजात--समय में पश्चवर्ती कारण संबंध
12. असेवना--आदतन पुनरावृत्ति
13. कर्म--कर्म या क्रिया
14. विपाक--प्रभाव
15. आहार/--भोजन
16. इंद्रिय--नियंत्रण
17. झान--झान या परमानंद
18. 19. मग्गा--पथ
20. सम्पायुत्त--सहयोग 21.
विप्पयुत्त--वियोग
22. अत्ति--उपस्थिति
23. नत्थि--अनुपस्थिति
24. विगत--स्थगन
24. अवगत--निरंतरता।

बौद्ध धर्मग्रंथ अभिधम्म पिटक के सातवें और अंतिम विश्लेषणात्मक ग्रंथ, जिसे पत्थाना ('उत्कृष्टता') या महा-पकरण ('महान ग्रंथ') कहा जाता है, में इन 24 प्रकार के संबंधों की विस्तृत और पूर्ण व्याख्या की गई है।

तिपिटक >> अभिधम्म पिटक >> पथन >> **अध्याय 1.पत्थनुद्देस दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

1. हेतु-पच्चय या मूल के माध्यम से संबंध

हेतु-संबंध क्या है? लोभ, द्वेष, आलस्य और इनके विपरीत गुण, अर्थात् निस्वार्थता, प्रेम और बुद्धि, ये सभी हेतु-संबंध हैं।

इन हेतु-संबंधों से कौन सी वस्तुएँ संबंधित हैं? वे मानसिक गुण और मानसिक अवस्थाएँ जो लोभ, द्वेष, आलस्य, निस्वार्थता, प्रेम और बुद्धि के साथ सह-अस्तित्व में हैं, साथ ही वे भौतिक गुण जो इनके साथ सह-अस्तित्व में हैं, वे वस्तुएँ इस प्रकार संबंधित हैं। इन सभी को

हेतुपच्चयप्पन्न धम्म कहा जाता है, क्योंकि ये हेतु-संबंध के कारण उत्पन्न होते हैं या अस्तित्व में आते हैं।

उपरोक्त व्याख्या में, "एक ही के साथ विद्यमान भौतिक गुणों के समूह" से तात्पर्य उन भौतिक गुणों से है जो किसी नए प्राणी की हेतु-युक्त गर्भाधान की प्रारंभिक अवस्था में कर्म द्वारा उत्पन्न होते हैं, साथ ही उन भौतिक गुणों से भी जो हेतु-युक्त मन द्वारा जीवनकाल के दौरान उत्पन्न हो सकते हैं। यहाँ "गर्भाधान का क्षण" से तात्पर्य पुनर्जन्म-गर्भाधान के प्रारंभिक क्षण से है, और "जीवनकाल" से तात्पर्य पुनर्जन्म-गर्भाधान के स्थिर क्षण से लेकर मृत्यु-विचार के क्षण तक की अवधि से है।

हेतु को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? और पच्चय को किस अर्थ में? हेतु को मूल (मूलात्थ) के अर्थ में समझा जाना चाहिए; और पच्चय को पच्चयुप्पन्न धम्म या उपकारत्थ के उद्भव या अस्तित्व में आने में सहायक के अर्थ में समझा जाना चाहिए। इन दोनों में से, मूलात्थ मूल की मूल अवस्था है, लोभ-अतः, जैसा कि मूलयमक में दर्शाया गया है। हमने मूलात्त्व को मूल-यमक-दीपनी में वृक्ष के उपमा से समझाया है। फिर भी, हम यहाँ इस पर दोबारा चर्चा करेंगे।

मान लीजिए एक पुरुष किसी स्त्री से प्रेम करता है। जब तक वह अपने कामुक विचार को दूर नहीं करता, उस स्त्री के प्रति उसके सभी कर्म, वचन और विचार, कामवासना (या लोभ) में सहायक होंगे, जो साथ ही साथ उसी विचार से उत्पन्न भौतिक गुणों को भी अपने वश में रखती है। तब हम देखते हैं कि इन सभी मानसिक और भौतिक गुणों की जड़ उस स्त्री के प्रति कामुक लोभ में निहित है। अतः, हेतु (क्योंकि यह जड़ का काम करता है) और पच्चय (क्योंकि यह मन और शरीर की उन अवस्थाओं के उत्पन्न होने में सहायक है) होने के कारण, लोभ हेतु-पच्चय है। शेष को भी इसी प्रकार समझाया और समझा जा सकता है - अर्थात्, वांछनीय वस्तुओं की इच्छा से लोभ का उत्पन्न होना; घृणित वस्तुओं के प्रति घृणा से घृणा का उत्पन्न होना; और नीरस वस्तुओं के विषय में ज्ञान की कमी से सुस्ती का उत्पन्न होना।

एक पेड़ का उदाहरण लीजिए—हम देखते हैं कि पेड़ की जड़ें ज़मीन में मज़बूती से जम जाती हैं और मिट्टी व पानी दोनों से रस सोखकर पेड़ के ऊपरी हिस्से तक पहुँच जाती हैं, जिससे पेड़ लंबे समय तक बढ़ता और विकसित होता रहता है। ठीक इसी तरह, लालच भी मनभावन वस्तुओं में दृढ़ हो जाता है और उनसे सुख और आनंद का सार सोखकर उसे मन के अन्य तत्वों में समाहित कर लेता है, जिससे अनैतिक कर्म और वचन उत्पन्न होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि लालच नैतिक कर्म और वचन के उल्लंघन का कारण बनता है। यही बात घृणा पर भी लागू होती है, जो अरुचि के कारण अप्रसन्नता और असुविधा का सार सोख लेती है, और यही बात अज्ञानता पर भी लागू होती है, जो ज्ञान की कमी के कारण अनेक विषयों पर व्यर्थ विचारों के सार को पनपने देती है।

इस प्रकार सार तत्व का परिवहन करते हुए, लोभ, दोष और मोह तीनों तत्व, घटक भागों पर इस प्रकार कार्य करते हैं कि वे (एक प्रकार से) प्रसन्न और आनंदित हो जाते हैं, जो वांछनीय वस्तुओं आदि से प्रसन्न होते हैं। घटक भाग भी उन पर कार्य करने के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं, जबकि सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुण भी उसी प्रभाव को साझा करते हैं। यहाँ, सम्पायुत्त-धम्मे अभिहारति शब्दों से यह समझा जाना चाहिए कि लोभ सुख और आनंद के सार को सहवर्ती तत्वों तक पहुँचाता है।

अब सकारात्मक पक्ष की ओर आते हैं—मान लीजिए कि पुरुष को इंद्रिय सुख में खतरा दिखाई देता है, और वह स्त्री के प्रति उस कामुक विचार का त्याग कर देता है। ऐसा करने से, उसके भीतर स्त्री के प्रति अनासक्ति उत्पन्न होती है। इससे पहले, भ्रम को मूल मानकर अशुद्ध कर्म, शब्द और विचार थे; लेकिन वर्तमान में वे अनुपस्थित हैं और उनके स्थान पर अनासक्ति को मूल मानकर शुद्ध कर्म, शब्द और विचार उत्पन्न होते हैं। इसके अलावा, त्याग, आत्म-संयम, ध्यान अभ्यास या उच्चतर आनंदमय विचार भी उत्पन्न होते हैं। अत: निःसंकोच (अलोभ) को हेतु-पच्चय कहा जाता है, क्योंकि यह हेतु है, मूल तत्व के रूप में कार्य करता है, जबकि सहवर्ती तत्व के उत्पन्न होने में सहायक होने के कारण यह पच्चय है। यही व्याख्या निःसंकोच के शेष भाग पर भी लागू होती है, और साथ ही मित्रता और बुद्धि पर भी, जो क्रमशः लोभ, घृणा और अज्ञान के विपरीत हैं।

यहां, जैसे वृक्ष की जड़ पूरे तने और उसके भागों को उत्तेजित करती है, वैसे ही निःसंकोच भाव में होता है। यह वांछनीय वस्तुओं की इच्छा को दूर करता है और लोभ रहित आनंद के सार को बढ़ावा देकर, उस सार से जुड़े अन्य तत्वों का भी पोषण करता है, जिससे वे इतने सुखी और आनंदित हो जाते हैं कि वे ध्यानिक, पथिक या फलदायक आनंद की चरम सीमा तक पहुँच जाते हैं। इसी प्रकार, मित्रता और बुद्धि क्रमशः घृणा और अज्ञान को घृणा और सुस्ती से दूर करते हैं और घृणा और सुस्ती से रहित आनंद के सार को बढ़ावा देते हैं। इस प्रकार तीनों तत्वों (आलोभ, अदोष और अमोह) का प्रभाव लंबे समय तक बना रहता है, जिससे उनके मानसिक सहवर्ती तत्व सुखी और आनंदित होते हैं। सहवर्ती तत्व भी प्रभावित होते हैं, जबकि भौतिक गुणों के सह-अस्तित्व वाले समूह भी उसी प्रकार प्रभावित होते हैं।

यहां लोभविवेकसुखरसम् शब्द लोभ, विवेक, सुख और रस का मिश्रण है। विवेक अनुपस्थिति की अवस्था है। लोभविवेक वह है जो लोभ से रहित है, या लोभ का अभाव है। लोभविवेक-सुख लोभ के अभाव से उत्पन्न होने वाला आनंद है। अतः संपूर्ण यौगिक को इस प्रकार परिभाषित किया गया है: लोभविवेकसुखरासा लोभ के अभाव से प्राप्त होने वाले आनंद का सार है।

अभिधम्म में वर्णित पथाना का नियम यही है। सुत्तंत के नियम की ओर मुड़ते हुए, सुस्ती और लोभ के दो तत्व, जिन्हें क्रमशः अज्ञान और भोग कहा जाता है, तीनों चक्रों के संपूर्ण मूल हैं। घृणा, लोभ का आकस्मिक परिणाम होने के कारण, केवल बुराई का मूल है। बुद्धि और निस्वार्थता के दो तत्व, जिन्हें क्रमशः ज्ञान और त्याग कहा जाता है, दुखों के चक्रों के निवारण के संपूर्ण मूल हैं। मित्रता, निस्वार्थता का आकस्मिक परिणाम होने के कारण, केवल अच्छाई का मूल है। इस प्रकार छह मूल तत्व मन और शरीर की सभी अवस्थाओं के कारण बन जाते हैं, जो या तो सहअस्तित्व में होती हैं या गैर-सहअस्तित्व में। अब जो कहा गया है वह सुत्तंत का नियम है।

हेतु-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 2.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

2. अरम्मना-पच्चया या वस्तु का संबंध

अरम्मना-संबंध क्या है? चेतना के सभी वर्ग, मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं की सभी अवस्थाएँ, भौतिक गुणों के सभी प्रकार, निर्वाण की सभी अवस्थाएँ, अवधारणाओं को व्यक्त करने वाले सभी शब्द अरम्मना-संबंध हैं। वास्तव में, कोई भी ऐसी वस्तु (धम्म) नहीं है जो मन और मानसिक तत्वों की वस्तु न बन जाए। संक्षेप में, वस्तु छह प्रकार की होती है: दृश्य वस्तु, श्रव्य वस्तु, गंधयुक्त वस्तु, स्वादयुक्त वस्तु, स्पर्शनीय वस्तु और बोधगम्य वस्तु।

वे कौन सी वस्तुएँ हैं जो अरम्मना-संबंधों से संबंधित हैं? मन के सभी वर्ग और उनके सहवर्ती वे वस्तुएँ हैं जो अरम्मना-संबंधों से संबंधित हैं। वास्तव में, चेतना का कोई भी वर्ग ऐसा नहीं है जो विद्यमान (भूतेन) या गैर-विद्यमान (अभूतेन) वस्तु के बिना विद्यमान हो सके। (भूतेन और अभूतेन का अनुवाद यहाँ क्रमशः 'वास्तविक' और 'अवास्तविक' या 'वर्तमान' और 'गैर-वर्तमान' के रूप में भी किया जा सकता है)।

यहाँ वर्तमान दृश्य वस्तु अरम्मन-पच्चय है, और यह दृष्टि की चेतना के दो वर्गों, अच्छे और बुरे, से कारणवश संबंधित है। इसी प्रकार, वर्तमान श्रव्य वस्तु ध्वनि की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान सुगंधित वस्तु गंध की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान स्वादयुक्त वस्तु स्वाद की चेतना के दो वर्गों से, वर्तमान स्पर्शनीय वस्तुओं के तीन वर्गों से, और वर्तमान पाँच इंद्रिय वस्तुओं को बोध के त्रिविध तत्व के रूप में ज्ञात चेतना के तीन वर्गों से कारणवश संबंधित है। ये सभी पाँचों इंद्रिय विषय, वर्तमान, भूतकाल या भविष्य, और विचार के सभी विषय, वर्तमान, भूतकाल, भविष्यकाल या समय से परे, अरम्मन-पच्चय हैं और चेतना के उन छिहत्तर वर्गों से कारणिक रूप से संबंधित हैं जिन्हें मन-ज्ञान (या बोध के तत्व) के रूप में जाना जाता है।

'अरम्मन' को किस अर्थ में और 'पच्चय' को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? अरम्मन को 'अलम्बितब्बा' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है वह जो मन और मानसिक तत्वों द्वारा धारण किया जाता है या जिस पर टिका रहता है। पच्चय को 'उपकारक' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है वह जो (पच्चयप्पन्नधम्म के उद्भव में) सहायता करता है।[3]

'आलंबितब्बा' शब्द के संदर्भ में, मन और उसके मानसिक कारकों के 'आलंबन' का कार्य किसी वस्तु को पकड़ना या उससे जुड़ना है। उदाहरण के लिए, इस भौतिक जगत में एक प्रकार की धातु है जिसे लोहे के प्रति उसकी स्पष्ट इच्छा के कारण 'अयोकांतक' (शाब्दिक रूप से, लोहे की इच्छा) कहा जाता है। जब वह लोहे के टुकड़े के पास आती है, तो वह मानो उसे पाने की इच्छा से कांपती है। इसके अलावा, वह आगे बढ़ती है और लोहे से दृढ़ता से जुड़ जाती है। अन्य मामलों में, वह लोहे को आकर्षित करती है, और इस प्रकार लोहा कांपता है, चुंबक के पास आता है, और उससे दृढ़ता से जुड़ जाता है। यहाँ हम चुंबक की शक्ति देखते हैं, जिसे मन और मानसिक कारकों के 'आलंबन' का एक प्रभावशाली उदाहरण माना जा सकता है।

वे (मन और उसके सहवर्ती) न केवल वस्तुओं से जुड़ते हैं, बल्कि किसी व्यक्ति के भीतर उनके अस्तित्व में आने के चरण में, हर क्षण उठते और समाप्त होते हैं, जबकि वस्तुएँ छह द्वारों के रास्तों पर विद्यमान रहती हैं[4]। इस प्रकार, यह उदय और थमना ठीक उसी प्रकार है जैसे घंटा बजता है, जो केवल उसकी सतह पर प्रहार करने पर उत्पन्न होता है और उसके तुरंत बाद मौन हो जाता है। यह वायलिन की ध्वनि के समान भी है, जो केवल उसके तारों पर धनुष से प्रहार करने पर उत्पन्न होती है और फिर तुरंत थम जाती है।

सोते हुए व्यक्ति के लिए—जब जीवन-निरंतरता (विचारों की धारा में) प्रवाहित हो रही होती है—कर्म, कर्म का चिन्ह और आने वाले जीवन में उसके भाग्य का चिन्ह—जो पिछले जन्म में मृत्यु के निकट आने पर स्पष्ट रूप से छह द्वारों के मार्ग में प्रवेश कर चुके थे—आरंभ संबंध हैं, और जीवन-निरंतरता के रूप में ज्ञात चेतना (उन्नीस श्रेणियों) से कारणिक रूप से संबंधित हैं।

आरंभ संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 3.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

3: अधिपति-पच्चय या प्रभुत्व का संबंध

प्रभुत्व का संबंध दो प्रकार का होता है: वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व और सह-अस्तित्व वाला प्रभुत्व। इन दोनों में से वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का संबंध क्या है? अरम्मन-संबंध पर चर्चा किए गए खंड में जिन वस्तुओं का उल्लेख किया गया है, उनमें से कुछ वस्तुएँ अत्यंत सुखद, अत्यंत प्रेमपूर्ण, अत्यंत मनभावन और अत्यंत सम्माननीय हैं। ऐसी वस्तुएँ वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का संबंध प्रदर्शित करती हैं। यहाँ वस्तुएँ स्वाभाविक रूप से सुखद या अप्रिय हो सकती हैं; लेकिन 'अत्यंत सुखद वस्तुएँ' शब्द से केवल उन्हीं वस्तुओं का तात्पर्य है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा सबसे अधिक सम्मान दिया जाता है और जो इस संबंध को प्रदर्शित करती हैं। घृणा में निहित चेतना के दो वर्गों, अज्ञान में निहित चेतना के दो वर्गों और पीड़ा से ग्रस्त स्पर्श चेतना को छोड़कर, इन सभी के सहवर्ती तत्वों सहित, विश्लेषणात्मक रूप से[6] यह दिखाया जा सकता है कि काम-चेतना, रूप-चेतना, अरूप-चेतना और पारलौकिक चेतना के शेष सभी वर्ग, अपने-अपने सहवर्ती तत्वों और सभी सबसे सुखद भौतिक गुणों सहित, पच्चय-धम्म हैं।

इनमें से, काम-विषयों को केवल तभी वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व का कारण संबंध प्रदर्शित करने वाला कहा जाता है जब उन्हें अत्यधिक सम्मान दिया जाता है, अन्यथा वे ऐसा नहीं करते। लेकिन जो लोग ध्यान अवस्थाओं तक पहुँचते हैं, वे अपने द्वारा प्राप्त उदात्त ध्यान के प्रति उच्च सम्मान में कभी कमी नहीं करते। आर्य शिष्य भी अपने द्वारा प्राप्त और आनंदित पारलौकिक धम्म[7] के प्रति अपने महान सम्मान में कभी कमी नहीं करते।

इस संबंध से कौन सी वस्तुएँ संबंधित हैं? लोभ से ग्रस्त चेतना के आठ वर्ग, कमलोक की नैतिक चेतना के आठ वर्ग, ज्ञान से जुड़ी निष्क्रिय कमलोक चेतना के चार वर्ग और पारलौकिक चेतना के आठ वर्ग—ये सभी इस संबंध से संबंधित हैं। यहाँ छह प्रकार की सांसारिक वस्तुएँ[8] इच्छा से ग्रस्त चेतना के आठ वर्गों से कारणवश संबंधित हैं। सांसारिक नैतिक चेतना के सत्रह वर्ग ज्ञान से विरक्त नैतिक काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित हैं। मार्ग और फल के पहले तीन युग्म और निर्वाण, सांसारिक नैतिक चेतना के उन सभी वर्गों के साथ, ज्ञान से जुड़ी नैतिक काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित हैं। उच्चतम—अरहंतत्व के मार्ग और फल का चौथा चरण—निर्वाण के साथ ज्ञान से जुड़ी निष्क्रिय काम-चेतना के चार वर्गों से संबंधित है। और निर्वाण पारलौकिक चेतना के आठ वर्गों से संबंधित है।

अरम्मना को किस अर्थ में और अधिपति को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? अरम्मना को अलम्बितब्बा (अरम्मना-पच्चय देखें) के अर्थ में और अधिपति को अधिपच्चत्त के अर्थ में समझा जाना चाहिए। तो अधिपच्चत्त क्या है? अधिपच्चत्त वस्तुओं की वह क्षमता है जो मन की उन अवस्थाओं और मानसिक गुणों को नियंत्रित करती है जिनके कारण वस्तुओं को अत्यधिक सम्मान दिया जाता है। यह समझा जाना चाहिए कि अरम्मनाधिपति से संबंधित वस्तुएँ (पच्चय-धम्म) अधिपति के समान हैं, जबकि संबंधित वस्तुएँ (पच्चयप्पन्न-धम्म) मानव समाज में दासों के समान हैं।

सुतसोमा जातक में, राजा पोरिसदा ने मानव मांस के प्रति अत्यधिक आकर्षण के कारण, केवल मानव मांस के स्वाद के लिए अपना

राज्य त्याग दिया और वन में घुमंतू जीवन व्यतीत किया। यहाँ मानव मांस का स्वाद अरम्मनाधिपति का पच्चयधम्म है; और राजा पोरिसाद की भोग-प्रसंग में निहित चेतना ही पच्चयुप्पन-धम्म है। फिर, राजा सुतसोमा, सत्य के प्रति अत्यधिक श्रद्धा रखते हुए[9], सत्य के लिए अपनी संप्रभुता, अपने पूरे राजपरिवार और यहाँ तक कि अपने प्राणों का भी त्याग कर पोरिसाद के चरणों में स्वयं को समर्पित कर दिया। इस स्थिति में, सत्य ही पच्चयधम्म है और राजा सुतसोमा की नैतिक चेतना ही पच्चयुप्पन-धम्म है। इसी प्रकार हमें उन सभी इंद्रिय-संबंधी विषयों को समझना चाहिए जिनके प्रति अत्यधिक श्रद्धा होती है।

सह-अस्तित्व का प्रभुत्व क्या है? अभिशय या करने की इच्छा, मन[10] या संकल्प, ऊर्जा या प्रयास, और तर्क या अन्वेषण, जो प्रभुत्वशाली अवस्था में पहुँच चुके हैं, इस संबंध से संबंधित हैं।

इस संबंध से कौन सी वस्तुएँ जुड़ी हुई हैं? मन और मानसिक गुणों के वर्ग जो प्रभुत्वशाली तत्वों के सहायक हैं, और प्रभुत्वशाली विचारों द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण, वे वस्तुएँ हैं जो इस संबंध से जुड़ी हुई हैं।

सहजता को किस अर्थ में और अधिपति को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? सहजता को सहुप्पदानत्थ के अर्थ में और अधिपति को अभिभवनत्थ के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यहाँ, कोई घटना जब प्रकट होती है, तो वह न केवल अकेली प्रकट होती है, बल्कि साथ ही साथ अपने सहायक तत्वों को भी प्रकट करती है। घटना की इस कारणिक क्रिया को सहुप्पदानत्थ कहा जाता है। अभिभवनत्थ का अर्थ है विजय प्राप्त करना। उदाहरण के लिए, राजा चक्कवत्ती अपनी शक्ति या योग्यता से पूरे महाद्वीप के निवासियों पर विजय प्राप्त करते हैं और उनके स्वामी बन जाते हैं, जिनका वे अपनी इच्छा अनुसार नेतृत्व कर सकते हैं। वे भी उनके नेतृत्व के अनुसार ही व्यवहार करते हैं। इसी प्रकार, वे चार प्रभाव जो प्रबल अवस्था में पहुँच चुके हैं, अपने-अपने सहायक तत्वों के स्वामी बन जाते हैं और उन्हें अपने-अपने कार्यों में अपनी इच्छा के अनुसार नेतृत्व प्रदान करते हैं। सहायक तत्व भी उनके नेतृत्व के अनुसार ही व्यवहार करते हैं। एक और उदाहरण लें तो, पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु, इन सभी पिंडों में हम देखते हैं कि चार तत्व—विस्तार, संसंजन, ऊष्मा और गति—क्रमशः प्रमुख हैं, और प्रत्येक अन्य तीन घटकों पर श्रेष्ठता रखता है और उन्हें अपने आंतरिक स्वभाव के अनुरूप ढालता है[11]। चार 'तत्वों' के समूह के अन्य तीन सदस्यों को भी प्रमुख तत्व के स्वभाव का अनुसरण करना पड़ता है। इसी प्रकार, ये चार प्रमुख तत्व, जो अपनी शक्ति के बल पर प्रमुख अवस्था तक पहुँच चुके हैं, अपने सहायक तत्वों को अपने आंतरिक स्वभाव के अनुरूप ढालते हैं। और उनके सहायक तत्वों को भी प्रमुख तत्वों के स्वभाव का अनुसरण करना पड़ता है। अभिभावना का यही अर्थ है। यहाँ कुछ लोग कह सकते हैं: "यदि इन चीजों को, इरादे को छोड़कर, सहायक तत्वों पर विजय प्राप्त करने के कारण प्रमुख कहा जाता है, तो लोभ को भी प्रमुख कहा जाना चाहिए, क्योंकि स्पष्ट रूप से इसमें इरादे की तुलना में सहायक तत्वों पर कहीं अधिक प्रबल शक्ति होती है।" लेकिन इसके जवाब में हम यह कह सकते हैं: बेशक, लालच इरादे से अधिक शक्तिशाली है, लेकिन केवल साधारण और नासमझ लोगों के लिए। बुद्धिमानों के मामले में, इरादा लालच से अधिक शक्तिशाली होता है और उनके सहायक तत्वों पर हावी हो जाता है। यदि यह मान लिया जाए कि लालच अधिक शक्तिशाली है, तो लालच के चंगुल में फंसे लोग अपने सुखमय जीवन और धन की परिपूर्णता को त्यागकर, त्याग के मार्ग अपनाकर और दुख के चक्र से कैसे बाहर निकल पाएंगे? लेकिन, क्योंकि इरादा लालच से अधिक शक्तिशाली है, इसलिए लालच के चंगुल में फंसे लोग सुखमय जीवन और धन की परिपूर्णता को त्यागकर, त्याग के मार्ग अपनाकर और दुख के चक्र से बाहर निकल पाते हैं। अतः, इरादा ही सच्चा प्रवर्तक है, न कि लालच। इसी प्रकार, जब इरादे की तुलना घृणा आदि से की जाती है, तब भी यही बात ध्यान में रखनी चाहिए।

आइए इसे और स्पष्ट रूप से समझाते हैं। जब कोई महान और कठिन मानवीय कार्य सामने आता है, तो ऐसे कार्यों की सफलता के लिए इन चार प्रमुख गुणों का उत्पन्न होना आवश्यक हो जाता है। कैसे? जब बुरे इरादों वाले लोग ऐसे किसी कार्य का सामना करते हैं, तो उनका इरादा पीछे हट जाता है। वे उसे करने के लिए तैयार नहीं होते। वे उसमें कोई रुचि न होने के कारण उसे छोड़ देते हैं और यहाँ तक कहते हैं: "यह कार्य हमारी क्षमता से परे है।" वहीं अच्छे इरादों वाले लोग ऐसे महान कार्य को देखकर उत्साह से भर जाते हैं। वे उसे करने के लिए बहुत उत्सुक होते हैं। वे कार्य को पूरा करने का निश्चय कर लेते हैं और कहते हैं: "यह कार्य हमारी क्षमता के दायरे में है।" इस प्रकार का व्यक्ति अपने इरादे से इतना दृढ़ हो जाता है कि जब तक कार्य पूरा नहीं हो जाता, तब तक वह उसे छोड़ नहीं पाता। और इसी कारण वह कार्य किसी दिन पूर्ण रूप से पूरा हो ही जाता है, चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो।

अब, आइए आलसी वर्ग के लोगों के मामले पर विचार करें। जब वे ऐसे किसी महान कार्य का सामना करते हैं, तो वे तुरंत उससे पीछे हट जाते हैं। वे इससे पीछे हट जाते हैं क्योंकि उन्हें पहले से ही पता होता है कि इसे पूरा करने के लिए उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और शारीरिक व मानसिक पीड़ा सहनी पड़ेगी। वहीं, कर्मठ व्यक्ति इसे देखकर ऊर्जा से भर उठता है और इसे पूरा करने की इच्छा रखता है। वह हर परिस्थिति में, चाहे कितना भी समय लगे, इस कार्य को करता रहता है। वह कभी भी अपने प्रयासों से पीछे नहीं हटता और न ही निराश होता है। वह केवल यही सोचता है कि इतना बड़ा कार्य दिन-रात अथक परिश्रम के बिना पूरा नहीं हो सकता। और ऐसा होने पर, यह बड़ा कार्य एक दिन अवश्य पूरा होगा।

अब कमजोर मन वाले व्यक्ति की बात करते हैं। वे भी ऐसे बड़े कार्य को देखकर मुंह मोड़ लेते हैं। वे निश्चित रूप से इसके बारे में फिर कभी नहीं सोचेंगे। लेकिन दृढ़ मन वाले व्यक्ति के साथ ऐसा बिल्कुल नहीं होता। जब वह ऐसा कार्य देखता है तो उसमें अत्यधिक रुचि उत्पन्न होती है। वह इसके विचार को अपने मन से निकाल ही नहीं पाता। वह हर समय कार्य के बारे में सोचता रहता है, और उसके आदेश पर लंबे समय तक उसमें लगा रहता है, शारीरिक और मानसिक पीड़ा के सभी प्रकारों को सहन करता है। शेष भाग को आगे उसी प्रकार समझाया जाएगा जैसे ऊपर प्रमुख उद्देश्य को समझाया गया है।

एक बार फिर, बुद्धिहीन लोगों के बारे में कुछ शब्द। जब उन्हें ऐसा कोई कार्य सौंपा जाता है, तो वे असमंजस में पड़ जाते हैं। उन्हें न तो शुरुआत करने का तरीका पता होता है, न ही काम को आगे बढ़ाने का, और न ही उसे पूरा करने का। उन्हें ऐसा लगता है मानो वे अंधेरे में आ गए हों, जहाँ काम को पूरा करने के लिए मार्गदर्शन करने वाली कोई रोशनी भी नहीं है। दूसरी ओर—अधिक बुद्धिमान व्यक्ति की बात करें—जब ऐसे व्यक्ति को इतना बड़ा कार्य करना पड़ता है, तो वह मानो अपनी बुद्धि के शिखर पर पहुँच जाता है, जहाँ से वह शुरुआत करने और अंत करने का तरीका समझ जाता है। उसे यह भी पता होता है कि इस कार्य को पूरा करने से उसे क्या लाभ और आशीर्वाद प्राप्त होंगे। वह इसे आसानी से पूरा करने के लिए कई उपाय ईजाद करता है। वह लंबे समय तक काम करता रहता है, और यह सिलसिला चलता रहता है। बाकी बातों को भी उसी तरह समझाया जा सकता है जैसे मुख्य प्रयास को समझाया गया है—बस 'अटूट प्रयासों' के स्थान पर 'अत्यधिक गहन शोध के साथ' शब्द जोड़ दें।

इस प्रकार, जब कोई महान और कठिन मानवीय कार्य उत्पन्न होते हैं, तो उनकी सिद्धि के साधनों में ये चार प्रमुख तत्व सर्वोपरि हो जाते हैं। इन चार प्रमुख तत्वों के अस्तित्व के कारण सर्वज्ञ बुद्ध, पच्चेक बुद्ध,[12] सर्वोत्कृष्ट शिष्य, महान शिष्य और साधारण शिष्य जैसे विशिष्ट या प्रतिष्ठित व्यक्ति (पुरुष) अस्तित्व में आते हैं। ऐसे व्यक्तियों के प्रकट होने के कारण, मानव जाति की सामान्य समृद्धि और कल्याण के लिए अनेक कलाएँ और विज्ञान, साथ ही सामान्य साज-सामान भी प्रकट होते हैं, जो सभ्यता के आवरण के अंतर्गत मानवीय आवश्यकताओं और इच्छाओं को पूरा करते हैं।[13]

अधिपति-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

4. अनंतार-पच्चय या निकटता का संबंध

अनंतार-पच्चय क्या है? चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, जो अभी-अभी (ठीक पिछले क्षण में) समाप्त हुए हैं, अनंतार-पच्चय हैं। इस पच्चय से कौन से संबंधित हैं? चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, जो अभी-अभी (ठीक अगले क्षण में) उत्पन्न हुए हैं, इस पच्चय से संबंधित हैं।

किसी प्राणी के एक जन्म में, पुनर्जन्म-चेतना प्रथम जीवन-सम्बद्धता से निकटता के माध्यम से संबंधित होती है, और प्रथम जीवन-सम्बद्धता फिर से द्वितीय जीवन-सम्बद्धता से संबंधित होती है; और इसी प्रकार शेषों के साथ भी।

अब, अभिधम्म के छठे खंड के नौवें अध्याय, धम्म-यमक में वर्णित "जब शुद्ध (शुद्ध निवास, अर्थात् शुद्धवास) में दूसरी अनैतिक चेतना उत्पन्न होती है, आदि" पाठ के संदर्भ में, हम समझते हैं कि जैसे ही कोई व्यक्ति अपने नए शरीर के प्रति सचेत होता है, उसके नए जीवन में उत्पन्न होने वाली पहली विचार प्रक्रिया अनैतिक विचार की प्रक्रिया होती है, जिसके साथ नए जीवन को जीने की प्रबल इच्छा होती है, इस विचार के साथ: 'यह मेरा है; यह मैं हूँ; यह मैं ही हूँ।" जब यह प्रक्रिया शुरू होने वाली होती है, तो जीवन-संचलन पहले दो क्षणों के लिए कंपन करता है। इसके बाद मन-द्वार बोध होता है, और फिर सात बोधों की एक श्रृंखला आती है, जिसके साथ नए जीवन को जीने की तीव्र इच्छा होती है। इसके बाद, जीवन-संचलन फिर से प्रवाहित होने लगता है।

वास्तव में, यह प्राणी[14] अपने वर्तमान नए जीवन के बारे में कुछ भी नहीं जानता। वह पिछले जन्म में अपने अनुभवों पर चिंतन करते हुए जीता है। हालाँकि, मन का आधार इतना कमजोर होता है कि वस्तु भी स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित नहीं हो पाती। वस्तु के इस प्रकार

अस्पष्ट होने के कारण, सामान्यतः चेतना के ऐसे वर्ग ही उत्पन्न होते हैं जो उलझन से जुड़े होते हैं।

गर्भाधान के लगभग दो महीने बाद, जिस दौरान व्यक्ति का धीरे-धीरे विकास होता है, आँख, कान आदि की नियंत्रण शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित हो जाती हैं। लेकिन माँ के गर्भ में प्रकाश आदि न होने के कारण, चारों प्रकार की अनुभूतियाँ—दृश्य, श्रवण आदि—विकसित नहीं होतीं। केवल स्पर्श और मानसिक अनुभूतियाँ ही विकसित होती हैं। माँ के शरीर की हर मुद्रा में परिवर्तन से शिशु को बहुत पीड़ा और कष्ट होता है, और जन्म के समय तो यह पीड़ा और भी बढ़ जाती है। बाह्य जगत में आने के बाद भी, जब तक उसका कोमल शरीर इतना मजबूत (परिपक्व) नहीं हो जाता कि वह स्वयं को संभाल सके, तब तक उसे बहुत दुर्बलता से पीठ के बल लेटना पड़ता है। इस दौरान वह वर्तमान वस्तुओं को नहीं देख पाता, बल्कि उसका मन सामान्यतः अपने पूर्व जन्म की वस्तुओं की ओर उन्मुख होता है। यदि वह नरकलोक से आया है, तो उसका चेहरा सामान्यतः अप्रिय होता है, क्योंकि वह अभी भी नरकलोक में अनुभव की गई अनुभूतियों को महसूस करता है। यदि वह देवलोक से आता है, तो उसका मनमोहक चेहरा न केवल मुस्कान से दमकता है, बल्कि उसकी आनंदमयी हंसी में मानो देवलोक की वस्तुओं के विचार से उत्पन्न प्रसन्नता झलकती है। इसके

अलावा, उसके शरीर के अंग धीरे-धीरे बलवान होते जाते हैं और उसकी इंद्रिय अनुभूतियाँ स्पष्ट होती जाती हैं। इसलिए वह शीघ्र ही अपने प्यारे छोटे-छोटे तरीकों से आनंदपूर्वक खेलने लगता है। इस प्रकार उसके लिए एक सुखी जीवन का आरंभ होता है; और वह अपने नए जीवन में रुचि लेने लगता है। वह अपनी माँ की वाणी को अपनाता है और उसकी नकल करता है। वह उससे बातें करता है। इस प्रकार उसकी इंद्रियाँ लगभग पूरी तरह से वर्तमान संसार की ओर मुड़ जाती हैं, और उसके पिछले जीवन के सभी विचार लुप्त हो जाते हैं। अर्थात्, वह अपने पिछले जन्म को भूल जाता है।

क्या सभी प्राणी अपने पिछले जन्मों को केवल इसी अवस्था में भूल जाते हैं? नहीं, सभी नहीं। कुछ जो गर्भधारण की पीड़ा से अत्यधिक पीड़ित होते हैं, वे गर्भावस्था के दौरान अपने पिछले जन्मों को भूल जाते हैं, कुछ जन्म के समय, कुछ ऊपर बताई गई अवस्था में; कुछ युवावस्था में, और कुछ वृद्धावस्था में। कुछ असाधारण पुरुष अपने पूरे जीवन भर अपने पिछले जन्मों को नहीं भूलते, और कुछ तो दो-तीन जन्मों को भी याद रख सकते हैं। इन्हें जातिसरसत्ता कहा जाता है, यानी वे लोग जिन्हें अपने पिछले जन्मों की स्मृति प्राप्त होती है।

अब, अपने विषय पर लौटते हैं। यद्यपि छह द्वार वाली विचार प्रक्रियाएँ बच्चे के जन्म के बाद ही कार्य करना शुरू कर देती हैं, फिर भी ये प्रक्रियाएँ पूर्णतः तभी क्रियाशील होती हैं जब बच्चा वर्तमान विषयों को ग्रहण करने में सक्षम हो जाता है। इस प्रकार, प्रत्येक विचार प्रक्रिया में, प्रत्येक पूर्ववर्ती चेतना जो अभी-अभी समाप्त हुई है, निकटता के माध्यम से प्रत्येक आगामी चेतना से संबंधित होती है जो तुरंत उत्पन्न हुई है। और निकटता का यह संबंध व्यक्ति के आवर्ती जन्मों के संपूर्ण कालखंड में, अनाप्य आरंभ से ही, अटूट निरंतरता के साथ बना रहता है। लेकिन अरहंतत्व के मार्ग को प्राप्त करने और खन्ध-परिनिर्वाण (अर्थात पंच स्कंधों के अंतिम विनाश) में प्रवेश करने के बाद ही यह निरंतरता टूटती है, या अधिक सटीक रूप से कहें तो, हमेशा के लिए समाप्त हो जाती है।

अनंतार को अनंतार क्यों कहा जाता है, और पश्चात क्यों? अनंतार को अनंतार इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह अपने समान घटनाओं को तुरंत बाद उत्पन्न करता है। पश्चात को पश्चात इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह सहायता प्रदान करता है। 'अपने समान' वाक्यांश में, 'समान' शब्द का अर्थ किसी वस्तु के प्रति सचेत होने की क्षमता के संदर्भ में समानता व्यक्त करना है। और सरम्मन्त का अर्थ है एक ऐसी घटना जो किसी वस्तु की उपस्थिति के बिना घटित नहीं होती। इसलिए इसे 'क्षमता के संदर्भ में समान' आदि के रूप में अनुवादित किया गया है।

इसी प्रकार, "धम्मन्तरस्स-उप्पदानत्थेन" वाक्यांश का अर्थ निम्नलिखित है: "यद्यपि पिछला विचार समाप्त हो जाता है, तब भी उसकी सचेत क्षमता तब तक समाप्त नहीं होती जब तक कि वह अगले विचार को उत्पन्न न कर दे।"

यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस संबंध के पच्चय-धम्मों की श्रृंखला पिछली माताओं की श्रृंखला के समान है, और पच्चय्युप्पन्न-धम्मों की श्रृंखला अगली पुत्रियों की श्रृंखला के समान है। ऐसा होने पर, अरहंत के अंतिम मरणविराम विचार से भी पुनर्जन्म-चेतना का उदय होना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होता, क्योंकि अस्तित्व के विकास के अंत में, सभी इच्छा-संबंधी और अशुद्धियाँ (कर्म-किलेसा) पूरी तरह से समाप्त हो जाती हैं, और अंतिम मरणशील विचार अंतिम, परम शांति की अवस्था में पहुँच जाता है।

अनंतार-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 5.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन

---

5. समनंतर-पच्चय या निकटवर्ती निकटता का संबंध:

इस संबंध के पच्चय-धम्म और पच्चयुप्पन्न-धम्म का वर्गीकरण, अनंतरपच्चय के वर्गीकरण के समान ही है।

समनंतर को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? समनंतर को 'पूर्ण निकटता' के अर्थ में समझा जाना चाहिए। कैसे? एक पत्थर के स्तंभ में, यद्यपि उसमें मौजूद पदार्थ के समूह एक पिंड में एकजुट प्रतीत होते हैं, फिर भी उनमें सीमा या स्थान का भौतिक गुण मौजूद होता है, क्योंकि पदार्थ सारगर्भित और सृजनशील होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि पदार्थ की किन्हीं भी दो इकाइयों के बीच एक स्थान होता है, जिसे मध्यस्थ या गुहा कहा जाता है। परन्तु अभौतिक गुणों के साथ ऐसा नहीं है। मन और मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं के दो क्रमिक समूहों के बीच कोई स्थान, मध्यस्थ या गुहा नहीं होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि वे (मन और मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं के समूह) पूरी तरह से किसी भी मध्यस्थता से रहित होते हैं, क्योंकि मानसिक अवस्था सारगर्भित और सृजनशील नहीं होती है। दो क्रमिक मानसिक समूहों और मानसिक सहवर्ती तत्वों के बीच की मध्यस्थता भी संसार को ज्ञात नहीं है। अतः यह माना जाता है कि मन स्थायी, स्थिर, गतिहीन और अपरिवर्तनीय है। अतः 'समानंतर' को 'पूर्ण तात्कालिकता' के अर्थ में समझा जाना चाहिए।

अनंतरत्थ को उपरोक्त संबंध में इस प्रकार भी समझाया गया है: अत्तनो अनंतरे अत्तसदिसस धम्मंतरस उप्पादनत्थेन; ऐसा इसलिए है क्योंकि यह अपने समान घटनाओं की अवस्थाओं को तुरंत बाद घटित होने का कारण बनता है। ऐसा होने पर, निम्नलिखित सुझाव दिया जा सकता है: 'स्थायी विराम'[15] (निरोधसमापत्ति) के समय, पूर्ववर्ती चेतना न तो चेतना है और न ही अचेतना, और अनुवर्ती चेतना आर्य फल की है। चेतना के इन दो वर्गों के बीच, विचार का पूर्ण निलंबन एक दिन, दो दिन, तीन दिन... या यहाँ तक कि सात दिनों के लिए भी होता है। अचेतन प्राणियों के निवास में, पूर्ववर्ती चेतना पिछले कमललोक से मृत्यु (चटचित्त, मरणशील विचार) की होती है; और अनुवर्ती चेतना अगले कमललोक में पुनर्जन्म (पतिसंधिचित्त) की होती है। चेतना के इन दो वर्गों के बीच, अचेतन प्राणी के विचार पूर्णतः पाँच सौ कल्पों के जीवनकाल तक निलंबित रहते हैं।

अतः, क्या यह कहना सही नहीं है कि पूर्ववर्ती चेतना के दोनों वर्गों में तुरंत बाद अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता नहीं होती? इसका उत्तर है: नहीं, उनमें यह क्षमता नहीं होती। कुछ गहन चिंतन और संकल्पों के कारण यह क्षमता कुछ समय के लिए बाधित हो जाती है। जब पूर्ववर्ती विचार समाप्त होते हैं, तो वे अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता के साथ समाप्त हो जाते हैं। और बाद के विचार, उस क्षण में निरंतरता में उत्पन्न होने में असमर्थ होने के कारण, उक्त समय बीतने के बाद ही उत्पन्न होते हैं। यह कहना उचित नहीं है कि उनमें (पूर्ववर्ती विचारों में) अपने समान किसी चीज़ को उत्पन्न करने की क्षमता नहीं होती, या वे अनंत-संबंध नहीं हैं, केवल इस क्षमता के निष्क्रिय होने के कारण। क्योंकि, हम राजा की सेनाओं की बात तब नहीं करते जब वे वास्तव में युद्ध में न हों या लड़ाई की क्रिया में न हों, या जब वे इधर-उधर घूम रही हों और राजा द्वारा उन्हें लड़ने के लिए न कहा गया हो, क्योंकि ऐसे समय में राजा कह सकता है, "मेरे सैनिकों, अभी तुम्हारे लड़ने का उचित समय नहीं है। लेकिन तुम अमुक समय पर लड़ोगे।" तब हम यह नहीं कहते कि वे सेनाएँ नहीं हैं या उनमें युद्ध क्षमता नहीं है। ठीक इसी प्रकार, उपरोक्त दो विचारों के बीच संबंध को समझा जाना चाहिए।

यहाँ कुछ लोग कह सकते हैं: 'इस संबंध में अभी-अभी कहा गया है कि संबंध स्थापित करने वाली और संबंधित वस्तुएँ, निराकार गुण होने के कारण जिनका कोई रूप नहीं है और जिनका बीच में आने वाली किसी भी भौतिक सीमा (स्थान) से कोई संबंध नहीं है, पूरी तरह से मध्यस्थता या रिक्ति से रहित हैं। यदि ऐसा है, तो हम चेतना के हर क्षण उत्पन्न होने और समाप्त होने पर कैसे विश्वास करेंगे, जिसे अरम्मन-पच्चय में घंटा और वायलिन की ध्वनि के उदाहरण से समझाया गया है?' हम इस प्रश्न का उत्तर इस तथ्य को प्रतिपादित करके दे सकते हैं, जो मनोवैज्ञानिक जगत में सर्वथा स्पष्ट है, कि चेतना के विभिन्न वर्ग निरंतर परिवर्तनशील अवस्था में हैं, अर्थात् निरंतर परिवर्तन के क्रम में हैं। चित्त यमका पर लिखे निबंधों में भी इसका विस्तृत वर्णन किया गया है।

समनंतर-संबंधों का अंत।

6. सहजता-पच्चय या सहअस्तित्व का संबंध:

इस संबंध के पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्मों के वर्गीकरण पर अब चर्चा की जाएगी। चेतना के सभी सहअस्तित्व वाले वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। इसी प्रकार, पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय और मन का आधार, जो पुनर्जन्म के साथ सहअस्तित्व में रहते हैं; और इसी प्रकार, महा तत्व भी परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। पुनर्जन्म के समय कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण और जीवन के दौरान, चेतना की प्रत्येक क्षणिक अवस्था (जो भौतिक गुण उत्पन्न करने में सक्षम है) के आरंभिक क्षण में मन से उत्पन्न सभी भौतिक गुण, उस सहअस्तित्व वाली चेतना के पच्चयुप्पन्न-धम्म कहलाते हैं। महा तत्वों से व्युत्पन्न सभी भौतिक गुणों को महा तत्वों के पच्चयुप्पन्न-धम्म कहा जाता है।

सहजता को किस अर्थ में और पच्चय को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? सहजता का अर्थ सहअस्तित्व है, और पच्चय का अर्थ सहायता प्रदान करना है। यहाँ सहअस्तित्व का अर्थ है कि जब कोई घटना उत्पन्न होती है, तो वह अपने प्रभाव के साथ उत्पन्न होती है; या दूसरे शब्दों में, अपने प्रभाव को भी साथ-साथ उत्पन्न करती है। सहअस्तित्व का यही अर्थ यहाँ निहित है। उदाहरण के लिए, जब सूर्य उदय होता है, तो वह अपनी ऊष्मा और प्रकाश के साथ उदय होता है। और जब मोमबत्ती जलती है, तो वह अपनी ऊष्मा और प्रकाश के साथ जलती है। इसी प्रकार, यह संबंधित वस्तु भी उत्पन्न होने पर संबंधित वस्तुओं के साथ उत्पन्न होती है।

इस उदाहरण में, सूर्य प्रत्येक मानसिक अवस्था के समान है; सूर्य की ऊष्मा सहअस्तित्व वाली मानसिक अवस्थाओं के समान है; और सूर्य का प्रकाश सहअस्तित्व वाले भौतिक गुणों के समान है। इसी प्रकार, सूर्य प्रत्येक महा तत्व के समान है; उसकी ऊष्मा सहअस्तित्व वाले महा तत्वों के समान है; और उसका प्रकाश उनसे उत्पन्न सहअस्तित्व वाले भौतिक गुणों के समान है। मोमबत्ती के उदाहरण में भी इसे इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

सहजता-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 7.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

7. अन्नमन्न-पच्चय या पारस्परिकता का संबंध

सहअस्तित्व के वर्गीकरण में जिन पच्चय-धम्मों का उल्लेख किया गया है, वे यहाँ (इस संबंध में) पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म दोनों हैं। चेतना की सभी अवस्थाएँ और उनके मानसिक सहवर्ती, परस्पर पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं; इसी प्रकार सहअस्तित्व में रहने वाले महा तत्व हैं; पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय हैं; और इसी प्रकार मन का आधार या हृदय-आधार है जो पुनर्जन्म के मानसिक समुच्चय के साथ सहअस्तित्व में रहता है।

यहाँ निहित अर्थ को समझना आसान है। हालाँकि, एक उदाहरण देना रोचक होगा। जब तीन छड़ियों को उनके ऊपरी सिरों पर एक दूसरे के सहारे सीधा खड़ा किया जाता है, तो उनमें से प्रत्येक अन्य दो पर निर्भर होती है और अन्य दो से निर्भर होती है। जब तक उनमें से एक इस प्रकार सीधी स्थिति में रहती है, तब तक सभी उसी स्थिति में रहेंगी। और, यदि उनमें से एक भी गिर जाए, तो सभी एक साथ गिर जाएँगे। इस पारस्परिक संबंध को ठीक इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

यहाँ, यदि कोई यह दावा करे कि चेतना के बिना मानसिक गुण उत्पन्न नहीं हो सकते, तो हम इस बात को स्वीकार करेंगे। क्यों? क्योंकि मानसिक गुणों के संपर्क आदि कार्यों में जानने का कार्य सर्वोपरि है, और सर्वज्ञ बुद्ध द्वारा प्रतिपादित धम्मपद में, 'मन सर्वोपरि है' (मनोपुब्बंगम धम्म, आदि)। और फिर यदि कोई यह मानता है कि मानसिक गुणों के बिना चेतना भी उत्पन्न नहीं हो सकती, तो हम इस दृष्टिकोण का समर्थन करेंगे। वे (मानसिक गुण) चेतना के सहवर्ती कारक हैं; इसलिए, चेतना भी अपने सहवर्ती मानसिक गुणों के बिना उत्पन्न नहीं हो सकती। इसी प्रकार चार महा तत्व भी समझे जाने चाहिए। लेकिन उनसे व्युत्पन्न मानसिक गुणों को सहवर्ती कारक नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि वे केवल व्युत्पन्न हैं। तो क्या जीवन के भौतिक गुण और भोजन से उत्पन्न गुण सहवर्ती कारक नहीं हैं, यह

देखते हुए कि वे व्यक्तिगत रूप से नियंत्रण और भोजन के कारण-कार्य संबंध को क्रियान्वित कर सकते हैं? नहीं, वे नहीं हैं। उन्हें सहवर्ती कारक तभी माना जा सकता है जब विकास पूर्ण गति से चल रहा हो, न कि तब जब चीजें केवल उत्पत्ति की अवस्था में हों। इस पारस्परिकता के संबंध में, उत्पत्ति की अवस्था में सहवर्ती कारकों का उत्पन्न होना एक आवश्यक कारक है।

अन्नमन्ना-संबंध का अंत।

रिश्तों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

8. निस्साय पच्चय या आश्रितता संबंध

आश्रितता संबंध तीन प्रकार के होते हैं: सहअस्तित्वगत आश्रितता, पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता और पूर्व-वस्तुगत आधारभूत आश्रितता।

इनमें से सहअस्तित्वगत आश्रितता संबंध क्या है? सहअस्तित्वगत आश्रितता संबंध में वे सभी तत्व समाहित होते हैं जो पहले से ही सहअस्तित्व संबंध में शामिल हैं। अतः, संबंध और संबंधित वस्तुओं के वर्गीकरण को यहाँ उसी प्रकार समझा जाना चाहिए जैसे सहअस्तित्व संबंध अनुभाग में बताया गया है।

और पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता संबंध क्या है? छह आधार हैं - आँख, कान, नाक, जीभ, शरीर और हृदय। ये छह आधार, जीवन के दौरान, पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता के माध्यम से, सात ज्ञान तत्वों से कारणिक रूप से संबंधित होते हैं। भौतिक आधार स्वयं पूर्व-अस्तित्व में होता है और आधार या आधारभूत तत्व के रूप में कार्य करता है, इसलिए इसे 'पूर्व-अस्तित्वगत आधारभूत आश्रितता' कहा जाता है। यहां 'आधार' शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है क्योंकि यह मन और मानसिक गुणों के लिए एक आधार या आधारभूत तत्व है। 'पूर्व-अस्तित्व' का अर्थ है पहले से विद्यमान होना—अपने संबंधित विषय से एक विचार-क्षण पहले।

यहां पुनर्जन्म चेतना हृदय आधार[16] पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होती है, क्योंकि उस क्षण कोई पूर्व-अस्तित्व वाला भौतिक आधार नहीं होता। और प्रथम जीवन-सम्क्रम उसी हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो पुनर्जन्म चेतना के साथ सह-अस्तित्व में होता है। द्वितीय जीवन-सम्क्रम भी हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो प्रथम जीवन-सम्क्रम के साथ सह-अस्तित्व में होता है, और इसी प्रकार शेष भी, अर्थात् तृतीय जीवन-सम्क्रम हृदय आधार पर निर्भरता के साथ उत्पन्न होता है जो द्वितीय जीवन-सम्क्रम के साथ सह-अस्तित्व में होता है, और इसी प्रकार मृत्यु के क्षण तक चलता रहता है। इस प्रकार 'आधारभूत पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' को समझा जाना चाहिए जो संज्ञान के दो तत्वों, बोध तत्व और समझ तत्व से संबंधित है।

जैसे वायलिन तभी बजता है जब वायलिन का धनुष उसके तारों पर चलता है, अन्यथा नहीं, उसी प्रकार पाँचों इंद्रियाँ तभी जागृत होती हैं जब पाँच प्रकार की इंद्रिय-वस्तुएँ पाँच आधारों में प्रवेश करती हैं, अन्यथा नहीं।

यह अनुभूति केवल वस्तु और आधार की स्थिर अवस्था में ही संभव है। इस अनुभूति के कारण जीवन-सम्प्रवाह दो क्षणों के लिए कंपन करता है। और जीवन-सम्प्रवाह के कंपन के कारण बोध उत्पन्न होता है। बोध के कारण पाँचों इंद्रिय-ज्ञान उत्पन्न हो पाते हैं। इसलिए, पाँच इंद्रिय-आधार (आँख, कान, आदि) जो भूतकाल की अवचेतन अवस्था के आरंभिक क्षण में उत्पन्न हुए थे, वे पाँच इंद्रिय-ज्ञान तत्वों के 'मूल पूर्व-अस्तित्व वाले आधार' हैं।

अब, मृत्यु के समय सभी छह आधार सत्रहवीं अवचेतना के आरंभिक क्षण में ही अस्तित्व में आते हैं, जिसकी गणना मरणशील चेतना से पीछे की ओर की जाती है। उस सत्रहवीं अवचेतना के बाद कोई नया आधार उत्पन्न नहीं होता। अतः, मृत्यु के समय, सभी अवचेतना, सभी छह द्वार-प्रक्रिया-ज्ञान और मृत्यु की चेतना इन पर, उनके संबंधित आधारों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती हैं, जो उनसे पहले उत्पन्न हुई सत्रहवीं अवचेतना के साथ अस्तित्व में आए थे। यही 'आधारभूत पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारण-कार्य संबंध है।

'आधारभूत वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारण-कार्य संबंध क्या है? जब कोई चिंतन कर रहा होता है और यह विचार रखता है

कि 'मेरा मन लालसा, अहंकार और त्रुटि के कारण स्वयं को उस पदार्थ पर निर्भर पाता है जो मेरा है, या मैं स्वयं, या मेरा अत्ता है'; या जब कोई इस प्रकार तर्क या चिंतन कर रहा हो: 'मेरा मन स्वयं को उस पदार्थ पर निर्भर पाता है जो अनित्य, निर्जीव और आत्माहीन है', तब निर्धारण आदि जैसी मानसिक अनुभूतियाँ उत्पन्न होती हैं। उस समय, प्रत्येक भौतिक आधार प्रत्येक मानसिक अनुभूति का आधार और वस्तु बन जाता है। अत:, अमुक हृदय-आधार अमुक चेतना और उसके सहवर्ती तत्वों से मूलभूत वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित है। यह 'बुनियादी वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व निर्भरता' का कारणिक संबंध है। अत: निर्भरता का संबंध तीन प्रकार का होता है।

यहाँ, सुत्तंत के माध्यम से निर्भरता का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। हम जानते हैं कि मनुष्य, पशु, वृक्ष आदि पृथ्वी पर स्थित या विश्राम करते हैं; पृथ्वी बदले में, वायु के विशाल द्रव्यमान पर; और वायु, नीचे के असीम रिक्त स्थान पर। हम यह भी जानते हैं कि मनुष्य घरों में निवास करते हैं; विहारों या मठों में भिक्षु; स्वर्गलोकों में देवता; और इसी प्रकार संपूर्ण ब्रह्मांड। इस प्रकार हमें यह समझना चाहिए कि प्रत्येक वस्तु किसी न किसी प्रकार से कारणवश संबंधित है।

निस्साय-संबंध का समापन।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 9.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

9. उपनिषय-पच्चय या पर्याप्तता का संबंध

पर्याप्तता का संबंध तीन प्रकार का होता है: वस्तुनिष्ठ पर्याप्तता, निकटवर्ती पर्याप्तता और प्राकृतिक पर्याप्तता। इन तीनों में से, पहली वस्तुनिष्ठ प्रभुत्व के समान है, और दूसरी निकटता के समान है।

'प्राकृतिक पर्याप्तता' क्या है? चेतना के सभी भूतकाल, वर्तमान और भविष्य के वर्ग, आंतरिक और बाह्य, उनके सहवर्ती तत्वों सहित, सभी भौतिक गुण, निर्वाण और अवधारणाएँ (पन्नत्ति), प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं, जो वर्तमान चेतना के सभी वर्गों और उनके सहवर्ती तत्वों से अलग-अलग रूप से संबंधित हैं।

यहाँ, निर्वाण प्राप्त कर चुके बुद्ध, उनका धम्म, उनके पवित्र शिष्यों का समुदाय और मान्यता प्राप्त समुदाय की परंपराएँ, हम बाद की पीढ़ियों के लिए अच्छे कर्मों की खेती के लिए प्राकृतिक पर्याप्तता के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। इसी प्रकार, हमारे पूर्वज, माता-पिता, शिक्षक, ज्ञानी भिक्षु और ब्राह्मण, प्रख्यात दार्शनिक और शक्तिशाली एवं महान राजाओं के रूप में, आने वाली पीढ़ियों से स्वाभाविक रूप से जुड़े हुए हैं, चाहे वह अच्छे या बुरे गुणों के विकास के लिए हो या सुख या दुख के अनुभव के लिए। इसी कारण उन्होंने आने वाली पीढ़ियों के कल्याण और अन्य लाभों के लिए विभिन्न नैतिक और अनैतिक नियम और कहावतें तथा सांसारिक संस्थाएँ स्थापित कीं या प्रतिपादित कीं। आने वाली पीढ़ियाँ भी उनके मार्ग का अनुसरण करती हैं और दान-पुण्य करके, उपदेशों का पालन करके, संसार के नैतिक और सामाजिक नियमों का अभ्यास करके, विभिन्न धार्मिक मान्यताओं का पालन करके, विभिन्न प्रकार के व्यवसाय अपनाकर, कला और विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन करके, गाँवों, कस्बों और शहरों का शासन करके, खेतों में कृषक बनकर, झीलें, तालाब और कुएँ खोदकर, घर बनाकर, गाड़ियाँ और रथ बनाकर, नावें, स्टीमर और जहाज बनाकर, और चाँदी, सोना, बहुमूल्य पत्थर, मोती आदि धन की खोज और संचय करके उनकी परंपराओं को अपनाती हैं। इस प्रकार संसार का निरंतर विकास हुआ है।

भविष्य के बुद्ध (मत्तेय), उनका धम्म और उनका बंधुआ समुदाय वर्तमान पीढ़ी से कारणवश संबंधित होने के कारण सद्गुणों की प्राप्ति और पुण्य कमाने के लिए स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं। सर्वोच्चता, धन, शक्ति, समृद्धि—जो भविष्य में प्राप्त होने वाली हैं—वे भी वर्तमान पीढ़ी के लिए सभी प्रकार के प्रयासों को करने हेतु स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं। सुखमय जीवन और धन की प्राप्ति तथा पथ, फल और निर्वाण की प्राप्ति—जो भविष्य में प्राप्त होने वाली हैं—वे भी वर्तमान पीढ़ी के लिए दान, सद्गुण आदि गुणों के विकास हेतु स्वाभाविक रूप से पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं।

सर्दियों में फसल काटने की उम्मीद में, लोग बरसात के मौसम में ज़मीन जोतते और बीज बोते हैं, या श्रम और बुद्धि से प्रेरित कई तरह के

काम करते हैं, इस उम्मीद में कि काम पूरा होने पर उन्हें धन मिलेगा। अब, फसल काटना और धन प्राप्त करना, भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं, जो फसल और धन की प्राप्ति से संबंधित हैं। इसी प्रकार, अधिकांश लोग वर्तमान जीवन में कई अच्छे कर्म करते हैं, यह जानते हुए कि उन्हें परलोक में अपने कर्मों का फल मिलेगा। इस स्थिति में, भविष्य में प्राप्त होने वाले फल, वर्तमान जीवन में किए गए कर्मों से संबंधित भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं। अतीत में किए गए कर्म भी भविष्य में प्राप्त होने वाले फलों से संबंधित अतीत की प्राकृतिक पर्याप्तताएँ हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भविष्य की प्राकृतिक पर्याप्तता अतीत की तरह ही व्यापक और विस्तृत है।

जीवित बुद्ध, उनका धर्म, इत्यादि वर्तमान प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति हैं, क्योंकि वे वर्तमान जीवित मनुष्यों, देवताओं और ब्रह्माओं से संबंधित हैं, और इस प्रकार जीवित पुत्रों और पुत्रियों के जीवित माता-पिता हैं, इत्यादि। इस प्रकार वर्तमान प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति स्पष्ट और समझने में आसान है।

आंतरिक प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति वे हैं जो किसी सजीव व्यक्ति में विद्यमान होती हैं, जैसे बुद्ध, इत्यादि। बाह्य प्राकृतिक पर्याप्तता की स्थिति वे स्थितियाँ हैं, जैसे भूमि, पर्वत, नदियाँ, महासागर, इत्यादि, जो जीवन (चेतन प्राणियों) के अस्तित्व के लिए विश्राम स्थल के रूप में कार्य करती हैं; या जैसे वन, वृक्ष, घास, अनाज, फलियाँ, इत्यादि; या जैसे चंद्रमा, सूर्य, ग्रह, तारे, इत्यादि; या जैसे वर्षा, अग्नि, वायु, शीत, ताप, इत्यादि, जो किसी न किसी रूप में जीवन के लिए उपयोगी और लाभकारी हैं। ये सभी अधिक शक्तिशाली पर्याप्तता की स्थितियाँ हैं, चाहे अच्छे कर्मों की प्राप्ति के लिए हों या बुराई के प्रसार के लिए। या तो सुखों के भोग के लिए या दुखों के कष्ट सहने के लिए।

जो लोग वर्तमान जीवन में निर्वाण प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रखते हैं, वे ज्ञानोदय के कारकों पर कार्य करते हैं। जो लोग आने वाले जन्मों में, जब बुद्ध प्रकट होंगे, निर्वाण प्राप्त करने की प्रबल आशा रखते हैं, वे पूर्णता की प्राप्ति करते हैं। यहाँ, निर्वाण इन कार्यों के अभ्यास के लिए अधिक शक्तिशाली पर्याप्त शर्त है।

बुद्ध के त्रिपिटकों में पाए जाने वाले या आमतौर पर प्रयुक्त होने वाले विभिन्न प्रकार के विचार या नाम-और-अवधारणाएँ भी अनेक चीजों को समझने के लिए पर्याप्त शर्तें हैं।

वास्तव में, यहाँ सभी सशर्त वस्तुएँ तभी अस्तित्व में आती हैं जब उनके लिए वर्तमान कारण या परिस्थितियाँ मौजूद हों, अन्यथा नहीं। और वे तभी स्थिर रहती हैं जब उनके अस्तित्व के लिए वर्तमान कारण हों; अन्यथा वे नहीं रहतीं। इसलिए, उनके उद्भव और उनके रखरखाव के लिए कारणों या परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। हालाँकि, निर्वाण और विचार ऐसी वस्तुएँ हैं, जो बिना शर्त, बिना जन्म और उत्पत्ति के, शाश्वत और अनंत हैं। इसलिए, उनके उद्भव और रखरखाव के लिए किसी कारण की आवश्यकता नहीं है।[17]

नैतिक, नैतिक से कारणिक रूप से संबंधित है, जो एक पर्याप्त शर्त है। इसका स्पष्ट वर्णन पट्टाना में मिलता है, जहाँ कहा गया है: "विश्वास के द्वारा दान दिया जाता है, नियमों का पालन किया जाता है, इत्यादि।" इसी प्रकार, नैतिक और अनैतिक—या अनिर्दिष्ट[18] या अनैतिक—के बीच पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक संबंध इन व्याख्याओं से स्पष्ट होता है: "वासना के कारण हत्या, चोरी इत्यादि की जाती है," और "उपयुक्त जलवायु और भोजन के द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य इत्यादि प्राप्त होता है।" नैतिक, अनैतिक से भी एक अधिक सशक्त पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित है। यह निम्नलिखित व्याख्या से समझा जा सकता है: "कोई दान दे सकता है और इस प्रकार स्वयं को श्रेष्ठ और दूसरों को नीचा दिखा सकता है। उसी प्रकार, नियमों का पालन करके, मन की एकाग्रता प्राप्त करके और ज्ञान अर्जित करके, कोई स्वयं को श्रेष्ठ और दूसरों को नीचा दिखा सकता है।"

नैतिक गुण अनैतिक गुणों से भी अधिक प्रबल कारणवश संबंधित हैं। चारों लोकों (काम, रूप, अरूप और लोकउत्तर) में किए गए सभी अच्छे कर्म और अच्छे कर्मों से जुड़े सभी कार्य, अधिक प्रबल कारणवश, भविष्य में उत्पन्न होने वाले अनैतिक गुणों से संबंधित हैं। दान की सिद्धि का अभ्यास करने वाले शारीरिक और मानसिक पीड़ा सहते हैं। इसी प्रकार, नैतिकता, त्याग, ज्ञान, दृढ़ता, धैर्य, निष्ठा, संकल्प, प्रेम और त्याग जैसे अन्य गुणों (परमिता) का अभ्यास करने वाले भी यही पीड़ा सहते हैं। ध्यान और मार्ग (अलौकिक विचार और आध्यात्मिक मार्ग) का अभ्यास करने वालों के साथ भी यही स्थिति है।

अनैतिक गुण भी अधिक प्रबल कारणवश नैतिक गुणों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए, इस पृथ्वी पर कुछ लोग, गलत कर्म करके, अपने कर्मों का पश्चाताप करते हैं और दान, धर्मोपदेशों का पालन, ध्यान और ध्यान जैसे नैतिक कार्यों को अपनाकर ऐसे सभी बुरे कर्मों से दूर रहने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार, उनके द्वारा किए गए बुरे कर्म, एक प्रबल कारण के रूप में, उनके द्वारा बाद में अपनाए गए नैतिक कर्मों से संबंधित हैं।

इसी प्रकार, अनैतिक कर्म, एक अधिक प्रबल कारण के रूप में, अनैतिक कर्मों से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए, इस संसार में बहुत से लोग, बुरे कर्मों के दोषी होने के कारण, दुख के चार लोकों में से किसी एक में गिरने और वहाँ व्याप्त कष्टों को भोगने के लिए नियत हैं। यहाँ तक कि वर्तमान जीवन में भी, कुछ लोगों को अपने या दूसरों के कुकर्मों के कारण अत्यधिक कष्ट सहना पड़ता है। वहीं, कुछ लोग अपने कुकर्मों से अर्जित धन से अनेक प्रकार के सुखों का आनंद लेते हैं। ऐसे भी बहुत से लोग हैं जो काम, घृणा, त्रुटि, अहंकार आदि के कारण बहुत कष्ट भोगते हैं।

अनैतिकताएँ भी नैतिक गुणों से अधिक प्रबल पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। अपार धनवान होने पर व्यक्ति दान करता है, अच्छे नैतिक गुणों की पूर्णता के लिए अभ्यास करता है, ज्ञान का संवर्धन करता है और किसी उपयुक्त स्थान, जैसे कि मठ, एकांत स्थान, गुफा, वृक्ष, वन, पहाड़ी या गाँव में धार्मिक अनुष्ठान करता है, जहाँ की जलवायु अनुकूल हो और भोजन उपलब्ध हो।

अनैतिकताएँ भी अनैतिकता से अधिक प्रबल पर्याप्त शर्त के रूप में कारणिक रूप से संबंधित हैं। आँखों के होने से अनेक बुराइयाँ स्वयं में दृष्टि के कारण उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार हमारे कानों आदि के संबंध में भी यही व्याख्या लागू होती है; इसी प्रकार हाथों, पैरों, तलवारों, शस्त्रों आदि के संबंध में भी। इस प्रकार पर्याप्त शर्त तीन प्रकार की होती है।

सुत्तंत[19] के अनुसार पर्याप्त शर्त का उल्लेख भी यहाँ किया जा सकता है। पिटक ग्रंथों में अनेक ऐसे अंश मिलते हैं, जैसे "पुण्य मित्रों के साथ संगति से", "पापी साथियों के साथ संगति से", "गाँव में निवास करने से", "वन में निवास करने से", इत्यादि। संक्षेप में, पंच-नियमधम्म (पाँच ब्रह्मांडीय व्यवस्थाएँ) सजीव जगत, निर्जीव जगत और आकाश जगत - इन तीनों लोकों के लिए युगों-युगों तक निरंतर बने रहने के लिए प्रबल और पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं।

अरम्मनुपनिस्सय को ऐसा क्यों कहा जाता है? क्योंकि प्रमुख वस्तु कर्ता (अरम्मनिक) के लिए मुख्य आधार का कार्य करती है।

अनतरूपनिस्सय को ऐसा क्यों कहा जाता है? क्योंकि पूर्ववर्ती चेतना अपने तत्काल अनुवर्ती चेतना के उद्भव के लिए मुख्य आधार का कार्य करती है। पूर्ववर्ती चेतना माता के समान है, और अनुवर्ती चेतना पुत्र के समान। यहां, जैसे माता पुत्र को जन्म देती है जिसका अस्तित्व विशेष रूप से माता पर निर्भर करता है, वैसे ही पूर्ववर्ती चेतना अनुवर्ती चेतना को जन्म देती है जिसका अस्तित्व विशेष रूप से पूर्ववर्ती पर निर्भर करता है।

पकातुपानिसया को ऐसा क्यों कहा जाता है? इसे ऐसा इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह स्वाभाविक रूप से बुद्धिमानों द्वारा एक विशिष्ट पर्याप्त स्थिति के रूप में जाना जाता है। यहां, कुछ और कहना आवश्यक है। निकटता में एक पर्याप्त स्थिति का प्रभाव केवल उसके तत्काल अनुवर्ती को ही प्रभावित करता है, जबकि एक प्राकृतिक पर्याप्त स्थिति का प्रभाव कई दूरस्थ स्थितियों को प्रभावित कर सकता है। इसलिए, जो कुछ इस वर्तमान जीवन में दिनों, महीनों, वर्षों पहले देखा, सुना, सूंघा, चखा, छुआ और अनुभव किया गया है, वह सौ वर्षों के बाद भी मन के द्वार पर पुनः प्रकट होता है, यदि कोई पर्याप्त कारण उपलब्ध हो। और इसलिए लोग अपने अतीत को याद करते हैं, और "मैंने इसे पहले देखा था", "मैंने इसे पहले सुना था", आदि जैसे भाव व्यक्त कर सकते हैं। ये प्राणी, जिनका जन्म आभासीय[21] है, अपने पूर्व जन्मों को भी याद करते हैं; इसी प्रकार, कुछ मनुष्य, जिन्हें अपने पूर्व जन्मों की स्मृति का वरदान प्राप्त है, ऐसा कर सकते हैं। यदि पूर्व में अनुभव की गई एक लाख वस्तुओं में से एक भी वस्तु बाद में फिर से मिल जाए, तो कई या शायद,ये सभी विचार प्रक्रिया में पुनः प्रकट होते हैं।

उपनिषय संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 10.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

10. **पुरेजात-पच्चय या पूर्व-अस्तित्व का संबंध**

पूर्व-अस्तित्व के संबंध तीन प्रकार के होते हैं: मूल पूर्व-अस्तित्व, वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व और मूल वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व।

इनमें से पहले और अंतिम प्रकार पर निस्साय-संबंध पर पिछले खंड में निस्साय शीर्षक के अंतर्गत चर्चा की जा चुकी है।

वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व वर्तमान अठारह प्रकार के भौतिक गुणों को दिया गया नाम है जो निप्पन्न श्रेणी के हैं। इनमें से, वर्तमान पाँच वस्तुएँ (दृश्य रूप, ध्वनि, इत्यादि) वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व के माध्यम से उन विचारों से कारणिक रूप से संबंधित हैं जो पंचद्वार प्रक्रियाओं में भाग लेने में सक्षम हैं। जैसे वायलिन की ध्वनि केवल धनुष से बजाने पर ही उत्पन्न होती है, और ध्वनि उत्पन्न होने के लिए वायलिन के तारों और धनुष दोनों का पूर्व अस्तित्व आवश्यक है, उसी प्रकार वे विचार जो पंच-द्वार प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं, पाँच इंद्रियों के पाँच द्वारों पर पाँच वस्तुओं की उपस्थिति के कारण उत्पन्न होते हैं, जो पाँच आधारों के अलावा और कुछ नहीं हैं। यह उपस्थिति तभी संभव है जब द्वार और वस्तु अपनी स्थिर अवस्था में हों। वे पाँच वस्तुएँ न केवल उस स्थिर अवस्था में पाँच इंद्रियों के पाँच द्वारों पर प्रकट होती हैं, बल्कि वे मन के द्वार पर भी प्रकट होती हैं। इसी कारण जीवन-संचलन दो क्षणों के लिए कंपन करता है, और फिर रुक जाता है; और जीवन-संचलन का रुकना चेतना-श्रृंखला को जन्म देता है। ऐसा होने पर, किसी भी प्रक्रिया में चेतना-श्रृंखला वस्तुओं और आधारों के पूर्व अस्तित्व के बिना उत्पन्न नहीं हो सकती। अठारह प्रकार के निर्धारित भौतिक गुण या तो भूतकाल के होते हैं, क्योंकि वे समाप्त हो चुके हैं; या भविष्यकाल के होते हैं, क्योंकि वे अभी उत्पन्न नहीं हुए हैं; या वर्तमान काल के होते हैं, क्योंकि वे अभी विद्यमान हैं। ये सभी, बिना किसी भेद के, मन के ज्ञान के विषय हो सकते हैं। परन्तु, इनमें से केवल वर्तमान काल के विषय ही वस्तुनिष्ठ पूर्व-अस्तित्व के रूप में कार्य करते हैं। और यदि कोई वस्तु जो किसी दूर स्थान पर हो, या दृष्टि से छिपी हो, स्वयं विद्यमान होकर मन का विषय बन जाती है, तो उसे भी वर्तमान काल का विषय कहा जा सकता है।

पुरेजात संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 11.पत्थनुद्देसा दीपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

11. **पच्छाजात-पच्चया या उत्तर-अस्तित्व का संबंध:**

प्रत्येक परवर्ती चेतना जो अस्तित्व में आती है, वह चार मूलों[22] (कर्म, चित्त, उतु, आहार) से उत्पन्न पूर्ववर्ती शारीरिक गुणों के समूह से परवर्ती अस्तित्व के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होती है, और उनके विकास और संवर्धन में सहायता करती है। उदाहरण के लिए, प्रत्येक वर्ष गिरने वाला वर्षाजल, पिछले वर्षों में उगी वनस्पतियों को परवर्ती अस्तित्व के माध्यम से उनकी वृद्धि और विकास में सहायता करता है।

यहाँ, "प्रत्येक परवर्ती चेतना" से तात्पर्य प्रथम जीवन-निरंतरता से लेकर अंतिम मृत्यु-विचार तक की सभी चेतनाओं से है। और, "पूर्ववर्ती शारीरिक गुणों" से तात्पर्य चार मूलों से उत्पन्न सभी शारीरिक गुणों से है, जो कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों के समूह से शुरू होते हैं, जो पुनर्जन्म की अवधारणा के साथ सह-अस्तित्व में हैं।

पुनर्जन्म-गर्भधारण के बाद उत्पन्न होने वाली पहली जीवन-गर्भधारण अवस्था से क्रमानुसार प्रारंभ होने वाली जीवन-गर्भधारण की पंद्रह अवस्थाएँ, पुनर्जन्म-गर्भधारण के साथ सह-अस्तित्व में रहने वाले कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों के समूह से उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। पुनर्जन्म-गर्भधारण के संबंध में, यह उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक संबंध नहीं हो सकता, क्योंकि यह कर्म से उत्पन्न शारीरिक गुणों के समूह के साथ सह-अस्तित्व में रहता है। इसी प्रकार, सोलहवीं जीवन-गर्भधारण अवस्था उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से कारणिक संबंध नहीं बन सकती, क्योंकि यह तभी अस्तित्व में आती है जब भौतिक गुणों का वह समूह विघटन की अवस्था में पहुँच जाता है। अतः, ये "जीवन-गर्भधारण की पंद्रह अवस्थाएँ" हैं जो उपरोक्त अनुसार कारणिक रूप से संबंधित हैं।

पुनर्जन्म-गर्भधारण के स्थिर क्षण में, कर्म से उत्पन्न और ताप से उत्पन्न भौतिक गुणों के दो समूह उत्पन्न होते हैं;[23] और यही स्थिति रुके हुए क्षण में भी होती है। लेकिन जीवन की पहली निरंतरता के आरंभिक क्षण में, तीन समूह उत्पन्न होते हैं: कर्म से उत्पन्न, तापमान से उत्पन्न और मन से उत्पन्न। जब खाए गए भोजन का ओज (पोषक तत्व) पूरे शरीर में फैलता है, तो शारीरिक पोषक तत्व उत्तेजक को अवशोषित कर लेता है और भौतिक गुणों का एक समूह उत्पन्न करता है। उस समय से, चारों मूलों द्वारा उत्पन्न समूह जलते हुए दीपक

की लौ की तरह निरंतर उत्पन्न होते रहते हैं। आरंभिक क्षण को छोड़कर, जब तक ये समूह अपनी स्थिर अवस्था में रहते हैं, चेतना के बाद के पंद्रह वर्ग उत्तर-अस्तित्व के माध्यम से उनकी सहायता करते हैं।

वुढ्ढिविरुल्लाह का अर्थ है "चार मूलों से उत्पन्न शारीरिक गुणों की श्रृंखला के क्रमिक विकास और प्रगति के लिए।" इसलिए, यदि वे चारों प्रकार के शारीरिक समूह, परलोक के कारण-कार्य संबंध से बार-बार संबंधित होते हैं (शाब्दिक रूप से, बार-बार प्राप्त करते हैं), तो वे अपने भौतिक जीवन काल की समाप्ति के बाद एक शक्तिशाली ऊर्जा छोड़ जाते हैं - एक ऐसी ऊर्जा जो बाद के समूहों की श्रृंखला के विकास, प्रगति और समृद्धि को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त होती है।

पचजाता-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 12.पत्थनुद्देसा दिपानी**

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

12. असेवन-पच्चय या आनुवांशिक पुनरावृत्ति का संबंध

बारह प्रकार की अनैतिक चेतना, सत्रह प्रकार की नैतिक चेतना और अठारह प्रकार की निष्क्रिय चेतना (बीस में से दो प्रकार की चेतना, जिन्हें अवज्जन कहा जाता है, को छोड़कर प्राप्त) सहित सैंतालीस प्रकार की सांसारिक अनुभूतियों को यहाँ आनुवांशिक पुनरावृत्ति का कारण-कार्य संबंध कहा गया है। जब इनमें से कोई भी अनुभूति प्रक्रिया (अर्थात, विचार प्रक्रिया में चेतना की सात समान अवस्थाओं का क्रम) तक पहुँचता है, तो प्रत्येक पूर्ववर्ती अनुभूति आनुवांशिक पुनरावृत्ति के माध्यम से प्रत्येक अनुवर्ती अनुभूति से कारण-कार्य संबंध स्थापित करती है। संबंधित वस्तुएँ, पच्चयुप्पन-धम्म, ऊपर वर्णित अनुवर्ती अनुभूतियों के साथ-साथ चार मार्गों को भी समाहित करती हैं।

असेवन शब्द को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसका अर्थ है निरंतर दोहराव से अभ्यस्त होना या अपने पच्चयुप्पन्न-धम्म में इसकी प्रेरणा को ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना, ताकि वे अधिकाधिक निपुणता, ऊर्जा और बल प्राप्त कर सकें। यहाँ 'पगुणभाव' का अर्थ है बाद के बोधात्मक विचारों की बोधात्मक क्रियाओं और अवस्थाओं में निपुणता; जैसे कोई व्यक्ति किसी पाठ को कई बार पढ़ता है तो प्रत्येक बार पढ़ने पर अधिक निपुण हो जाता है।

'परिवासो' का शाब्दिक अर्थ है सुगंधित करना या प्रेरित करना। जैसे रेशमी वस्त्र को मीठी सुगंधों से सुगंधित किया जाता है, वैसे ही विचार शरीर भी, एक प्रकार से, काम, घृणा आदि से; या अनासक्ति (अरज्जन), मित्रता (अदुस्सना) आदि से सुगंधित या प्रेरित होता है। यद्यपि पूर्ववर्ती बोध समाप्त हो जाता है, उसकी बोधात्मक शक्ति समाप्त नहीं होती; अर्थात्, उसकी शक्ति बाद के विचार में व्याप्त रहती है। इसलिए, प्रत्येक आगामी बोध, अस्तित्व में आने पर, पूर्ववर्ती बोध की अभ्यस्तता के कारण अधिक प्रबल हो जाता है। इस प्रकार, तत्काल पूर्ववर्ती विचार अपने तत्काल अनुवर्ती विचार को अभ्यस्त कर देता है या उसे अपनी अभ्यस्तता स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। हालांकि, अभ्यस्त पुनरावृत्ति की प्रक्रिया आमतौर पर सातवें विचार पर रुक जाती है, जिसके बाद या तो विचार प्रतिधारण के परिणामी क्षण आते हैं, या जीवन-निरंतरता में समाहित हो जाते हैं।

यहां, सुत्तंत में वर्णित नियमित पुनरावृत्ति का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। सुत्त पिटक के विभिन्न भागों में अनेक श्लोक मिलते हैं। जैसे: सतिपथानां भवेति: "मनन में गंभीर परिश्रम का अभ्यास करना"; सम्मप्पधानं भवेति: "सर्वोच्च प्रयास का अभ्यास करना"; सति-संबोज्जंगं भवेति: "ज्ञान प्राप्ति के कारक, मनन का अभ्यास करना"; धम्मविचय-संबोज्जंगं भवेति: "ज्ञान प्राप्ति के कारक, सत्य की खोज का अभ्यास करना"; सम्मदित्तिम भवेति: "सही दृष्टिकोण का अभ्यास करना"; सम्मसंकप्पं भवेति: "सही आकांक्षा का अभ्यास करना" आदि। इन अंशों में, "भवेति" से तात्पर्य है प्रयास को एक दिन, सात दिन, एक माह, सात माह, एक वर्ष या सात वर्षों तक दोहराना।

नैतिक और अनैतिक कर्म, जो बार-बार किए गए हों या पूर्व जन्मों में अनेक बार किए गए हों, वर्तमान जन्म के नैतिक और अनैतिक कर्मों से आनुवांशिक पुनरावृत्ति के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित होते हैं, जिससे उनमें क्रमशः अधिक सुधार और गिरावट आती है।

वह संबंध जो किसी दूर के समय या भविष्य के जन्म में ऐसे नैतिक और अनैतिक कर्मों में क्रमशः सुधार और गिरावट लाता है, उसे पर्याप्तता कहा जाता है, परन्तु वह संबंध जो केवल प्रत्यक्ष अनुभव के दौरान ऐसा करता है, उसे आनुवांशिक पुनरावृत्ति कहा जाता है।

इस संसार में, कला, विज्ञान, साहित्य आदि में महान उपलब्धियों के अनेक आकस्मिक परिणाम या प्रभाव स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं, जो विचार, वचन और कर्म द्वारा निरंतर, बार-बार और निरंतर रूप से किए गए हैं।

इस प्रकार सभी क्षणभंगुर घटनाओं में पुनरावृत्ति का ऐसा ही संबंध पाया जाता है, और लंबे समय तक किए गए पुरुष उत्साह और प्रयास से इतनी उच्च कोटि का विकास हुआ है कि अनेक महान और कठिन कार्य पूर्ण रूप से संपन्न हुए हैं और यहाँ तक कि बुद्धत्व भी प्राप्त हुआ है।

असेवन-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 13.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

13. **कर्म-पच्चय या कर्म का संबंध (संस्कृत: कर्म)**

कर्म का संबंध दो प्रकार का होता है: सह-अस्तित्व वाला कर्म और अतुल्यकालिक कर्म।

इन दोनों में से, सभी इच्छाएँ, नैतिक, अनैतिक और अनैतिक, जो तीन काल-अवस्थाओं से युक्त हैं, सह-अस्तित्व वाले कर्म के कारण-कार्य संबंध का निर्माण करती हैं। इनसे संबंधित वस्तुएँ हैं: चेतना के सभी वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती जो इच्छा के साथ सह-अस्तित्व में हैं; कर्म से उत्पन्न भौतिक गुण, जो पुनर्जन्म के साथ ही उत्पन्न होते हैं, और जीवनकाल के दौरान मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण।

भूतकाल की नैतिक और अनैतिक इच्छाएँ अतुल्यकालिक कर्म के कारण-कार्य संबंध का निर्माण करती हैं। इनसे संबंधित वस्तुएँ सांसारिक परिणामी चेतना के सैंतीस वर्ग और उनके मानसिक सहवर्ती, और कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण हैं।

कर्म को ऐसा क्यों कहा जाता है? इसे इसके विशिष्ट कार्य के कारण ऐसा कहा जाता है। यह विशिष्ट कार्य स्वयं इच्छाशक्ति (या संकल्प) ही है, और यह प्रत्येक क्रिया पर हावी रहती है। जब भी विचार, शब्द या शरीर की कोई क्रिया होती है, तो इच्छाशक्ति (या संकल्प) ही उसके साथ होने वाली क्रियाओं को निर्धारित करती है, उन्हें आकार देती है या उन्हें एक साथ अपने-अपने कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। इसी कारण, सभी क्रियाओं में इच्छाशक्ति को सर्वोपरि कहा जाता है। अतः, कर्म को उसके विशिष्ट कार्य के कारण ऐसा कहा जाता है। या, इसे दूसरे शब्दों में कहें तो, कर्म वह है जिसके द्वारा प्राणी क्रिया करते हैं। तो वे क्या करते हैं? वे शारीरिक कार्य, वाक् कार्य और मानसिक कार्य करते हैं। यहाँ, "शारीरिक कार्य" से तात्पर्य खड़े होना, बैठना आदि; आगे-पीछे चलना आदि; और यहाँ तक कि पलकों का खुलना और बंद होना भी है। वाक् कार्य का अर्थ है ध्वनि उत्पन्न करना। मानसिक कार्य का अर्थ है बुद्धिमानी से या बुरी तरह सोचना, और संक्षेप में, पाँचों इंद्रियों द्वारा देखना, सुनना आदि क्रियाएँ करना। इस प्रकार, प्राणियों की सभी क्रियाएँ इसी इच्छाशक्ति द्वारा निर्धारित होती हैं। अतः इसे कर्म कहा जाता है।

सहजता वह है जो अपने संबंधित पदार्थों के साथ एक साथ अस्तित्व में आती है। सहजतकम्मा सह-अस्तित्ववान पदार्थ होने के साथ-साथ कर्म भी है। सहजतकम्मा-पच्चय सह-अस्तित्ववान कर्म के माध्यम से (अपने प्रभावों से) स्थापित एक कारण-कार्य संबंध है।

नानकणिकम् वह पदार्थ है जो अपने प्रभावों से समय के संदर्भ में भिन्न होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस समय संकल्प उत्पन्न होता है वह एक समय है और जिस समय उसके प्रभाव घटित होते हैं वह दूसरा समय है; दूसरे शब्दों में, संकल्प अतुल्यकालिक है। अतः अतुल्यकालिक संकल्प वह संकल्प है जो अपने प्रभावों से समय के संदर्भ में भिन्न होता है। इसलिए नानकणिककम्मापच्चय अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से (अपने प्रभावों से) स्थापित एक कारण-कार्य संबंध है। आर्य पथ के साथ सह-अस्तित्व में रहने वाला

संकल्प, उसके समाप्त होने के क्षण में ही, तुरंत अपना प्रभाव उत्पन्न करता है, अतः वह भी अतुल्यकालिक है।

यहां, उदाहरण के लिए, दान जैसी नैतिक इच्छाशक्ति, अपने सह-अस्तित्व वाले मन और मानसिक गुणों के साथ-साथ उसी मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से सह-अस्तित्व वाले कर्म के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी होती है। यह अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से उस कर्म से उत्पन्न मन और भौतिक गुणों के परिणामी समुच्चय से भी कारणिक रूप से जुड़ी होती है, जो भविष्य में एक दूर के समय में अस्तित्व में आएगा। इस प्रकार, एक इच्छाशक्ति, जो नैतिक और अनैतिक परिणामों वाले कर्म में परिवर्तित होती है, दो अलग-अलग समयों पर दो अलग-अलग संबंधों के माध्यम से अपने संबंधित पदार्थों से कारणिक रूप से जुड़ी होती है।

इस अतुल्यकालिक कर्म संबंध में, कर्म एक विशिष्ट ऊर्जा का प्रतीक है। यह इच्छाशक्ति के समाप्त होने पर भी समाप्त नहीं होती, बल्कि मन के अनुक्रमों का अप्रत्यक्ष रूप से अनुसरण करती है। जैसे ही इसे अनुकूल अवसर मिलता है, यह मरणशील विचार के समाप्त होने के तुरंत बाद, अगले जन्म में स्वयं को एक व्यक्ति के रूप में परिवर्तित करके प्रभावी हो जाती है। लेकिन, यदि इसे कोई अनुकूल अवसर न मिले, तो यह सैकड़ों जन्मों तक उसी सुप्त अवस्था में रहता है। यदि इसे अनुकूल अवसर मिल जाए, तो ब्रह्मलोक में अगले जन्म में "उत्कृष्ट कर्म" का प्रभाव दिखाई देता है, जब यह स्वयं को ब्रह्मदेव के रूप में रूपांतरित कर लेता है, और इतना परिपक्व हो जाता है कि इस दूसरे जन्म के अंत में यह स्वयं को समाप्त कर लेता है और आगे नहीं बढ़ता।

कर्म-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

14. **विपाक-पच्चय या प्रभाव का संबंध:**

परिणामी चेतना के छत्तीस वर्ग और उनके सहवर्ती, प्रभाव का संबंध हैं। चूंकि वे एक दूसरे से परस्पर संबंधित हैं, इसलिए संबंधित वस्तुएं उन सभी को समाहित करती हैं, साथ ही गर्भाधान के समय कर्म से उत्पन्न भौतिक गुणों और जीवनकाल में परिणामी चेतना द्वारा उत्पन्न गुणों को भी।

विपाक किस अर्थ में लागू होता है? यह विपच्चन के अर्थ में लागू होता है, जिसका अर्थ है शैशवावस्था या युवावस्था से परिपक्वता की अवस्था में परिवर्तन। किसकी कोमलता और परिपक्वता का तात्पर्य है? पूर्व से तात्पर्य अतीत की इच्छा की शैशवावस्था से है, जिसे अतुल्यकालिक कर्म के रूप में जाना जाता है। परिपक्वता से भी उसी कर्म की परिपक्वता का तात्पर्य है।

यहां यह समझा जाना चाहिए कि प्रत्येक इच्छा की चार अवस्थाएं या समय-चरण होते हैं - चेतना अवस्था, या इच्छा की उत्पत्ति; कर्म अवस्था, या इच्छा की निरंतरता; निमित्तवत्था, यानी इच्छा का निरूपण, और विपकवत्था, यानी अंतिम परिणाम। यहाँ, यद्यपि इच्छा स्वयं समाप्त हो जाती है, उसका विशिष्ट कार्य समाप्त नहीं होता, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से विचारों की श्रृंखला का अनुसरण करता है। इसे कर्मवत्था, या इच्छा की निरंतरता कहा जाता है।

जब कर्म को फलित होने का अनुकूल अवसर मिलता है, तो वह मरने वाले व्यक्ति को स्वयं को प्रकट करता है। अर्थात्, वह स्वयं ऐसा अनुभव करता है जैसे वह दान दे रहा हो, नियमों का पालन कर रहा हो, या शायद किसी प्राणी का वध कर रहा हो। यदि यह कर्म स्वयं को प्रकट करने में विफल रहता है, तो उसका एक प्रतीक प्रकट होता है। अर्थात्, वह स्वयं ऐसा अनुभव करता है जैसे उसके पास भेंट, उपहार, शस्त्र आदि हों; या कोई भी ऐसी वस्तु जिससे उसने अतीत में ऐसा कर्म किया हो। या, कभी-कभी, उसे अगले जन्म का संकेत प्रकट होता है जहाँ उसे अपना नया जीवन प्रारंभ करना होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि देवों के निवास या महल, निरय लोक की अग्नि, या ऐसी ही अन्य वस्तुएँ, जिन्हें अगले जन्म में प्राप्त करना या अनुभव करना उसके भाग्य में लिखा होगा, छह द्वारों से होकर प्रस्तुति के क्षेत्र में प्रवेश करती हैं। इन्हें निमित्तवत्थ कहा जाता है, जो संकल्प का निरूपण है।

अब, हम विपकवत्थ को कैसे समझें? यदि कोई व्यक्ति इन तीन प्रकार की वस्तुओं में से किसी एक पर ध्यान केंद्रित करते हुए मर जाता है, चाहे कर्म पर, उसके चिन्ह पर, या भाग्य के चिन्ह पर, तो कहा जाता है कि कर्म ने नए जन्म में अपना प्रभाव डाला है, या फलीभूत

हुआ है। यह एक व्यक्तित्व में रूपांतरित हो जाता है, और नए जन्म में एक प्राणी के रूप में प्रकट होता है। इसे विपकवत्थ, या अंतिम परिणाम कहा जाता है। यहाँ, पहले तीन अवस्थाओं में, इच्छाशक्ति को शैशवावस्था या युवावस्था में कहा गया है।[24] अंतिम अवस्था दर्शाती है कि इच्छाशक्ति परिपक्व हो गई है, और अपना प्रभाव डाल सकती है। इसलिए, जैसा कि कहा गया है, विपच्चन का अर्थ है शैशवावस्था या युवावस्था से परिपक्वता की अवस्था में परिवर्तन। इस प्रकार विपक चेतना की अवस्थाओं और उनके सहवर्ती तत्वों का नाम है, जो इच्छाओं के परिणाम हैं, या स्वयं परिपक्व इच्छाओं का नाम है।

जैसे पके हुए आम बेहद नरम और कोमल होते हैं, वैसे ही उनसे उत्पन्न अवस्थाएँ भी अत्यंत शांत होती हैं, क्योंकि वे निष्क्रिय होती हैं और उनमें कोई उत्तेजना नहीं होती। वे इतनी शांत होती हैं कि अवचेतन मन के विषय हमेशा धुंधले और अस्पष्ट होते हैं। अवचेतन मन से जागृत होने पर व्यक्ति को यह चेतना नहीं रहती कि वह विषय क्या था। इसी कारण, ऐसी विचार प्रक्रिया का होना संभव नहीं है जो अवचेतन के विषय को इस प्रकार प्रतिबिंबित कर सके: "अमुक वस्तु का सामना पिछले जन्म में हुआ था"—यद्यपि, रात्रि के समय नींद में, अवचेतन तीन प्रकार की वस्तुओं (कर्म, कर्म के प्रतीक और भविष्य के भाग्य के प्रतीक) में से किसी एक को अपना विषय बना लेता है, जिसका अनुभव मृत्यु के निकट आने पर, ठीक पिछले जन्म में हुआ था। अतः, व्यक्ति को पिछले जन्म की किसी भी वस्तु के बारे में, चाहे नींद में हो या जागते हुए, कुछ भी ज्ञात नहीं होता। इस प्रकार निष्क्रियता, उत्तेजनाहीनता और शांति के माध्यम से होने वाले पारस्परिक संबंध को विपाक का कार्य कहा जाता है।

विपाक-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

15. आहार-पच्चय या भोजन का संबंध

भोजन का संबंध दो प्रकार का होता है: भौतिक और अभौतिक। इनमें से, भौतिक भोजन का अर्थ पोषक तत्व (या जिसे खाद्य भोजन कहा जाता है) है, जिसे फिर से दो प्रकारों में विभाजित किया गया है: आंतरिक और बाह्य।

खाद्य भोजन पर निर्भर रहने वाले प्राणियों से संबंधित चारों कारणों से उत्पन्न सभी प्राकृतिक गुण, यहाँ भौतिक भोजन के दो प्रकारों से संबंधित पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

अभौतिक भोजन तीन प्रकार का होता है: संपर्क, मन की इच्छाशक्ति और चेतना। ये अभौतिक भोजन, या पच्चय धम्म, सह-अस्तित्व वाले मानसिक और भौतिक गुणों से कारणिक रूप से संबंधित हैं, जो उनके संबंधित पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

आहार को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? आहार को 'मजबूती से थामे रखना' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जिसका अर्थ है "दृढ़ता से अस्तित्व में लाना"। कहने का तात्पर्य यह है कि एक संबंधित वस्तु दूसरी संबंधित वस्तु को पोषण प्रदान करती है ताकि वह दीर्घायु हो सके, विकसित हो सके, फल-फूल सके और समृद्ध हो सके। यद्यपि भोजन का कारण-कार्य संबंध उत्पादक शक्ति रखता है, यहाँ समर्थन शक्ति सर्वोपरि है।

यहाँ दो भौतिक खाद्य पदार्थों को आहार कहा जाता है, क्योंकि वे चार कारणों से उत्पन्न आंतरिक भौतिक गुणों के समूह को दृढ़ता से धारण करते हैं, उन्हें पोषण प्रदान करते हैं ताकि वे दृढ़ता से विद्यमान रहें, दीर्घायु हों और अपने जीवनकाल की सीमाओं तक निर्बाध रूप से पहुँचें।

स्पर्श भी एक आहार है, क्योंकि यह अपने सह-अस्तित्व वाली वस्तुओं को दृढ़ता से धारण करता है और वांछनीय और अवांछनीय वस्तुओं से प्राप्त सार से उन्हें पोषण प्रदान करके उन्हें दृढ़ता से खड़े रहने और दीर्घायु होने में सक्षम बनाता है। मन की इच्छाशक्ति, या (संक्षेप में) संकल्प, एक आहार है क्योंकि यह कर्मों, शब्दों और विचारों के निष्पादन के लिए साहस प्रदान करती है। और चेतना भी एक आहार है, क्योंकि यह किसी वस्तु के बारे में सभी चिंतन में सर्वोपरि है। ये तीनों अमूर्त खाद्य पदार्थ, सह-अस्तित्व वाले मानसिक तत्वों

को पोषण प्रदान करने के साथ-साथ सह-अस्तित्व वाले भौतिक तत्वों को भी प्रभावित करते हैं।

यहां आहार की व्याख्या सुत्तंत पद्धति के अनुसार भी की जा सकती है। जिस प्रकार पक्षी अपना निवास स्थान ज्ञात करके अपने पंखों से एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष और एक लट्ठे से दूसरे लट्ठे तक उड़ते हैं और अपनी चोंच से फल चुगते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं, उसी प्रकार प्राणी भी—चेतना के छह वर्गों के द्वारा, वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करके; मन की छह प्रकार की इच्छाशक्ति से, किसी वस्तु को वस्तु के रूप में प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयास करके; और छह प्रकार के स्पर्शों से, वस्तुओं के सार को प्रकट करके—या तो सुख का अनुभव करते हैं या दुःख भोगते हैं। या, केवल चेतना के छह वर्गों के द्वारा, वस्तुओं को समझकर, वे शरीर और मन का निर्माण करते हैं। या, केवल स्पर्शों से, वस्तुओं को प्रकट करके, ताकि उनके द्वारा भाव उत्पन्न हों, वे तृष्णा का विकास करते हैं। या, इच्छाशक्ति से प्रेरित होकर विभिन्न प्रकार के कर्म करके, वे एक जन्म से दूसरे जन्म में विचरण करते हैं। इस प्रकार विभिन्न आहारों की व्यापक कार्यप्रणाली को समझा जा सकता है।

आहार-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 16.पत्थनुद्देसा दीपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

16. इंद्रिय-पच्चय या नियंत्रण का संबंध

नियंत्रण का संबंध तीन प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, पूर्वअस्तित्व और भौतिक जीवन।

इनमें से, प्रथम प्रकार के पच्चय-धम्म[26] पंद्रह सहअस्तित्व वाले नियंत्रण हैं, अर्थात्, मानसिक जीवन, चेतना, सुख, दुख, आनंद, शोक, सुखवादी उदासीनता, विश्वास, ऊर्जा, सजगता, एकाग्रता, तर्क, "मैं अज्ञात को जानूंगा (निर्वाण)" का विचार, "मैं जानता हूं" का विचार और "मैं जान चुका हूं" का विचार। पच्चयुप्पन्न-धम्म इनके सहअस्तित्व वाले गुण हैं, मानसिक और भौतिक दोनों।

द्वितीय प्रकार के पच्चय-धम्म पांच संवेदी अंग हैं: आंख, कान, नाक, जीभ और शरीर। पच्चयुप्पन्न-धम्म पांच इंद्रियां और उनके सहवर्ती तत्व हैं।

तीसरे प्रकार का सिद्धय-धम्म केवल एक ही है, अर्थात् स्वयं भौतिक जीवन। और भौतिक जीवन को छोड़कर कर्म से उत्पन्न सभी भौतिक गुण इसके सिद्धयप्पन्न-धम्म हैं।

इंद्रिय को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसे "नियंत्रण रखने" के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यह किस पर नियंत्रण रखता है? यह अपने सिद्धयप्पन्न-धम्मों पर नियंत्रण रखता है। किस कार्य में? उनके संबंधित कार्यों में। मानसिक जीवन अपने सह-अस्तित्व वाले मानसिक गुणों पर जीवन प्रदान करने में, अर्थात् निरंतरता द्वारा उनके विस्तार के मामले में नियंत्रण रखता है। चेतना किसी वस्तु के बारे में चिंतन करने के मामले में नियंत्रण रखती है। शेष के कार्य को हमारी हाल ही में प्रकाशित पुस्तक इंद्रिय-यमक-दीपानी में समझाया गया है।

यहाँ, कुछ लोग इस प्रकार का प्रश्न पूछ सकते हैं: "नियंत्रण की श्रेणी में शामिल दो लिंगों - स्त्री और पुरुष - को सिद्धय-धम्मों के रूप में इस संबंध में क्यों नहीं लिया जाता?" उत्तर है: क्योंकि उनमें सिद्धय के कोई कार्य नहीं होते। पच्चया के तीन प्रकार के कार्य होते हैं, अर्थात्, सृजन, पालन और रखरखाव। यहाँ, यदि A, B की उत्पत्ति में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य सृजनात्मक कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B की उत्पत्ति असंभव होती। अनंतार के कार्य का उदाहरण यहाँ दिया जा सकता है। फिर, यदि A, B के अस्तित्व, विकास और समृद्धि में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य पालन और समर्थन करना कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B का अस्तित्व, विकास और समृद्धि संभव नहीं होती। पच्चाजात का संबंध यहाँ एक उदाहरण के रूप में उपयुक्त होगा। और, यदि A, B की निरंतरता में कारणिक रूप से संबंधित है, तो A का कार्य पालन और समर्थन करना कहलाता है, क्योंकि यदि A का अस्तित्व न होता, तो B की निरंतरता बाधित होती और उसकी निरंतरता भी टूट जाती। भौतिक जीवन का कार्य इसे स्पष्ट करेगा।

अब, दोनों लिंग उक्त तीनों कार्यों में से किसी का भी निष्पादन नहीं करते। इसलिए, उन्हें नियंत्रण के इस संबंध में पच्चय-धम्म के रूप में नहीं लिया जाता। यदि ऐसा है, तो क्या उन्हें अभी भी नियंत्रक कहा जाना चाहिए? हाँ, उन्हें नियंत्रक कहा जाना चाहिए। क्यों? क्योंकि उनमें कुछ हद तक नियंत्रक शक्ति होती है। वे शरीर को उसकी यौन संरचना (लिंग), उसके स्वरूप (निमित्त), उसके चरित्र (कुत्त) और उसके बाह्य स्वभाव (अकप्प) में नियंत्रित करते हैं। इसलिए, गर्भाधान के समय, यदि किसी प्राणी में स्त्री लिंग उत्पन्न होता है, तो उसका संपूर्ण व्यक्तित्व, अर्थात् चार कारणों से उत्पन्न पाँच समुच्चय (कर्म आदि), स्त्रीत्व की ओर प्रवृत्त होता है। वास्तव में, संपूर्ण शरीर केवल स्त्री संरचना, स्त्री स्वरूप, स्त्री चरित्र और स्त्री बाह्य स्वभाव को ही प्रदर्शित करता है। यहाँ, न तो स्त्री लिंग इन गुणों को उत्पन्न करता है, न उनका समर्थन करता है और न ही उन्हें बनाए रखता है। लेकिन वास्तव में, जब शरीर (अर्थात पाँचों तत्व) अस्तित्व में आ जाता है, तो लिंग उस पर इस प्रकार नियंत्रण रखता है मानो वह (लिंग) उसे ऐसा बनने का आदेश दे रहा हो। सभी तत्व भी लिंग के अनुरूप हो जाते हैं, न कि उसके विपरीत। स्त्री संरचना में स्त्री की यही नियंत्रण शक्ति है। इसी प्रकार पुरुष संरचना में पुरुष का नियंत्रण होता है। इस प्रकार दोनों लिंग संरचनाओं में नियंत्रणकारी कार्य करते हैं, इसलिए इन्हें नियंत्रक कहा जा सकता है।

हृदय-आधार के संबंध में, यद्यपि यह मन-ज्ञान के दो तत्वों का आधार है, यह उन्हें किसी भी प्रकार से नियंत्रित नहीं करता है। क्योंकि हृदय निर्मल हो या न हो, सुप्रशिक्षित मन वाले व्यक्ति में मन-ज्ञान के तत्व कभी भी इसके अनुरूप नहीं होते।

इंद्रिय-संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

17. झाना-पकाया या झाना का संबंध

झाना के सात घटक झना के संबंध में पक्काया-धम्म हैं। वे हैं:-- वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचारा (निरंतर अनुप्रयोग), पीति (सुखद रुचि), सोमनस्सा (आनंद), डोमनस्सा (शोक), उपेक्षा (सुख संबंधी उदासीनता) और एकग्गता (व्यक्तिगतकरण की क्षमता के अर्थ में एकाग्रता)। चेतना के सभी वर्ग (पांच इंद्रियों को छोड़कर), उनके सहवर्ती और सात घटकों के साथ सह-अस्तित्व में भौतिक गुण, यहाँ पच्चयुप्पन्न-धम्म हैं।

ध्यान को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? ध्यान को निकट से देखने या सक्रिय रूप से देखने के अर्थ में समझा जाना चाहिए; अर्थात्, वस्तु के निकट जाकर उसे मानसिक रूप से देखना। जैसे एक धनुर्धारी—जो दूर से एक छोटे लक्ष्य के मध्य बिंदु पर तीर चला सकता है—तीर को अपने हाथ में मजबूती से पकड़कर, उसे स्थिर रखते हुए, लक्ष्य की ओर निर्देशित करते हुए, लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए, और ध्यानपूर्वक देखते हुए, या बल्कि निशाना साधते हुए, तीर को मध्य बिंदु पर पहुंचा देता है। जिस प्रकार ध्यान किसी वस्तु पर केंद्रित होता है या उसे उसमें समाहित करता है, उसी प्रकार योगी या ध्यान का अभ्यास करने वाले व्यक्ति के बारे में बात करते समय हमें यह कहना चाहिए कि वह अपने मन को वस्तु की ओर निर्देशित करके, उसे स्थिर रखते हुए और कसिना-वस्तु को ध्यान में रखते हुए, ध्यान के इन सात घटकों के माध्यम से अपने मन को उसमें समाहित करता है। इस प्रकार, इन पर ध्यानपूर्वक ध्यान देकर, व्यक्ति अपने शरीर, वचन और मन की क्रियाओं को बिना किसी असफलता के संपन्न करता है। यहाँ, "शरीर की क्रिया" का अर्थ है आगे-पीछे चलना आदि; "वचन की क्रिया" का अर्थ है मौखिक अभिव्यक्ति करना, जैसे अक्षर, शब्द आदि की ध्वनियाँ; "मन की क्रिया" का अर्थ है किसी भी प्रकार की वस्तु के प्रति सचेत रहना। अतः दान देना या जीवन लेना जैसे किसी भी कर्म को कमजोर मन द्वारा नहीं किया जा सकता जिसमें ध्यान के आवश्यक घटक न हों। यही बात सभी नैतिक और अनैतिक कर्मों पर भी लागू होती है।

इसके अर्थ को स्पष्ट रूप से समझने के लिए, ध्यान के प्रत्येक घटक की प्रमुख विशेषता को अलग-अलग समझाया जाना चाहिए। वितक्का की विशेषता है सहवर्ती गुणों को वस्तु की ओर निर्देशित करना। और इसलिए यह मन को विषय पर दृढ़ता से स्थिर कर देता है। विचार की विशेषता है विषय का बार-बार पुनरावलोकन करना, और यह मन को विषय से दृढ़ता से जोड़ देता है। पीति की विशेषता है विषय में रुचि उत्पन्न करना, और मन को उससे प्रसन्न और संतुष्ट करना। वेदना के तीन प्रकार, अर्थात् आनंद, दुःख और उदासीनता, विषय को महसूस करने की विशेषता रखते हैं, और ये भी मन को वांछनीय, अवांछनीय और तटस्थ वस्तुओं के सार का अनुभव करने

के लिए स्थिर कर देते हैं। एकाग्ता की विशेषता एकाग्रता है और यह भी मन को विषय पर दृढ़ता से स्थिर रखता है।ध्यान-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 18.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

18. मार्ग-पच्चय या पथ का संबंध:

मार्ग के इस संबंध में बारह पथ-घटक पच्चय-धम्म हैं। वे हैं: सही विचार, सही आकांक्षा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता, सही एकाग्रता, गलत विचार, गलत आकांक्षा, गलत प्रयास और गलत एकाग्रता। हालांकि, गलत वाणी, गलत कर्म और गलत आजीविका को अलग-अलग मानसिक गुणों से नहीं जोड़ा जा सकता। ये चार अनैतिक स्कंधों (अकुसला-खंड) के ही अन्य नाम हैं, जो झूठ आदि के नाम से प्रकट होते हैं। इसलिए इन्हें अलग-अलग पथ-घटक नहीं माना जाता। हेतु से वातानुकूलित चेतना और मानसिक सहवर्ती सभी वर्ग, और हेतु से वातानुकूलित मन के साथ सहअस्तित्व में रहने वाले सभी भौतिक गुण पच्चयुप्पन-धम्म हैं।

मार्ग को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? इसे मार्ग के अर्थ में समझा जाना चाहिए, अर्थात् दुर्भाग्य के क्षेत्र या निर्वाण के क्षेत्र तक पहुँचने के साधन के रूप में। आठ मार्ग-घटक (सही दृष्टिकोण आदि) निर्वाण की ओर ले जाते हैं। चार गलत मार्ग-घटक दुर्भाग्य के क्षेत्र की ओर ले जाते हैं।

अब ध्यान का कार्य मन को विषय में सीधा, स्थिर और परमानंदित करना है।[28] "परमानंदित मन" का अर्थ है वह मन जो कसिना-विषय में इस प्रकार डूब जाता है जैसे मछली गहरे पानी में। मार्ग का कार्य कर्मिक संकल्प को अस्तित्व के चक्र में प्रवेश के मार्ग में और भावनिक संकल्प को चक्र से बाहर निकलने के मार्ग में सीधा और स्थिर करना है, जिससे एक कार्य-प्रणाली उत्पन्न हो, विकसित हो, फले-फूले और समृद्ध हो, और उच्चतर स्तर तक पहुँचे। यही इन दोनों संबंधों के बीच अंतर है।

यहां, कर्मिक इच्छाशक्ति, जो पुनर्जन्म उत्पन्न कर सकती है—क्योंकि यह नैतिक और अनैतिक कर्मों जैसे कि जीवन लेना आदि में परिणत हुई है—को कर्मपथपत्त कहा गया है। और भावनिक इच्छाशक्ति, जो उच्चतर अवस्थाओं तक पहुँचती है, अर्थात् इंद्रिय अवस्था से पारलौकिक अवस्था तक, उच्चतर अवस्थाओं के अनुक्रम से होकर, व्यवस्थित प्रशिक्षण-अभ्यासों (भावनानुकाम्मा) की शक्ति से, एक शारीरिक मुद्रा के संक्षिप्त समय में भी, आगे बढ़ती है—को भूमंतरपत्त कहा गया है।

इस संबंध को समझने के लिए, प्रत्येक मार्ग-घटक की विशिष्ट पहचान को भी ध्यान के संबंध में दर्शाए गए तरीके से अलग से समझाया जाना चाहिए।

मार्ग-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 19.पत्थनुद्देसा दिपानी**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

19. सम्पायुत्त-संबंध या सहभागिता का संबंध

सहभागिता और वियोग के संबंध एक युग्म बनाते हैं। इसी प्रकार उपस्थिति और अनुपस्थिति तथा स्थगन और निरंतरता के संबंध भी युग्म बनाते हैं। ये तीनों युग्म विशेष नहीं हैं। इनका उल्लेख केवल यह दर्शाने के लिए किया गया है कि उपरोक्त संबंधों में, कुछ सिद्धय-धर्म अपने सिद्धयप्पन्न-धर्मों से सहभागिता द्वारा, और अन्य वियोग द्वारा, कारणवश संबंधित होते हैं; कुछ उपस्थिति द्वारा, अन्य

अनुपस्थिति द्वारा; कुछ स्थगन द्वारा, अन्य निरंतरता द्वारा।

यहाँ भी, "अत्थि ति खो, कच्चना, अयम एको अंतो; नत्थि ति खो दुतियो अंतो ति"[29] जैसे वाक्यों में, अत्ति और नत्थि शब्द शाश्वतवाद और विनाशवाद के विधर्मी विचारों को इंगित करने के लिए हैं। अतः, ऐसी व्याख्याओं को रोकने के लिए, संबंधों के अंतिम युग्म का उल्लेख किया गया है।

चेतना और मानसिक गुणों के सभी वर्ग सहभागिता के माध्यम से एक दूसरे से परस्पर संबंधित होते हैं। संपयुत्त को किस अर्थ में समझा जाना चाहिए? संपयुत्त को चार साहचर्य साधनों, अर्थात् समकालिक उत्पत्ति, समकालिक समाप्ति, एकमूलत और एकवस्तु, के द्वारा सहभागिता या विलय के अर्थ में समझा जाना चाहिए। यहाँ, एकिभवं गति (या विलय) से तात्पर्य है कि दृष्टि की चेतना अपने सात मानसिक गुणों के साथ इस प्रकार समाहित हो जाती है कि उन सभी को संयुक्त रूप से दृष्टि कहा जाता है। इन आठ मानसिक अवस्थाओं को अब उनके विशेष नामों से नहीं पुकारा जाता, क्योंकि वास्तव में इन्हें अलग-अलग जानना कठिन है। यही व्याख्या चेतना के अन्य वर्गों पर भी लागू होती है।

संपयुत्त संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

20. **विपयुत्त-पच्चय या वियोग का संबंध:**

वियोग का संबंध चार प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, मूल पूर्वअस्तित्व, मूल वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व और उत्तरअस्तित्व। इन चारों में से, सहअस्तित्व वाले वियोग के पच्चय और पच्चयुप्पन्न-धम्म सहअस्तित्व के संबंध में बताए गए अनुसार मानसिक या भौतिक हो सकते हैं। अतः सहअस्तित्व वाले वियोग के माध्यम से मानसिक, भौतिक से कारणिक रूप से संबंधित होता है, और इसके विपरीत भी। यहाँ "मानसिक" शब्द का प्रयोग पच्चय के रूप में किया जाता है, जिसका अर्थ है जीवनकाल के दौरान चार मानसिक समुच्चय, अर्थात् संवेदना, बोध, मानसिक क्रियाएँ और चेतना; और "भौतिक" शब्द का प्रयोग पच्चयुप्पन्न के रूप में किया जाता है, जिसका अर्थ है मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुण। फिर से, जब "भौतिक" को पच्चया कहा जाता है, तो इसका अर्थ गर्भाधान के समय का हृदय-आधार होता है, और जब "मानसिक" को पच्चयुप्पन्ना कहा जाता है, तो इसका अर्थ पुनर्जन्म से संबंधित चार मानसिक समुच्चय होते हैं।

शेष तीन प्रकार के वियोगों की व्याख्या पहले ही की जा चुकी है।

विपयुत्त संबंध का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

21. **अत्ति-पच्चय या उपस्थिति का संबंध**

उपस्थिति का संबंध सात प्रकार का होता है, अर्थात् सहअस्तित्व, मूल पूर्वअस्तित्व, वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व, मूल वस्तुनिष्ठ पूर्वअस्तित्व, उत्तरअस्तित्व, भौतिक भोजन और भौतिक जीवन-नियंत्रण।

इनमें से सहअस्तित्व का संबंध मात्र सहअस्तित्व का है। शेष छह के लिए भी यही व्याख्या की जानी चाहिए, जिनके लिए पहले से ही वर्णित समतुल्य संबंधों का संदर्भ लिया जाना चाहिए। संबंधित और संबंधित वस्तुओं के वर्गीकरण पर प्रत्येक संबंधित संबंध में ऊपर

चर्चा की जा चुकी है।

अत्ति-पच्चय क्यों कहा जाता है? अत्ति-पच्चय इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह खान नामक समय के तीन चरणों में उपस्थित होकर अपने प्रभाव से कारणिक रूप से संबंधित होता है।

अत्ति-संबंध का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथन >> **अध्याय 22,23,24.पत्थनुद्देसा दिपानी**

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

22. नत्थी-पच्चया या स्थगन का संबंध
23. विगत-पच्चया या अनुपस्थिति का संबंध
24. अवगत-पच्चया या निरंतरता का संबंध

अनुपस्थिति का संबंध पूर्णतः निकटता का संबंध है; स्थगन का संबंध भी ऐसा ही है। निरंतरता का संबंध भी उपस्थिति के संबंध के समान ही है। "अत्थी" और "अवगत" शब्दों का अर्थ एक ही है; इसी प्रकार "नत्थी" और "विगत" शब्दों का भी।

नत्थी, विगत और अवगत संबंधों का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 25.पत्थनुद्देसा दिपानी**

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

25. पक्काया-सभागो या संबंधों का संश्लेषण

अब संबंधों का संश्लेषण बताया जाएगा।

सहजता (सहअस्तित्व) के संबंध को पंद्रह प्रकार के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है, यानी चार श्रेष्ठ सहजता, चार मध्यम सहजता, और सात निम्न सहजता। चार श्रेष्ठ सहजताओं में साधारण सहजता, सहजतानिसया (सह-अस्तित्व में निर्भरता), सहजतथि (सह-अस्तित्व में उपस्थिति), और सहजता-अविगत (सह-अस्तित्व में निरंतरता) शामिल हैं। चार मध्यम सहजताओं में अन्नमन्ना (पारस्परिकता), विपाक (प्रभाव), सम्पायुत्त (संघ), और सहजता-विप्पयुत्त (सहअस्तित्व पृथक्करण) शामिल हैं। सात अवर सहजता में हेतु (स्थिति), सहजता-धिपति (सहअस्तित्व प्रभुत्व), सहजता-कम्मा (सहअस्तित्व कम्मा), सहजतारा (सहअस्तित्व भोजन), सहजतंद्रिय (सहअस्तित्व नियंत्रण), झाना और मग्गा (रास्ता) शामिल हैं।

रूपाहार, या भौतिक भोजन तीन प्रकार का होता है: रूपाहार (साधारण भौतिक भोजन), रूपाहरत्ती, और रूपाहारविगत।

रूपा-जीवितिन्द्रिय, या शारीरिक जीवन-नियंत्रण तीन प्रकार का होता है: रूप-जीवितिन्द्रिय, जीवितिन्द्रियत्थि, और रूप-जीवितिन्द्रिय-अविगत।

प्योरजटा (पूर्व-अस्तित्व) के संबंध को सत्रह प्रकारों के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है: छह वत्थु-प्योरजटास (बुनियादी पूर्व-अस्तित्व), छह अरम्मना-प्यूरजटास (उद्देश्य पूर्व-अस्तित्व), और पांच वत्थरमण-प्यूरजटास (बुनियादी उद्देश्य पूर्व-अस्तित्व)। इनमें से छह वत्थु-पुरेजातस हैं वत्थु-पुरेजटा, वत्थुपुरेजातनिस्साय, वत्थु-पुरेजतनिन्द्रिय, वत्थु-पुरेजटा-विप्पयुत्त, वत्थु-पुरेजटाट्ठथि, और वत्थु-पुरेजात-अविगता। छह अरम्मना-पुरेजटा हैं: अरम्मना-पुरेजटा, कुछ अरम्मना, कुछ अरम्मनाधिपति, कुछ अरम्मना-अरम्मनुपनिसया,

अरम्मना-पुरेजटाथि, और अरम्मना-पुरेजटा-अविगाटा। किंची अरम्मनम आदि में "किन्सी" और "कोसी" शब्दों का उपयोग केवल वर्तमान निप्पन्न-रूप (कर्म और वातावरण द्वारा निर्धारित भौतिक गुण) को लेने के लिए किया जाता है। पांच वत्थरम्मना-पुरेजटा हैं वत्थरम्मना-पुरेजटा, वत्थरम्मना-पुरेजटा-निस्साय, वत्थरम्मना-पुरेजटा-विप्पयुत्त, वत्थरम्मना-पुरेजटाथि, और वत्थरम्मना-पुरेजटा-अविगटा।

पचजता या उत्तर-अस्तित्व के संबंध को चार प्रकारों के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है: पचजता, पचजता-विप्पयुत्त, पचजतथि, और पचजता-अविगता।

अनंतर (संपन्नता) का संबंध सात प्रकार का है: अनंतर, समानंतर, अनंतापनिसया, असेवन, अनंत-कम्मा, नत्थि और विगत। इनमें से, अनंतर कर्म वह इच्छा है जो एरियन पथ से संबंधित है। यह अपना प्रभाव अर्थात एरियन फल समाप्त होने के तुरंत बाद उत्पन्न करता है।

ऐसे पांच रिश्ते हैं जो किसी भी विशिष्टता में शामिल नहीं होते हैं। ये हैं: शेष अरम्मना, शेष अरम्मनाधिपति, शेष अरम्मनुपनिस्साय, सभी पकतुपनिस्साय, और शेष प्रकार के कर्म जो अतुल्यकालिक कम्म हैं।

इस प्रकार, महान ग्रंथ (पत्थाना) में वर्णित संबंध कुल मिलाकर चौवन प्रकार के हैं।

इन संबंधों में, सभी प्रकार के शुद्धजात, सभी प्रकार के पच्छजात, भौतिक भोजन और शारीरिक जीवन-नियंत्रण वर्तमान संबंध हैं। सभी प्रकार के अनंतार और नानकखानिक कर्म भूतकाल के संबंध हैं। निर्वाण और पद-और-अवधारणा, पन्नत्ति को छोड़कर—अरम्मन और पकातुपनिस्सय के संबंधों को तीन कालों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है: भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल। लेकिन निर्वाण और पद-और-अवधारणा हमेशा समय से परे होते हैं।

इन दो धम्मों—निर्वाण और पन्नत्ति (अवधारणा)—को अप्पच्चया (कारण संबंध से रहित) और असंखत (अप्रतिबंधित) कहा जाता है।[30] क्यों? क्योंकि वे पूर्णतः उत्पत्ति से रहित हैं। जिन वस्तुओं या घटनाओं का जन्म या उत्पत्ति होती है, उन्हें सप्पच्चया (संबंधित वस्तुएँ), संखत (प्रतिबंधित वस्तुएँ) और प्रतीत्यसमुप्पन्न (परिस्थितियों के संयोग से उत्पन्न वस्तुएँ) कहा जाता है। अत: वे दो धर्म, जो न तो उत्पन्न होते हैं और न ही घटित होते हैं, वास्तव में अप्पच्चय और असंखत कहलाते हैं।

संबंधित और परिबद्ध वस्तुओं में एक भी घटना ऐसी नहीं है जो स्थायी, स्थाई, शाश्वत और अपरिवर्तनीय हो। वास्तव में, सभी क्षणभंगुर हैं, क्योंकि वे विघटन के योग्य हैं। क्यों? क्योंकि, अस्तित्व में आने पर, वे किसी न किसी कारण से संबंधित होते हैं, और उनके कारण भी स्थायी नहीं होते।

क्या निर्वाण और अवधारणा पच्चय-धर्म या संबंधित वस्तुएँ नहीं हैं? क्या वे स्थायी और स्थाई नहीं हैं? हाँ, वे हैं, लेकिन कोई भी घटना केवल निर्वाण या अवधारणा के कारण ही पूरी तरह से घटित नहीं होती। घटनाएँ अनेक कारणों से घटित होती हैं या उत्पन्न होती हैं, जो स्थायी और स्थाई नहीं होते।

जो वस्तुएँ स्थायी नहीं होतीं, वे तीनों प्रकार के कष्टों से ग्रसित प्राणियों के लिए सदा कष्टदायी और पीड़ादायक होती हैं। अत: उन्हें उनके भयावह होने के कारण बुरा माना जाता है। यहां तीन प्रकार के कष्ट हैं: "दुःख-दुःखता" (कष्ट के कारण), "संस्कार-दुःखता" (परिस्थितियों के कारण) और "विपरीत-दुःखता" (परिवर्तनशीलता के कारण)। सभी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं और प्रत्येक क्षण विलीन हो रही हैं, यहाँ तक कि एक ही स्थिति में रहते हुए भी।[31] अतः प्राणियों और व्यक्तियों में कोई मूल आत्मा या सार कैसे हो सकता है, जबकि वे अपने पूरे जीवन स्वयं को स्थायी मानते हैं? सब कुछ कष्टों के अधीन है। अतः प्राणियों और व्यक्तियों में कोई मूल आत्मा या सार कैसे हो सकता है जो कष्टों के अधीन हैं और फिर भी सुख की कामना करते हैं? अतः सभी वस्तुएँ सारहीन हैं क्योंकि उनमें कोई मूल नहीं है।

संक्षेप में कहें तो, बुद्ध ने चौबीस संबंधों की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित तथ्य प्रकट किए हैं: सभी बद्ध वस्तुएँ अपने घटित होने, बनने या अस्तित्व में आने के लिए कारणों और परिस्थितियों पर निर्भर हैं, न कि केवल प्राणियों की इच्छा, संकल्प या आदेश पर। और सभी कारणों और परिस्थितियों के अधीन वस्तुओं में से कोई भी ऐसी नहीं है जो कुछ कारणों से अस्तित्व में आती हो; वे वास्तव में अनेक कारणों से ही उत्पन्न होती हैं। अतः, यह व्याख्या आत्माहीनता के सिद्धांत को प्रकट करते हुए अपने चरम पर पहुँचती है।

संबंधों का संश्लेषण समाप्त।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

---

26. **पच्चया-घटना या संबंधों का समकालिकता:**

अब संबंधों के समकालिकता का वर्णन किया जाएगा।

किसी एक संबंधित वस्तु में कारण-संबंधों की समकालिकता को संबंधों का समकालिकता या पच्चया-घटना कहते हैं। सभी घटनाओं को स-पच्चया (कारणों से संबंधित), संखता (कारणों से बद्ध) और प्रतीत्यसमुप्पन (परिस्थितियों के संयोग से उत्पन्न) कहा जाता है, क्योंकि उत्पन्न होने और बने रहने में वे इन चौबीस कारण-संबंधों के साथ सहअस्तित्व में होती हैं, या उनसे बद्ध होती हैं। तो वे घटनाएँ क्या हैं? वे हैं: चेतना के एक सौ इक्कीस वर्ग, मानसिक गुणों के बावन प्रकार और भौतिक गुणों के अट्ठाईस प्रकार।

इनमें से, चेतना के एक सौ इक्कीस वर्गों को धातु (तत्वों) की श्रेणी के अंतर्गत सात भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

1. दृश्य बोध का तत्व
2. श्रवण बोध का तत्व
3. गंध बोध का तत्व
4. स्वाद बोध का तत्व
5. स्पर्श बोध का तत्व
6. बोध का तत्व
7. समझ का तत्व।

इनमें से:

1. दृष्टि-चेतना के दो वर्गों को दृश्य बोध के तत्व कहा जाता है;
2. ध्वनि-चेतना के दो वर्गों को श्रवण बोध के तत्व कहा जाता है;
3. गंध-चेतना के दो वर्गों को गंध बोध के तत्व कहा जाता है;
4. स्वाद-चेतना के दो वर्गों को स्वाद बोध के तत्व कहा जाता है;
5. स्पर्श-चेतना के दो वर्गों को स्पर्श बोध के तत्व कहा जाता है।
6. "पाँच द्वारों में से किसी एक की ओर मन का ध्यान" (पंचद्वर्वज्जन) और "अनुभूतियों की स्वीकृति" (संपच्चन) के दो वर्ग बोध के तत्व कहलाते हैं;
7. चेतना के शेष एक सौ आठ वर्ग बोध के तत्व कहलाते हैं।

बावन प्रकार के मानसिक गुणों को भी समूहों में विभाजित किया गया है:

- सात सार्वभौमिक
- छह विवरण
- चौदह अनैतिक
- पच्चीस दीप्तिमान।

चौबीस संबंधों में से

पंद्रह संबंध सभी मानसिक अवस्थाओं में समान हैं: अरम्मन, अनंतार, समानंतार, सहजता, अन्नम्मन, निस्सय, उपनिषय, कम्म, आहार, इंद्रिय, सम्पायुत्त, अत्ति, नत्थि, विगत और अविगत।

चेतना या मानसिक गुण का एक भी वर्ग ऐसा नहीं है जो अरम्मन (वस्तु) के कारण संबंध के बिना उत्पन्न होता हो। यही बात अनंतार, समानंतार, सहजता आदि के शेष कारण संबंधों पर भी लागू होती है।

केवल आठ संबंध—हेतु, अधिपति, पुरेजात, असेवन, विपाक, ध्यान, मार्ग और विपायुत्त—कुछ मानसिक अवस्थाओं में समान हैं। इनमें से, हेतु का संबंध केवल हेतु द्वारा निर्धारित चेतना के वर्गों में समान है; अधिपति का संबंध भी केवल अधिपति के साथ सह-अस्तित्व वाले बोधों (जावनों) में समान है। शुद्धजात का संबंध केवल कुछ प्रकार के मनों में ही पाया जाता है; असेवन का संबंध केवल नैतिक, अनैतिक और निष्क्रिय चेतना के बोधगम्य वर्गों में ही पाया जाता है; विपाक का संबंध भी केवल परिणामी मनों में ही पाया जाता है; ध्यान का संबंध चेतना और मानसिक सहवर्ती तत्वों के उन वर्गों में पाया जाता है जो बोध और समझ के तत्वों के अंतर्गत आते हैं; मार्ग का संबंध हेतु द्वारा नियंत्रित मनों के वर्गों में पाया जाता है; विपयुत्त का संबंध अरुपलोक में स्थित मनों के वर्गों में नहीं पाया जाता है। पच्छजात का केवल एक विशेष संबंध भौतिक गुणों में पाया जाता है।

यहाँ इसका विस्तृत विवरण दिया गया है। सात सार्वभौमिक, मानसिक गुण हैं: फस्सा (संपर्क), वेदना (संवेदना), सन्ना (बोध), चेतना (इच्छाशक्ति), एकग्गत (व्यक्तिगतकरण की क्षमता में एकाग्रता), जीवता (मानसिक जीवन) और मानसिक (ध्यान)।

इनमें से, चेतना अधिपति का संबंध हो सकती है; यह आहार का संबंध हो सकता है, और यह इंद्रिय का संबंध भी हो सकता है; संपर्क केवल आहार का संबंध है; संवेदना इंद्रिय का संबंध हो सकती है, और यह ध्यान का संबंध भी हो सकता है; इच्छाशक्ति कर्म का संबंध हो सकती है, और यह आहार का संबंध भी हो सकता है; एकाग्ता इंद्रिय का संबंध हो सकती है; यह ध्यान का संबंध हो सकती है; और यह मार्ग का संबंध भी हो सकती है; मानसिक जीवन केवल इंद्रिय का संबंध है; शेष दो अवस्थाएँ—बोध और ध्यान—किसी विशेष संबंध में नहीं बँटतीं।

दृष्टि के माध्यम से चेतना सात सार्वभौमिक मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं को प्राप्त करती है, और इस प्रकार वे आठ मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। ये सभी सात संबंधों के माध्यम से एक दूसरे से परस्पर संबंधित हैं: चार उच्चतर सहजता और तीन मध्यम सहजताएँ, वियोग के संबंध को छोड़कर। इन आठ मानसिक अवस्थाओं में, चेतना आहार और इंद्रियों के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होती है। स्पर्श आहार के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है; संवेदना केवल इंद्रियों के माध्यम से शेष अवस्थाओं से संबंधित होती है; संकल्प कर्म और आहार के माध्यम से; एकाग्ता केवल इंद्रियों के माध्यम से; और मानसिक जीवन इंद्रियों के माध्यम से अन्य सात अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है। नेत्र का आधार छह प्रकार की वात-पुरेजात अवस्थाओं के माध्यम से इन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होता है। वर्तमान दृश्य वस्तुएँ, जो उस नेत्र-आधार के मार्ग में प्रवेश करती हैं, चार प्रकार की अरम्मन पुरेजात अवस्थाओं के माध्यम से उन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। चेतना, जिसे दृष्टि चेतना के उदय से ठीक पहले, समाप्ति के क्षण में पंच द्वारों की ओर मुड़ना कहा जाता है, अनंतार की पाँच प्रजातियों के माध्यम से इन आठ मानसिक अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित है। पूर्व जन्मों में किए गए नैतिक और अनैतिक कर्म, अतुल्यकालिक कर्म के माध्यम से क्रमशः इन आठ परिणामी अच्छे और बुरे अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित हैं। अज्ञान (अविज्जा), तृष्णा (तन्हा) और आलिंगन (उपादान) - जो पिछले जन्म में इच्छाशक्ति (कर्म) के साथ सहक्रिया करते थे, और इस वर्तमान जीवन के निवास स्थान, व्यक्ति, ऋतुएँ, भोजन आदि - पकातुपानिस्सय (प्राकृतिक पर्याप्तता) के माध्यम से इन आठ अवस्थाओं से कारणिक रूप से संबंधित हैं। छह संबंध - हेतु, अधिपति, पच्छजात, असेवन, ध्यान और मार्ग - इस प्रकार की चेतना में भाग नहीं लेते हैं, बल्कि केवल शेष अठारह संबंध ही भाग लेते हैं। जिस प्रकार छह संबंध दृष्टि के माध्यम से चेतना में भाग नहीं लेते—केवल अठारह संबंध ही भाग लेते हैं—उसी प्रकार वे श्रवण, गंध आदि के माध्यम से चेतना में भाग लेते हैं।

पांचों इंद्रियों में संबंधों की समकालिकता यहीं समाप्त होती है।

27. हेतु के बिना चेतना में संबंधों का समकालिक होना:

छह मानसिक गुण हैं जिन्हें विशिष्ट (पकिन्नक) कहा जाता है - वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचार (निरंतर अनुप्रयोग), अधिमोक्खा (निर्णय), वीर्य (प्रयास), पीति (सुखद रुचि), चंदा (कर्म करने की इच्छा)। इनमें से, प्रारंभिक अनुप्रयोग ध्यान और मार्ग के संबंध में भाग लेता है। निरंतर अनुप्रयोग केवल ध्यान में भाग लेता है। प्रयास अधिपति, इंद्रिय और मार्ग के संबंध में भाग लेता है। सुखदद ध्यान में भाग लेता है। कर्म करने की इच्छा अधिपति में भाग लेती है। निर्णय किसी विशिष्ट संबंध में भाग नहीं लेता है।

दस सहवर्ती तत्व, अर्थात् सात सार्वभौमिक तत्व, प्रारंभिक अनुप्रयोग, निरंतर अनुप्रयोग और विशिष्ट तत्वों से निर्णय लेना—चेतना के पाँच वर्गों में पाए जाते हैं, अर्थात् पंच द्वारों की ओर उन्मुख होना, स्वीकृति का द्विगुणित वर्ग और सुखवादी उदासीनता के साथ अन्वेषण का द्विगुणित वर्ग। ये एक संयोजन में ग्यारह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इन तीनों वर्गों में ध्यान क्रिया होती है। संवेदना, एकाग्गत, प्रारंभिक अनुप्रयोग और निरंतर अनुप्रयोग ध्यान संबंध का कार्य करते हैं। चेतना (पंच द्वारों की ओर उन्मुख होना) निष्क्रिय वर्ग से संबंधित है, इसलिए यह विपाक संबंध में नहीं पाई जाती। अतुल्यकालिक कर्म उपनिषय के स्थान पर कार्य करता है। अतः, ऊपर दर्शाए गए पाँच इंद्रियों में अप्राप्य संबंधों से ध्यान को हटाकर और विपाक को शामिल करके, पंच द्वारों की ओर उन्मुख चेतना में भी छह अप्राप्य और अठारह प्राप्य संबंध हैं। चेतना के शेष चार परिणामी वर्गों के संबंध में, विपाक को छोड़ने से पांच संबंध अप्राप्य हो जाते हैं, और विपाक और ध्यान को जोड़ने से उन्नीस संबंध प्राप्त हो जाते हैं।

आनंद से परिपूर्ण अन्वेषणात्मक चेतना ग्यारह मानसिक सहवर्ती अवस्थाओं को प्राप्त करती है, अर्थात् उपर्युक्त दस अवस्थाओं के साथ-साथ सुखदायक रुचि। चेतना (मन द्वार की ओर उन्मुख) में ग्यारह सहवर्ती अवस्थाएँ सह-अस्तित्व में होती हैं, और वे प्रयास के साथ होती हैं। वे चेतना के साथ मिलकर बारह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। बारह सहवर्ती अवस्थाएँ, अर्थात् उपर्युक्त दस अवस्थाएँ, सुखदायक रुचि और प्रयास के साथ, सौंदर्यबोधक आनंद की चेतना के साथ सह-अस्तित्व में होती हैं। वे चेतना के साथ मिलकर तेरह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करती हैं। अन्वेषणात्मक चेतना के तीन वर्गों में से, आनंद से परिपूर्ण वर्ग में अन्य दो वर्गों की तुलना में ध्यान कारकों के संबंध में एक अधिक मानसिक गुण (अर्थात सुखदायक रुचि) होता है: इसलिए, अप्राप्य पाँच और प्राप्त करने योग्य उन्नीस संबंध, सुखवादी उदासीनता से परिपूर्ण अन्वेषणात्मक चेतना के दो वर्गों के समान हैं। चेतना (मन द्वार की ओर उन्मुख) में, प्रमुख गुण केवल "प्रयास" है, जो इंद्रिय और ध्यान के कार्यों को पूरा करता है, लेकिन अधिपति और मार्ग के कार्यों को नहीं। यह चेतना, निष्क्रिय वर्ग की होने के कारण, विपाक संबंध प्राप्त नहीं करती। अतः, विपाक सहित अप्राप्य छह और ध्यान सहित प्राप्य अठारह, पाँच द्वारों की ओर उन्मुख चेतना के समान ही हैं। सौंदर्यबोध की चेतना में भी विपाक संबंध प्राप्त नहीं होता, क्योंकि यह निष्क्रिय वर्ग की है। परन्तु प्रत्यक्ष वर्ग होने के कारण, यह असेवन संबंध में प्राप्त होता है। अतः, विपाक सहित पाँच संबंध अप्राप्य हैं, तथा असेवन सहित उन्नीस संबंध प्राप्य हैं।

हेतु के साथ न होने वाली चेतना में संबंधों की समकालिकता का अंत।

संबंधों का बौद्ध दर्शन

महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।

मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

अनैतिक चेतना वर्ग में संबंधों का समकालिकता:

अनैतिक चेतना के बारह वर्ग हैं: दो अज्ञान में निहित, आठ इच्छा में निहित और दो घृणा में निहित। चौदह अनैतिक मानसिक गुण हैं: मोह (सुस्ती), अहिरिका (निर्लज्जता), अनोत्तप्पा (परिणामों की परवाह न करना) और उद्दच्च (विचलित होना) - इन चारों को मोह-चतुर्भुज कहा जाता है; लोभ (लालच), दिठ्ठी (त्रुटि) और मन (अहंकार) - इन तीनों को लोभ-त्रुधि कहा जाता है; दोष (घृणा), इस्सा (ईर्ष्या), मच्छरिया (स्वार्थ) और कुक्कुच्च (चिंता) - इन चारों को दोष-चतुर्भुज कहा जाता है; थिना (आलस्य), मिद्धा (सुस्ती) और विचिचिच्च (भ्रमित) - इन तीनों को पकिन्नक त्रुधि कहा जाता है। इनमें से तीन मूल भाव—लोभ, घृणा और सुस्ती—हेतु संबंध हैं। त्रुटि मार्ग संबंध है। शेष दस मानसिक गुण किसी विशिष्ट संबंध में नहीं आते।

यहाँ, सुस्ती में निहित चेतना के दो वर्ग हैं: उलझन से जुड़ी चेतना और विचलितता से जुड़ी चेतना। इन दोनों में से पहले के साथ पंद्रह मानसिक सहवर्ती भाव विद्यमान होते हैं। इनमें सात सार्वभौमिक भाव, आरंभिक क्रिया, निरंतर क्रिया, प्रयास (विशिष्ट भावों से), मोह-

चतुर्भुज और उलझन (अनैतिक भावों से) शामिल हैं। ये चेतना के साथ मिलकर सोलह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इस चेतना में, अर्थात् उलझन से जुड़ी चेतना में, हेतु और मार्ग संबंध भी प्राप्त होते हैं। अर्थात्, सुस्ती हेतु संबंध के रूप में कार्य करती है; आरंभिक क्रिया और प्रयास मार्ग संबंध के रूप में; और एकाग्ता के संबंध में, क्योंकि उलझन से इसके कार्य में बाधा उत्पन्न होती है, यह इंद्रिय और मार्ग के कार्यों का निष्पादन नहीं करती, बल्कि ध्यान के कार्य का निष्पादन करती है। अत: तीन संबंध (अधिपति, पच्छजात, विपाक) प्राप्त नहीं होते; और शेष इक्कीस संबंध इस व्याकुल चेतना में प्राप्त होते हैं जो दुविधा से जुड़ी हुई है।

विचलित चेतना में पंद्रह मानसिक गुण भी होते हैं—"दुविधा" को छोड़कर और "निर्णय" को जोड़कर। ये सभी मिलकर चेतना के साथ सोलह मानसिक अवस्थाओं का निर्माण करते हैं। इस चेतना में, एकग्गत इंद्रिय, ध्यान और मार्ग के कार्य करता है। अत: तीन संबंध प्राप्त नहीं होते, जबकि इक्कीस प्राप्त होते हैं।

सात सार्वभौमिक, छह विशिष्ट, मोह-चतुर्गुण, लोभ-त्रिगुण, आलस्य और सुस्ती—कुल मिलाकर बाईस, ये सभी आठ प्रकार की चेतनाओं के साथ सह-अस्तित्व में हैं, जो इच्छा पर आधारित हैं। इनमें से दो मूल—लालच और सुस्ती—हेतु संबंध हैं; और तीन मानसिक अवस्थाएँ—कर्म की इच्छा, चेतना और प्रयास—अधिपति संबंध हैं। यहाँ अरम्मनधिपति भी प्राप्त होता है। संकल्प कर्म का संबंध है। तीन खाद्य पदार्थ आहार के संबंध हैं। पाँच मानसिक अवस्थाएँ: मन, संवेदना, एकाग्गत, मानसिक जीवन और प्रयास—इंद्रिय संबंध हैं। पाँच ध्यान कारक, अर्थात् प्रारंभिक क्रिया, निरंतर क्रिया, सुखदायक रुचि, संवेदना और एकाग्रता, ध्यान संबंध हैं। चार मार्ग घटक, अर्थात् प्रारंभिक क्रिया, एकाग्रता, त्रुटि और प्रयास, मार्ग संबंध हैं। अतः केवल दो संबंध (पच्छजात और विपाक) प्राप्त नहीं होते हैं। शेष बाईस प्राप्त होते हैं।

अनैतिक चेतना वर्ग में संबंधों की समकालिकता का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **पथनुद्देसा दीपनी-मन की अवस्थाएँ**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयादाव, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

मन की अवस्थाओं में संबंधों का समकालिकीकरण:

चेतना के इक्यावन "दीप्तिमान" वर्ग हैं। वे हैं: काम-चेतना के चौबीस "दीप्तिमान" वर्ग, रूप-चेतना के पंद्रह वर्ग, अरूप-चेतना के बारह वर्ग और पारलौकिक चेतना के चालीस वर्ग। इनमें से काम-चेतना के चौबीस "दीप्तिमान" वर्ग हैं: नैतिक चेतना के आठ वर्ग, परिणामी प्रकार की "दीप्तिमान" चेतना के आठ वर्ग और निष्क्रिय प्रकार की "दीप्तिमान" चेतना के अन्य आठ वर्ग।

शोभन ("उज्ज्वल") मानसिक गुण पच्चीस प्रकार के होते हैं: अलोभा (निःस्वार्थता), अदोसा (मैत्री), अमोह (बुद्धिमत्ता) - इन तीन को नैतिक हेतस कहा जाता है - सद्धा (विश्वास), सती (दिमागीपन), हिरी (विवेक), ओट्टप्पा (विवेक), तत्रमजहट्टा (मन का संतुलन), कायापसाधि (मानसिक गुणों की स्थिरता), चित्तपसाधि (मन की शांति), काया-लहुता (मानसिक गुणों की उपयुक्तता), चित्त-लहुता (मन की प्रसन्नता), कयामुदुता (मानसिक गुणों की कोमलता), चित्त-मुदाता (मन की कोमलता), कयाकम्मनता (मानसिक गुणों के कार्य की उपयुक्तता), चित्त-कम्मनता (मन के कार्य की उपयुक्तता), काया-पगुन्नता (मानसिक गुणों की दक्षता), चित्त-पगुन्नता (प्रवीणता) मन की), कयुजुकाता (शुद्धता की)। मानसिक गुण (मानसिक गुण), चित्तुजुकाता (मन की शुद्धता), सम्म-वाच (सही वाणी), सम्म-कम्मंत (सही कर्म), सम्म-अजीव (सही आजीविका) - अंतिम तीन को तीन संयम कहा जाता है; करुणा (दया) और मुदिता (सहानुभूतिपूर्ण प्रशंसा) - अंतिम दो को दो असीम कहा जाता है।

इनमें से, तीन नैतिक हेतु हेतुपच्चय हैं। बुद्धि अधिपति संबंध में विमंसा के नाम से, इंद्रिय संबंध में पन्ना के नाम से, और मार्ग संबंध में सम्मदित्ति के नाम से प्रकट होती है। श्रद्धा या विश्वास इंद्रिय संबंध है। सती या सजगता इंद्रिय संबंध में सतिन्द्रिय है, और मार्ग संबंध में सम्मसती है। तीन संयम (सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका) मार्ग संबंध हैं। शेष सत्रह मानसिक अवस्थाएँ विशिष्ट संबंध नहीं हैं।

अड़तीस मानसिक गुण काम-चेतना (काम = इंद्रिय-संबंधी इच्छाएँ) के आठ नैतिक वर्गों के साथ संयोजन में आते हैं। ये हैं: सात सार्वभौमिक, छह विशिष्ट और पच्चीस शोभना। इनमें से, सुखदायक रुचि केवल आनंद से युक्त चेतना के चार वर्गों के साथ संयोजन में आती है। बुद्धि भी ज्ञान से जुड़े चार वर्गों के साथ संयोजन में आती है। तीन संयम केवल नैतिक नियमों या उपदेशों का पालन करने पर

ही संयोजन में आते हैं। दो असीम गुण केवल जीवों के दुख के प्रति सहानुभूति रखने या उनके सुख में भागीदार होने पर ही उत्पन्न होते हैं। चेतना के इन आठ वर्गों में, द्वैत या त्रिमूल हेतु संबंध हैं। चार प्रकार के अधिपति, अर्थात् कर्म-इच्छा, मन, प्रयास और अन्वेषण, में से प्रत्येक बारी-बारी से एक अधिपति है। संकल्प कर्म का संबंध है। तीन भोजन आहार के संबंध हैं। आठ मानसिक अवस्थाएँ, अर्थात् मन, संवेदना, एकाग्रता, मानसिक जीवन, विश्वास, सजगता, प्रयास और बुद्धि, इंद्रिय के संबंध हैं। पांच ध्यान कारक, अर्थात् आरंभिक अभ्यास, निरंतर अभ्यास, सुखदायक रुचि, संवेदना और एकाग्रता, ध्यान के संबंध हैं। आठ मार्ग-घटक, अर्थात् अन्वेषण, आरंभिक अभ्यास, तीन संयम, सजगता, प्रयास और एकाग्रता, मार्ग के संबंध हैं। अतः, चेतना के इन आठ वर्गों में केवल दो संबंध (पच्छाजात और विपाक) प्राप्त नहीं होते हैं, और शेष बाईस प्राप्त होते हैं। निष्क्रिय चेतना के आठ शोभना वर्गों में तीन संयम प्राप्त नहीं होते हैं। जैसे नैतिक चेतना में, दो संबंध अप्राप्य होते हैं और बाईस प्राप्त होते हैं। परिणामी चेतना के आठ सुंदर वर्गों में भी तीन संयम और दो असीम प्राप्त नहीं होते हैं। अप्राप्य संबंध तीन हैं, अर्थात् अधिपति, पच्छाजात और असेवन; और शेष इक्कीस प्राप्त होते हैं।

रूप, अरूप और पारलौकिक चेतना के उच्च वर्गों में बाईस से अधिक संबंध प्राप्त नहीं होते हैं। संबंधों की समकालिकता को ज्ञान से जुड़े काम-चेतना के चार नैतिक वर्गों में विद्यमान समझा जाना चाहिए। यदि ऐसा है, तो चेतना के वे वर्ग काम-चेतना से अधिक श्रेष्ठ और पारलौकिक क्यों हैं? इसका कारण आसेवन की महानता है। ये विशेष अभ्यासों द्वारा निर्मित होते हैं, इसलिए आसेवन इनसे श्रेष्ठ है; इसी कारण इंद्रिय, ध्यान, मार्ग और अन्य संबंध भी श्रेष्ठ हो जाते हैं। जब ये संबंध श्रेष्ठ हो जाते हैं—प्रत्येक दूसरे से उच्चतर—तो चेतना के वे वर्ग भी काम-चेतना से अधिक श्रेष्ठ और पारलौकिक हो जाते हैं।

मन की अवस्थाओं में संबंधों की समकालिकता का अंत।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **पथनुद्देसा दिपानी-गुण**
संबंधों का बौद्ध दर्शन
महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट द्वारा।
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता

अब भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता का वर्णन किया जाएगा। भौतिक गुणों के अट्ठाईस प्रकार हैं:-

अ. चार आवश्यक भौतिक गुण:
1. दृढ़ता का तत्व (पथवी)
2. संसंजन का तत्व (अपो)
3. गतिज ऊर्जा का तत्व (तेजो)
4. गति का तत्व (वायो); स्पर्शनीय (फोत्थब्बा): यह भौतिक गुण तीन आवश्यक तत्वों से बना है, अर्थात् विस्तार का तत्व, गतिज ऊर्जा का तत्व और गति का तत्व।

ब. पाँच संवेदी भौतिक गुण:

1. आँख (चक्खु)
2. कान (सोता)
3. नाक (गण)
4. जीभ (जीव)
5. शरीर (काया)।

ग. पाँच इंद्रिय-क्षेत्रों के भौतिक गुण:

1. दृश्य रूप (रूप)
2. ध्वनि (सद्दा)
3. गंध (गंध)

4. स्वाद (रस)।

D. लिंग के दो भौतिक गुण:

1. स्त्रीलिंग (इत्तिभाव)
2. पुरुषलिंग (पुम्भव)।

E. जीवन का एक भौतिक गुण (जीवित)।

F. हृदय-आधार का एक भौतिक गुण (हृदय-वत्थु)।

G. पोषण का एक भौतिक गुण (आहार)।

H. सीमितता का एक भौतिक गुण (आकाश-धातु)।

I. संचार के दो भौतिक गुण:

1. शरीर द्वारा सूचना (कयविन्नत्ति)
2. वाणी द्वारा सूचना (वाचिविन्नत्ति)।

J. लचीलेपन के तीन भौतिक गुण:

1. हल्कापन (लहुता)
2. लचीलापन (मुदुत)
3. अनुकूलनशीलता (कम्मन्नत)।

K. प्रमुख विशेषताओं के चार भौतिक गुण:

1. एकीकरण (उपचय)
2. निरंतरता (संतति)
3. क्षय (जरत)
4. अनित्यता (अनिकट)।

इनमें से छह प्रकार के भौतिक गुण—अर्थात्, चार आवश्यक तत्व, जीवन का भौतिक गुण और पोषण का भौतिक गुण—भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। यहाँ भी, चार आवश्यक तत्व पाँच संबंधों द्वारा परस्पर संबंधित हैं: सहजता, अन्नमन्न, निस्सय, अत्ति और अविगत; और वे बाद वाले से उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से चार संबंधों द्वारा संबंधित हैं (अर्थात् उपरोक्त पाँच में अन्नमन्न को छोड़कर)। जीवन का भौतिक गुण इंद्रिय के माध्यम से कर्म द्वारा उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित है। पोषण का भौतिक गुण आहार के माध्यम से सह-अस्तित्व वाले और गैर-अस्तित्व वाले दोनों भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित है।

तेरह प्रकार के भौतिक गुण कुछ विशेष संबंधों द्वारा मानसिक अवस्थाओं से कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। ये भौतिक गुण हैं: पाँच प्रकार के संवेदी भौतिक गुण, सात प्रकार के इंद्रिय क्षेत्र और हृदय। इनमें से, जिस प्रकार एक माँ अपने पुत्र से संबंधित होती है, उसी प्रकार पाँच प्रकार के संवेदी भौतिक गुण पाँच इंद्रिय-ज्ञान से वस्तु-पुरेजात, वस्तु-पुरेजातिंद्रिय और वस्तु-पुरेजात-विप्पयुत्त के द्वारा कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। और जिस प्रकार एक पिता अपने पुत्र से संबंधित होता है, उसी प्रकार सात इंद्रिय क्षेत्र पाँच इंद्रिय-ज्ञान और बोध के तीन तत्वों से अरम्मनपुरेजात के द्वारा कारणिक रूप से जुड़े होते हैं। इसी प्रकार, जैसे एक वृक्ष उसमें निवास करने वाले देवता से संबंधित होता है, वैसे ही हृदय-आधार पुनर्जन्म के समय सहजतनिस्य के माध्यम से और जीवनकाल में वात्तुपुरेजात और वात्तुपुरेजात-विप्पयुत्त के माध्यम से बोध और बोध के दो तत्वों से कारणिक रूप से संबंधित होता है।

भौतिक गुणों के तेईस समूह हैं। इन्हें समूह इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये उत्पादन (जाति-रूप) के भौतिक गुण से समूहों में बंधे होते हैं,

जैसे बाल या घास धागे से बंधे होते हैं। इनमें से आठ प्रकार के भौतिक गुण, जैसे चार आवश्यक तत्व, रंग, गंध, स्वाद और पोषक तत्व, सभी भौतिक गुणों के प्राथमिक अष्टक का निर्माण करते हैं।

कर्म द्वारा उत्पन्न नौ समूह हैं: प्राणिक नौपद, आधारभूत दसपद, देह-पद, स्त्री-पद, पुरुष-पद, नेत्र-पद, कान-पद, नाक-पद और जीभ-पद। इनमें से, प्राणिकता के भौतिक गुण सहित प्राथमिक अष्टपद को प्राणिक नौपद कहा जाता है। यह प्राथमिक नौपद, आठ भौतिक गुणों (अर्थात हृदय-आधार आदि) में से प्रत्येक के साथ मिलकर, अन्य आठ दसपदों (अर्थात आधार-पद आदि) का निर्माण करता है। यहाँ चार समूह: प्राणिक नौपद, देह-पद और द्विलिंगी यौन-पद, एक प्राणी में स्थित होते हैं और पूरे शरीर में व्याप्त होते हैं। यहाँ प्राणिक नौपद, परिपक्वता अग्नि (पचकाग्गी) और देह अग्नि (कयग्गी) का नाम है। पचकाग्गी, या परिपक्वता अग्नि, वह है जो पेट में स्थित होती है और खाए, पिए, चबाए और चाटे गए भोजन को परिपक्व या पचाती है। कायग्गल, या शारीरिक अग्नि, वह है जो पूरे शरीर में व्याप्त होकर स्वयं को स्थापित करती है और अशुद्ध पित्त, कफ और रक्त को शुद्ध करती है। इन दो तत्वों की असंगत क्रिया से जीव अस्वस्थ हो जाते हैं, और इनकी सामंजस्यपूर्ण क्रिया से वे स्वस्थ हो जाते हैं। यही द्वैत अग्नि (या वह प्राणिक अग्नि) जीवों को जीवन और उत्तम रंग प्रदान करती है।

शरीर-संबंधी काल सुखदायक और पीड़ादायक संपर्क प्रदान करता है। द्विविध यौन काल स्त्रियों को सभी स्त्रीत्व संबंधी गुण और पुरुषों को सभी पुरुषत्व संबंधी गुण प्रदान करता है। शेष पाँच काल आंशिक काल कहलाते हैं। इनमें से हृदय-संबंधी काल, जो हृदय गुहा में स्थित होता है, अनेक प्रकार के नैतिक और अनैतिक विचारों को उत्पन्न करता है। आँख-संबंधी काल इत्यादि, जो क्रमशः आँख की पुतली, कान के भीतरी भाग, नाक के भीतरी भाग और जीभ की सतह पर स्थित होते हैं, दृष्टि, श्रवण, गंध और स्वाद की क्षमता प्रदान करते हैं।

मन द्वारा निर्मित आठ समूह हैं: प्राथमिक अष्टक, ध्वनि-अनाड, शरीर-संचार का अनाड और वाक्-संचार का ध्वनि-संबंधी काल। इन चारों को हल्कापन, लचीलापन और अनुकूलनशीलता के साथ मिलाकर चार और समूह बनते हैं: प्लास्टिसिटी का अदशक, प्लास्टिसिटी का ध्वनि-दशक, प्लास्टिसिटी के साथ शारीरिक संचार का दशक, और प्लास्टिसिटी के साथ वाक् संचार का ध्वनि-त्रुकक। अंतिम चार समूहों को प्लास्टिक समूह कहा जाता है, और पहले चार समूहों को प्राथमिक समूह कहा जाता है।

इनमें से, जब शरीर के अंग सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य नहीं कर रहे होते हैं, तो एक बीमार व्यक्ति में केवल चार प्राथमिक समूह ही प्रकट होते हैं, जिसके भौतिक गुण भारी, खुरदुरे और अनुकूलनीय नहीं रह जाते हैं, और परिणामस्वरूप उसके लिए अपनी इच्छानुसार शारीरिक मुद्रा बनाए रखना, शरीर के अंगों को हिलाना और यहां तक कि मौखिक प्रतिक्रिया देना भी मुश्किल हो जाता है। लेकिन जब शरीर के अंग सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य कर रहे होते हैं - एक स्वस्थ व्यक्ति में भारीपन आदि जैसे शरीर के कोई दोष नहीं होते हैं - तो चार प्लास्टिक समूह अस्तित्व में आते हैं। इन चारों में से, शारीरिक संचार के दो समूह मन के माध्यम से या शरीर के किसी भी अंग को हिलाने के द्वारा प्रकट होते हैं। बोलने की इच्छा होने पर, मन की क्रिया के कारण ही वाक्-संचार के अन्य दो समूह भी उत्पन्न होते हैं; परन्तु जब हँसने या रोने के कारण अशाब्दिक ध्वनि उत्पन्न होती है, तब केवल दो सामान्य ध्वनि समूह ही उत्पन्न होते हैं। अन्य समयों पर, परिस्थितियों के अनुसार पहले दो समूह, प्राथमिक अष्टक और अष्टक ध्वनि, उत्पन्न होते हैं।

भौतिक परिवर्तन से चार समूह उत्पन्न होते हैं: दो प्राथमिक समूह (अर्थात प्राथमिक अष्टक और ध्वनि अनाड) और दो प्लास्टिक समूह (अर्थात प्लास्टिकता का अष्टक और प्लास्टिकता का ध्वनि द्वादश)। अब हमारा यह शरीर जीवन भर, शारीरिक मुद्राओं के एक लंबे क्रम के माध्यम से, स्वयं को बनाए रखता है। अतः, प्रत्येक क्षण, इस शरीर में तत्वों की सामंजस्यपूर्ण और असामंजस्यपूर्ण क्रियाएँ होती रहती हैं, जो मुद्राओं में परिवर्तन, तापमान में परिवर्तन, भोजन, वायु और ऊष्मा में परिवर्तन, शरीर के अंगों की स्थिति में परिवर्तन के माध्यम से होती हैं। और स्वयं के और दूसरों के प्रयासों में परिवर्तन के माध्यम से। यहाँ भी, सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करते समय, दो प्लास्टिक समूह उत्पन्न होते हैं; और असामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करते समय, अन्य दो प्राथमिक समूह उत्पन्न होते हैं। चार समूहों में से, दो ध्वनि-समूह तब उत्पन्न होते हैं जब मन द्वारा उत्पन्न ध्वनि के अलावा विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

भोजन द्वारा दो समूह उत्पन्न होते हैं: प्राथमिक अष्टक और अष्टक। इन दो समूहों को क्रमशः उपयुक्त और अनुपयुक्त भोजन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों की सामंजस्यपूर्ण और असामंजस्यपूर्ण घटनाओं के रूप में समझा जाना चाहिए।

पाँच भौतिक गुण, अर्थात्, अंतरिक्ष तत्व और पदार्थ की चार प्रमुख विशेषताएँ, समूहीकरण से बाहर हैं। इनमें से, अंतरिक्ष तत्व समूहीकरण से बाहर है क्योंकि यह समूहों की सीमा है। प्रमुख विशेषताओं के भौतिक गुणों के संबंध में, उन्हें समूहीकरण से अलग रखा गया है, क्योंकि वे केवल सशर्त वस्तुओं के चिह्न या संकेत हैं, जिनके माध्यम से हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि वे वास्तव में सशर्त वस्तुएँ हैं।

ये तेईस समूह एक व्यक्ति में उपलब्ध हैं। बाहरी वस्तुओं में उपलब्ध समूह केवल दो हैं, जो भौतिक परिवर्तन द्वारा उत्पन्न समूहों के अलावा और कुछ नहीं हैं। भौतिक गुण, आंतरिक और बाह्य। इन दोनों में से, आंतरिक गुण किसी सजीव प्राणी के स्थान को दर्शाता है और बाह्य गुण पृथ्वी, पहाड़ियाँ, नदियाँ, महासागर, वृक्ष आदि को दर्शाता है। अतः हमने कहा है कि किसी व्यक्ति में तेईस समूह, या सभी अट्ठाईस प्रकार के भौतिक गुण, विद्यमान होते हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा और उससे संबंधित मानसिक अवस्थाएँ, गर्भाधान के समय कर्म द्वारा उत्पन्न समूहों से छह विभिन्न संबंधों के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं: चार श्रेष्ठ सहजत, विपाक और विपयुत्त। परन्तु हृदय-आधार से वे सात संबंधों के माध्यम से जुड़ी हुई हैं, अर्थात् उपरोक्त संबंधों के साथ-साथ अन्नमन्न का संबंध भी। पुनर्जन्म के समय की मानसिक अवस्थाओं में, मूल अवस्थाएँ हेतु संबंध के माध्यम से, संकल्प आहार संबंध के माध्यम से, नियंत्रण इंद्रिय संबंध के माध्यम से, ध्यान घटक ध्यान संबंध के माध्यम से और पथ घटक पथ संबंध के माध्यम से कर्म द्वारा उत्पन्न समूहों से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं। भूतकाल की नैतिक और अनैतिक संकल्पियाँ केवल कर्म के माध्यम से कारणिक रूप से जुड़ी हुई हैं। प्रथम पश्चवर्ती जीवन-क्रम, द्वितीय, तृतीय, और इसी प्रकार आगे के सभी क्रम, कर्म द्वारा उत्पन्न पूर्ववर्ती भौतिक गुणों से पच्छाजात के माध्यम से कारणिक रूप से संबंधित हैं। पच्छाजात से तात्पर्य पच्छाजात की सभी प्रजातियों से है। भूतकाल की इच्छाएँ केवल कर्म के माध्यम से ही कारणिक रूप से संबंधित हैं। इस प्रकार, मानसिक अवस्थाएँ कर्म द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से चौदह विभिन्न संबंधों द्वारा कारणिक रूप से संबंधित हैं। यहाँ दस संबंध प्राप्त नहीं होते हैं, अर्थात् अरम्मन, अधिपति, अनंतर, समनन्तर, उपनिषय, पुरेजात, असेवन, सम्पायुत्त, नत्थि और विगत।

जीवनकाल के दौरान, भौतिक गुणों को उत्पन्न करने में सक्षम मानसिक अवस्थाएँ, उनके द्वारा उत्पन्न सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से पाँच विभिन्न संबंधों द्वारा कारणिक रूप से संबंधित होती हैं: चार श्रेष्ठ सहजात और विपायुत्त। इन मानसिक अवस्थाओं में, हेतु, अधिपति के द्वारा प्रभुत्व, कर्म के द्वारा संकल्प, विपाक के द्वारा परिणाम, आहार के द्वारा भोजन, इंद्रिय के द्वारा नियंत्रण, ध्यान के द्वारा ध्यान कारक और मार्ग के घटक मन द्वारा उत्पन्न भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। सभी परवर्ती मानसिक अवस्थाएँ पच्छाजात के द्वारा मन द्वारा उत्पन्न पूर्ववर्ती भौतिक गुणों से कारणवश संबंधित हैं। इस प्रकार, मानसिक अवस्थाएँ चौदह विभिन्न संबंधों द्वारा मन द्वारा उत्पन्न भौतिक समूहों से कारणवश संबंधित हैं। यहाँ भी दस संबंध अप्राप्य हैं: अरम्मन, अनंतार, समनन्तार, अन्नम्मन, उपनिषय, पुरेजात, असेवन, सम्पायुत्त, नत्थि और विगत।

जीवनकाल के दौरान, गर्भाधान की स्थिर अवस्था से शुरू होकर, सभी मानसिक अवस्थाएँ भोजन से उत्पन्न भौतिक समूहों और शारीरिक परिवर्तन से उत्पन्न भौतिक समूहों से केवल पच्छाजात के माध्यम से ही कारणिक रूप से संबंधित होती हैं। यहाँ फिर से, पच्छाजात से तात्पर्य पच्छाजात की सभी चार प्रजातियों से है। शेष बीस संबंध प्राप्त नहीं किए जा सकते।

भौतिक गुणों के तेईस समूहों में, चार आवश्यक गुण पाँच विभिन्न संबंधों से आपस में संबंधित हैं, अर्थात् चार श्रेष्ठ सहजत और एक अन्नमन्न; लेकिन सह-अस्तित्व वाले व्युत्पन्न भौतिक गुणों से केवल चार श्रेष्ठ सहजत संबंधों से ही संबंधित हैं। पोषण तत्व का भौतिक गुण आहार के माध्यम से सह-अस्तित्व वाले और गैर-सह-अस्तित्व वाले शारीरिक भौतिक गुणों से कारण संबंध रखता है। कर्म द्वारा उत्पन्न नौ समूहों में भौतिक जीवन का भौतिक गुण इंद्रिय के माध्यम से केवल सह-अस्तित्व वाले भौतिक गुणों से कारण संबंध रखता है। इस प्रकार शारीरिक भौतिक गुण सात विभिन्न संबंधों से शारीरिक पदार्थों से कारण संबंध रखते हैं। जहाँ तक बाह्य भौतिक गुणों का संबंध है, वे भौतिक परिवर्तन द्वारा उत्पन्न दो बाह्य समूहों से पाँच विभिन्न संबंधों से परस्पर संबंधित हैं।

भौतिक गुणों के समूहों में संबंधों की समकालिकता यहीं समाप्त होती है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **द पथनुद्देसा दीपनी-फुटनोट्स**
द बुद्धिस्ट फिलॉसफी ऑफ रिलेशंस
बाई महाथेरा लेडी सयाडॉ, अग्गमहापंडिता, डी.लिट.
मसोयेइन मठ मांडले के सयाडॉ यू न्याना, पटामाग्याव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित

फुटनोट:

[3] इस संबंध में, "पच्चया" को आम तौर पर "अरम्मना" =
"हैंगर" (जैसे पॉट-हुक) = "ऑब्जेक्ट" के रूप में जाना जाता है; और पकायुप्पन्ना" को

"अराम्मनिका" = "हैंगर-ऑन" = "विषय" के रूप में जाना जाता है। (अनुवादक।)
[4] इंद्रियों के छह द्वार - मन, बौद्ध दर्शन में,
छठा "इंद्रिय" बनाते हैं।
[6] अनुवादक द्वारा नोट। धम्मतो वत्थुतो या सरूपतो या पाबेदातो के बराबर है
। चित्तुप्पदा के अर्थ के तीन पहलू हैं।
सबसे पहले, इसका अर्थ है "चेतना", जैसा कि:
"तेसम" चित्तवियुत्तनं यथियोगम् इतो परम,
चित्तुप्पादेसु पच्चेकम् संपायोगो पवुक्कति।"
(भाग II, संगहा देखें)।
दूसरे, इसका अर्थ है "विचार की उत्पत्ति", जैसे:
"विथिचित्तनि सत्तैव: चित्तुप्पदा कैटुद्दसा:
कैटुपन्नासा विट्ठरा पंचादवारे यथारहम्"
(भाग IV, संगहा देखें।)
तीसरा, इसका अर्थ है "मन और इसका सहवर्ती," जैसा कि:
"चित्तुप्पादानम" इक्केवम् कट्व संगहम" उत्तरम्,
भूमिपुग्गलाभेदेन पुब्बपरण्यमितम्।"
(भाग IV, संगहा देखें।)
इनमें से प्रत्येक उदाहरण में, यौगिक
"चित्तुप्पादा" के निर्माण पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। पहले उदाहरण में, इसका
निर्माण इस प्रकार किया गया है: उप्पज्जतिति उप्पदो। चित्तम्"एव उप्पदो
सिट्टुप्पादो; दूसरे उदाहरण में, चित्तस्सा उप्पदो चित्तुप्पदो:
तीसरे उदाहरण में, उप्पज्जति एतेनाति उप्पदो धम्मसामुहो।
सिट्टंका उप्पादो सीए सिट्टुप्पादो.
[7] अनुवादक द्वारा नोट लोकुत्तरधम्म का अर्थ यहां है, यानी,
पथ के चार चरणों से बने चार जोड़े,
उसी के फल और निब्बान के साथ।
[8] दृश्य, ध्वनियाँ, गंध, स्वाद, संपर्क, विचार।
[9] यहाँ सत्य का तात्पर्य उनके द्वारा दिए गए वादे की निष्ठा से है।
[
10] यहाँ मन से तात्पर्य उन बोधों में से एक से है जो सामान्यतः
कुल पचपन होते हैं, परन्तु इस संदर्भ में हमें
मंद चेतना और सौंदर्यबोध के दो वर्गों को भी छोड़ देना चाहिए।
अन्य तीन प्रमुख तत्व अपने-अपने सहवर्ती हैं।
[11] पृथ्वी, जल, अग्नि या वायु के किसी भी पिंड में ये "तत्व"
पूर्ण शुद्धता की अवस्था में विद्यमान नहीं होते। अन्य "तत्व"
सदा उपस्थित रहते हैं, परन्तु बहुत ही गौण अनुपात में।
[12] वह है जो निब्बान को बिना किसी सहायता के प्राप्त करता है।
[13] यहाँ विज्ञान, कला और हस्तशिल्प का तात्पर्य है। [14] लेडी सयादाव यहाँ गर्भ से जन्म लेने वाले प्राणी
के जीवनकाल की व्याख्या करते प्रतीत होते हैं । [15] इसे "स्थायी समाप्ति" के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ समाप्ति का तात्पर्य न केवल चेतना की है, बल्कि मानसिक सहवर्ती क्रियाओं की भी है।

और मन से उत्पन्न मानसिक गुण। (अनुवादक)
[16] यहाँ (हदयम) विचार का (चित्त) स्थान है।
[17] कहने का तात्पर्य यह है कि निर्वाण और अवधारणाएँ (या अधिक उचित रूप से, अवधारणा-
पद) समय में प्रवेश नहीं करते हैं, और इसलिए समय के
स्वभाव, परिवर्तन के अधीन नहीं हैं। वे "उत्पन्न" नहीं होते; इसलिए वे

"समाप्त" नहीं होते। वे समय से परे होने के अर्थ में "शाश्वत और शाश्वत" हैं , न कि समय में अनंत रूप से निरंतर होने के सामान्य अर्थ में । [18] यहाँ अभ्यकत का अनुवाद "अनिर्दिष्ट" या "अनैतिक" के रूप में किया गया है। टीका में इसकी व्याख्या इस प्रकार की गई है: कुसला-अक्षलभावन अकथिता, अन्नभावन अकथिता; अर्थात्, इसे नैतिक या अनैतिक नहीं कहा जाना चाहिए, बल्कि "दोनों से अलग", अर्थात् अनैतिक या अनिर्दिष्ट कहा जाना चाहिए। अभ्यकतधम्म हैं—परिणामी और अक्रियाशील चेतना के सभी वर्ग और सभी भौतिक गुण, साथ ही निर्वाण। [19] यह "पर्याप्त शर्त" है जैसा कि बुद्ध के सूत्रों या सामान्य प्रवचनों में वर्णित है , शास्त्रों के अभिधम्म खंड में वर्णित तरीके से भिन्न है । [21] वे प्राणी जिनका अस्तित्व माता-पिता से जन्म लेने के सामान्य तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से होता है; जिन्हें पाश्चात्य "अलौकिक प्राणी" कह सकते हैं, हालांकि उनमें से सभी को किसी भी जीवन संबंधी पहलू में मनुष्य से श्रेष्ठ नहीं समझा जाना चाहिए। कई मनुष्य से शक्ति और क्षमता में, साथ ही निर्वाण प्राप्त करने के अवसरों में भी हीन हैं। [22] यहाँ, भौतिक गुणों की उत्पत्ति का तात्पर्य है। "उत्पत्ति" शब्द का प्रयोग डार्विन के अर्थ में किया गया है, जैसा कि " प्रजातियों की उत्पत्ति" में है। [23] यहाँ, उतु (शाब्दिक अर्थ, ऋतु) को "तापमान" के रूप में अनुवादित किया गया है। इसे आम तौर पर "भौतिक परिवर्तन," "कैलोरी ऊर्जा," "गर्मी और ठंड," आदि के रूप में भी अनुवादित किया जा सकता है। [24] लेडी सयादाव ने चेतनावत्था की व्याख्या नहीं की है। लेकिन इसे समझना काफी आसान है, क्योंकि यह प्रारंभिक इच्छा या कर्म का क्रियान्वयन है। [25] चार कारण हैं (1) कर्म, (2) चित्त (चेतना), (3) उतु (तापमान) और (4) आहार (पोषण)। [26] इनमें से, अंतिम तीन केवल लोकउत्तरा तक ही सीमित हैं। और इन तीनों में से, पहला प्रथम मार्ग से संबंधित ज्ञान है , दूसरा अंतिम तीन मार्गों और पहले तीन फलों से संबंधित है, और तीसरा केवल अंतिम फल से संबंधित है। [28] इनमें से अलग,या फिर, इसके सामान्य मोड से आगे बढ़कर।

[29] "निश्चित रूप से हे कच्चाना, (आत्मा) का अस्तित्व एक चरम सीमा है, और
(आत्मा) का अस्तित्व नहीं है, यह दूसरी चरम सीमा है।"
यह एक ऐसा अंश है जहाँ आत्मा, स्वयं या अहंकार की समस्या पर एक वास्तविक व्यक्तिगत सत्ता के रूप में उसके अस्तित्व या गैर-अस्तित्व के संबंध में चर्चा की गई है। [30] यहाँ, अप्पचया शब्द कम्मधरय यौगिक नहीं है, बल्कि बहुबबिहि वर्ग का है - इस प्रकार: नत्थि पच्चया एतेसम ति अप्पचया। असंखता कम्मधरय यौगिक है - इस प्रकार: संकारियन्ते ति संखता; न संखता ति असंखता। [31] सभी प्राणियों के लिए चार मुद्राएँ हैं: बैठना, खड़ा होना, चलना और लेटना। [33] अन्यत्र "पच्चयुप्पना" शब्द का अनुवाद "संबंधित वस्तुएँ" के रूप में किया गया है ।

हटू निंग द्वारा

परिचय

हम इस संसार में हैं। हम अपनी पाँचों इंद्रियों से संसार को महसूस कर सकते हैं। यह एक सच्चाई है, किसी की राय नहीं। हम जन्म से ही इस संसार में हैं। और जब तक हमारा जीवन हमें जीने की अनुमति देगा, हम इसी संसार में रहेंगे। और हम निश्चित रूप से इस संसार को छोड़कर जाएंगे, इसमें कोई संदेह नहीं।

यह मामला पूरी तरह स्पष्ट है और इस बात पर कोई विवाद नहीं है। हमारे जीवनकाल में, इस धरती पर अनेक लोग इस संसार में रह चुके हैं। अपने जीवन के दौरान वे अपने अस्तित्व और निरंतर जीवनयापन के लिए संघर्ष करते रहे। कुछ ने तो केवल अपने लिए ही ऐसा किया। लेकिन कुछ ने अपने अनुभव और ज्ञान के माध्यम से अमूल्य तथ्य छोड़े हैं।

विज्ञान और कला की अनेक शाखाएँ हैं जो अपने-अपने विषयों का अध्ययन करती हैं। प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ-साथ प्रत्येक विषय पर अनेक लिखित सामग्रियाँ उपलब्ध हुई हैं। कुछ विषय अभी भी प्रगति के दौर से गुजर रहे हैं और उन पर शोध कार्य जारी है। ये विषय अंतहीन प्रतीत होते हैं।

लेकिन ये विषय चाहे जिस तरह से आचरण और व्यवहार करें, अंततः सब कुछ चार धर्मों में से किसी एक के अंतर्गत आ जाएगा। कोई भी तथ्य इन चार धर्मों या चार परम वास्तविकताओं में से एक होगा। इन चार परम वास्तविकताओं को परम सत्य या सार्वभौमिक सत्य के रूप में भी जाना जाता है। क्योंकि ये चार धर्म या ये चार प्रकृतियाँ किसी भी समय, किसी भी स्थान और किसी भी युग में हमेशा सत्य होती हैं।

इन चार परम सत्यों के बीच जटिल संबंध हैं। इन संबंधों का अध्ययन बुद्ध अभिधम्म में किया जा सकता है, और बुद्ध अभिधम्म में सबसे जटिल और अत्यंत आदरणीय धर्म पथाना है। पथाना को समझने के लिए, सर्वप्रथम चार परम सत्यों या परमत्थ धर्मों को विस्तार से समझना आवश्यक है।

विस्तार से चर्चा करने से पहले, इन चार परमत्थ धम्मों का संक्षिप्त अवलोकन करना उचित होगा। हम जो कुछ भी देख सकते हैं, सुन सकते हैं, सूंघ सकते हैं, चख सकते हैं, अपने शरीर के माध्यम से अनुभव कर सकते हैं और अपने कार्यशील मन से समझ सकते हैं, वह सब चार श्रेणियों में आता है।

ये चार श्रेणियाँ हैं: 1. चित्त या चेतना या मन की अवस्था, 2. चेतसिका या मानसिक कारक, 3. रूप या पदार्थ या अचेतन प्रकृति, और 4. निर्वाण या परम शांति या लोभ (लालसा), दोष (घृणा) और मोह (अज्ञान) सहित सभी अग्नि का पूर्ण शमन। सरल शब्दों में कहें तो, संपूर्ण ब्रह्मांड में केवल यही चार चीजें हैं: चित्त, चेतसिका, रूप और निर्वाण। परम अर्थ में इन चार धर्मों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

बाय हटू निंग

अध्याय 1 - चित्त

या चेतना
चार वास्तविकताओं में से सर्वप्रथम चित्त को समझना आवश्यक है। यह वह प्रकृति है जो अपने विषय के प्रति सजग है। कोई अन्य धर्म या प्रकृति स्वयं सहित किसी भी चीज़ को नहीं जान सकती। परन्तु चित्त सभी को जान सकता है, यहाँ तक कि चित्तों को भी।

चित्त हमेशा अन्य नाम, धम्म और रूप, धम्मों का नेतृत्व करता है। एक चित्त उत्पन्न होता है और उत्पन्न होते ही तुरंत नष्ट हो जाता है। दूसरा चित्त उत्पन्न होता है और फिर नष्ट हो जाता है। अगला उत्पन्न होता है और तुरंत नष्ट हो जाता है। इस प्रकार की निरंतरता चित्त की अभिव्यक्ति है। चित्त के उत्पन्न होने के तात्कालिक कारण होते हैं। वे स्वयं चित्त, नाम, धम्म और रूप, धम्म हैं।

कुल मिलाकर 89 चित्त हैं।

- 81 चित्त सांसारिक चेतना हैं और
- 8 चित्त अलौकिक चेतना हैं।

किसी अन्य समय में, चित्त को कुल 121 चित्तों के रूप में गिना जा सकता है।

ऐसा तब होता है जब झाना में 8 लोकुत्तारा चित्त उत्पन्न होते हैं। इन्हें लोकुत्तारा झाना चित्तस कहा जाता है। जैसे कि 5 झाना हैं, तो 40 लोकुत्तारा झाना चित्त हैं।

लोकिया चित्त 40 और 81 के साथ मिलाकर कुल 121 चित्त होंगे।

81 लोकीय चित्त हैं

- 54 कामावकार चित्त,
- 15 रूपावचरा चित्त, और

12 अरुपावचार चित्तस.
काम का अर्थ है पांचों इंद्रियों से संबंधित कामुक वस्तुएँ। अवचार का अर्थ है बार-बार उत्पन्न होना। कामावचार का अर्थ है कामभूमि या कामुक क्षेत्र में बार-बार उत्पन्न होना।

दूसरे शब्दों में कहें तो,

रूपवकार रूप ब्रह्म भूमि है और अरुपवकार अरूप ब्रह्म भूमि या अस्तित्व के क्षेत्र या विमान में है।

कामावचर चित्तस अराई

- 12 अकुसल चित्तस,
- 30 असोभना चित्त या गैर-सुंदर चेतना, और
- 24 शोभना चित्त या सुंदर चित्त।

12 अकुशल चित्त हैं

- 8 लोभ मूल चित्त या लोभ से उत्पन्न चेतना,
- 2 दोष मूल चित्त या घृणा/विरोध से उत्पन्न चेतना, और
- 2 मोहमूल चित्त या अज्ञान/भ्रम से ग्रस्त चेतना।

8 लोभ मूल चित्त हैं

1. सोमनस्सा सहगतम् दिट्ठिगता संयुत्तम् असंखरिका चित्तम्
2. सोमनस्सा सहगतं दिट्ठिगता संयुत्तं ससंखारिका चित्तम्
3. सोमनस्सा सहगतम् दिट्ठिगता विप्पयुत्तम् असंखरिका चित्तम्
4. सोमनस्सा सहगतम् दिट्ठिगता विप्पयुत्तम् ससंखरिका चित्तम्
5. उपेक्खा सहगतं दिट्ठिगता संयुत्तं असंखरिका चित्तम्
6. उपेक्खा सहगतं दिट्ठिगता संयुत्तं ससंखरिका चित्तम्
7. उपेक्खा सहगतं दिट्ठिगता विप्पयुत्तम असंखरिका चित्तम
8. उपेक्खा सहगतं दिट्ठिगता विप्पयुत्तं ससंखरिका चित्तम्

- सोमनास्सा मन में उत्पन्न होने वाला मानसिक सुख या सुखद अनुभूति है।
- सहगतम का अर्थ है साथ-साथ चलना।
- दित्थिगता का अर्थ है दित्थी या गलत दृष्टिकोण के साथ, यानी कर्म और उसके निहितार्थों में कोई विश्वास नहीं होना।
- सम्युत्तम का अर्थ है समानांतर रूप से, जबकि
- विपयुत्तम का अर्थ है बिना।
- असंखारिका का अर्थ है बिना किसी संकेत, तैयारी या प्रोत्साहन के।
- ससंखारिका का अर्थ है पूर्व के विपरीत, यानी उत्तेजना की आवश्यकता या प्रेरणा।
- उपेक्षा का अर्थ है न तो सुखद और न ही अप्रिय भावना।

1. पहला चित्त उस बच्चे की तरह है जो खुशी-खुशी आइसक्रीम खा रहा है। वह खुश है। उसे मानसिक आनंद या सोमनस्सा प्राप्त है। एक बच्चे के रूप में, उसे कर्म का ज्ञान नहीं होता, इसलिए कर्म में कोई विश्वास नहीं होता। यह चित्त दिट्ठी या गलत दृष्टिकोण के समानांतर उत्पन्न होता है। उसे खुश रहने के लिए कोई नहीं कह रहा है। इसलिए यह पहले लोभ चित्त का उदाहरण है।

2. दूसरा लोभ चित्त ऐसे मामले में देखा जाता है जैसे किसी बच्चे को बिना यह जाने कि उसमें केक है, एक पैकेट मिलता है। उसकी माँ उससे कहती है, "जॉन, यह पैकेट तुम्हारे लिए है। पैकेट खोलो और अंदर का मीठा केक खाओ।" जब उसे पैकेट मिला, तो उसे पता नहीं था कि उसमें केक है। लेकिन जैसे ही उसकी माँ ने उसे पैकेट खोलने को कहा, वह मीठा केक खाने की इच्छा से खुश हो गया। यही प्रेरणा है।

3. तीसरे लोभ चित्त को एक ऐसे विद्वान वयस्क के उदाहरण के रूप में देखा जाता है जो इस समय प्रसन्नतापूर्वक फिल्में देख रहा है। वह खुश है। वह कर्म और उसके निहितार्थों में विश्वास रखता है। लेकिन कोई भी उसे खुश रहने के लिए प्रेरित नहीं कर रहा है।

4. चौथा लोभ चित्त एक ऐसे विद्वान वयस्क के मामले में देखा जाता है जो कोई शब्द सुनता है लेकिन उसका सटीक अर्थ पूरी तरह से नहीं समझ पाता। उसका मित्र उससे कहता है कि तुम बहुत प्रभावशाली हो। तब वह व्यक्ति प्रसन्न हो जाता है। वह प्रसन्न (सोमनस्स) है। वह विद्वान (दित्तिगत विप्पयुत्त) है। लेकिन उसे अपने मित्र द्वारा प्रेरित किया जाना आवश्यक है, यही शसंखारिका है।

5. पाँचवें लोभ चित्त को एक बच्चे के मामले में देखा जा सकता है, जब वह अपने माता-पिता की दिलचस्प बातें सुन रहा होता है। वह विशेष रूप से खुश नहीं होता क्योंकि वह बड़ों की बातें पूरी तरह से नहीं समझ पाता। लेकिन लोभ होने के कारण वह ध्यान से सुन रहा होता है। यह गलत धारणा है क्योंकि वह कर्म को अच्छी तरह से नहीं जानता। और कोई भी उसे सुनने के लिए प्रेरित नहीं कर रहा है।

6. छठा लोभ चित्त उस स्थिति में देखा जाता है जब एक बच्चे को उपहार मिलता है और उसे बताया जाता है कि यह उसके लिए है। वह विशेष रूप से प्रसन्न नहीं होता। यह उपेक्षा है। उसे कर्म का ज्ञान नहीं है। लेकिन उसे बताया जाता है कि उपहार उसके लिए है। यह सुनने से पहले, लोभ चित्त उत्पन्न नहीं होता। बताए जाने पर ही यह उत्पन्न होता है। यह संसंखारिक या प्रेरित किया जाना है।

7. सातवां लोभ चित्त एक वयस्क व्यक्ति में तब देखा जा सकता है जब वह कुछ नोट गिन रहा हो। वह विशेष रूप से प्रसन्न नहीं है क्योंकि यह धनराशि सोमनस्सा से संबंधित नहीं है। वह कर्म को भलीभांति जानता है। कोई भी उसे ऐसा करने के लिए प्रेरित नहीं कर रहा है।

8. आठवां लोभ चित्त उस स्थिति में देखा जा सकता है जब कोई वयस्क व्यक्ति दूसरों के पैसे गिन रहा होता है और उसे बताया जाता है कि ये नोट उसी के लिए हैं। राशि बहुत अधिक नहीं होती और उसे प्रोत्साहित किया जाता है। अतः यह शसंखारिका लोभ चित्त है।

दो डोसा मूला चित्ता हैं। वे हैं:

1. डोमनस्सा सहगतं पतिघ संयुत्तं असंखरिका चित्तम्
2. डोमनस्सा सहगतं पतिघ संयुत्तं ससंखरिका चित्तम्।

डोमनास्सा का अर्थ है मन में अप्रिय भावना। पतिघा का अर्थ है विनाश करना, चोट पहुँचाना।

1. अधिकांश दोसा चित्तों में पहला दोसा चित्त देखा जा सकता है, जहाँ लोग स्पष्ट रूप से आक्रामक व्यवहार करते हैं जैसे कि हत्या करना, मारना, पीटना, लात मारना, गाली देना आदि।

2. दूसरा दोष चित्त उस स्थिति में देखा जा सकता है जब किसी व्यक्ति को कुछ कहा जाता है और वह उसे नहीं सुनता। एक मित्र ने कहा कि मूर्ख तो तुम हो। तब वह क्रोधित हो जाता है। उसे याद दिलाना पड़ता है। अतः यह संसंखारिक चित्त है।

वहाँ 2 मोहा मुला चित्तों हैं। वे हैं:

1. उपेक्खा सहगतं विकिसिच्च संयुत्त चित्तम्
2. उपेक्खा सहगतं उद्धच्च संयुत्त चित्तम्

1. पहला मोह चित्त अनिर्णय की स्थिति में देखा जाता है जब कोई व्यक्ति सही या गलत का निर्णय नहीं कर पाता है और उसे मामले पर संदेह होता है।

2. मोह चित्त का दूसरा लक्षण अधिकांश लोगों में तब देखा जा सकता है जब वे कल्पनाशील विचारों में खोए हुए होते हैं। यह विशेष रूप से शोक की स्थिति में देखा जा सकता है। किसी अपने की मृत्यु होने पर बेचैनी होती है और संबंधित लोग दुखी होते हैं।

असोभना चित्त या गैर-सुंदर चित्त की संख्या 30 है।

- पिछले पृष्ठों में 12 चित्तों का वर्णन किया गया है।
- अन्य गैर-सुंदर चित्त 18 अहेतुका चित्त हैं।

यद्यपि वे अकुशल चित्त नहीं हैं, फिर भी उन्हें सुंदर नहीं कहा जाता क्योंकि उनमें कोई हेतुका या मूल तत्व नहीं होते, जैसे कि सुंदर चेतना में द्विहेतुका शोभना चित्त और तिहेतुका शोभना चित्त में होते हैं।

फिर से, इन 18 अहेतुका चित्तों या जड़विहीन चेतना को तीन अलग-अलग समूहों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं:

- 7 अकुसल विपकचित्तस,
- 8 कुसलविपकाचित्त और
- 3 अहेतुका किरिया सिट्टास.

हेतुका या मूल इस प्रकार हैं:

1. लोभा,
2. डोसा,
3. मोहा,
4. अलोभा,
5. अडोसा, और

6. अमोहा.

कुल मिलाकर 6 हेतुका या मूल हैं। इन विषयों पर पहली पुस्तक 'पच्चया हेतु पच्चया' की चर्चा के दौरान विचार किया जाएगा।

अहेतुका का अर्थ है जड़हीन, यानी सभी छह जड़ों का अभाव। विपाक का अर्थ है परिणाम। क्रिया का अर्थ है केवल कर्मिक बल, लेकिन उस कर्मिक बल का कोई अस्तित्व नहीं।

7 अहेतुका अकुसल विपाकचित्त हैं। वे हैं

1. उपेक्खा सहगतं चक्खुविन्नान चित्त
2. उपेक्खा सहगतं सोतविन्नन चित्त
3. उपेक्खा सगागतं घनविन्नान चित्त
4. उपेक्खा सहगतं जीवविन्नन चित्त
5. दुक्ख सहागतं कायविन्नन चित्त
6. उपेक्खा सहगतं सम्पतिच्चन चित्त
7. उपेक्खा सहगतं शांतिराना चित्त

चक्खु का अर्थ है आँख से संबंधित। विन्नाना शब्द वि और नाना से मिलकर बना है। वि का अर्थ है विशिष्ट, विशेष, विशिष्ट। नाना का अर्थ है ज्ञान।

अतः विन्नना चित्त विशेष ज्ञान है। जब किसी रंग को देखते समय आँख में चित्त जागृत होता है, तो वह चित्त ही उस रंग को विशेष रूप से जानता है। कोई अन्य चित्त उस रंग को नहीं जान सकता। अतः यह विन्नना चित्त का एक रूप है।

सोता का अर्थ है कान से संबंधित, घना का अर्थ है नाक से संबंधित, जिह्वा का अर्थ है जीभ से संबंधित, काया का अर्थ है शारीरिक शरीर से संबंधित। दुख का अर्थ है असहनीय या सहन करने में कठिनाई का अनुभव।

सम्पतिच्छना शब्द 'सम' (जिसका अर्थ है 'अच्छी तरह') और 'पतिच्छना' (जिसका अर्थ है 'ग्रहण करना') से मिलकर बना है। अतः सम्पतिच्छना चित्त वह अच्छी तरह ग्रहण करने वाली चेतना है जो अपने उत्पन्न होने से ठीक पहले उत्पन्न हुई पूर्व चित्त द्वारा स्थानांतरित वस्तु को ग्रहण करती है।

संतिरना शब्द 'सान' (जिसका अर्थ है 'अच्छी तरह') और 'तिराना' (जिसका अर्थ है 'उचित रूप से जांच करना') से मिलकर बना है। अतः संतिरना चित्त एक ऐसी चेतना है जो संपतिचना के विषय में गहराई से जाकर यह समझने का प्रयास करती है कि वह क्या है।

आठ अहेतुका कुसलविपाका चित्त हैं। ये आठ जड़रहित संपूर्ण परिणामी चेतना हैं।

1. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाका चक्खुविन्नन चित्त
2. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाका सोतविन्नन चित्त
3. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाक घनविन्नन चित्त
4. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाका जीवविन्नन चित्त
5. सुख सहगतं कुसलविपाका कायाविन्नन चित्त
6. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाक सम्पतिच्चन चित्त
7. उपेक्खा सहगतं कुसलविपाका शांतिराना चित्त
8. सोमनस्सा सहगतं कुसलविपाक शांतिराना चित्त

ये चित्त कुशल कर्मों या पुण्य कर्मों से उत्पन्न होने वाले चित्त हैं। सुख का अर्थ है शारीरिक आनंद।

3 अहेतुका किरिया चित्त हैं। वे हैं

1. उपेक्खा सहगतं पञ्चद्वरवज्जन चित्त
2. उपेक्खा सहगतं मनोद्वरवज्जन चित्त
3. सोमनस्सा सहगतं हसितुप्पदा चित्त

पंच का अर्थ है पाँच। द्वार का अर्थ है दरवाजा। अवज्जना शब्द 'आ' और 'विज्जना' से मिलकर बना है। अवज्जना का अर्थ है किसी वस्तु पर चिंतन करना, उस पर ध्यान केंद्रित करना, उस वस्तु की ओर ध्यान देना।

पंचद्वारवज्जन चित्त एक चेतना है जो ध्यान को रूपरम्मन या सद्दारम्मन या गंधारम्मण या रसारम्मण या फोत्थब्बरम्मण की ओर ले जाती है।

- रूपारामना रंग या दृष्टि का विषय है।
- सद्दाराममाना ध्वनि का विषय है।
- गंधारम्मन गंध का विषय है।
- रसराममन स्वाद का विषय है।
- और फोत्थब्बरामना शारीरिक स्पर्श का विषय है।

मनोद्वारवज्जन चित्त वह चित्त है जो मनोद्वार या मन के द्वार पर उत्पन्न होता है। यह ध्यान को मन के विषय या धम्मरम्मन की ओर मोड़ता है। धम्मरम्मन में शामिल हैं:

- 89 चित्तास,
- 52 चेतसिका,
- 5 पसादा रुपा,
- 16 सुखुम रूपा,
- निर्वाण, और
- पन्नाट्टा।

पसदा वह प्रकृति है जो एकत्रित रूपाओं पर शुद्धिकरण प्रभाव डालती है। सुखुम का अर्थ है सूक्ष्म। पन्नात्त का अर्थ है अवधारणाएँ या अवधारणा निर्माण। हसीतुप्पदा शब्द हसी और उप्पाद से मिलकर बना है। हसी का अर्थ है हास्य या विनोद भाव। उप्पाद का अर्थ है उत्पत्ति।

हसीतुप्पदा का अर्थ है हास्यबोध का उत्पन्न होना।

हसितुप्पदा चित्त वह चित्त है जो अरहतों के मुस्कुराने पर उत्पन्न होता है। यह क्रिया चित्त है। इसलिए इसमें कर्मिक बल नहीं होता। यह जड़विहीन चित्त है।

54 कामावचरा चित्तों में से,

- 12 अकुसला चित्त और
- 18 अहेतुक सिट्टास

इनका वर्णन पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है।

इन 30 चित्तों को असोभना चित्त या गैर-सुंदर चेतना कहा जाता है।

12 अकुशल चित्त निःसंदेह बदसूरत होते हैं। लेकिन 18 अहेतुक चित्तों को असोभना चित्त भी कहा जाता है क्योंकि उनमें अलोभ, अदोसा और अमोहा जैसे सुंदर चेतसिकाओं का अभाव होता है।

30 असोभन चित्त के बाद, 24 कामवाकर चित्त बचे।

उन्हें 24 कामसोभन चित्त कहा जाता है।

- अलोभा का अर्थ है अनासक्ति या दान का स्रोत।
- अदोसा का अर्थ है किसी को चोट न पहुँचाने वाला स्वभाव और इसे मेट्टा या प्रेमपूर्ण दया कहा जा सकता है।
- अमोहा का अर्थ है भ्रम, अज्ञान, पन्ना या ज्ञान का अभाव।

इन 24 कामसोभना चित्तों को उनकी उत्पत्ति या जाति के अनुसार तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं:

- 8 महाकुसला चित्त,
- 8 महाविपाका चित्त, और
- 8 महाकिरिया चित्त।

काम भूमि में काम कुशल उत्पन्न होते हैं। रूप कुशल रूप ध्यान से उत्पन्न होते हैं। और अरूप कुशल अरूप ध्यान से उत्पन्न होते हैं। काम पांचों इंद्रियों से संबंधित इंद्रिय सुख हैं। कुशल का अर्थ है संपूर्णता। भूमि वह स्थान है जहाँ समान गुणों वाले सत्व उत्पन्न होते हैं और निवास करते हैं।

काम कुसल को अन्य कुसल जैसे रूपकुसल, अरुपकुसल और लोकुत्तरा कुसल से अलग करने के लिए जो मग्गा चित्त हैं, कामवकार चित्त को महाकुसल चित्त नाम दिया गया है।

महा का अर्थ है महान।

1. महाकुशल चित्त हैं जो काम भूमि में कुशल चित्त के रूप में उत्पन्न होते हैं।

2. महाविपाक चित्त केवल विपाक चित्त हैं। अहेतुका विपाका चित्त भी हैं। ये अहेतुका विपाका चित्त असोभना चित्त हैं। सोभना विपाक चित्त को सहेतुका विपाक चित्त भी कहा जाता है क्योंकि उनमें हेतुका या जड़ें होती हैं। काम को अहेतुका विपाक, रूपविपाक और अरूपविपाक से अलग करने के लिए, कामवाकर विपाक चित्त को महाविपाक चित्त कहा जाता है।

3. उसी प्रकार, कामवाकार चित्त को रूपकिरिया और अरुपकिरिया से अलग करने के लिए, कामवाकार चित्त को महाकिरिया चित्त कहा जाता है।

विपाक चित्त परिणामी चेतना हैं और इनसे किसी प्रकार की कर्मिक शक्ति या प्रभाव उत्पन्न नहीं होता। सोदो क्रिया चित्त। क्रिया चित्त केवल क्रियात्मक होते हैं और इनमें कोई कर्मिक शक्ति नहीं होती।

8 महाकुशल चित्त हैं। वे हैं

1. सोमनस्सा सहगतम् नाना संयुक्तम् असंखरिका महाकुशल चित्त
2. सोमनस्सा सहगतम् नाना संयुत्तम् ससंखरिका महाकुशल चित्त
3. सोमनस्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् असंखरिका महाकुशल चित्त
4. सोमनस्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् ससंखरिका महाकुशल चित्त
5. उपेक्खा सहगतं नाना संयुक्तं असंखरिका महाकुशल चित्त
6. उपेक्खा सहगतं नाना संयुत्तं ससंखरिका महाकुशल चित्त
7. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् असंखरिका महाकुशल चित्त
8. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् ससंखरिका महाकुशल चित्त

आठों महाविपाका चित्त एक समान हैं, बस महाकुसला के स्थान पर महाविपाका शब्द का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार आठों महाक्रिया चित्तों के नाम भी एक समान हैं, बस महाक्रिया चित्त के स्थान पर महाक्रिया चित्त का प्रयोग किया गया है।

यहां नाना का अर्थ पन्ना या ज्ञान है। यह अमोहा चेतसिका है।

1. पहला महाकुशल चित्त है: सोमस्स सहगतं नाना सम्युत्तं असंखारिका चित्त। यह चित्त भिक्षुओं को वस्त्र भेंट करने वाले व्यक्ति के उदाहरण में देखा जा सकता है। वह विद्वान है और मानता है कि कुशल कर्मों से कुशल कर्म उत्पन्न होंगे, जो आगे चलकर कुशल पौधों के रूप में विकसित होंगे। वह भिक्षुओं को वस्त्र भेंट करने में प्रसन्न होता है। उसे यहाँ कोई भी इस कुशल कर्म को करने के लिए प्रेरित नहीं कर रहा है।

2. दूसरा महाकुशल चित्त उस वयस्क व्यक्ति में देखा जा सकता है जो कर्म में विश्वास रखता है और धर्म को भलीभांति जानता है। उसके पास भिक्षुओं को वस्त्र दान करने के लिए पर्याप्त संपत्ति है। लेकिन आरंभ में उसने ऐसा नहीं किया। जब उसके गुरु या माता उसे दान करने के लिए कहते हैं, तब वह कुशल चित्त का प्रयोग करता है। ऐसे में उसे प्रेरित करना आवश्यक होता है और दूसरा चित्त जागृत होना चाहिए।

3. तीसरा महाकुसला चित्त ऐसे वयस्क व्यक्ति में देखा जा सकता है जो कर्म और उसके निहितार्थों में विश्वास नहीं करता तथा उसमें गहन ज्ञान की कमी होती है। फिर भी वह स्वेच्छा से दान-पुण्य संस्थाओं को दान देता है और कोई उसे ऐसा करने के लिए प्रेरित नहीं करता।

4. उपरोक्त उदाहरण में चौथा महाकुशल चित्त देखा जा सकता है, लेकिन केवल तभी जब उसे किसी के द्वारा या स्वयं उसके मन द्वारा ऐसा करने के लिए प्रेरित किया गया हो। इन सभी क्रियाओं में अर्पण शामिल है। यह अनासक्ति है और अलोभ या वैराग्य से संबंधित है। अतः चारों चित्त कुशल चित्त हैं। सभी सोमनस्सा या आनंद से संबंधित हैं। पहले दो चित्तों में ज्ञान है जबकि बाद के दो में नहीं। प्रत्येक युग्म में एक चित्त स्वतःस्फूर्त प्रतिक्रिया है जिसे प्रेरित करने की आवश्यकता नहीं होती जबकि युग्म के दूसरे चित्त को प्रेरित करने की आवश्यकता होती है।

यदि इन क्रियाओं का संबंध आनंद या प्रसन्नता से नहीं है, तो केवल अप्रिय और अप्रिय दोनों प्रकार की अनुभूति ही उपेक्ष होगी। इन चारों उपेक्ष चित्तों को सोमनस चित्तों के समान ही समझा जा सकता है।

जब अरहत बुद्ध को जल या फूल अर्पित करते हैं, तो उनके सभी अर्पण चित्त महाक्रिया चित्त होते हैं। कभी-कभी वरिष्ठ थेरा या भिक्षु युवा अरहत भिक्षु को बुद्ध को वस्तुएँ अर्पित करने के लिए प्रेरित करते हैं। उस समय शसंकारिका महाक्रिया चित्त उत्पन्न होता है। कभी-कभी, ज्ञान साथ नहीं देता और उस समय नाना विप्पयुत्त महाक्रिया चित्त उत्पन्न होता है।

उक्त 8 महाकुसला चित्तों के परिणामस्वरूप संबंधित महाविपाका चित्त उत्पन्न होने चाहिए।

संक्षेप में, कामवाकर चित्त 54 हैं।

- 30 असोभना चित्त हैं, यानी वे सौंदर्यहीन चेतना हैं। (12 अकुशल चित्त हैं और वे बदसूरत चित्त हैं। 18 अहेतुका चित्त सुंदर नहीं हैं क्योंकि उनमें सुंदर चेतसिका का अभाव है।)
- और 24 चित्त कमसोभन चित्त हैं।

27 महागाता चित्त या 27 मज्झिमा चित्त हैं।

इन्हें महाग्गत चित्त कहा जाता है क्योंकि ये अशुद्धियों से मुक्ति के मामले में कामवाचार चित्तों से उच्चतर होते हैं। महाग्गत का अर्थ है श्रेष्ठ। इन्हें मज्झिमा चित्त भी कहा जाता है। मज्झिमा का अर्थ है मध्य। क्योंकि ये लोकउत्तर चित्तों या अलौकिक चेतना से निम्नतर होते हैं, परन्तु कामवाचार चित्तों से श्रेष्ठ होते हैं।

इन 27 चित्तों को झान चित्त भी कहा जाता है क्योंकि ये सभी झानंगा या झान या समाधि के भागों से संबंधित हैं।

15 चित्त रूपावचार चित्त हैं। यहाँ रूप का अर्थ है 15 रूप ब्रह्म भूमि से उत्पन्न रूप ब्रह्म, जहाँ चित्त और रूप दोनों मौजूद हैं। आवकरा का अर्थ है बार-बार उत्पन्न होना। रूपावचार चित्त मुख्यतः रूप ब्रह्म भूमि में उत्पन्न होते हैं, यद्यपि वे अन्य भूमियों जैसे कामभूमि, देवभूमि और मनुष्यभूमि में भी उत्पन्न हो सकते हैं।

15 रूपावचार चित्तों या 15 रूपाझना चित्तों को उनकी उत्पत्ति या जाति या चित्त के प्रकार के आधार पर तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं:

- 5 रूपकुसला चित्त,
- 5 रूपविपाक चित्त, और
- 5 रूपाकिरिया चित्तास.

5 रूपकुसला चित्त हैं

1. विटक्का, विचारा, पिटि, सुखा, एकगगत सहितं पथमज्ज्झाना कुसल
2. विचारा, पिटि, सुखा, एकगगत सहितं दुतियाज्झाना कुसल चित्त
3. पिटि, सुखा, एकगगत सहितं ततियाज्झाना कुसल चित्त
4. सुखा, एकगगत सहितं चतुत्थज्झाना कुसल चित्त
5. उपेक्खा, एकगगत सहितं पंचमज्झाना कुसल चित्त।

या बस 5 रूपाकुसल सीता हैं 1 झना रूपाकुसल चित्त, 2रे, 3रे, 4थे और 5वें झना रूपाकुसल चित्त। यहां झाना मामले को विस्तार से बताने की जरूरत है। हालाँकि 15 रूपा झाना हैं, झाना की चर्चा रूपाकुसाला सीतास के आधार पर की जाएगी।

बौद्ध धर्म में पुण्य कर्म करने के तीन प्रकार हैं: दान करना, शील का पालन करना और भावना। ध्यान ही मानसिक साधना है।

भावना में दो प्रकार की कर्मथाना होती है। वे हैं:

- समथ भावना कम्मत्थाना और
- विपश्यना भावना कम्मत्थाना।

झाना समथ भावना कम्मत्थाना का हिस्सा है जबकि विपश्यना भावना कम्मत्थाना महासतिपत्थन का हिस्सा है।

कर्मिक कर्म करते समय, कर्म के तीन द्वार होते हैं। ये हैं कायकम्म (शारीरिक क्रिया द्वारा), वाचिकम्म (मौखिक क्रिया द्वारा), और मनोकम्म (मानसिक गतिविधियों द्वारा)।

दान या भेंट मुख्यतः निर्गम्म के माध्यम से होता है, जबकि शील का पालन या अच्छे नैतिक आचरण का पालन मुख्यतः निर्गम्म और वाचिकम्म दोनों के माध्यम से होता है। लेकिन दान और शील दोनों में मनोकम्म पहले से ही शामिल है। हालांकि, भावना पूरी तरह से मनोकम्म के माध्यम से होती है।

कम्मत्थाना का अर्थ है वह वस्तु जहाँ भावना कर्म, मनोकम्म या कुशलचित्त विद्यमान होते हैं। अतः कम्मत्थाना एक वस्तु मात्र है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, भावना कर्म की दो प्रकार की वस्तुएँ होती हैं, अर्थात् समाथा और विपश्यना। ध्यान समाथा भावना का ही एक भाग है। संक्षेप में, ध्यान की व्याख्या आगे की जाएगी।

जब ध्यान साधक ध्यान का अभ्यास करना चाहता है, तो उसे शील या नैतिक आचरण का पालन करना होता है, जो कम से कम अजीव अत्था कम्मत्थाना शील होना चाहिए। इसमें हत्या, चोरी, सभी प्रकार के यौन संबंध (विचारों सहित), झूठ बोलना, कठोर शब्द बोलना, विभाजनकारी बातें करना, निरर्थक कहानियां सुनाना और शराब पीना आदि आठ आचरणों से बचना शामिल है।

ध्यान साधक ने शुद्ध शील स्थापित किया है, जिसमें प्रकृति को कष्ट न पहुँचाना शामिल है। इसमें 40 समाथा कम्मत्थाना भावनाएँ हैं।

वे हैं

- 10 kasina kammatthana,
- 10 असुभा कम्मत्थाना,
- 10 anussati kammatthana,
- 4 ब्रह्मविहार,
- 4 aruppa kammatthana,
- 1 aharepatikulasanna, और
- 1 catudhatuvavatthana.

इन सभी 40 कम्मत्थाना से ध्यान की उत्पत्ति नहीं हो सकती।

समाथा भावना के संबंध में, भावना की तीन अवस्थाएँ होती हैं। ये दर्शाती हैं कि मन कितना स्थिर है। प्रारंभिक अपरिपक्व अवस्था में, जो भावना कर्म घटित होता है, उसे परिक्कम्मा भावना कहते हैं। परिक्कम्मा का अर्थ है प्रारंभिक कुशलकम्मा।

जब साधक अधिक परिपक्व हो जाता है, तो उसका मन बहुत अधिक एकाग्र हो जाता है। इसे उपचारा भावना कहते हैं। उपचारा भावना, मन की वह अवस्था है जब मन में कोई बाधा नहीं होती।

1. कामछंद निवारण या कामुक विचार
2. बयपद निवारण या प्रतिकूल विचार
3. उड्डक्का कुक्कुक्का निवारण या पश्चाताप के विचार फैलाना
4. थिना मिड्ढा निवारण या स्लॉथ टॉरपोर टैग किए गए विचार
5. विकिचिच्चा निवारण या संदिग्ध विचार।

उपचारा भावना इतनी शुद्ध होती है कि यह धर्म में प्रवेश करने में सक्षम होती है। लेकिन यह पूर्णतः ध्यान नहीं है। ध्यान से ठीक पहले गोत्रभु चित्त उत्पन्न होता है, जो काम चित्त और ध्यान चित्त को विभाजित करता है। उपचारा भावना में उत्पन्न होने वाली एकाग्रता को उपचारा समाधि कहते हैं। यह शुद्ध होती है और यदि इसमें आर्य अष्टांगिक मार्ग के अन्य सात सही मार्ग भी शामिल हों, तो उस उपचारा समाधि को सम्मा समाधि कहते हैं। उपचारा का अर्थ है निकटता, युवराज। इसे कभी-कभी निकटवर्ती एकाग्रता भी कहा जाता है।

स्थिरता या एकाग्रता के संदर्भ में, समाथा कम्मत्थाना में सर्वोच्च भावना अप्पना भावना है। इसे अप्पना ध्यान कहते हैं। अप्पना का अर्थ है किसी वस्तु में समा जाना, उसमें लीन हो जाना और उसमें विलीन हो जाना।

समाथा भावना में निहित वस्तु को निमित्त कहते हैं। ये सभी पन्नत्त हैं। समाथा कामत्थाना का अभ्यास करते समय विभिन्न निमित्त उत्पन्न होते हैं।

वे हैं

- परिकम्मा निमित्त या प्रारंभिक छवि,
- उग्गा निमित्त या मानसिक छवि, और
- पतिभागा निमित्त या प्रति छवि।

ये सभी पन्नात्त हैं और ये सभी मन के विषय हैं और ये सभी धम्मरम्मन हैं। पन्नात्त धम्मरम्मन हैं।

जब ध्यान साधक पहली बार अभ्यास करता है, तो उत्पन्न होने वाली वस्तु को परिक्कम्मा निमित्त कहते हैं। मान लीजिए कि ध्यान साधक पथावि कसीना कर रहा है। यदि वह आरंभिक अवस्था से कहीं अधिक परिपक्व हो जाता है, तो वस्तु शुद्ध मानसिक छवि या उग्घ निमित्त के रूप में उत्पन्न होगी। आरंभ में, उसे मिट्टी से भरा एक घेरा बनाना होता है और उसे देखना होता है। जब उग्घ निमित्त उत्पन्न हो जाता है, तो उसे कसीना को देखने की आवश्यकता नहीं रहती। कसीना का अर्थ है घेरे की वह वस्तु जो उच्चतर भावना कर्मों के उत्पन्न होने का कारण है। कसीना को संपूर्ण रूप से लेना है, न कि केवल एक भाग के रूप में। अतः मन को पूर्णतः और निष्पक्ष रूप से घेरे पर केंद्रित करना होता है।

आरंभ में ध्यान साधक सीधे मिट्टी से भरे वृत्त को देखता है। जब उग्घ निमित्त या मानसिक छवि उत्पन्न होती है, तो मूल छवि मन में इस प्रकार प्रकट होती है मानो वस्तु को आँखों से देखा जा रहा हो और गड्ढे, सिलवटें, नमी, गंदगी जैसे सभी विवरण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। जब साधक निपुण हो जाता है, तो उसका मन शांत हो जाता है और तीसरी छवि, जिसे पतिभाग निमित्त कहते हैं, उत्पन्न होती है। यह उग्घ निमित्त के समान ही होती है, लेकिन उससे कहीं अधिक स्वच्छ, शुद्ध और अशुद्धियों से मुक्त होती है।

सभी 40 समथ कम्मत्था परिकम्मा निमित्त और उग्गहा निमित्त दोनों को जन्म दे सकते हैं। पतिभागा निमित्त के संबंध में, केवल 22 कम्मत्थान ही पतिभागा निमित्त को जन्म दे सकते हैं।

वे हैं

- 10 kasina kammatthana,
- 10 असुभा कम्मत्थाना,
- kayagatasati kammatthana, and
- anapanassati kammatthana.

परिक्कम्मा निमित्त का चिंतन करते समय की अवस्था को परिक्कम्मा भावना कहते हैं। जब उग्घ निमित्त उत्पन्न होता है, तब की समाधि को परिक्कम्मा समाधि कहते हैं। समाधि पतिभाग निमित्त के उत्पन्न होने से शुरू होती है और निवारण या बाधाओं के पूर्ण निवारण से लेकर अप्पना भावना के उत्पन्न होने तक की अवधि को उपचारा समाधि कहते हैं। उपचारा की इस समाधि में चित्त इतना शुद्ध होता है कि इसे चित्तविशुद्धि या मन की शुद्धि कहते हैं। मन की यह अवस्था विपश्यना नाना के उत्पन्न होने के लिए पर्याप्त है। गोत्रभु चित्त के क्षीण होने के बाद ध्यान चित्त उत्पन्न होते हैं। उस समय की एकाग्रता को अप्पना समाधि कहते हैं। इसे अप्पना भावना या अप्पना ध्यान भी कहते हैं।

अप्पना ध्यान में, ध्यान के सभी पाँच भाग, जिन्हें ध्यानांग (ध्यान + अंग) कहा जाता है, समान रूप से और अत्यंत सक्रिय रूप से कार्य करते हैं। ये ध्यान कारक हैं: वितक्का या चेतसिका जो प्रारंभ में विषय पर लागू होती है (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचार या चेतसिका जो विषय को पुनः स्थापित करती है (निरंतर अनुप्रयोग), पीति या विदारक होना, सुख या शांति या मानसिक स्थिरता, और एकागत या एकाग्रता। चूंकि ये सभी पाँच ध्यान कारक उपस्थित होते हैं, इसलिए उस समय के ध्यान को प्रथम ध्यान कहा जाता है।

ध्यान साधक निरंतर अभ्यास करता है और पाता है कि वितक्का बाधाओं के शत्रु के बहुत निकट है। वह वितक्का को दूर करने का प्रयास करता है। जब परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं, तो वितक्का का अस्तित्व समाप्त हो जाता है और वह द्वितीय ध्यान अवस्था में पहुँच जाता है। फिर से विचार वितक्का के बहुत निकट होता है, जो उसका घनिष्ठ मित्र है। इसलिए साधक विचार को दूर करने का प्रयास करता है और जब परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं, तो तृतीय ध्यान अवस्था उत्पन्न होती है। फिर से पीति या विपथना विचार और वितक्का के बहुत निकट होती है। जब पीति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, तो चतुर्थ ध्यान अवस्था उत्पन्न होती है। सुख पीति के बहुत निकट होता है और साधक सुख को दूर करने का प्रयास करता है और जब परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं, तो पंचम ध्यान अवस्था उत्पन्न होती है, जिसमें केवल एक ही बिंदु होता है, लेकिन सुख या सुख वेदना के स्थान पर उपेक्षा वेदना पंचम ध्यान अवस्था में उत्पन्न होती है।

5 झाना कारक हैं। तो वहाँ 5 झाना Cittas हैं। अधिकांश सुत्तन्त देसना या सुत्तन्त पिटक की शिक्षाओं में 4 झानों का वर्णन है। ये सही है. क्योंकि ब्रह्म भूमि हैं जिन्हें प्रथम ज्ञान भूमि, द्वितीय ज्ञान भूमि, तृतीय ज्ञान भूमि और चतुर्थ ज्ञान भूमि नाम दिया गया है। लेकिन 5वीं ज्ञान भूमि नहीं है.

इसके विपरीत, प्रथम ध्यान के बाद वितक्का और विचारा दोनों एक साथ समाप्त हो जाते हैं और साधक द्वितीय ध्यान में पहुँच जाता है जहाँ पीति, सुख और एकाग्गत मौजूद होते हैं। यही अभिधम्म और सूत्रों का अंतर है।

इन 5 झनों का अभ्यास करने पर जो चित्त उत्पन्न होते हैं उन्हें रूपाकुशल चित्त कहा जाता है। यदि अरहत झाना में रहते हैं, तो उस समय चित्त को रूपकिरिया चित्त कहा जाता है। रूपाविपाक चित्त परिणामी चित्त हैं और प्रत्येक अपने समकक्ष रूपाकुसल चित्त के अनुरूप हैं और वे केवल रूप ब्रह्म भूमि में उत्पन्न होते हैं जबकि रूपाकुसल चित्त और रूपकिरिया चित्त अन्य गैर ब्रह्म भूमि में उत्पन्न हो सकते हैं।

बारह अरूपवाचरा चित्त हैं। इन्हें इनकी उत्पत्ति या जाति के अनुसार तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं:

- 4 arupakusala cittas,
- 4 अरुपविपाक चित्त, और
- 4 arupakiriya cittas.

4 अरूपाकुसल चित्त वे चित्त हैं जो तब उत्पन्न होते हैं जब अरूप झाना का अभ्यास किया जाता है। अरूप झाना का अभ्यास भावना कुसल है। तो अरूप झाना के समय, अरुपकुसल चित्त उत्पन्न होते हैं।

यदि अभ्यासी अरहत है, तो उत्पन्न होने वाले अरूप ध्यान को अरूपक्रिया चित्त कहा जाता है। क्रिया चित्त से कर्मिक बल या बीज प्रभाव उत्पन्न नहीं होता। कुशल चित्त से विपाक या परिणामी चित्त उत्पन्न होते हैं। अरूप ध्यान के अभ्यास से अरूप ब्रह्मभूमि में पुनर्जन्म हो सकता है।

4 अरूपविपाक चित्त संबंधित अरुपकुसल चित्त के कारण परिणामी चित्त हैं। ये चार चित्त केवल अरूप ब्रह्म में ही उत्पन्न होते हैं। क्योंकि वे सभी अरूप ब्रह्मा के पतिसंधि चित्त, भावांग चित्त और कटि चित्त हैं। इसलिए वे अस्तित्व के अन्य स्तरों पर उत्पन्न नहीं हो सकते।

वे हैं

a) Arupakusala cittas

1. अकसाननचायतन अरूपकुशल चित्त
2. विन्ननानकायतन अरूपाकुशल चित्त
3. अकिंचिन्नायतन अरूपाकुशल चित्त
4. नेवसन्नानसन्नायतन अरुपकुशल चित्त

b) अरुपविपका चित्तस

1. आकाशानन्चायतन अरूपविपाक चित्त
2. विन्ननानचायतन अरुपविपाक चित्त
3. अकिंचिन्नायतन अरूपविपाक चित्त
4. नेवसन्नन्नासन्नयातन अरूपविपाक चित्त

c) अरुपाकिरिया चित्तस

1. अकसाननचायतन अरुपकिरिया चित्त
2. विन्ननानचायतन अरुपकिरिया चित्त
3. अकिंचिन्नायतन अरुपकिरिया चित्त
4. नेवसन्नानसन्नायतन अरूपकिरिया चित्त

ये 12 चित्त अधिकतर अरूप ब्रह्म भूमि में उत्पन्न होते हैं। इसलिए उन्हें अरुपवकार चित्त कहा जाता है। यहां अरूप का अर्थ अरूप ब्रह्म भूमि या अरूप ब्रह्म क्षेत्र या निराकार क्षेत्र है।

आकाशनंचयतना, आकाश और आयतन से मिलकर बना है। यहाँ आकाश का अर्थ है असीम अंतरिक्ष, जिसका वर्णन आगे किया जाएगा। आयतन का अर्थ है वह स्थान जहाँ विषय निवास करते हैं। चक्खयतना (चक्खु + आयतन) वह स्थान है जहाँ विषय-दृष्टि चेतना या चक्खुविन्नन चित्त निवास करता है या उत्पन्न होता है। आकाशनंचयतना भी ऐसा ही है। प्रथम अरूपकुसला चित्त आकाशनंचयतना (प्रथम अरूप ध्यान चित्त का स्थान) में निवास करता है या उत्पन्न होता है। यह आकाश वास्तविक अंतरिक्ष नहीं है। यह पंचम रूप ध्यान निमित्त या विषय से उत्पन्न होता है।

विन्ननानकायतन एक अयातन या अरुपवकार चित्त या मन की एक वस्तु के लिए एक स्थान है जो अरुपझाना चित्त है। विन्नाना को सिट्टा या मनोविन्नाना के नाम से भी जाना जाता है। अयाताना एक जगह है. विन्नानकायतन का अर्थ है एक स्थान के रूप में चित्त या एक वस्तु के रूप में चित्त।

वह चित्त पहला अरूपझाण चित्त है। संवेदनशील चित्त दूसरा अरुपझान चित्त है और संवेदनशील चित्त पहला अरुपझान चित्त है। दूसरा अरुपझान चित्त पहले अरूपझाना चित्त को अपनी वस्तु के रूप में देखता है। यह वह स्थान है जहां दूसरा अरुपझाना चित्त निवास करता है। तो यह एक आयतन है. लेकिन वह आयतन प्रथम अरुपझाना का विन्नन या चित्त है। तो, उस वस्तु को विन्ननानकायतन वस्तु कहा जाता है। जब दूसरा अरुपझाना उत्पन्न होता है, तो इसे विन्ननानकायतन अरुपकुशल चित्त कहा जाता है।

अकिंचिनयतन, अकिंचन्न और आयतन से मिलकर बना है। अकिंचन्न, अ और किंच से मिलकर बना है। अ का अर्थ है नहीं, कोई नहीं, शून्य। किंच का अर्थ है कुछ या कोई। अकिंच का अर्थ है कुछ नहीं या शून्य। अतः अकिंचिनयतन एक सूक्ष्म वस्तु है जो शून्यता है। यह विन्ननंचयतन अरुपझन से उत्पन्न होता है। भावना की शक्ति से, असीम चेतना या विन्ननंचयतन अरुपकुसला चित्त या विन्नन पूरी तरह से समाप्त हो जाते हैं और कुछ भी शेष नहीं रहता। अतः उस वस्तु को शून्यता कहते हैं। शून्यता की ओर निर्देशित करने वाला चित्त तीसरा अरुपझन चित्त है।

नेवसन्नान्नसन्यातन, नेवसन्नानसन्न का आयतन है।

नेवा + सन्ना + नासन्ना। नेवा, नेवा ही है। यह ना और एवा से बना है। ना का अर्थ है नहीं, कोई नहीं, कुछ नहीं। एवा का अर्थ है ऐसा, यह, इस प्रकार।

- ईवा सन्ना का अर्थ है ऐसी धारणा
- ना का अर्थ है नहीं
- नेवा सन्ना का अर्थ है कि ऐसी धारणा, धारणा नहीं है।
- नसन्ना का अर्थ है गैर-बोध या बिना बोध के।
- नेवा नासाना का अर्थ है कि ऐसी धारणा अधारणा नहीं है।
- नेवासन्नानसन्ना का अर्थ है कि ऐसी धारणा न तो धारणा है और न ही अधारणि।

यह अत्यंत सूक्ष्म विषय है। शून्यता ही सूक्ष्मता का सार है। फिर, अरूपाझना का अभ्यासी अपना अभ्यास जारी रखता है और जैसे-जैसे वह परिपक्व होता जाता है और परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं, चौथा अरूपाझना चित्त उत्पन्न होता है।

चौथा अरूपझना चित्त तीसरे अरूपझना चित्त को अपना विषय मानता है। चौथा अरूपझना चित्त तीसरे को इस दृष्टि से देखता है कि वह न तो बोध है और न ही अबोध। केवल दूसरे और चौथे अरूपझना चित्त ही परमतत्व को अपना विषय बनाते हैं। इसका अर्थ है कि वे वास्तविकताओं को अपना विषय बनाते हैं। ये वास्तविकताएँ हैं पहला अरूपझना चित्त, जो परम वास्तविकता है, और तीसरा अरूपझना चित्त, जो भी परम वास्तविकता है। लेकिन पहला अरूपझना चित्त और तीसरा अरूपझना चित्त दोनों ही स्वरूप को अपना विषय बनाते हैं। सभी 15 रूपवाचार चित्त स्वरूप को अपना विषय बनाते हैं।

सारांशतः कुल 89 चित्त हैं, या यदि लोकउत्तर चित्त या अलौकिक चेतना ध्यान चित्तों के समानांतर उत्पन्न होती है तो कुल 121 चित्त हैं। यदि 89 चित्तों का चिंतन किया जाए, तो 81 चित्त लोकीय चित्त हैं और 8 चित्त लोकउत्तर चित्त हैं। इस प्रकार 8 लोकउत्तर चित्त हैं। यदि ये 5 ध्यानों के समानांतर उत्पन्न होते हैं, तो 40 लोकउत्तर चित्त होंगे। सर्वप्रथम 8 लोकउत्तर चित्तों पर चर्चा की जाएगी।

आठ लोकउत्तर चित्त होते हैं। इनमें चार मार्ग चित्त या पथ चेतना और चार फल चित्त या फल प्राप्ति चेतना शामिल हैं। ये चारों फल चित्त विपाक चित्त या परिणामी चेतना हैं। ये प्रत्येक अपने संबंधित मार्ग चित्त के परिणामस्वरूप एक परिणामी चित्त के रूप में उत्पन्न होते हैं। इन चारों फल चित्तों को विपाक चित्त या सटीक रूप से लोकउत्तर विपाक चित्त कहा जाता है, जबकि इनके संबंधित मार्ग चित्तों को कुशल चित्त या लोकउत्तर कुशल चित्त कहा जाता है।

4 लोकुत्तारा कुसाला चित्त हैं। वे हैं

1. sotapatti magga citta
2. sakadagami magga citta
3. anagami magga citta
4. arahatta magga citta

सोतापट्टी मग्गा सिट्टा सबसे पहला सिट्टा है जो प्रारंभिक एरियनहुड के रूप में उत्पन्न होता है। सोतापट्टी शब्द पाली भाषा का शब्द है और यह सोता और अपाति से मिलकर बना है। सोता का अर्थ है बहता पानी या नदी या नाले का पानी। आप्ति का अर्थ है यथाशीघ्र पहुंचें।

जबकि निर्वाण विशाल, गहरा और विस्तृत है, निर्वाण के लिए सागर उपमा का प्रयोग किया जाता है। जब सागर निर्वाण होता है, तो धारा और नदी सबसे पहले सागर में प्रवेश करती हैं। इसी प्रकार सोतापत्ति मार्ग चित्त भी अंततः निर्वाण में समाहित हो जाता है। इसलिए सोतापत्ति मार्ग चित्त को धारा-प्रवेशित पथ चेतना भी कहा जाता है।

सकादगामी में सकिम और आगमिनो शामिल हैं। सकिम का अर्थ है एक बार। आगमिनो का अर्थ है पतिसंधि के माध्यम से मानवलोक में आना। सकादमागी का अर्थ है एक बार मानवलोक में लौटना। सकादगामी मार्ग चित्त को एक बार लौटने वाले मार्ग की चेतना के रूप में भी जाना जाता है।

अनागामी शब्द 'अ' और 'अगामी' से मिलकर बना है। अनागामी का अर्थ है मानव लोक में वापस न लौटना। अनागामी मार्ग चित्त का अर्थ है अप्रतिवर्ती पथ चेतना। जब कोई प्राणी इस चित्त को प्राप्त कर लेता है और अनागामी फल पुग्गल या व्यक्ति बन जाता है, तो मृत्यु के बाद उसका पुनर्जन्म पाँच शुद्धवास ब्रह्म लोकों में से किसी एक में होता है। शुद्धवास का अर्थ है पवित्र निवास। इन पाँच लोकों में वे अरहत बनते हैं और मृत्यु के बाद निर्वाण प्राप्त करते हैं।

अरहत्त का अर्थ है सभी प्राणियों, मनुष्यों, देवताओं, ब्रह्मा आदि से विशेष भेंट प्राप्त करने योग्य होना, क्योंकि वे पूर्णतः शुद्ध और किसी भी दोष से मुक्त होते हैं। अरहत्त मग्ग चित्त, अरहत्त पथ चेतना है और यह वह अंतिम चित्त है जो सभी निम्न लोकउत्तर चित्तों को त्याग देता है। जैसे ही अरहत्त मग्ग चित्त उत्पन्न होता है, यह विलीन हो जाता है और तुरंत अरहत्त फल चित्त का आगमन होता है और प्राणी अरहत बन जाता है।

जब लोकुत्तरा चित्त झानों के समानांतर उत्पन्न होता है, तो 40 लोकुत्तरा चित्त होंगे क्योंकि प्रत्येक लोकुत्तरा चित्त पांच झानों में से एक में उत्पन्न हो सकता है। जैसे कि 8 लोकुत्तरा चित्त हैं, तो 40 लोकुत्तरा झना चित्त होंगे।

वे हैं

1. विटक्का, विचारा, पिति, सुखा, एकगगत सहितं पथमज्ज्झाना सोतापट्टी मग्गा चित्ता
2. विचारा, पिटि, सुखा, एकगगत सहितं दुतियाज्झाना सोतापट्टी मग्गा चित्त
3. पिटि, सुखा, एकगगत सहितं ततियाज्झाना सोतापट्टी मग्गा चित्त
4. सुखा, एकगगत सहितं चतुत्थज्झाना सोतापत्ति मग्गा चित्ता
5. उपेक्खा, एकग्गता सहितं पंचमज्झाना सोतापत्ति मग्गा चित्ता

- जैसे सोतापट्टी मग्गा सिट्टा में 5 झन सिट्टा हैं,
  सोतापट्टी फला सिट्टा में भी 5 झना सिट्टा हैं।
- सकादागामी मग्गा चित्त में 5 झाना चित्त हैं, और
  सकादागामी फला चित्त में 5 झना चित्त हैं।
- अनागामी मग्गा चित्त में 5 झाना चित्त हैं, और
  अनागामी फला चित्त में भी 5 झना चित्त हैं।
- उसी प्रकार, अरहट्टा मग्गा सिट्टा, और
  अरहट्टा फला सिट्टा में प्रत्येक में 5 झाना सिट्टा हैं।

इसलिए, कुल मिलाकर 40 लोकुत्तारा झाना चित्त हैं।

लोकउत्तर चित्त अलौकिक चेतना है। लोकउत्तर पाली शब्द है जो लोक और उत्तर से मिलकर बना है। लोक का अर्थ है सांसारिक, भाव से संबंधित। लोकउत्तर का अर्थ है सांसारिक वस्तुओं से श्रेष्ठ, सांसारिक वस्तुओं से परे या अलौकिक।

ये चित्त सर्वोच्च चित्त हैं और अन्य चित्तों से श्रेष्ठ होते हैं क्योंकि ये निर्वाण से संबंधित होते हैं और सर्वोच्च पन्ना या भेदक ज्ञान से जुड़े होते हैं। ये अनुत्तर चित्त हैं, यानी कोई अन्य चित्त इनसे श्रेष्ठ नहीं है।

जब 89 चित्तों का उनकी जाति, उत्पत्ति या वंश के अनुसार विश्लेषण किया जाता है, तो चित्तों के चार वर्ग प्राप्त होते हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. 12 अकुसाला चित्त (8 लोभा + 2 डोसा + 2 मोहा चित्त)
2. 21 कुसल चित्त (8 महाकुशल + 5 रूपकुसल + 4 अरुपकुसल + 4 लोकुत्तरकुसल या मग्गा चित्त)
3. 36 विपाक चित्त (7 अहेतुका अकुसल + 8 अहेतुका कुसल + 8 महाविपाक + 5 रूपविपाक + 4 अरूपविपाक + 4 लोकुत्तरविपाक या फला चित्त)
4. 20 किरिया चित्त (3 अहेतुकाकिरिया + 8 महाकिरिया + 5 रूपकिरिया + 4 अरुपकिरिया)

कुल 12 + 21 + 36 + 20 = 89 चित्त।

जब चित्तों को भूमि, स्थान या अस्तित्व के तल के आधार पर देखा जाता है, तो चित्तों के चार वर्ग होते हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. 54 कामवाकर चित्त (12 अकुसाला + 18 अहेतुका चित्त + 24 सोभना चित्त)
2. 15 रूपावकार चित्त (5 रूपाकुशल + 5 रूपविपाक + 5 रूपकिरिया)
3. 12 अरुपवकार चित्त (4 अरुपकुसल + 4 अरुपविपाक + 4 अरुपकिरिया)
4. 8 लोकुत्तरा चित्त (4 लोकुत्तरा कुसाला या मग्गा + 4 लोकुत्तरा विपाका या फला)

कुल 54 + 15 + 12 + 8 = 89 चित्त।

जब लोकउत्तर चित्त ध्यान के साथ-साथ उत्पन्न होते हैं, तो कुल 121 चित्त होंगे। फिर, जाति या उत्पत्ति या वंश के अनुसार, चित्तों को वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. 37 कुसल सीता (8 महाकुशल, 5 रूपकुसल, 4अरुपकुसल, 20 लोकुत्तरकुसल चित्त)
2. 52 विपाक चित्त (15 अहेतुकाविपाक, 8 महाविपाक, 5 रूपविपाक, 4 अरूपविपाक, 20 लोकुत्तरविपाक चित्त)
3. 20 किरिया चित्त (3 अहेतुका किरिया, 8 महाकिरिया, 5 रूपकिरिया, 4 अरुपकिरिया)
4. 12 अकुसाला सीतास (8 लोभा, 2 डोसा, 2 मोहा)

कुल 37 + 52 + 20 + 12 = 121 चित्त।

भूमि या अस्तित्व के स्थान या तल के अनुसार, चित्त के चार वर्ग होते हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. 54 कामवाकर चित्त (12 अकुसाला, 18 अहेतुका, 24 सोभना चित्त)
2. 15 रूपावकार चित्त (5 रूपाकुशल, 5 रूपविपाक, 5 रूपकिरिया)
3. 12 अरुपवकार चित्त (4 अरूपाकुशल, 4 अरुपविपाक, 4 अरुपकिरिया)
4. 40 लोकुत्तरा चित्त (20 लोकुत्तरा कुसल, 20 लोकुत्तरा विपाका)

कुल 54 + 15 + 12 + 40 = 121 चित्त।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **2.सिटासिकास**
हटू निंग द्वारा

अध्याय 2 - चेतासिकास
या मानसिक कारक
पथाना धम्म को समझने के लिए चेतसिका को समझना आवश्यक है। पिछले पृष्ठों में चित्त के बारे में लगभग सभी बातों का विस्तार से वर्णन किया गया है। चित्त एक नाम धम्म है और चेतसिका भी।

चेतसिकाएँ वे मानसिक कारक हैं जो चित्त के साथ सह-अस्तित्व में रहते हैं या चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं। वे मन को प्रभावित करते हैं और मन को विभिन्न नाम देने के लिए बाध्य करते हैं। चित्त के लुप्त होते ही वे भी लुप्त हो जाते हैं। उन्हें भी उसी वस्तु पर निर्भर रहना पड़ता है और उन्हें भी वही वस्तु ग्रहण करनी पड़ती है जो चित्त ग्रहण करता है।

कुल मिलाकर 52 चेतासिकाएं हैं। वे हैं

1. 7 sabbacittasadharana cetasikas
2. 6 pakinnaka cetasikas
3. 14 akusala cetasikas
4. 25 शोभना चेतसिका

कुल मिलाकर 7 + 6 + 14 + 25 = 52 चेतासिक।

7 Sabbacittasadharana cetasikas

सब्बा का अर्थ है सर्वस्व, चित्त का अर्थ है चेतना, साधारण का अर्थ है उपचार करना या व्यवहार करना। अतः सब्बाचित्तसाधारण चेतसिक वे चेतसिक हैं जो सभी चित्तों से संबंधित कार्य करते हैं।

वे हैं

1. फासा
2. वेदना
3. सन्ना
4. सेटाना
5. एकग्गटा
6. जीवितिन्द्रिया
7. मानसिकरा

फस्सा का अर्थ है संपर्क। चेतसिका के रूप में, यह चित्त के साथ उत्पन्न होता है और स्वयं चित्त और रूप से संपर्क स्थापित करने वाले एक परिचयकर्ता के रूप में कार्य करता है। उदाहरण के लिए, चक्खुविन्नान चित्त या नेत्र चेतना या दृष्टि चेतना को देखें।

रंग या वन्न एक रूप है जिसे रूपायतन (रंग बोध का आधार) कहा जाता है। चक्खु वस्तु या पसदा एक अन्य रूप है जिसे चक्खायतन या नेत्र बोध का आधार कहा जाता है। फस्सा, वन्न, चक्खु और चक्खुविन्नन का एक साथ परिचय कराता है। जब लोहे की सतह और लोहे की छड़ को आपस में टकराया जाता है तो चिंगारियां उत्पन्न होती हैं। सतह आंख के समान है। छड़ रंग के समान है। चिंगारियां चक्खुविन्नन चित्त के समान हैं। स्पर्श के ठीक उसी स्थान पर चिंगारियां उत्पन्न होती हैं और सभी एक दूसरे के संपर्क में होते हैं। फस्सा संपर्क के रूप में कार्य करता है।

52 चेतसिक धम्मों में से 7 चेतसिक सब्बाचित्तसाधारण चेतसिक हैं और वे हमेशा प्रत्येक चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं। फस्सा, वेदना, सन्ना, केतना, एकागता, जीवितिन्द्रिय, मानसिकारा चेतसिक हैं जो हमेशा प्रत्येक क्षण में प्रत्येक चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं। फासा संपर्क है.

वेदना अनुभूति है। यह विषय को महसूस करती है। इसके उत्पन्न होने के कारण चित्त में अनुभूति उत्पन्न होती है। अनुभूति भेद के अनुसार अनुभूति के तीन प्रकार होते हैं: सुख, सुखी, दुःख और अप्रिय। इसे उपेक्षा वेदना कहते हैं। इंद्रिय भेद के अनुसार अनुभूति के पाँच प्रकार होते हैं: शारीरिक सुख, मानसिक सुख, दुःख और अप्रिय। और उपेक्षा।

सन्ना एक प्रकार की अनुभूति है। यह वस्तु पर अंकित चिह्नों को देखती है। सन्ना की उपस्थिति के कारण चित्त वस्तु को जान पाता है। सन्ना प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ उत्पन्न होती है। यह वस्तु पर अंकित चिह्नों के माध्यम से चित्त को वस्तु को जानने का संकेत देती है और चित्त के साथ मिलकर कार्य करते हुए अपने अनुभवों को दर्ज करती है। सन्ना चार विपाक नामाखंडों में से एक है, जो नाम का परिणामी समूह है।

चेतना संकल्प है। यह चित्त और अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकों को अपना कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। चेतना सभी क्रियाओं - शारीरिक, वाणी और मानसिक - की मुख्य कर्ता है। जब यह चित्त के साथ उत्पन्न होती है, तो यह एक बीज की तरह एक क्षमता बन जाती है जो अनुकूल परिस्थितियों में अपने पूर्ण परिणाम प्रकट करती है। यह क्षमता या कर्म प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ निरंतर चलता है, जैसे हमारी आत्माएं हर समय हमारा अनुसरण करती हैं, और यह प्रक्रिया चुति चित्त या अरहत तक जारी रहती है।

एकाग्गता एकाग्रता है। यह चित्त को उस वस्तु से स्थिर करती है जब वह चित्त के साथ उत्पन्न होती है। यह चित्त और अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकों को उस विशिष्ट वस्तु पर स्थिर करती है जिसे चित्त ग्रहण करता है। यह एकाग्रता है। एकाग्गता हमेशा प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ उत्पन्न होती है और सभी को उस बिंदु पर स्थिर होने में सहायता करती है जो चित्त द्वारा ग्रहण की गई वस्तु है।

जीवितिन्द्रिय एक मानसिक अवस्था है। यह चित्त को जीवित रहने और सुचारू रूप से कार्य करने में सहायता करती है। यह अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकों को भी सहारा देती है और सभी मानसिक गतिविधियाँ जीवितिन्द्रिय चेतसिक द्वारा समर्थित होती हैं, जिसके बिना चित्त और चेतसिक कभी उत्पन्न नहीं हो सकते। यह मानसिक अवस्था को बनाए रखती है और प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ उत्पन्न होती है।

मनसिकारा ध्यान है। यह चित्त और अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकों को संबंधित वस्तु पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रेरित करता है। यह एक मार्गदर्शक की तरह कार्य करता है और चित्त तथा अन्य चेतसिकों को सही वस्तु की ओर निर्देशित करता है। मनसिकारा प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ उत्पन्न होता है।

ये सात चेतसिक, अर्थात् फस्सा (संपर्क), वेदना (भावना), सन्ना (बोध), चेतना (संकल्प), एकाग्ता (एकाग्रचित्त), जीवंतिन्द्रिय (मानसिक जीवन) और मानसिक (ध्यान), प्रत्येक उत्पन्न चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं। ये सभी प्रकार के चित्त के साथ उत्पन्न हो सकते हैं, चाहे वह

कुशल हो या अकुशल, लोकीय हो या लोकउत्तर, काम हो या ध्यान, और संभव कोई भी चित्त इन सात चेतसिकों के साथ उत्पन्न होता है। इसलिए इन सात चेतसिकों को सब्बचित्तसाधारण चेतसिक कहा जाता है।

6 pakinnaka cetasikas

छह प्रकार की पकिन्नक चेतसिकाएँ या विशिष्ट चेतसिकाएँ होती हैं। ये चित्त के प्रति लचीली प्रतीत होती हैं और एक साथ उत्पन्न होती हैं। जब ये कुशल चित्तों के साथ उत्पन्न होती हैं, तो कुशल चेतसिकाओं के समान व्यवहार करती हैं, और जब अकुशल चित्तों के साथ उत्पन्न होती हैं, तो अकुशल चेतसिकाओं के समान व्यवहार करती हैं। यदि सह-उत्पन्न चित्त अभ्यकता चेतसिकाएँ हों, तो वे अभ्यकता का कार्य करती हैं।

अभ्यकत धर्म में कर्म की क्षमता या कर्मिक बल नहीं होता। अभ्यकत धर्म के उदाहरण क्रिया चित्त, विपाक चित्त, रूप धर्म हैं, और इन सभी का कोई कर्म प्रभाव नहीं होता। पकिन्नक चेतसिक उस चित्त के अनुरूप होते हैं जिसके साथ वे जुड़े होते हैं। छह पकिन्नक चेतसिक या छह विशिष्ट चेतसिक होते हैं। वे हैं:

1. विटाक्का
2. विकारा
3. विरिया
4. पीटी
5. चंदा
6. अधिमोक्खा

विटक्का एक मानसिक कारक है जो चित्त को वस्तु लेने में मदद करता है। यह लेने वाली वस्तु प्रारंभिक अनुप्रयोग है। विट्टक्का वस्तु के साथ चित्त लगाता है। विटक्का के विभिन्न रूप हैं जैसे काम विटक्का या कामुक विचार, ब्यापदा विटक्का प्रतिकूल विचार, झना विटक्का या झानिक कारक विटक्का, सम्मा संकप्पा आदि आदि सभी विटक्का हैं। विटक्का वस्तु पर चित्त लगाता है। यह वस्तु पर चित्त लागू करता है।

विचारा एक मानसिक कारक भी है। यह अधिकतर समय वितक्का के साथ मिलकर कार्य करता है। वितक्का विषय पर लागू होता है, जबकि विचारा चित्त को विषय से विचलित न होने में सहायता करता है, जिससे चित्त विषय में स्थिर रहता है। विचारा विषय की समीक्षा करता है। विचारा निरंतर अनुप्रयोग है।

वीर्य का अर्थ है प्रयास। वीर्य चित्त को वस्तु से विमुख होने से रोकता है और उसे प्राप्त करने के लिए प्रयास करने में सहायता करता है। वीर्य की उपस्थिति में अन्य सभी चेतसिकाएँ और चित्त पूर्ण ऊर्जा और प्रयास के साथ कार्य करते हैं।

पीति का अर्थ है समानता। यह चित्त को वस्तु के प्रति आकर्षित करने में सहायक होती है। पीति चित्त को ऊर्जा भी प्रदान करती है। पीति की उपस्थिति में, चित्त और उससे जुड़े चेतसिका तत्व कम थकते हैं और अक्षय हो जाते हैं, और पीति के अभाव में वे वस्तु से जुड़े रहने के कारण उससे कहीं अधिक प्रभावी ढंग से कार्य कर सकते हैं। पीति के विभिन्न स्तर होते हैं। सोमनस पीति से संबंधित है।

चंदा इच्छा है। यह मात्र अभिलाषा है। यह संकल्प है। जब चंदा प्रमुख धर्म बन जाता है, तो यह अधिपति धर्म या अग्रणी धर्म बन जाता है। यह सफलता के चार मूल सिद्धांतों में से एक है।

अधिमोक्खा एक मानसिक कारक है जो चित्त को विषय पर स्पष्ट रूप से निर्णय लेने में सहायता करता है। अधिमोक्खा की उपस्थिति में भ्रम, मतिभ्रम या संदेह नहीं हो सकता। यह एक दृढ़ निश्चय है। यह निर्णय लेने वाला है।

इन छह चेतसिकों और सात सार्वभौमिक चेतसिकों को सामूहिक रूप से अन्नसमना चेतसिक कहा जाता है। अन्न का अर्थ है व्यवहार करना या व्यवहार करना। समना का अर्थ है सहमत होना। अतः ये दोनों वर्ग किसी भी चित्त से सहमत होते हैं। जब वे कुशल चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं तो कुशल चेतसिक के रूप में व्यवहार करते हैं और जब अकुशल होते हैं तो अकुशल चेतसिक बन जाते हैं।

अपवाद यह है कि प्रत्येक चित्त के साथ, चाहे वह किसी भी प्रकार का हो, 7 सार्वभौमिक चेतसिकाएं हमेशा उत्पन्न होती हैं, लेकिन 6 पकिन्नक या विशिष्ट चेतसिकाएं कभी-कभी उत्पन्न होती हैं और कभी-कभी उत्पन्न नहीं होती हैं।

14 akusala cetasikas

14 अकुसला चेतसिकाएँ हैं।

वे हैं

1. मोहा टीम में 4 चेतासिक
2. लोभा टीम में 3 चेतासिक
3. डोसा टीम में 4 cetasikas
4. विविध टीम में 3 cetasikas।

मोहा टीम में 1. मोहा, 2. अहिरिका, 3. अनोटप्पा और 4. उधक्का हैं।

मोह अज्ञान है। यह भ्रम है। यह धर्म के सच्चे स्वरूप को ढक लेता है और चित्त को वास्तविकताओं और सत्यों को देखने से रोकता है। यह पन्नों के उत्पन्न होने में बाधा डालता है। चित्त में मोह और पन्न परस्पर विरोधी हैं। जब मोह उत्पन्न होता है, तो पन्न उत्पन्न नहीं हो सकता और जब पन्न उत्पन्न होता है, तो मोह समाप्त हो जाता है।

अहिरिका एक प्रकार का संकोचहीनता है। यह निर्लज्जता है। यह चित्त को बुरे या अस्वास्थ्यकर काम करने में शर्म न करने की सलाह देती है। जब यह प्रबल हो जाती है, तो यह एक प्रमुख अधिकारी की तरह व्यवहार करती है। यह अकुशल बल या नेता हो सकती है। यह कोई भी दुष्ट कार्य कर सकती है।

अनोत्तप्पा एक अलग प्रकार का अवरोधहीनता है। यह अहिरिका का घनिष्ठ मित्र है और दोनों हमेशा साथ मिलकर काम करते हैं। अहिरिका के विपरीत, अनोत्तप्पा का गुण निर्भयता है। यहाँ अवरोधहीनता का अर्थ है संभावित हानिकारक कर्मों और उनके परिणामों की आशंका न करना।

उद्द्धच्च मोह का घनिष्ठ मित्र है और यह अहिरिका और अनोतप्पा के साथ मिलकर कार्य करता है। उद्द्धच्च बेचैनी है। यह फैलता है, बिखरता है और इधर-उधर विचरण करता है। इसकी तुलना राख के ढेर में पत्थर फेंकने से की जाती है। इसकी उपस्थिति में चित्त बेचैन और व्याकुल हो जाता है। ये चारों अकुशल चेतसिक सभी अकुशल चित्त में उत्पन्न होते हैं। इसलिए इन्हें सब्बाकुसलासाधारण चेतसिक कहा जाता है।

लोभ मंडल में तीन चेतसिकाएँ होती हैं, अर्थात् 1. लोभ, 2. दिठ्ठी और 3. मन। इन्हें पापंच धम्म कहा जाता है, क्योंकि ये संसार का विस्तार करते हैं।

लोभ आसक्ति है। यह लालसा है। यह लोभ है। यह आसक्ति है। इसके अनेक अन्य नाम भी हैं जैसे तन्हा, राग, समुदय, उपादान आदि। सागर भले ही जल से भर जाए, पर लोभ अपनी इच्छा से कभी नहीं भरता। लोभ या तन्हा जीवन चक्र या प्रतीत्यसमुत्पाद के दो मूलों में से एक है।

दित्थी एक गलत दृष्टिकोण है। यह चित्त को वस्तुओं को वास्तविकता के रूप में देखने के बजाय अलग तरह से देखने की सलाह देता है। चूंकि दित्थी वास्तविकताओं को नहीं देख सकता, इसलिए यह धम्म को पुरुष, स्त्री, पशु आदि के रूप में देखता है। यह गलत दृष्टिकोण लोभ को बढ़ाता जाता है और संभवतः अन्य अकुशल चित्तों में परिवर्तित हो जाता है।

माना अहंकार है। यह दिठ्ठी या लोभ का एक वैकल्पिक रूप है। यह लोभ या गलत दृष्टिकोण प्रकट करने के बजाय अहंकारपूर्ण व्यवहार करता है। माना घमंडी दिखता है। यह भी वास्तविकता को न देख पाने का एक रूप है।

डोसा समूह में चार प्रकार की व्यंजन शैलियाँ होती हैं। वे हैं डोसा, इस्सा, मच्छरिया और कुक्कुच्चा।

दोष का स्वभाव विनाशकारी होता है। यह अत्यंत कुरूप होता है। यह किसी को भी नुकसान पहुंचा सकता है। दोष अपने घर और अपने परिवेश को नष्ट कर देता है। दोष की उपस्थिति में सभी प्रकार के दुष्ट और अमानवीय कृत्य किए जा सकते हैं। दोष चेतसिका सभी दोष संबंधी चेतसिकाओं और दोष चित्तों का मुखिया है। जब ईसा होता है, तब दोष भी उत्पन्न होता है, और यही बात मच्छरिया या कुक्कुच्चा के मामले में भी सत्य है।

इस्सा, दोष से संबंधित चेतसिका है। यह ईर्ष्या है और यह नहीं चाहती कि दूसरों को स्वास्थ्य, धन, सफलता या किसी भी रूप में कोई उपलब्धि हासिल हो।

एक अन्य दोष से संबंधित चेतसिका मच्छरिया है। यह कंजूसी है। यह चेतसिका चित्त को इस प्रकार उत्पन्न करती है कि व्यक्ति अपने स्वयं के गुणों को दूसरों के सामने प्रकट नहीं करना चाहता। यह दोष धनी और धनी दोनों में उत्पन्न हो सकता है और मच्छरिया भी ऐसा

ही करता है। धन और गरीबी का अर्थ धन, स्वास्थ्य, सौंदर्य, निवास (घर या स्थान), उत्पत्ति (जाति), मित्रता (मित्र) और कई अन्य चीजें हो सकती हैं।

दूसरी ओर, कुक्कुच्चा भी दोष से संबंधित एक चेतसिका है। यह चेतसिका तब उत्पन्न होती है जब व्यक्ति को यह एहसास होता है कि उसने अच्छे कर्म नहीं किए जबकि परिस्थितियाँ अच्छे कर्म करने के अनुकूल थीं, या फिर उसे यह एहसास होता है कि उसने बुरे कर्म किए हैं और अब वह सोच रहा है कि काश उसने वे बुरे कर्म न किए होते। इस तरह सोचने से कुछ भी अच्छा नहीं होता, बल्कि केवल दोष और कुक्कुच्चा उत्पन्न होते हैं, जो अकुशल चेतसिकाएँ हैं, और जब तक व्यक्ति इस प्रकार सोचता रहेगा, अकुशल चित्त बढ़ता रहेगा।

अकुशल चेतसिकाओं में तीन विविध चेतसिकाएँ शामिल हैं। ये हैं थिना, मिद्धा और विचिचिच्चा।

थिना आलस्य है। यह चित्त की सुस्ती, चित्त की निष्क्रियता या चित्त की अनभिज्ञता है।

मिद्धा का अर्थ है सुस्ती और यह चेतसिकों की आलस्य, सुस्ती, असावधानी या निष्क्रियता है।

ये दोनों चेतसिक एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक साथ कार्य करते हैं। ये शारीरिक थकावट यानी नींद नहीं हैं। लेकिन यह थकावट आलस्य और सुस्ती या मंदबुद्धि और मंदबुद्धि से जुड़ी हो सकती है। जब शसंखारिक चित्त उत्पन्न होता है, तो इसका अर्थ है कि बाहरी प्रोत्साहन या दूसरों द्वारा या स्वयं द्वारा भी तत्परता की आवश्यकता है।

इन 14 अकुशल चेतसिकाओं में एक और अकुशल चेतसिका है। यह विचिचिच्च चेतसिका है। यह अनिर्णय है। यह संदेह है। यह धम्म, संघ, बुद्ध, प्रतीत्यसमुत्पाद या प्रतीत्यसमुत्पाद और अभ्यास पर संदेह है।

25 शोभना चेतसिका

कुल 25 शोभना चेतसिक या सुंदर मानसिक कारक हैं। इनमें से 19 चेतसिक सभी सुंदर चित्तों के लिए सार्वभौमिक हैं, अर्थात् 89 चित्तों में 59 शोभना चित्त या 121 चित्तों में 91 शोभना चित्त। इन्हें शोभनाचित्तसाधारण चेतसिक कहा जाता है। वे इस प्रकार हैं:

1. सद्धा
2. सती
3. हिरी
4. ओट्टाप्पा
5. अलोभा
6. एडोसा
7. tatramajjattata

और, कुल मिलाकर 19 सेटासिकाओं के 6 जोड़े हैं। ये 6 जोड़े हैं

1. पस्सद्धि, चित्तपस्सद्धि और कायापासद्धि
2. लाहुता, सीतालहुता और कयालहुता
3. मुदुता, चित्तमुदुता और कयामुदुता
4. कम्मन्नता, चित्तकम्मन्नता और काया कम्मन्नता
5. पगुन्नाटा, चित्तपगुन्नाटा और कयापगुन्नाटा और
6. जुकाता, सिट्टुजुकाटा और कायुजुकाटा।

1. सद्धा जागृत होने पर चित्त बुद्ध, धम्म, संघ, प्रतीत्यसमुत्पाद, आर्य अष्टांगिक मार्ग और अभ्यास में विश्वास करता है। यह विश्वास अंधविश्वास नहीं है, बल्कि इसके पीछे एक ठोस कारण है। पूर्ण विश्वास के प्रमाण मौजूद हैं। यह आत्मविश्वास के समान है। जब सद्धा जागृत होती है, तो चित्त और अन्य सभी चेतसिक शुद्ध, सक्रिय, सजग और शांत हो जाते हैं।

2. सती चित्त को सक्रिय रूप से चीजों पर ध्यान देने और सचेत रहने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार चित्त को समय पर कार्य करना याद रहता है। सती की उपस्थिति में चित्त अपनी इच्छा अनुसार कार्य कर सकता है क्योंकि सती उसे कार्य करने की याद दिलाती रहती है। यह एक अनुस्मारक का काम करती है। सती अन्य चेतसिकों को भी उनके कार्य करने की याद दिलाने में सहायता करती है।

3. हिरी चित्त को बुरे कर्म करने से रोकता है, क्योंकि ऐसा करने से संभवतः अपमानजनक परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा। हिरी की उपस्थिति में, क्योंकि यह कर्मों के परिणामों पर विचार करने की याद दिलाता है, चित्त इस अवरोध के कारण बुरे कर्म नहीं करता है। यह हमेशा अपने मित्र ओत्तप्पा चेतसिका के साथ सहचर के रूप में प्रकट होता है।

4. ओत्तप्पा चित्त को बुरे कर्म करने से रोकता है, क्योंकि बुरे कर्म करने से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और चित्त उस परिणाम से भयभीत रहता है। यह चेतसिका, हिरी की तरह, कर्मों के संभावित परिणामों को देखती है और उनसे भयभीत हो जाती है। इसलिए इसकी उपस्थिति में चित्त बुरे कर्म नहीं करता। यह भी एक प्रकार का अवरोध है, लेकिन स्वभाव से यह शर्म से अधिक भय के पक्ष में है।

हिरी के साथ मिलकर, ये दोनों चेतसिक अनुकूल सामाजिक परिस्थितियों में संसार की रक्षा करते हैं। पुरुष और स्त्रियाँ एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं और अंततः यह यौन संबंध की ओर ले जाता है। लेकिन हिरी और ओत्तप्पा अनावश्यक घटनाओं को रोकते हैं। इन दोनों चेतसिकों को लोकपाल धर्म कहा जाता है। वे न केवल अनुचित संबंधों में यौन मामलों से बचाव करते हैं, बल्कि सभी अकुशल धर्मों से भी बचाव करते हैं।

5. अलोभा चित्त को सत्तों को वस्तुएँ अर्पित करने के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि अलोभा के मार्गदर्शन से चित्त उन वस्तुओं से अनासक्त हो जाता है। अलोभा अनासक्ति या विरक्ति से कहीं अधिक है। यह सीधे सत्त के रूप में प्राप्तकर्ताओं को देखता है और उन्हें निर्देशित करता है। साथ ही, यह अपने स्वयं के गुणों को सत्त के गुणों के रूप में नहीं देखता। गुणों से विरक्त होकर प्राप्तकर्ताओं की ओर झुकें, तो प्राप्तकर्ता को ऊर्जा का एक अगोचर प्रवाह प्राप्त होता है। यह विशेष रूप से सद्ध सहित अन्य 18 चेतसिकों के साथ कार्य करता है।

6. अदोसा का प्रभाव विनाशकारी नहीं होता। यह चित्त को प्रसन्न और दयालु बनाता है। अदोसा की उपस्थिति में दूसरों का कल्याण हमेशा ध्यान में रखा जाता है। इसमें शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और अन्य सभी पहलू शामिल हैं। इसका स्वभाव हानि न पहुँचाने वाला होता है। यह सच्ची मित्रता है। यह प्रेमपूर्ण दयालुता है।

7. तत्रमज्जत्तत संतुलनकर्ता है। यह समतुल्य है। यह सभी साथ-साथ मौजूद चेतसिकाओं की शक्ति को समतुल्य करता है और इस प्रकार चित्त को भी संतुलन की स्थिति में कार्य करने का निर्देश देता है, जिसका अर्थ है कि यह अतिवाद के बिना कार्य करता है। यह चेतसिका सारथी के समान है। जब दो घोड़े गाड़ी खींचते हैं, तो उन्हें समान शक्ति से खींचना पड़ता है। ऐसा करने के लिए सारथी ही काम करता है। सारथी के बिना वांछित दिशा कभी नहीं प्राप्त की जा सकती।

सुंदर चेतना के साथ हमेशा उत्पन्न होने वाले सुंदर मानसिक कारकों के 6 समूह हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. पासद्धि,
2. लाहुता,
3. मुदुता,
4. कम्मन्नता,
5. पगुन्नाटा, और
6. ujukata

चित्त और चेतसिका दोनों के लिए।

1. पहला समूह चित्तपसद्धि और कायपसद्धि चेतसिकों का है। चित्तपसद्धि एक चेतसिक है जो चित्त की शीतलता, शांति और स्थिरता का प्रतीक है। इसका चित्त पर सुखदायक प्रभाव होता है। यह मन को शांत करता है और चित्त को सभी चिंताओं से मुक्त करता है। चित्तपसद्धि के उत्पन्न होने पर कायपसद्धि भी उत्पन्न होती है। ये दोनों चेतसिक हमेशा एक साथ उत्पन्न होती हैं और एक ही चित्त के साथ मिलकर कार्य करती हैं।

2. दूसरा समूह लहुता है। ये चित्तलहुता और कायलहुता हैं। चित्तलहुता चित्त की हल्कापन है और कायलहुता चेतसिकाओं की हल्कापन है। ये दोनों एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक ही चित्त के साथ मिलकर कार्य करते हैं। चेतसिकाओं का यह जोड़ा मन को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए तैयार करता है। इन दोनों चेतसिकाओं को मन में तब देखा जा सकता है जब मन अच्छी मनोदशा में हो, जैसे कि कुशल क्रियाएं करते समय।

3. तीसरा सेट मुदुता है। वे चित्तमुदुता और कयामुदुता हैं। मुदुता कोमलता या कोमलता है। चित्तमुदुता चित्त की कोमलता है और कयामुदुता सीतासिका की कोमलता है। वे एक ही समय में एक ही चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं और एक साथ काम करते हैं।

4. चौथा समूह कम्मन्नता है। इसमें चित्तकम्मन्नता और कायकम्मन्नता शामिल हैं। चित्तकम्मन्नता चित्त की अनुकूलनशीलता या सुगमता है, जबकि कायकम्मन्नता चेतसिकों के लिए है। ये दोनों एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक ही चित्त में एक ही अरम्मन के साथ मिलकर कार्य करते हैं। ये चित्त और चेतसिकों को अन्य चेतसिकों के साथ सामंजस्य स्थापित करने और सभी के अनुकूल ढलने में सहायता करते हैं।

5. पाँचवाँ समूह पगुणता है। इसमें चित्तपगुणता और कायपगुणता शामिल हैं। चित्तपगुणता चित्त की निपुणता है और कायपगुणता चेतसिकाओं की निपुणता है। ये दोनों एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक साथ कार्य करते हैं। चित्तपगुणता चित्त को सही ढंग से कार्य करने में सहायता करती है और कायपगुणता सभी चेतसिकाओं को उचित रूप से कार्य करने में सहायता करती है।

6. छठा समूह उजुकाता है। ये चित्तुजुकाता और कायुजुकाता चेतसिक हैं। ये एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक ही चित्त में एक ही अरम्मन को अपनाते हुए एक साथ कार्य करते हैं। चित्तुजुकाता चित्त की सत्यता या चित्त की ईमानदारी है और कायुजुकाता चेतसिकों के लिए है। ये चित्त और चेतसिकों को सत्यनिष्ठ बनाते हैं और इन दोनों चेतसिकों की उपस्थिति में सभी सीधे-सादे तरीके से कार्य करते हैं।

तीन प्रकार के विराटी चेतसिका होते हैं। विराटी का अर्थ है बचाव। वे हैं:

1. सम्मा कम्मंता,
2. सम्मा वका, और
3. सम्मा अजीवा.

1. सम्मा कम्मन्त सही कर्म है। यह चेतसिका चित्त को बुरे कर्म न करने बल्कि सही कर्म करने में सहायता करती है। यह बुरे कर्मों से बचाव करती है। यह एक प्रकार का संयम है। यह संयम द्वारा बुरे कर्मों को रोकता है। यह हिरि और ओत्तप्पा के समान है। लेकिन इसका संयम काय कर्म द्वार या शारीरिक क्रियाओं पर होता है, जबकि हिरि और ओत्तप्पा संभावित परिणामों पर विचार करते हैं। सम्मा कम्मन्त शारीरिक क्रियाओं में ही कर्मों की दुष्टता और बुराई पर विचार करता है।

2. सम्मा वाच सही वाणी है। यह चित्त को झूठ बोलने, अपशब्द बोलने, कठोर या अभद्र शब्द बोलने, निरर्थक कहानियां सुनाने और फूट डालने वाली बातें करने जैसी बुरी वाणी बोलने से रोकती है। यह एक प्रकार का निषेध है। सम्मा कम्मंत के विपरीत, यह मौखिक क्रियाओं या वाणी पर ध्यान केंद्रित करती है।

3. सम्मा अजीव सही आजीविका है, जो सम्मा कम्मन्त या सम्मा वाच या दोनों के फलस्वरूप प्राप्त आजीविका पर निर्भर है। यह एक प्रकार का अवरोध भी है। अन्य दो विरति चेतसिकों के विपरीत, सम्मा अजीव आजीविका से संबंधित है। आजीविका के संदर्भ में, यह उत्पन्न होता है और चित्त को आजीविका से संबंधित बुरे शारीरिक कार्यों या बुरी वाणी से बचने में सहायता करता है।

अप्पमन्ना सिटासिका दो हैं, अर्थात्:

1. अप्पामन,
2. करुणा

1. अप्पमन्ना असीम, अनंत और अनंत है। यह सत्ता पन्नत्ता पर सद्भावना रखना है, जैसे सत्ता, पुरुष, स्त्री, देव, देवी, ब्रह्मा आदि। वे करुणा और मुदिता हैं।

2. करुणा तब उत्पन्न होती है जब निर्धन अवस्थाओं का सामना होता है और मुदिता तब उत्पन्न होती है जब परिपूर्ण अवस्थाओं का सामना होता है। करुणा सहानुभूति है जबकि मुदिता सहानुभूतिपूर्ण आनंद है।

पच्चीस शोभना चेतसिकों या सुंदर मानसिक कारकों में, अंतिम लेकिन सबसे महत्वपूर्ण पन्ना या पन्निन्द्रिय चेतसिक हैं। वे राजा चित्त के प्रधान मंत्री के समान हैं। यह चित्त को चीजों को गहराई से देखने और समझने में सहायता करता है। इसमें ज्ञानोदय की शक्ति होती है। इसमें विश्लेषण और अंतर्दृष्टि की शक्ति होती है। यह विषय वस्तु की अच्छी समझ रखता है। यदि यह चेतसिक मौजूद है और सुचारू रूप से कार्य कर रहा है, तो अन्य सभी सहायक चेतसिक भी सुचारू रूप से कार्य करते हैं और सभी सुव्यवस्थित होते हैं। यह चेतसिक एक बुद्धिमान व्यक्ति या बुद्धिमान मंत्री के समान है जो राजा चित्त को हर बात के गुण-दोष प्रस्तुत करता है।

यह सीतासिका रूपा और अरूपा झाना सीतास, मग्गा सीतास और फला सीतास में सभी सीतासिका का प्रमुख है। इस पन्ना सिटासिका के बिना कोई भी झाना या मग्गा या फला सीता नहीं होगा।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथ्ना >> 3.**रूपा**

बाय हटू निंग

अध्याय 3 - रूप
या भौतिक मामले
चित्त और चेतसिका जो वास्तविकताएं हैं, उनके अलावा एक और वास्तविकता है। वह है रूप। रूप वह प्रकृति है जो हमेशा कर्म, चित्त, उतु और आहार नामक चार कारणों में से एक या अधिक से प्रभावित होती है।

रूपा निरंतर परिवर्तनशील होते हैं, जैसे चित्त और चेतसिका निरंतर परिवर्तनशील होते हैं, भले ही वे नाम धम्म की तुलना में अपेक्षाकृत धीमी गति से बदलते हों। नाम धम्म के विपरीत, रूपा में स्वयं और अपने परिवेश के प्रति सजग रहने की प्रकृति नहीं होती है।

रूपा कभी कुछ जान नहीं सकता। लेकिन रूपा नाम, धम्म, चित्त और चेतसिका से संबंधित विभिन्न कार्य करता है। अपने मूल स्वरूप के अनुसार, 28 अलग-अलग परमत्थ रूपा होते हैं।

1. 4 महाभूत रूप
2. 5 pasada rupas
3. 4 गोकारा रूप या विसया रूपा (या 7 गोकारा या 7 विसया रूपा)
4. 2 भाव रूप
5. 1 hadaya rupa
6. 1 जीवित रूप
7. 1 आहार रूप या 1 ओज रूप (कुल मिलाकर ये 18 रूप निप्पन्न रूप हैं)
1. 1 परिच्छेड़ा रूपा या अकासा रूपा
2. 2 vinatti rupas
3. 3 लहुतादि रूप (2 विनत्ती रूप को मिलाकर ये 5 विकार रूप हैं)
4. 4 लक्खना रूप (ये अंतिम 10 रूप अनिप्पन्न रूप हैं)।

परमत्था रूप 28 प्रकार के होते हैं। इनके वर्ग के अनुसार, रूप के 11 वर्ग हैं, जैसा कि ऊपर दर्शाया गया है।

इनमें से चार महाभूत रूप उपदा रूप कहलाते हैं। अन्य सभी 24 रूप इन्हीं चार महाभूत रूपों पर निर्भर करते हैं। महाभूत रूप स्वयं सहित सभी रूपों का आधार हैं।

ये चारों रूप अन्य चार रूपों से भी जुड़े हुए हैं, और ये सभी रूप पूरी तरह से इन चार महाभूत रूपों पर निर्भर हैं। इन चार रूपों - वन्न, गंध, रस और ओज - के साथ मिलकर, ये सभी आठ तत्व अविनिभाग रूप कहलाते हैं, जिसका अर्थ है अविभाज्य तत्व।

महाभूत रूप चार महान तत्व हैं। वे हैं पथवी या दृढ़ता, तेजो या तापमान, आपो या तरलता और वायो या गति या प्रतिरोध।

पथवी पृथ्वी तत्व है। यह वह प्रकृति है जो दृढ़ता, कठोरता या कोमलता को दर्शाती है, जो विज्ञान के दृष्टिकोण से परमाणुओं, अणुओं, यौगिकों और पदार्थों के अंतर्संबंधों के घनत्व और संगठन पर निर्भर करती है। शरीर में विद्यमान काया पसदा रूप के माध्यम से इसकी प्रकृति का अनुभव किया जा सकता है और पथवी को पदार्थों की कठोरता या कोमलता के रूप में अनुभव किया जा सकता है।

तेजो वह प्रकृति है जिसे शरीर द्वारा गर्माहट, ठंडक या तापमान के रूप में महसूस किया जा सकता है। यद्यपि तापमान एक शब्द है, तेजो की वास्तविक प्रकृति को शरीर द्वारा स्पष्ट रूप से महसूस किया जा सकता है। पारंपरिक अर्थों में, प्रत्येक पदार्थ का एक तापमान होता है जिसे शरीर द्वारा महसूस किया जा सकता है।

एपो वह प्रकृति है जो पदार्थों को एकजुट करती है।

- यह सामंजस्य है।
- यह प्रवाह क्षमता है,
- यह प्रसार क्षमता है,
- यह चिपचिपाहट है।
- यह परंपरागत अर्थों में पदार्थों की शुष्कता-गीली अवस्था है।

लेकिन अपो के वास्तविक स्वरूप को शरीर के माध्यम से अनुभव नहीं किया जा सकता। इसे केवल मन की इंद्रियों के माध्यम से ही अनुभव किया जा सकता है।

वायो वह प्रकृति है जो पदार्थों को एक साथ धकेलती या खींचती है।

- यह संपीड्यता दमनशीलता है।
- यह दबाव के बीच भी सहयोग प्रदान करना है।
- यह गति है।
- यह गति है।
- यह लचीलापन है।

वायो की वास्तविक प्रकृति को शरीर के माध्यम से महसूस किया जा सकता है।

यहां 5 पासाडा रूपा हैं।

1. चक्खुप्पासाद या आँख
2. sotappasada or ear
3. घनप्पसादा या नाक
4. जीवहप्पसाद या जीभ
5. कायप्पसाद या शरीर

इन पांच रूपों को पसदा रूप कहा जाता है। ये महाभूत रूपों का संग्रह हैं, जिनमें से प्रत्येक में अतिरिक्त गुण होते हैं। प्रत्येक रूप स्पष्ट रूप से अपना कार्य करता है।

चक्खुप्पसाद आँख है। लेकिन पारंपरिक अर्थों में आँख चक्खुप्पसाद नहीं है। चक्खुप्पसाद एक ऐसा रूप है जो दृश्य वस्तु को ग्रहण करने में सक्षम है। महाभूत रूप सहित कोई अन्य रूप दृश्य वस्तु को ग्रहण नहीं कर सकता, क्योंकि महाभूत रूप चक्खुप्पसाद नहीं है। चक्खुप्पसाद को हमारी आँखों से देखा नहीं जा सकता और न ही पाँचों इंद्रियों द्वारा इसका अनुभव किया जा सकता है। लेकिन यह एक वास्तविकता है और इसका अनुभव केवल मनोद्वार के माध्यम से ही किया जा सकता है। यही बात अन्य पसाद रूपों पर भी लागू होती है।

ये 5 रूप पसदा, आधार या वत्थु और द्वार का काम करते हैं।

7 गोकर रूप या विसय रूप हैं।

वे हैं

1. रूपा (वन्ना) या रंग
2. सद्दा या ध्वनि
3. गंध या महक
4. रस या स्वाद
5. फोथब्बा या स्पर्श इंद्रिय
6. पथवी या कठोरता कोमलता
7. तेजो या गर्माहट ठंडक
8. वायो या दबाव या गति

ये 7 रूप अरम्मन या वस्तु के रूप में कार्य करते हैं।

अब तक, 4 महाभूत रूप, 5 पसदा रूप और 7 गोचर रूप या 7 विषय रूप (पाथवी, तेजो और वायो नामक तीन रूपों को छोड़कर, 7 में से 4 गोचर रूप शेष हैं) कुल मिलाकर 13 परमत्थ रूप निर्धारित किए गए हैं।

दो भाव रूप हैं। वे हैं

1. itthattha bhava rupa and
2. purisatta bhava rupa.

ये स्त्रीत्व और पुरुषत्व हैं। ये रूप वास्तविकता हैं। लेकिन इन्हें केवल मनोद्वार से ही जाना जा सकता है, पंचद्वार से नहीं। ये दोनों कर्मजा एकम रूप हैं। अर्थात् इनका उद्भव केवल कर्मों से होता है, अन्य किसी कारण से नहीं। अतः अब तक 15 रूप हो चुके हैं।

एक रूप है जिसे हदय रूप कहते हैं। यह हदय वात का कार्य करता है। पंचविन्नन चित्त को छोड़कर सभी विन्नन चित्तों का आधार है, जब संबंधित सत्ता पंचवोकर भूमि में हो, यानी जहाँ सभी पाँच समुच्चय मौजूद हों। यह रूप भी केवल कर्म के कारण ही उत्पन्न होता है। अब तक 16 रूपों की व्याख्या हो चुकी है।

एक ऐसा रूप है जो सभी सह-अस्तित्ववान रूपों को सहारा देता है। इस रूप को जीवित रूप कहते हैं। इस जीवित रूप के बिना अन्य सभी रूप सजीवों के रूप में अस्तित्व में नहीं रह सकते। यह भी कर्म से ही उत्पन्न होता है। अब तक 17 रूप हो चुके हैं।

आहार रूप नामक एक रूप होता है। यह रूप-कालप नामक रूपों के समूह में सह-अस्तित्व में रहते हुए अन्य रूपों को सहारा देता है। इसे ओज भी कहा जाता है। अब तक 18 रूपों का वर्णन किया जा चुका है। इन सभी 18 रूपों को निप्पन्ना रूप कहा जाता है। ये चार कारणों में से एक या अधिक के प्रभाव में होते हैं, जिन्हें इस प्रकार कहा जाता है:

1. कम्मा,
2. चित्त,
3. उतु, और
4. अहारा.

दस परमत्थ रूप हैं। ये सभी किसी भी चीज़ के प्रभाव में नहीं हैं, बल्कि स्वयं अपने आप में विद्यमान हैं और ये सभी परमत्थ रूप हैं। वे विद्यमान हैं और सभी परमत्थ रूप हैं। वे इस प्रकार हैं:

- 1 pariccheda rupa,
- 2 vinatti rupas,
- 3 लाहुतादि रूपा, और
- 4 लाख रूपा।

परिच्छेद रूप वह रूप है जो महाभूत रूप को अलग करता है ताकि कालपों में महाभूत रूप आपस में न मिलें। यह एक खाली स्थान की तरह है। यह एक रिक्त अंतराल की तरह है। इसे कभी-कभी आकाश भी कहा जाता है। यह वास्तव में विद्यमान है और यह परमत्थ रूप है, लेकिन यह किसी भी बाहरी कारण से प्रभावित नहीं होता है।

दो प्रकार के विनाति रूप हैं: कायविनाति रूप और वाचिविनति रूप। कायविनाति रूप किसी सजीव प्राणी का वह हावभाव या क्रिया है जिसका कोई निश्चित अर्थ होता है, जबकि वाचिविनति एक ध्वनि है जो किसी सजीव प्राणी द्वारा उत्पन्न की जाती है और जिसका कोई निश्चित अर्थ होता है। यह केवल वाणी ही नहीं, बल्कि चेतना द्वारा उत्पन्न कोई भी ध्वनि हो सकती है। कायविनाति और वाचिविनति दोनों को चित्तज रूप कहा जाता है और ये विशुद्ध रूप से केवल चित्त द्वारा ही उत्पन्न होते हैं।

तीन प्रकार के लाहुतादि रूप होते हैं। ये रूपालहुता, रूपामुदुत और रूपकम्मन्नत रूप हैं। ये रूप की हल्कापन, कोमलता और अनुकूलनशीलता का प्रतीक हैं। ये चित्त, उतु और आहार के कारण उत्पन्न हो सकते हैं। ये कर्म के कारण कभी उत्पन्न नहीं होते। जब ये तीनों रूप रूपकलाप में मौजूद होते हैं, तो इनके साथ मौजूद सभी रूप हल्के, अधिक कोमल और अधिक अनुकूलनशील हो जाते हैं।

चार प्रकार के लक्खना रूप होते हैं। ये हैं उपचय रूप (प्रारंभिक अवस्था), सन्ति रूप (निरंतर अवस्था), जरात रूप (क्षय अवस्था) और अनिच्छुत रूप (अतिरिक्त अवस्था)। ये चारों लक्खना रूप अन्य रूपों के लक्षण हैं और कर्म, चित्त, उतु और आहार से अप्रभावित रहते हैं। इन दस रूपों को सामूहिक रूप से अनिप्पण रूप कहा जाता है, जबकि पूर्व के अठारह रूपों को निप्पण रूप कहा जाता है।

इसलिए, कुल मिलाकर 28 परमात्मा रूप हैं जो सभी वास्तविकताएं हैं और हमारी 6 इंद्रियों में से किसी एक द्वारा अनुभव की जा सकती हैं।

- रूपा या वन्ना का अनुभव केवल आंखों से ही होता है।
- सद्दा का अनुभव केवल कानों से ही होता है।
- गंध का अनुभव केवल नाक से ही होता है।
- रस का अनुभव केवल जीभ द्वारा ही होता है और
- महाभूत रूप के पथवि, तेजो, वायो तीन का बोध शरीर से ही होता है।

अन्य सभी रूप, अर्थात् 5 पसदा रूप और 16 सुखुम रूप या सूक्ष्म पदार्थ, केवल मन द्वारा ही अनुभव किए जा सकते हैं; अर्थात् 5 पसदा रूप और 16 सुखुम रूप को आंख, कान, नाक, जीभ और शरीर में से किसी के द्वारा भी कभी अनुभव नहीं किया जा सकता है।

सभी रूप लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोष और अमोह जैसे हेतुओं से रहित होते हैं और इन्हें अहेतुक कहा जाता है। रूप अपने कारणों या पच्चयों के साथ उत्पन्न होते हैं और इन्हें सप्पच्चय कहा जाता है। रूप चार आसव धर्मों के विषय हैं और इन्हें ससव कहा जाता है।

कर्म, चित्त, उतु और आहार, ये सभी रूप से उत्पन्न होने वाले गुणों को प्रभावित करते हैं, इसलिए रूप संखता कहलाते हैं। रूप संखरा लोक का हिस्सा हैं और ये उपादान या आसक्ति के विषय हैं, इसलिए रूप लोकीय कहलाते हैं। रूप वे स्थान हैं जहाँ काम तन्हा हमेशा निवास करता है और आसक्त होता है, इसलिए इन्हें कामवाचारा कहा जाता है।

रूप केवल वस्तुएँ हैं, वे किसी वस्तु को ग्रहण नहीं कर सकतीं और न ही वस्तु का ज्ञान प्राप्त कर सकती हैं। इन्हें अनारम्मन कहा जाता है। रूप न तो हटाए जा सकते हैं और न ही मिटाए जा सकते हैं, इसलिए इन्हें अप्पहतब्बा कहा जाता है। यद्यपि स्वरूप एक ही है, फिर भी रूप अनेक प्रकार के होते हैं।

5 पसादा रूप प्राणियों के अंदर रहते हैं और उन्हें अज्जत्तिका रूप कहा जाता है। अन्य 23 रूप को बहिरा रूप कहा जाता है। 5 पसादा रूप पंच वत्थु हैं और हदय रूप हदय वत्थु हैं। ये 6 रूप वत्थु रूप हैं। अन्य 22 रूप अवत्थु रूप हैं।

5 पसादा रूप वस्तुओं या अराममानों के लिए द्वार हैं और इसी तरह 2 विनत्ती रूप भी हैं और इन 7 रूपों को द्वार रूप कहा जाता है। अन्य 21 रूप को अदवारा रूप कहा जाता है। 5 पसादा रूप इन्द्रिय रूप हैं। 2 भाव रूप इंद्रिय रूप भी हैं और जीवित रूप भी इंद्रिय रूप हैं। इन 8 रूपों को इंद्रिय रूप कहा जाता है और अन्य 20 रूपों को अनिंद्रिय रूप कहा जाता है।

5 पसदा रूप और 7 विषय रूप या 7 गोचरा रूप गूढ़ रूप हैं और इन्हें ओलारिका रूप कहा जाता है। ये लगभग समझने योग्य और समझने के करीब होते हैं। इन्हें शांतिके रूप भी कहा जाता है। ये 12 रूप स्पर्श से संबंधित हैं और इन्हें सप्पतिघा रूप कहा जाता है। अन्य 16 रूप सुखुम रूप या सूक्ष्म पदार्थ कहलाते हैं। इन्हें दूर रूप भी कहा जाता है क्योंकि ये आसानी से समझने योग्य नहीं होते हैं। और इन्हें अस्पृश्य रूप कहा जाता है क्योंकि इन्हें छुआ नहीं जाता है।

कर्मों के कारण उत्पन्न होने वाले रूप जैसे:

- 4 महाभूत रूप,
- 5 pasada rupas,
- 4 (7) gocara rupas,
- 2 भाव रूप,
- 1 जीवित रूप,
- 1 हदाया रूपा, और
- 1 आहार रूप को उपदिन्न रूप कहा जाता है।

अन्य 10 रूप कर्म से उत्पन्न नहीं होते और इन्हें अनुपदिन्न रूप कहा जाता है। केवल रूपारम्मन या वन्न/रूप ही प्रत्यक्ष रूप है और इसे सानिदासन रूप कहा जाता है, जबकि अन्य 27 रूप अनिदासन रूप कहलाते हैं। 5 पाषाण रूप गोचरग्गाहिक रूप कहलाते हैं क्योंकि वे अरम्मन का संचार कर सकते हैं। अन्य 23 रूप अगोरग्गाहिक रूप कहलाते हैं।

वन्ना, गंध, रस, ओज या आहार, पथवि, तेजो, वायो और अपो हमेशा एक साथ मौजूद रहते हैं और उन्हें अविनिभोग रूप कहा जाता है और अन्य 20 रूपों को विनिभोग रूप कहा जाता है।

कुछ कर्म ऐसे होते हैं जो कर्मज रूप उत्पन्न कर सकते हैं। ये कर्म इस प्रकार हैं:

- 12 अकुसला कम्मा,
- 8 कामवचरा कुसल कम्म, और
- 5 rupavacara kusala kamma.

कुल मिलाकर 25 कर्म, कर्मज रूप उत्पन्न कर सकते हैं। 89 चित्तों में से 10 पंचविन्नन चित्त और 4 अरूप विपाक चित्त रूप उत्पन्न नहीं करते। शेष 75 चित्त हैं जो रूप उत्पन्न कर सकते हैं। सभी सत्तों में पतिसंधि चित्त और सभी अरहतों में चुतिचित्त रूप उत्पन्न नहीं करते। अन्य 75 चित्त चित्तज रूप उत्पन्न करते हैं। कुछ चित्त इरियपथ या शारीरिक मुद्राओं को सहारा देने वाले रूप उत्पन्न करते हैं। कुछ चित्त विनत्ती रूप उत्पन्न करते हैं और कुछ मुस्कुराने का कारण बनते हैं।

अज्जत्तिका उत्तु है जो सीता तेजो और उन्नहा तेजो पतिसंधि के साथ उत्पन्न होती है। ये यूटू या तेजो जब बहिद्धका तेजो के संपर्क में होते हैं तो पतिसंधि के ठिकाने या चेतना को जोड़ने से शुरू होने वाले यूटू या तेजो के उत्पन्न होने का कारण बन सकते हैं। रूप कल्प हैं। सबसे

सरल रूप शुद्धत्थ रूप कल्प है। ये अविभाज्य रूप या अविनिभोग रूप का संग्रह हैं। उस कल्प में आहार या ओज, आहार रूप के उत्पन्न होने का मुख्य कारण है। इस अज्जत्तिका आहार को बहिद्धिका आहार के साथ संयोजित होना पड़ता है और ये दोनों अहाराजा रूप की उत्पत्ति का कारण बनते हैं।

28 रूप में से चक्खु, सोता, घाना, जिव्हा, काया, इत्थि भाव, पुन्भव, हदय और जीवित रूप कुल मिलाकर 9 रूप केवल कर्म के कारण होते हैं। कायाविनत्ती और वासिविनात्ती रूप पूरी तरह से चित्त के कारण होते हैं। सददा यूटू या सिट्टा के कारण हो सकता है। रूपलहुता, रूपमुदुता, और रूपकम्मन्नता कर्म के कारण नहीं होते हैं। ये तीनों सिट्टा, यूटू और अहारा के कारण हो सकते हैं। पथवि, तेजो, वायो, अपो, वन्ना, गंध, रस, आहार और परिच्छेद कम्म, चित्त, उत्तु या आहार में से किसी के कारण हो सकते हैं। 4 लक्खना रूप कम्म, चित्त, उत्तु और आहार में से किसी के कारण नहीं होते हैं। इन चार रूपों को ना कुतोची रूपा कहा जाता है।

यद्यपि 28 परमत्थ रूप हैं, वे एकाकी रूप से प्रकट नहीं होते। कम से कम कुछ रूप एक साथ प्रकट होते हैं और एक साथ ही लुप्त हो जाते हैं। वे महाभूत रूपों में प्रकट होते हैं और रूपकलाप नामक एक रूप में सह-अस्तित्व में रहते हैं। 21 रूपकलाप हैं। इनमें से 9 कम्मज रूपकलाप हैं, 6 चित्तज, 4 उत्तज और 2 आहारज रूपकलाप हैं।

Kammaja rupa kalapas are:

1. चक्खुदासक,
2. sotadassaka,
3. घनदास्सका,
4. जीवहदस्सका,
5. kayadassaka,
6. ithibhavadassaka,
7. पुन्भवदस्सका,
8. वत्थुदासक, और
9. जीवितनव कलाप।

चक्खुदासका कल्प में, 8 अविनिभोग रूप, जीवित रूप और चक्खु पसादा रूप कुल मिलाकर 10 रूप एक साथ उत्पन्न होते हैं। अन्य कम्माजा कल्पस समान हैं और केवल कक्खू को उनके संवाददाता रूपा से बदलने के लिए हैं। जीवितानव कल्प 8 अविनिभोग रूप और जीवित रूप का एक संयोजन है।

6 चित्तजा रूप कलाप इस प्रकार हैं:

1. शुद्धत्थ कल्प जिसमें केवल 8 अविनिभोग रूप शामिल हैं,
2. कायाविनत्तिनव कल्प जिसमें 8 रूप और कायाविनत्ती रूप शामिल हैं,
3. वासिविनात्ती सद्दादस्साका कल्प जो 8 रूप से बना है, वासिविनाट्टी और साड्डा,
4. लहुतादि एकादशका कल्प जो 8 रूप और 3 लहुतादि रूप का संयोजन है।
5. कायविनत्ति लहुतादि द्वादस्सा कल्प जिसमें 8 रूप, 3 लहुतादि और कायविनत्ति रूप शामिल हैं।
6. वासिविनात्ती सद लाहुतादि तेरसका कल्प जिसमें 8 रूप, 3 लाहुतादि, वासिविनात्ती और साड्डा रूप शामिल हैं।

4 उत्तुजा कलाप इस प्रकार हैं:

1. शुद्धत्था कलापा,
2. सद्दनव कलापा,
3. लहुतादिएकदस्साक कल्प जिसमें 8 रूप और 3 लहुतादि रूप शामिल हैं, और
4. सद्दा लहुतादि द्वादस्साक कल्प जिसमें 8 रूप, 3 लहुतादि रूप और सद्दा रूप शामिल हैं।

दो अहाराजा रूप कलाप इस प्रकार हैं:

1. सुद्धत्थ रूप लकापा और
2. लहुतादिएकदस्साक रूप कल्प जिसमें 8 अविभाज्य रूप और 3 लहुतादि रूप शामिल हैं।

4 उतुजा रूप कल्पों से, शुद्धत्थ रूप कल्प और सद्दानव रूप कल्प प्राणियों या सत्त्वों के बाहर उत्पन्न हो सकते हैं। अन्य सभी रूप कल्प केवल अज्जत्तिका के रूप में उत्पन्न होते हैं।

अध्याय 4 - निर्वाण
या पूर्ण शांति
चित्त, चेतसिका, रूप और निर्वाण परम सत्य हैं। इनके अलावा कोई और चीज सत्य नहीं है। केवल ये चार ही अपने परम अर्थ में सत्य हैं और किसी भी समय और किसी भी स्थान पर ये सदा सत्य रहते हैं। पिछले पृष्ठों में चित्त, चेतसिका और रूप पर विस्तार से चर्चा की गई है। एक चौथा परम सत्य भी है, जो है निर्वाण।

निब्बाना शब्द निर्वाण से लिया गया है। नि का अर्थ है निक्खान्त, यानी वान या बंधन से मुक्त होना। वान वह धर्म है जो संसार में विभिन्न जीवों को बांधता है। अतः निब्बाना का अर्थ है संसार के बंधन से मुक्त होना। यह बंधन तन्हा है।

यद्यपि निर्वाण का स्वरूप एक ही है, फिर भी इसके दो रूप माने जाते हैं: सौपदिशेष निर्वाण और अनुपदिशेष निर्वाण। सौपदिशेष निर्वाण वह अवस्था है जब सत्त अभी संसार में होते हैं और जीवित होते हैं। यह निर्वाण केवल अरहतों या अनागमों में निरोध समापत्ति की अवस्था में ही विद्यमान होता है। निरोध का अर्थ है विलीन होना और समापत्ति का अर्थ है किसी अवस्था में होना। अनुपदिशेष निर्वाण अरहतों की चुति चित्त के ठीक बाद की अवस्था है।

अरहतों के चुति चित्त के तुरंत बाद, कम्मज रूप, चित्तज रूप और आहारज रूप का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। सत्ताओं से निर्वाण की ओर अग्रसर उस अवस्था को अनुपदिशेष निर्वाण कहा जाता है, क्योंकि उसमें तथाकथित सत्ता का कोई अंश नहीं होता, अर्थात् चित्त, चेतसिका, कम्मज रूप, चित्त रूप और आहारज रूप का कोई अस्तित्व नहीं होता। जो उत्तुज रूप शेष रह जाता है, वह अन्य बहिद्धिक रूपों के समान होता है और किसी भी सत्ता से जुड़ा नहीं होता। अतः ऐसा निर्वाण पूर्ण और परम शांति का प्रतीक है। यह वह अवस्था है जिसे सभी बौद्ध अपने पच्चीम भाव या अंतिम जीवन के बाद प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

चिंतन के दृष्टिकोण से, निर्वाण तीन प्रकार के होते हैं: सुन्नत निर्वाण, अनिमित्त निर्वाण और अप्पनिहित निर्वाण।

सुन्नत निर्वाण का अर्थ है वह निर्वाण जो तन्हा उत्पन्न होने के लिए अरम्मना से मुक्त हो। परम अर्थ में वहाँ कोई अत्ता या अहंकार नहीं होता। निर्वाण अत्तजीव, किसी भी आत्मा या किसी भी जीव से मुक्त होता है। अतः, क्योंकि वह जीव, आत्मा या किसी भी चीज से मुक्त है, निर्वाण को सुन्नत निर्वाण या शांति की शून्यता कहा जाता है। जब आर्य ने अनात्म के रूप में धम्म का चिंतन किया, तब उन्होंने मार्ग चित्त उत्पन्न होने पर जो निर्वाण देखा, उसे सुन्नत निर्वाण कहा जाता है। क्योंकि उन्होंने अनात्म के रूप में देखा, और क्योंकि वहाँ कोई अत्ता नहीं है और वह अत्ता से मुक्त है, इसलिए उन्होंने जो निर्वाण देखा, उसे सुन्नत निर्वाण कहा जाता है।

अनिमित्त निर्वाण का अर्थ है राग, क्लेश और आधारों एवं कारणों से मुक्त निर्वाण। जब आर्य टोबे मार्ग चित्त में धम्म का अवलोकन कर रहे थे, यदि उन्होंने धम्म को अनित्या के रूप में देखा, तो उन्होंने जो निर्वाण देखा, उसे अनिमित्त निर्वाण कहा जाता है। क्योंकि धम्म में कोई नित्या या स्थायी निमित्त नहीं है। अतः उनका निर्वाण अनिमित्त निर्वाण है।

अप्पनिहित निर्वाण का अर्थ है निर्वाण के लिए तन्हा, राग, क्लेश आदि की तरह लालसा न करना। जब आर्य चित्त भाव से धम्म का अवलोकन कर रहे हों, और यदि वे धम्म को दुःख या पीड़ा के रूप में देखें, तो उन्हें जो निर्वाण प्राप्त होता है, उसे अप्पनिहित निर्वाण कहते हैं। क्योंकि निर्वाण तन्हा, राग और किसी भी प्रकार के दोषों से मुक्त होता है। यद्यपि इन पर चिंतन किया जाता है, फिर भी अपने स्वरूप और परम अर्थ में केवल एक ही निर्वाण होता है।

निर्वाण परम शांति है। इस शांति को अग्नि या पीड़ा की अनुपस्थिति से समझा जा सकता है। जब निर्वाण की अवस्था में न हों, तब सत्त संखत धम्म के क्षेत्र में होते हैं। इसका अर्थ है कि वे सभी कामलोक, रूपलोक और अरूपलोक में विलीन हो जाते हैं।

जब तक सत्ताएं इन 31 लोकों में विद्यमान रहेंगी, तब तक वे अपने संसार में रहेंगी और विभिन्न प्रकार के कष्टों से ग्रस्त रहेंगी। इन कष्टों को अग्नि कहा जाता है। जब सभी अग्नियां पूर्णतः बुझ जाएंगी, यानी अग्नि की अनुपस्थिति, जो कि गर्म और अप्रिय होती है, पूर्ण शांति और कष्ट से मुक्ति प्रदान करेगी। इसके विपरीत, इसकी अनुपस्थिति को परम शांति के रूप में अनुभव किया जा सकता है, जबकि इसकी उपस्थिति गर्म होती है, जो बेचैनी और अशांति उत्पन्न करती है।

निब्बाना रूप धम्म नहीं है. यह नाम धम्म है. निब्बान कोई खंड या समुच्चय नहीं है। लेकिन निब्बान अरम्मना या मन की वस्तु हो सकता है। निब्बाना धम्मरम्मना है। निब्बाण आयतन हो सकता है। यह धम्मायतन है. आयतन धम्म या प्रकृति हैं जो अराम्मन या वस्तु या द्वार

या द्वार होने के कारण चित्त की उत्पत्ति का कारण हैं। चित्त, सीतासिका और रूप 18 प्रकार के धातु या धम्म तत्वों से बने हैं। निब्बाण धम्म धातु हो सकता है। लेकिन निब्बान संखत धातु नहीं है जैसा कि चित्त, सीतासिका और रूप के मामलों में होता है। निब्बाण असंखत् धातु है।

संखता धातु वे हैं जिनका उद्भव और अस्तित्व चार कारणों में से किसी एक से प्रभावित होता है, अर्थात् कर्म, चित्त, उतु और आहार। निर्वाण इन चारों कारणों से प्रभावित नहीं होता। निर्वाण असंखता धातु है। यह परम शांति है और किसी भी प्रकार के दुख या अग्नि से मुक्त है। अतः निर्वाण ही सभी बौद्धों का लक्ष्य है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 5
हटू निंग द्वारा

अध्याय 5 - हेतु पच्चयो

या मूल स्थिति
हेतु पच्चया या मूल अवस्थाएँ पत्थाना पच्चया का हिस्सा हैं। ये पत्थाना धम्म में पाई जाने वाली 24 अवस्थाओं में से एक हैं। छह मूल या छह हेतु हैं। ये सभी छह मूल या हेतु चेतसिका धम्म हैं। ये हैं लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोसा और अमोह।

लोभ, दोष और मोह को अकुशल हेतु कहा जाता है, और अलोभ, दोष और मोह को कुशल हेतु कहा जाता है। ये तीनों हेतु, यदि अभ्यकत धम्म के साथ उत्पन्न होते हैं, तो अभ्यकत हेतु कहलाते हैं। लोभ को तन्हा, उपादान, समुदय आदि नामों से भी जाना जाता है। मोह को कभी-कभी अविज भी कहा जाता है। अलोभ को कभी-कभी दान या अर्पण के रूप में संदर्भित किया जाता है, लेकिन यह अनासक्ति है। दोष का अर्थ है करुणा या प्रेमपूर्ण दया। मोह, पन्निन्द्रिय चेतसिका है और इसे केवल पन्ना कहा जाता है, और कभी-कभी इसे विज भी कहा जाता है।

चेतना की 89 अवस्थाएँ होती हैं। इन 89 चित्तों में से 18 चित्तों का कोई हेतु या मूल तत्व नहीं होता। इन्हें अहेतुका चित्त कहा जाता है और ये मूल तत्व से अप्रभावित होते हैं। ये 18 चित्त हैं: 10 पंचविन्नन चित्त (जिनमें से 5 अकुशल और 5 कुशल मूल के हैं), 2 सम्पातिचना चित्त (जिनमें अकुशल और कुशल मूल की चेतना पुनः ग्रहण होती है), 2 उपेक्षा सन्तिरण चित्त (जिनमें अकुशल और कुशल मूल की चेतना होती है), और 1 कुशल सोमनस्सा सन्तिरण चित्त। ये 15 चित्त विपाक चित्त हैं और इन्हें अहेतुका विपाक चित्त कहा जाता है।

3 अहेतुका किरिया चित्त हैं। वे हैं पंचद्वारवज्जन चित्त, मनोद्वारवज्जन चित्त, और सोमनस्सा हसीतुप्पदा चित्त। 15 अहेतुका विपाका सीतास और 3 अहेतुका किरिया सीतास मूल स्थिति द्वारा समर्थित नहीं हैं। ये 18 चित्त अहेतुका चित्त हैं जबकि अन्य सभी चित्त सहेतुका चित्त कहलाते हैं। 71 सहेतुका चित्त हैं। वे 2 एकहेतुका चित्त, 22 द्विहेतुका चित्त, और 47 तिहेतुका चित्त हैं।

ये सभी 71 सहेतुका चित्त जड़ अवस्था द्वारा समर्थित हैं और इस अवस्था को हेतु पच्चया कहा जाता है। हेतु पूरे वृक्ष की जड़ का काम करता है। वृक्ष की जड़ पूरे वृक्ष को जल प्रदान करती है और उसे पोषण देती है। वृक्ष की तरह, नाम रूप का संपूर्ण वृक्ष उक्त 6 हेतुओं द्वारा समर्थित है। इन 6 हेतुओं की उपस्थिति से तना (चित्त), सभी शाखाएँ (चेतसिका) और सभी पत्तियाँ (रूप धम्म) को सहारा मिलता है।

एकाहेटुका सिट्टा 2 मोहा मुला सिट्टा हैं। इन 2 चित्तों में, कोई अन्य हेतु नहीं बल्कि केवल मोह हेतु है। इसलिए इन चित्तों को एकाहेतुका चित्त कहा जाता है। एक का अर्थ है एक और वह एक हेतु मोह है। 2 मोहा मूल चित्त हैं उपेक्खा समागतम् उद्धाच्च संपायुत्त चित्त और उपेक्खा सहगतम् विकिसिच्च संपायुत्त चित्त। जड़ मोह हेतु है। तना उधक्का चित्त और विकिसिचा चित्त है।

नाम रूप के संपूर्ण वृक्ष में चेतसिका शाखाएँ हैं। उद्दच्च चित्त में 1. फस्सा (संपर्क), 2. वेदना (भावना), 3. चेतना (संकल्प), 4. सन्ना (बोध), 5. एकाग्गत (एकाग्रचित्तता), 6. जीवंतिन्द्रिय (मानसिक जीवन), 7. मानसिक (ध्यान), 8. वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), 9. विचार (निरंतर अनुप्रयोग), 10. वीर्य (प्रयास), 11. अधिमोक्ख (निर्णयशीलता), 12. अहिरिका (निर्लज्जता), 13. अनोत्तप्पा (निडरता),

14. उद्दच्च (प्रसार) शामिल हैं। उद्दच्च वृक्ष में मूल मोह सहित कुल 15 चेतसिकाएँ हैं। पत्तियाँ चित्तज रूप, कम्मज रूप हैं जहाँ उद्दच्च चित्त को निर्भर रहना पड़ता है, जो कि हदय वस्तु है, और उत्तज रूप और आहारज रूप भी वहाँ मौजूद हैं।

विचिच्च वृक्ष में, एकल जड़ मोह है। तना विचिच्च चित्त है। इसमें चेतसिका शाखाएँ हैं। विचिच्च चित्त में, क्योंकि यह किसी भी चीज़ का निर्णय नहीं कर सकता, अधिमोक्खा उत्पन्न नहीं होता। इसलिए उद्धच्च चित्त में 14 चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं। लेकिन विचिच्च चित्त में एक अतिरिक्त चेतसिका विचिच्च चेतसिका होती है। इस प्रकार विचिच्च वृक्ष में कुल 15 चेतसिकाएँ होती हैं। जड़ मोह है। तना विचिच्च चित्त है। शाखाएँ 14 चेतसिकाएँ हैं (मोह सहित 15 चेतसिकाएँ होंगी)। पत्तियाँ चित्तज रूप, कम्मज रूप, हद्य वस्तु, उत्तुज रूप और आहारज रूप हैं। दोनों वृक्षों में मोह प्रमुख है। मोह उन सभी धर्मों के मूल सिद्धांतों का समर्थन करता है जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। इस सिद्धांत को मूल सिद्धांत कहा जाता है। यही हेतु पच्चया है।

द्विहेतुका चित्त में, यानी दो मूल चेतना में, छह हेतुओं (लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोसा और अमोह चेतसिका) से तीन संभावित मूल संयोजन होते हैं। यद्यपि छह हेतु होते हैं, वे यादृच्छिक रूप से उत्पन्न नहीं होते, बल्कि परिस्थितियों के अनुसार उत्पन्न होते हैं, इसलिए द्विहेतुका चित्त में हेतुओं के केवल तीन ही संभावित संयोजन होते हैं।

पहला संयोजन लोभ चित्तों में देखा जाता है। चूंकि सभी अकुशल चित्त मोह चेतसिका द्वारा निर्देशित होते हैं, इसलिए सभी लोभ चित्तों का मूल मोह होता है। लोभ चित्त होने के कारण इनका दूसरा मूल लोभ होता है। इसी प्रकार द्विहेतुक चित्तों में दो मूल या हेतु होते हैं: लोभ चेतसिका और मोह चेतसिका। आठ लोभ चित्त हैं और इन सभी के बारे में विस्तृत जानकारी उन पृष्ठों में पहले दिए गए चित्त खंड में दी गई है। आठों लोभ मूल चित्त द्विहेतुक चित्त या दोहरी मूल चेतना हैं।

दूसरा संयोजन पतिघा सम्पायुत्त चित्तों के मामले में देखा जा सकता है, यानी सरल शब्दों में कहें तो दो दोष चित्त। चूंकि सभी अकुशल चित्त मोह चेतसिका द्वारा निर्देशित होते हैं, इसलिए ये दो दोष मूल चित्त भी मोह चेतसिका द्वारा निर्देशित होते हैं। अतः इन दो चित्तों में मोह चेतसिका और दोष चेतसिका मूल धम्म या हेतु के रूप में विद्यमान हैं। ये दोनों दोष मूल चित्त द्विहेतुक चित्त हैं, अर्थात् दोहरी जड़ वाली चेतना। इस अनुच्छेद और उससे ऊपर के अनुच्छेद की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि किसी भी अकुशल चित्त में लोभ चेतसिका और दोष चेतसिका कभी भी एक ही चित्त में एक साथ उत्पन्न नहीं हो सकते।

अकुशल चित्तों में, 8 लोभ मूल चित्त और 2 दोष मूल चित्त द्विहेतुक चित्त होते हैं। अतः कुल 10 अकुशल द्विहेतुक चित्त होते हैं। यदि इनमें से कोई एक चित्त मरण काल में उत्पन्न होता है, तो वह मरण काल में उत्पन्न होने वाले जवन चित्त के रूप में कार्य करता है। जैसे ही वह इस रूप में कार्य करता है, उसके साथ चेतना चेतसिका भी उत्पन्न हो जाती है। वह चेतना चेतसिका भविष्य के लिए कर्म बन जाती है। मृत्यु चित्त या मरण चेतना के बाद, क्योंकि अभी भी दोष मौजूद होते हैं और मरण काल में उत्पन्न होने वाले जवन जो क्रियात्मक नहीं थे और जो अकुशल थे, अर्थात् द्विहेतुक चित्त, मृत्यु चित्त के तुरंत बाद संपर्क चेतना या पतिसंधि चित्त उत्पन्न होती है।

वह पतिसंधि चित्त, उन दस अकुशल चित्तों का परिणाम स्वरूप प्राप्त होने वाला संगत विपाक चित्त होगा। यह निश्चित रूप से उपेक्षा सहा गतम अकुशल सन्तिरण चित्त होगा। इस पतिसंधि या पुनर्जन्म को अहेतुक पतिसंधि कहा जाता है और यह अपय भूमियों के सत्तों का चित्त है, अर्थात् निरय या नरक लोक, तिरच्छन्न या पशु लोक, पितृ लोक या भोगी लोक और असुरकाय या राक्षस लोक। अकुशल प्रतिबद्धता निश्चित रूप से अकुशल परिणाम या अकुशल विपाक देती है।

तीसरा संयोजन अलोभ चेतसिका और आदोसा चेतसिका है। यह संयोजन 12 नाना विपयुत्त कामवाचार सहेतुका महाकुसला चित्तों में देखा जा सकता है। चूंकि ये कुसला चित्त हैं, इसलिए आदोसा चेतसिका द्वारा जड़ित होने के कारण इनमें आघात पहुंचाने वाला स्वभाव नहीं होता है और न ही इनमें लोभ चेतसिका की तरह प्रबल आसक्ति होती है। इसका कारण यह है कि ये अलोभ चेतसिका द्वारा जड़ित होते हैं। लेकिन सभी 12 द्विहेतुका चित्तों में मोह या पन्निन्द्रिय चेतसिका उत्पन्न नहीं होती है क्योंकि पन्ना के उत्पन्न होने की कोई शर्त नहीं होती है। इसलिए सभी 12 कुसला नाना विपयुत्त चित्त द्विहेतुका चित्त हैं।

मृत्युकाल में, यदि इन बारह नाना सम्पायुत्त चित्त में से कोई एक मरण असन्न जवान चित्त के रूप में कार्य करता है, तो वह कर्म विपाक चित्त को जन्म देगा, जो मृत्युकाल में उत्पन्न होने वाले द्विहेतुक कुशल चित्त के अनुरूप विपाक चित्त होगा। तब अगला जीवन द्विहेतुक पतिसंधि चित्त से शुरू होगा। यह चार महाविपाक चित्त में से एक होगा। यदि यह पतिसंधि है, तो संपूर्ण जीवन द्विहेतुक भावांग चित्त होगा। ऐसे व्यक्ति में, ध्यान चित्त, मार्ग चित्त और फल चित्त कभी उत्पन्न नहीं हो सकते, चाहे वे जीवन भर, चाहे 30 वर्ष या उससे अधिक समय तक, कितना भी प्रयास करें।

इस प्रकार, 10 अकुशल द्विहेतुक चित्त और 12 कुशल द्विहेतुक चित्त हैं, कुल मिलाकर 22 द्विहेतुक चित्त हैं। ये सभी 6 हेतुओं या जड़ों में से 2 द्वारा जड़ित हैं। हम यहाँ हेतुओं या जड़ों (चेतसिका), तने (द्विहेतुक चित्त), शाखाओं (संबद्ध चेतसिका) और पत्तियों (चित्तज रूप, कम्मज रूप, आहारज रूप और उत्तुज रूप) से निर्मित तीन अलग-अलग प्रकार के धम्म वृक्ष देख सकते हैं।

लोभ वृक्ष में, जड़ें मोह और लोभ चेतसिक होती हैं। तना आठ लोभ मूल चित्तों में से एक है और शाखाएँ उनसे संबंधित चेतसिक होती हैं, तथा पत्तियाँ रूप होती हैं जो इन सभी से जुड़ी होती हैं।

तने वाला वृक्ष 1. सोमनास्सा सह गतं दिट्ठि गता संपयुत्तम असंखरिका चित्त, जड़ें मोह और लोभा सीतासिका हैं। शाखाएँ 13 अन्नसामना चेतसिक हैं अर्थात् 1)फस्सा, 2) वेदना, 3) सीतान, 4) सन्ना, 5) एकगगत, 6) जीवितिन्द्रिय, 7) मनसिररा, 8) विटक्का, 9) विकार, 10) वीर्य, 11) चंदा, 12) अधिमोक्खा, और 13) पिति और 4 अकुसाला साधरण चेतसिका यानी मोहा, अहिरिका, अनोत्प्पा, और उधक्का और 3 में से 2 लोटारी यानी लोभा सिटासिका और दिट्ठी सिटासिका। कुल 19 चेतसिकाएँ हैं (13 अन्नसमना, 4 अकुशल साधारण और 2 लोटारी)। मोह और लोभ जड़ हैं, अन्य 17 चेतसिकाएँ उसी लोभ वृक्ष की शाखाएँ हैं। पत्तियाँ विभिन्न रूप हैं जिनसे ये उत्पन्न होती हैं।

तने वाले लोभा वृक्ष में 2. सोमनासा सह गतम् दिट्ठि गता संपायुत्त ससंखारिका चित्त, 2 अतिरिक्त शाखाएँ होंगी जो थिन सीतासिका और मिद्धा सीतासिका हैं क्योंकि चित्त को बाहरी प्रभावों से प्रेरित करने की आवश्यकता होती है। इस चित्त में 21 सीतासिक होंगे। चूँकि 2 जड़ें हैं, 19 शाखाएँ के रूप में काम करेंगी। तने वाले लोभ वृक्ष में 3. सोमनास्सा सह गतम् दिट्ठि गता विप्पयुत्त असंखरिका चित्त, दित्थि चेतसिका को मन चेतसिका से बदल दिया जाता है। तने वाले लोभ वृक्ष में 4. सोमनास्सा सह गतं दिट्ठि गता विपयुत्त ससंखारिका चित्त, दिट्ठी को मन से बदल दिया जाता है और थिना और मिद्धि को जोड़ा जाता है।

तने वाले लोभ वृक्ष में 5. उपेक्ख सहा गतं दिट्ठि गता संपयुत्तम असंखरिका चित्त, मोहा और लोभा सीतासिका सहित कुल 18 सीतासिकाएं उत्पन्न होती हैं। चूंकि यह चित्त उपेक्खा वेदना या समभाव भावना से जुड़ा है, इसलिए 13 अन्नसमाना चेतसिका की पिटी उत्पन्न नहीं होती है। 12 अन्नसमाना सीतासिकाएं होंगी। 4 अकुसाला साधरण चित्त और लोभा और दिट्ठी को मिलाकर कुल 18 सीतासिकाएं होंगी। लोभा और मोह यहां जड़ों के रूप में काम करते हैं। अत: अन्य 16 चेतसिकों को शाखाएँ माना जा सकता है।

तने वाले लोभ वृक्ष में 6. उपेक्खा सहा गतम् दिट्ठि गता संपायुत्त ससंखारिका चित्त, थिना सिटासिका और मिद्धा सिटासिका भी उत्पन्न होती हैं और कुल 20 सिटासिकाएँ होंगी। 2 जड़ के रूप में जबकि 18 शाखाओं के रूप में कार्य करते हैं।

लोभ वृक्ष में, जिसके तने का नाम 7. उपेक्खा सहा गतम दित्थी गता विप्पयुत्त असंखारिका चित्त है, दित्थी चेतसिका को मन चेतसिका से प्रतिस्थापित किया गया है। अतः दित्थी और मन सह-अस्तित्व में नहीं रह सकते। इस वृक्ष में 18 चेतसिकाएँ होंगी, जिनमें से 2 मूल और 16 शाखाएँ हैं।

तने वाले लोभ वृक्ष में 8. उपेक्खा सह गतं दिट्ठि गता विप्पयुत्त ससंखरिका चित्त, थिन सिटासिका और मिद्धा सिटासिका के उत्पन्न होने के कारण कुल 20 सिटासिकाएँ होंगी, 2 जड़ें हैं और 18 उस लोभ वृक्ष की शाखाओं के रूप में काम करती हैं।

डोसा के पेड़ में तने 1.डोमनस्सा सह गतं पतिघा संपयुत्तम असंखरिका चित्त के साथ, 12 अन्नसामना सीतासिका उत्पन्न होती हैं। दोसा चित्त में पिटि कभी उत्पन्न नहीं होती। 4 अकुसाला साधरण चेतसिका मोह, अहिरिका, अनोत्प्पा, और उधक्का भी उत्पन्न होते हैं। 16 सीतासिका होंगी। दोसा सीतासिका के साथ कुल 17 सीतासिका होंगी। उनमें से 2 मोहा और डोसा जड़ के रूप में काम करते हैं जबकि अन्य 15 सीतासिक शाखा के रूप में काम करते हैं।

दोसा वृक्ष में, जिसके तने का सूत्र है (2. domanassa saha gatam patigha sampayuttam sasankharika citta), दो अतिरिक्त चेतसिकाएं उत्पन्न होती हैं जिन्हें थिना और मिद्धा कहा जाता है। इस प्रकार कुल 19 चेतसिकाएं होंगी, जिनमें से 2 जड़ के रूप में तथा अन्य 17 चेतसिकाएं उस दोसा वृक्ष की शाखाओं के रूप में कार्य करती हैं।

यदि दोष वृक्ष ईर्ष्या का एक प्रकार है, तो एक अतिरिक्त चेतसिका उत्पन्न होती है। यह चेतसिका ईर्ष्या या जलन है। उस दोष वृक्ष में कुल 18 चेतसिकाएँ होंगी, जिनमें से 2 जड़ें और 16 शाखाएँ होंगी। यदि दोष वृक्ष में ससंखारिका तना है, तो चित्त, थिन और मिद्धा भी उत्पन्न होते हैं और कुल 20 चेतसिकाएँ होंगी, जिनमें से 2 जड़ें और 18 शाखाएँ होंगी।

यदि दोष वृक्ष कंजूसी का प्रतीक है, तो एक अतिरिक्त चेतसिका उत्पन्न होती है। यह चेतसिका मच्छरीय या कंजूसी कहलाती है। इस मच्छरीय दोष वृक्ष में कुल 18 चेतसिकाएँ होती हैं, जिनमें मोह और दोष चेतसिकाएँ जड़ का काम करती हैं और अन्य 16 चेतसिकाएँ शाखाओं का काम करती हैं। यदि मच्छरीय दोष वृक्ष का तना संसंखरिका है, तो उसमें 20 चेतसिकाएँ होती हैं, जिनमें 2 जड़ और 18 शाखाएँ होती हैं।

यदि दोष वृक्ष पश्चाताप का एक प्रकार है, तो एक अतिरिक्त चेतसिका उत्पन्न होती है। यह चेतसिका कुक्कुच्च या पश्चाताप कहलाती है। इस कुक्कुच्च दोष वृक्ष में कुल 18 चेतसिकाएँ होती हैं, जिनमें से 2 जड़ और 16 शाखाएँ होती हैं। यदि कुक्कुच्च दोष वृक्ष में

शसंखरिका चित्त का तना हो, तो 2 अतिरिक्त चेतसिकाएँ थिना और मिद्धा उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार कुल 20 चेतसिकाएँ होती हैं, जिनमें से 2 जड़ और अन्य 18 शाखाएँ होती हैं।

द्विहेतुका वृक्षों में 12 धम्म वृक्ष हैं। 4 कुसल वृक्ष, 4 विपाक वृक्ष, और 4 किरिया वृक्ष।

कुसल वृक्ष में 1. सोमनास्सा सह गतं नाना विप्पयुत्तम असंखरिका चित्त के साथ, अधिकतम 37 चैतसिक उत्पन्न होते हैं। वे 13 अन्नसामना चेतसिक हैं 1.फस्सा, 2.वेदन, 3.चेतन, 4.सन्न, 5.एकगगत, 6.जीवितंद्रिय, 7.मानसिकारा, 8.विटक्क, 9.विचार, 10.वीर्य, 11.पिति, 12.चंदा, 13.अधिमोक्ख; 19 शोभन साधरण सीतासिका 1.सद्ध, 2.सति, 3.हिरी, 4.ओट्टप्पा, 5.अलोभा, 6.अदोसा या मेट्टा, 7. तत्रमज्जत्था, 8.कायपसाद्धि, 9.चित्तपसाधि, 10.कायालाहुता, 11.चित्तलाहुता, 12.कायमुदुता, 13.चित्तमुदुता, 14.कायाकम्मनता, 15.चित्तकमन्नाता, 16.कायापगुन्नाता, 17.चित्तपगुन्नाता, 18.कायुजुकटा, 19.चित्तुजुकटा; 3 विरति चेतसिक 1.सम्मा कम्मंता, 2.सम्मा वाचा, 3.सम्मा अजिव; और 2 अप्पमन्ना चेतसिकाएँ 1. करुणा और 2. मुदिता। अधिकतम 13 + 19 + 3 + 2 = 37 चेतसिकाएँ होंगी। इस वृक्ष में पन्निन्द्रित चेतसिका उत्पन्न नहीं होती क्योंकि यह चित्त नाना विप्पयुत्त चित्त है। इस वृक्ष की जड़ें अलोभ और अदोसा चेतसिकाएँ हैं। अन्य 35 चेतसिकाएँ शाखाओं का कार्य करती हैं।

यह तो सिर्फ अधिकतम संख्या की बात है। करुणा और मुदिता हमेशा उत्पन्न नहीं होते। इसलिए 35 चेतसिक बचेंगे। इसी प्रकार, 3 विरति चेतसिक भी हमेशा उत्पन्न नहीं होते। इसलिए 32 चेतसिक बचेंगे।

यदि कुशल वृक्ष मुदिता वृक्ष है, तो उसमें 33 चेतसिकाएँ होंगी। यदि करुणा वृक्ष है, तो उसमें भी 33 चेतसिकाएँ होंगी। करुणा और मुदिता कभी एक साथ उत्पन्न नहीं होते क्योंकि ये दोनों वस्तुएँ पूर्णतः भिन्न हैं, अर्थात् करुणा निम्न सत्तों पर बल लगाती है, जबकि मुदिता लाभप्रद सत्तों पर बल लगाती है।

यदि कुसल वृक्ष सम्मा कम्मंता है, तो 33 चेतासिक होंगे। यदि कुसल वृक्ष सम्मा वाका है, तो 33 चेतासिक भी होंगे। जब कुसल वृक्ष सम्मा अजिव होता है तो 32 सीतासिकों के साथ 2 अतिरिक्त सीतासिक उत्पन्न होते हैं। वे सम्मा कम्मंता और सम्मा अजीवा या सम्मा वाका और सम्मा अजीवा हो सकते हैं। तो सम्मा अजिव वृक्ष में 34 चेतसिकाएँ होंगी। यदि कुसल वृक्ष में तना ससंखारिका चित्त है, तो सभी असांखारिका चित्त तने के समान होंगे। लेकिन परिणाम समान नहीं होंगे. असंखरिका कुसल उक्कत्थ कुसल या सबसे बड़ा कुसल बन जाता है जबकि सासनखरिका चित्त ओमका कुसल या कम कुसल बन जाता है।

3. उपेक्खा सहा गतम् नाना विप्पयुत्त असंखरिका चित्त वाले कुसल वृक्ष में, अधिकतम 36 सिटासिकाएँ होंगी क्योंकि उपेक्खा सीतास में पिति सिटासिका नहीं है। अन्यथा अन्य संगतियाँ सोमनास्सा सिट्टा के साथ समान हैं।

क्रिया वृक्ष में 3 विरति चेतसिकाएँ उत्पन्न नहीं होतीं। कुल 34 चेतसिकाएँ होंगी। इनमें 13 अन्नसमना चेतसिकाएँ, 19 शोभना साधारण चेतसिकाएँ और 2 अप्पमन्ना चेतसिकाएँ शामिल हैं, कुल मिलाकर 34 चेतसिकाएँ। ये अरहतों की चेतसिकाएँ हैं। 2 अप्पमन्ना हमेशा उत्पन्न नहीं होते। इसलिए कुल 32 चेतसिकाएँ होंगी। यदि क्रिया वृक्ष करुणा है, तो 33 चेतसिकाएँ होंगी और यदि मुदिता है, तो भी 33 चेतसिकाएँ होंगी। यदि तना असंखारिक चित्त है, तो सभी चेतसिकाएँ समान रहेंगी। यदि तना उपेक्ख चित्त है, तो पीति उत्पन्न नहीं होती और कुल 33 चेतसिकाएँ होंगी, लेकिन अप्पमन्ना के बिना 31 चेतसिकाएँ होंगी। लेकिन यदि क्रिया वृक्ष करुणा है तो 32 चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं और यदि मुदिता है तो भी 32 चेतसिकाएँ होती हैं। इन क्रिया वृक्षों में, जड़ें अलोभ और अदोष हेतु होती हैं। इनमें न तो अमोह हेतु होता है और न ही पन्निन्द्रिय चेतसिका।

द्विहेतुका के 22 चित्तों में से कुल 18 चित्तों पर पिछले पृष्ठ पर चर्चा की जा चुकी है। द्विहेतुका में अब 4 चित्त शेष हैं। ये 4 कामवाचार सहेतुख महाविपाक चित्त हैं। ये महाविपाक चित्त काम सुगति भूमि के पतिसंधि चित्त, भावांग चित्त और चुति चित्त हैं। अर्थात् ये 4 चित्त छह देवलोकों के मनुष्यों और देवताओं की चेतना, जीवन की निरंतरता और मृत्यु की चेतना को जोड़ते हैं, जिनमें से कोई भी अपने वर्तमान जीवन में ध्यान या मार्ग नाना प्राप्त नहीं कर सकता।

इन चार विपाक पेड़ों में चार अलग-अलग तने होते हैं जिन्हें महाविपाक चित्त कहा जाता है। वे हैं 1. समानस्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्त असंखरिका चित्त, 2. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्त सासंखारिका चित्त, 3. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्त असंखरिका चित्त, और 4. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्त सासंखारिका चित्त।

पहले विपाक वृक्ष में, वृक्ष का तना सोमनस्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्त असंखरिका चित्त है। उस तने में अनेक चैतसिक शाखाएँ निकलती हैं। 13 अन्नसामना चेतसिका फस्सा, वेदना, केतना, सन्ना, एकगगत, जीवितिन्द्रिय, मानसिकारा, विटक्का, विचारा, पिटी, वीर्य, चंदा और अधिमोक्खा और 19 शोभनसाधारण चेतसिका सद्ध, सती, हिरी, ओट्टप्पा, अलोभा, अडोसा, तत्रमज्जहत्ता, कायापासद्धि हैं। चित्तपसाधि, कयालहुता, चित्तलहुता, कयामुदुता, चित्तमुदुता, कयाकम्मनता, चित्तकम्मनता, कयापगुन्नता, चित्तपगुन्नाता, कायुजुकटा

और चित्तुजुकटा। 32 सिटासिकाएँ हैं। उनमें से अलोभा और अडोसा सिटासिका जड़ धम्म के रूप में काम करते हैं और अन्य पेड़ की शाखाएं बन जाएंगे। इसमें कोई पन्ना नहीं है, इसलिए यह चित्त द्विहेतुक चित्त है, यानी मोह रहित है।

तने ससंखारिका चित्त में, शाखाएँ और जड़ें सभी एक समान हैं। असंखारिका चित्त और सासंखारिका चित्त में कुछ अंतर है। असंखरिका चित्त उक्कत्थ कुसल के रूप में काम करता है और इसका परिणाम असंखरिका विपाक चित्त होता है जो सासंखरिका चित्त से कहीं अधिक बेहतर है।

उपेक्खा सहगतं नाना विप्पयुत्त चित्त के मूल में पीति उत्पन्न नहीं होती क्योंकि यह उपेक्खा चित्त है। अतः कुल 31 चेतसिकाएँ होंगी। मूल में आलोभ और अदोष चेतसिकाएँ हैं और अन्य 29 चेतसिकाएँ वृक्ष की शाखाएँ बनेंगी। असंखारिका और ससंखारिका के परिणाम भिन्न-भिन्न होते हैं, क्योंकि जब कुशल कर्म किए जाते हैं तो असंखारिका कुशल कर्म को उक्कत्थ कुशल या सबसे उत्तम पुण्य कर्म माना जाता है, जबकि ससंखारिका कुशल कर्म को ओमक कुशल या कम पुण्य कर्म माना जाता है।

अतः दो एककहेतुका चित्त हैं जिन्हें मूल अवस्था के रूप में केवल मोह चेतसिका द्वारा ही सहारा मिलता है। 22 द्विहेतुका चित्त हैं जिन्हें 8 लोभ चित्तों के मामले में मोह और लोभ द्वारा, 2 दोष चित्तों के मामले में मोह और दोष द्वारा, और 12 नाना विप्पयुत्त काम शोभना चित्तों के मामले में आलोभ और दोष द्वारा सहारा मिलता है। मूल चेतसिकाएँ मूल अवस्था के रूप में कार्य करती हैं और वे संपूर्ण व्यवस्था में प्रमुख होती हैं।

वहाँ 47 Cittas हैं जो Tihetuka Cittas हैं। वे 12 कामवकार नाना सम्पायुत्त चित्त, 15 रूपवकार चित्त, 12 अरुपवकार चित्त, और 8 लोकुत्तर चित्त हैं।

12 नाना सम्पायुत्त कामवाकर चित्त के मामले में, पन्ना उत्पन्न होता है क्योंकि वे सभी नाना सम्पायुत्त चित्त हैं। यहां पन्ना अमोह सीतासिका है और यह एक जड़ है। यह द्विहेतुका सीतास के मौजूदा एलोभा और अडोसा सीतासिका में जुड़ जाता है और चित्ता तिहेतुका सीतास बन जाता है।

कुशल वृक्ष में, जिसका तना सोमनस्स सहगतम नाना सम्पायुत्त असंखारिका चित्त है, कुल 38 चेतसिकाएँ होती हैं। इनमें से 3 जड़ें और 35 शाखाएँ हैं। असंखारिका चित्त में असंखारिका चित्त की तुलना में इसका प्रभाव कम होता है, लेकिन चेतसिकाओं की संख्या समान होती है। उपेक्षा तने में पीति उत्पन्न नहीं होती और इसमें 37 चेतसिकाएँ होती हैं, जिनमें से 3 जड़ें और 34 शाखाएँ हैं। असंखारिका और असंखारिका दोनों में चेतसिकाएँ समान होती हैं। लेकिन करुक और मुदिता हमेशा उत्पन्न नहीं होतीं और न ही एक साथ उत्पन्न होती हैं। इसलिए कुल 36 चेतसिकाएँ और 33 शाखाएँ होती हैं, जबकि उपेक्षा चित्त में कुल 35 चेतसिकाएँ और 32 शाखाएँ होती हैं। फिर से, 3 विरति चेतसिकाएँ हमेशा उत्पन्न नहीं होतीं और यदि उत्पन्न होती हैं तो सम्म कम्मंत और सम्म वाच एक साथ उत्पन्न नहीं होतीं। जब ये उत्पन्न नहीं होते हैं, तो सोमनस्सा में 33/30 और उपेक्खा चित्त में 32/29 होंगे। यदि सम्मा कम्मंत उत्पन्न होता है, तो क्रमशः 34/31 और 33/30 उत्पन्न होंगे, और सम्मा वाच के मामले में भी ऐसा ही होता है। जब सम्मा अजीव उत्पन्न होता है, तो यह सम्मा कम्मंत या सम्मा वाच से संबंधित हो सकता है, और तब यह क्रमशः 35/32 और 34/31 होगा।

किरिया वृक्ष में कुल मिलाकर 35 सीतासिक उत्पन्न हो सकते हैं। किरिया चित्त में 3 विरति चेतसिका उत्पन्न नहीं होती क्योंकि ये चित्त अरहतों के कामवाकर चित्त हैं। वे केवल तभी उत्पन्न होते हैं जब मैग्गा और फाला सीतास में होते हैं।

नाना सम्पायुत्त में पहले क्रिया वृक्ष में 35/32 (कुल शाखाएँ, जिनमें से 3 जड़ें हैं) होंगी। करुणा और मुदिता हमेशा उत्पन्न नहीं होते। इसलिए 33/30 चेतसिका होंगी। करुणा उत्पन्न होने पर 34/31 उत्पन्न होंगी। शसंखारिका भी ऐसा ही करती है। यदि उपेक्षा चित्त हो, तो पीति उत्पन्न नहीं होगी और 34/31 होंगी। यदि करुणा और मुदिता हटा दी जाएं, तो 32/29 शेष रहेंगी। यदि करुणा या मुदिता उत्पन्न हों, तो 33/30 चेतसिकाएँ उत्पन्न होंगी।

नाना सम्पायुत्त के विपाक वृक्ष में 33/30 चेतसिकाएँ होती हैं। यदि करुणा या मुदिता उत्पन्न न हों, तो 31/28 चेतसिकाएँ शेष रह जाती हैं, और यदि वे उत्पन्न हों, तो 32/29 चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं। शसंखारिक चित्त में असंखारिक चित्तों के समान ही चेतसिकाओं की संख्या होती है। उपेक्षा विपाक चित्त में, यदि पीति उत्पन्न न हो, तो 32/29 चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं। यदि 2 अप्पमन्न चेतसिकाएँ शामिल न हों, तो 30/27 चेतसिकाएँ होती हैं। यदि करुणा या मुदिता उत्पन्न हों, तो 31/28 चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं। ये सभी 12 नाना सम्पायुत्त चित्त तिहेतुक चित्त हैं। जब ये उत्पन्न होते हैं, तो अलोभ, आदोसा और अमोह इनकी जड़ों के रूप में इन्हें सहारा देते हैं। चित्त के तने में विभिन्न चेतसिका शाखाएँ होती हैं। तने या शाखाओं से जुड़ी हुई चित्तज रूप, कम्मज रूप, उत्तज रूप और आहारज रूप जैसी विभिन्न प्रकार की रूपा पत्तियाँ होती हैं।

47 तिहेतुका चित्त या त्रिगुण जड़ चेतना हैं। वे 12 कामवकार नाना सम्पायुत्त चित्त, 15 रूपवकार चित्त, 12 अरुपवकार चित्त, और 8 लोकुत्तर चित्त हैं। पिछले पृष्ठ में 12 कामवकार नाना सम्पायुत्त चित्त की व्याख्या की गई है।

रूपावचार चित्त पंद्रह प्रकार के होते हैं। रूपावचार चित्त वे चित्त हैं जो अधिकतर रूपब्रह्म भूमियों में उत्पन्न होते हैं। लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में ये अन्य लोकों में भी उत्पन्न हो सकते हैं। मनुष्य भूमि और छह देव लोकों में जन्म से ही तिहेतुक चित्त वाले जातकों में रूपावचार चित्त उत्पन्न हो सकते हैं। हालांकि, गैर-रूपब्रह्म लोकों में रूपावचार चित्त लगभग हमेशा रूपकूसल चित्त होते हैं, सिवाय मनुष्य अरहतों और देव अरहतों के मामले में।

15 रूपावकार चित्त में से 5 चित्त रूपाकुशल चित्त हैं, 5 कुपकिरिया चित्त हैं, और 5 रूपविपाक चित्त हैं। रूपकुसल चित्त तब उत्पन्न होते हैं जब रूप ब्रह्मा विथि वर में रहते हैं, अर्थात जब वे भावांग चित्त में नहीं होते हैं। मानव और देव जैसे अन्य लोकों में, रूपा झाना में रूपाकुसल चित्त उत्पन्न होते हैं। रूपकिरिया चित्त अरहतों के रूपा झना चित्त हैं। जब अरहत रूप झाना में रहते हैं, तो रूपकिरिया चित्त उत्पन्न होते हैं। यदि रूप ब्रह्मा अरहत बन जाते हैं, तो उनके चित्त भावांग चित्त में न होने पर रूपकिरिया चित्त बन जाएंगे। रूपविपाक चित्त वे चित्त हैं जो केवल रूप ब्रह्म में उत्पन्न होते हैं क्योंकि वे रूप ब्रह्म के पतिसंधि, भावांग और कटि चित्त हैं। यहां तक कि बुद्ध के पास भी रूपविपाक चित्त नहीं थे।

रूपकुसला वृक्षों में तीन जड़ें होती हैं: अलोभ, अदोसा और अमोहा। तने रूप झान चित्त होते हैं। शाखाएँ चेतसिका होती हैं और पत्तियाँ और फूल रूप होते हैं।

प्रथम रूप झाना सीतास वृक्षों में, जो सभी कुसाला, किरिया और विपाक चित्त में हैं, जड़ें अलोभा, अडोसा, और अमोहा या पन्ना हैं। तने हैं प्रथम झाना रूपाकुसाला चित्त, प्रथम झाना रूपाकिरिया चित्त, प्रथम झाना रूपाविपाका चित्त। इन तीनों वृक्षों में, सिटासिका कुल मिलाकर 35 सिटासिकाएँ हैं। वे चरण या संपर्क, वेदना या भावना, चेतना या इच्छा, सन्ना या धारणा, एकगता या एक बिंदु, जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन, मानसिकारा या ध्यान, विटक्का या प्रारंभिक अनुप्रयोग, विचार या निरंतर अनुप्रयोग, वीर्य या प्रयास, चंदा या इच्छा, पिटी या खुशी, अधिमोक्खा या निर्णय, 19 शोभनसाधारण सीतासिका, 2 के 13 अन्नसामना चेतसिका हैं। करुणा और मुदिता का अप्पमन्ना और अंत में पन्ना या पन्निन्द्रिय चेतसिका। तो 13 + 19 + 2 + 1 = 35 सिटासिकाएँ हैं।

लेकिन करुणा और मुदिता एक साथ उत्पन्न नहीं होते। इसलिए 34 चेतसिक होंगे। चूंकि तीन मूल हैं, इसलिए 31 चेतसिक शाखाएँ होंगी। रूप चित्तज रूप हैं जिनमें इरियपथ या शरीर की मुद्राएँ, कम्मजरूप, आहारज रूप और उत्तज रूप शामिल हैं। कुशल, क्रिया और विपाक के द्वितीय रूप ध्यान वृक्षों में वितक्का चेतसिक उत्पन्न नहीं होता। इसलिए 34 होंगे। तृतीय रूप ध्यान में वितक्का और विचार उत्पन्न नहीं होते और 33 चेतसिक होंगे। चतुर्थ रूप ध्यान में वितक्का, विचार और पीति उत्पन्न नहीं होते और 32 चेतसिक होंगे। 5वें रूप में झन विटक्का, विकार, पिटि, करुणा और मुदिता उत्पन्न नहीं होते हैं और 30 चेतसिक होंगे।

इसी प्रकार, सभी अरुपवकारा चित्तों में 5वें रूपा झाना के समान सीतासिकों की संख्या होगी। क्योंकि सभी अरूप झाना उपेक्खा हैं और झनंगा के संदर्भ में उन सभी के पास झनंगा के रूप में केवल उपेक्खा और एकगगाटा हैं।

12 अरुपवकार चित्त हैं। वे 4 अरूपकुसल चित्त, 4 अरुपकिरिया चित्त, और 4 अरूपविपाक चित्त हैं। 4 अरूप झाना हैं अकासाननचायतन अरूप झाना, विन्ननानकायतन अरूप झाना, अकिनसिनायतन अरूप झाना, और नेवसन्नानचायतन अरूप झाना। प्रत्येक में तीन चित्त हैं, वे हैं अरुपकुसल चित्त, अरुपकिरिया चित्त और अरुपविपाक चित्त। जब वे विथि वर में होते हैं तो अरूप कुसल चित्त अरूप ब्रह्मा के चित्त होते हैं। ये चित्त मनुसा भूमि और देवभूमि में भी उत्पन्न हो सकते हैं यदि संबंधित सत्ता के पास तिहेटुका चित्त है और अरूप झाना प्राप्त है।

अरूपकिरिया चित्त अरहट्टा अरूप ब्रह्मा के विथि चित्त हैं। ये चित्त मनुस्सा अरहतों में उत्पन्न हो सकते हैं जो अरूपा झाना में हैं, देव अरहतों में जो अरूपा झाना में हैं। अरूपविपाक चित्त अरूप ब्रह्मा के पतिसंधि, भावांग और कटि चित्त हैं और वे कभी भी अन्य लोकों में उत्पन्न नहीं होते हैं।

8 लोकुत्तरा चित्त हैं और वे सभी तिहेतुका चित्त हैं। ये 8 लोकुत्तरा चित्त हैं सोतापट्टी मग्गा कुसल चित्त, सकादगामी मग्गा कुसल चित्त, अनागामी मग्गा कुसल चित्त, अरहट्टा मग्गा कुसल चित्त, सोतापट्टी फला विपाक चित्त, सकादगामी फला विपाक चित्त, अनागामी फला विपाक चित्त, और अरहट्टा फला विपाका। Citta.

लोकुत्तरा वृक्षों में अधिकतम 36 सिटासिकाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। वे 13 अन्नसामना चेतसिका, 19 शोभनसाधारण चेतसिका, 3 विरति चेतसिका और 1 पणिन्द्रिय चेतसिका हैं। 13 + 19 + 3 + 1 = 36 सिटासिकाएँ। ये सभी 36 चेतसिक 8 पथमज्जन लोकुत्तर चित्त में उत्पन्न होते हैं। 8 दुथियाज्झाना लोकुत्तारा चित्त में 35 चेतासिक उत्पन्न होते हैं क्योंकि दूसरे झाना में विटक्का उत्पन्न नहीं होता है। तीसरे

लोकुत्तारा झाना चित्तस में, विटक्का और विकारा को छोड़कर 34 सीतासिक हैं। चौथे लोकुत्तारा झन चित्त में 33 सिटासिकाएँ उत्पन्न होती हैं। 5वें लोकुत्तारा झन चित्त में भी 33 सीतासिकाएँ उत्पन्न होती हैं, लेकिन सोमनस्सा वेदना के बजाय उपेक्खा वेदना के साथ।

लोकुत्तारा के पेड़ों में तीन जड़ें होती हैं - एलोभा, अडोसा और अमोहा सिटासिका। सभी 47 टिहेटुका सीतास में, अलोभा, अडोसा और अमोहा सीटासिका जड़ स्थिति के रूप में सीता का समर्थन करते हैं। 22 द्विहेतुका चित्त में यानी 10 लोभा चित्त, 2 दोसा चित्त, और 12 नाना विप्पयुत्त चित्त, 10 लोभा चित्त के लिए दो जड़ें लोभा और मोह, 2 दोसा चित्त के लिए दोसा और मोह और 12 नाना विप्पयुत्त कामवाकर चित्त के लिए अलोभा और अडोसा हैं। विकिसिच्चा चित्त और उधक्का चित्त के 2 मोहा चित्त केवल मूल स्थिति के रूप में मोह हेतु द्वारा समर्थित हैं। तो कुल मिलाकर ये 71 सहेतुका चित्त मूल स्थिति के रूप में 6 जड़ों द्वारा समर्थित हैं।

परम अर्थ में केवल चित्त, चेतसिका, रूप और निर्वाण ही हैं। परन्तु वे किसी न किसी रूप में आपस में संबंध रखते हैं। किसी भी समय, किसी भी स्थान और किसी भी स्थिति में सभी चित्त किसी न किसी वस्तु पर निर्भर होते हैं। चित्त हमेशा किसी वस्तु को ग्रहण करता है। चित्त हमेशा किसी वस्तु पर निर्भर करता है।

बिना किसी वस्तु के चित्त का उद्भव नहीं हो सकता। जब कोई वस्तु नहीं होती, तब चित्त भी नहीं होता। प्रत्येक चित्त की अपनी एक वस्तु होती है। चाहे वे किसी भी प्रकार के हों, प्रत्येक की अपनी एक वस्तु होती है। वस्तु के बिना चित्त का अस्तित्व नहीं होता। पाली भाषा में इंद्रियों द्वारा अनुभव की जाने वाली वस्तुओं को अरम्मना कहते हैं।

अरम्मन छह प्रकार के होते हैं: रूपारम्मन, सद्दरामम्मन, गंधारम्मन, रसारम्मन, फोत्थब्बरम्मन और धम्मरम्मन। पाली भाषा के इन छह कठिन शब्दों को देखकर, जो लोग पाली भाषा से परिचित नहीं हैं, उन्हें थोड़ी असहजता हो सकती है। लेकिन उन्हें चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। इन शब्दों की व्याख्या आगे के संदेशों के साथ की जाएगी। बार-बार अभ्यास और पढ़ने से अंततः ये शब्द आसानी से समझ में आ जाएँगे।

रूपारम्मन पाली भाषा का शब्द है जो रूपा और अरम्मन से मिलकर बना है। यहाँ रूपा शब्द का अर्थ चार परमात्मा धर्मों या चार परम वास्तविकताओं में वर्णित रूपा से नहीं है। बल्कि रूपारम्मन में रूपा का अर्थ वह दृष्टि है जिसे हम अपनी आँखों से देख सकते हैं। जब आँखें बंद होती हैं, तो दृष्टि चेतना या कहें कि नेत्र चेतना नहीं होती। जैसे ही आँखें खुलती हैं और दृष्टि वस्तु पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, हम देखते हैं कि विभिन्न रंगों की चमक अलग-अलग होती है। पाली भाषा में उस रंग को वन्न कहते हैं। सभी वन्न या रंग रूपारम्मन या दृष्टि वस्तु का निर्माण करते हैं।

हमारे सामने अनेक वस्तुएँ दिखाई दे रही हैं। विभिन्न मोटाई और रंगीन आवरण वाली कई पुस्तकें हैं। और हमारे चारों ओर भी अनेक वस्तुएँ हैं। उनके आकार और रूप गोलाकार, वर्गाकार, आयताकार, त्रिभुजाकार, गोलाकार, पिरामिडनुमा, बेलनाकार, शंकुनुमा और अनियमित हैं। उन पर अंकित रंगों के आधार पर उनकी चमक भिन्न-भिन्न होती है। विज्ञान में हम जो कुछ भी सोचते हैं, ये सब केवल वर्गीकरण हैं और अंततः हम जो देखते हैं वह रंगों के विभिन्न संयोजनों का ही परिणाम है।

इसे कंप्यूटर स्क्रीन पर चित्रों के डिजिटल निर्माण के रूप में समझा जा सकता है। इसमें असंख्य छोटे-छोटे बिंदु होते हैं। प्रत्येक बिंदु की चमक शून्य से अनंत तक होती है। शून्य पूर्ण अंधकार है। इन छोटे-छोटे बिंदुओं के अलग-अलग रंग होते हैं। इन विभिन्न संयोजनों से एक भ्रम पैदा होता है, जिससे हमें किसी वस्तु, जानवर या अन्य वस्तु की छवियाँ दिखाई देती हैं।

यह भ्रम है। भ्रम वास्तविक छवियों या वास्तविक वस्तुओं की गलत व्याख्या है। यहाँ वास्तविक वस्तु केवल रंग है। रंग ही वन हैं। और ये वन या रंग ही रूपारम्मन या दृष्टि वस्तु का निर्माण करते हैं। चक्खुविन्नन चित्त हमेशा रूपारम्मन या दृष्टि वस्तु पर निर्भर होते हैं। दृष्टि के बिना चक्खुविन्नन चित्त का अस्तित्व नहीं होता।

इसका अर्थ है कि चित्त की उत्पत्ति के लिए हमेशा उसके विषय पर निर्भर रहना पड़ता है। इसे अरम्मन पच्चया कहते हैं। पच्चया ही कारण है। चित्त का कारण, जो इस संदर्भ में चक्खुविन्नन चित्त का कारण है, अरम्मन रूपारम्मन या दृष्टि वस्तु है।

चित्त को अरम्मनों पर निर्भर रहना पड़ता है। चित्त को अरम्मनों या वस्तुओं से जुड़ना पड़ता है। अरम्मन या वस्तु के बिना कोई चित्त उत्पन्न नहीं हो सकता। चित्त पूरी तरह से अरम्मनों पर निर्भर होते हैं। जब लोग बूढ़े हो जाते हैं, तो उन्हें चलने में सहायता और सहारे के लिए छड़ी का उपयोग करना पड़ता है। छड़ी के बिना वे चल नहीं सकते और खड़े भी नहीं हो सकते।

कुछ ऐसी वस्तुएँ हैं जिन्हें हम पाँच इंद्रियों के माध्यम से अनुभव कर सकते हैं। पाली भाषा में इन पाँच प्रकार की वस्तुओं को अरम्मना कहते हैं। धम्म में छह अरम्मनाएँ या छह वस्तुएँ हैं। ये हैं: दृष्टियाँ जिन्हें हम अपनी आँखों से देख सकते हैं, जिन्हें रूपारम्मना कहते हैं; ध्वनियाँ जिन्हें हम अपने कानों से सुन सकते हैं, जिन्हें सद्धारम्मना कहते हैं; गंधें जिन्हें हम अपनी नाक से सूंघ सकते हैं, जिन्हें गंधारम्मना

कहते हैं; स्वाद जिन्हें हम अपनी जीभ से चख सकते हैं, जिन्हें रसारम्मना कहते हैं; स्पर्श इंद्रियाँ जिन्हें हम अपने शरीर या शरीर के अंगों के माध्यम से स्पर्श कर सकते हैं। इन छह इंद्रियों पर आगे के पृष्ठों में अलग से चर्चा की जाएगी।

अतः पाँच इंद्रियाँ या पाँच विषय हैं: 1. दृष्टि या रूपारम्मन, 2. ध्वनि या सद्धारम्मन, 3. गंध या गंधारम्मन, 4. स्वाद या रसारम्मन, 5. स्पर्श या फोत्थब्बरम्मन। ये सभी परम वास्तविकता के रूप हैं। दृष्टि या रूपारम्मन एक रूप है।

रूपारम्मन, रूप और अरम्मन से मिलकर बना है। यहाँ रूप से तात्पर्य रंग से है। हम जो देखते हैं, वे केवल रंग और उनकी अलग-अलग चमक या प्रकाश की तीव्रता हैं। इसे प्रसारण के संदर्भ में देखा जा सकता है। टेलीविजन की स्क्रीन पर अनगिनत छोटे-छोटे धब्बे होते हैं। इन धब्बों के अलग-अलग रंग और चमक होती है। जो चित्र हम देखते हैं, वह एक भ्रम है। भ्रम वास्तविक वस्तु की गलत व्याख्या है। भ्रम के कारण, रंग और उनकी चमक के विभिन्न संयोजन पुरुष, स्त्री, पशु आदि के रूप में दिखाई देते हैं। वास्तव में, हम जो देखते हैं वह रंग या वन्न है। यही वास्तविक रूप है, जो परम वास्तविकता है।

रूपारम्मन वन्न है और यह चक्खुविन्नन चित्त के लिए अरम्मन या वस्तु का काम करता है। चक्खु का अर्थ है आँख से संबंधित। विन्नन में वि और नन शामिल हैं। वि का अर्थ है विशेष या विशिष्ट और नन का अर्थ है ज्ञान। विन्नन का अर्थ है विशेष ज्ञान। चक्खुविन्नन चित्त आँख में विशेष ज्ञान की चेतना है। यह वह स्थिति है जब हम किसी दृश्य वस्तु को ठीक से देखते हैं। चक्खुविन्नन चित्त रूपारम्मन या वन्न पर निर्भर करता है। रूपारम्मन के बिना, चक्खुविन्नन कभी उत्पन्न नहीं होगा। पच्चय धम्म या कारण धम्म अरम्मन है और इस मामले में यह रूपारम्मन है जो एक रूप है। पच्चयुप्पन्न धम्म या परिणामी धम्म चक्खुविन्नन चित्त है। रूप (वन्न) और नाम (चक्खुविन्नन चित्त और 7 सार्वभौमिक चेतसिक) के बीच का संबंध अरम्मन है। चक्खुविन्नन चित्त से चित्तज रूप उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि दस द्विपंचविन्नन चित्त रूप उत्पन्न नहीं करते। चक्खुविन्नन चित्त रूपारम्मन या वन्न के बिना कभी उत्पन्न नहीं होगा। यही अरम्मन पच्चया और इसका निहितार्थ है।

सद्धा या ध्वनि, सोतविन्नन चित्त के लिए विषय का काम करती है। इन्हें सद्धरम्मन या ध्वनि विषय कहा जाता है। यदि ध्वनि न हो, तो सोतविन्नन चित्त या श्रवण चेतना (प्रत्यक्ष अनुवाद) या ध्वनि चेतना भी नहीं होगी। अतः सोतविन्नन चित्त पूरी तरह से सद्धरम्मन या सद्धा या ध्वनि पर निर्भर करता है।

सद्दा या ध्वनि एक रूप है। यह परम वास्तविकताओं में से एक है। सद्दा एक परमार्थ रूप है। यह रूप चित्त के लिए अरम्मन का काम करता है, जिसे सोतविन्नन चित्त कहा जाता है। अतः सद्दा या ध्वनि रूप, सोतविन्नन चित्त और उससे संबंधित सात सार्वभौमिक चेतसिकाओं जैसे कि स्पर्श, वेदना, चेतना, अनुभूति, एकाग्रता, जीवंतिन्द्रिय और मानसिक ध्यान आदि के लिए अरम्मन का काम करता है।

यहां कारण धम्म या पकाया धम्म ध्वनि या सद है जो सद्दारम्मन या ध्वनि वस्तु के रूप में कार्य करता है। इस कारण धम्म के कारण, परिणामी धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म का उदय होना चाहिए, चित्त जिसे सोताविन्नन चित्त कहा जाता है और इसके साथ 7 चेतासिक हैं। यहां कारण धम्म परमत्थ रूप सद या ध्वनि है और परिणामी धम्म यहां नाम धम्म (सोतविन्नन चित्त और 7 सार्वभौमिक सीतासिका) है। यहाँ रूप धम्म और नाम धम्म के बीच का संबंध अरम्मना है। यह अरम्माना पकाया है।

गंध, घनविन्नन चित्त का विषय है। जब गंध एक विषय बन जाती है, तो उसे अरम्मन कहा जाता है और इस अरम्मन को गंधारम्मन या गंध विषय कहते हैं। घन का अर्थ है नाक से संबंधित। घनविन्नन का अर्थ है नाक पर विशेष चेतना। यदि गंध न हो, तो घनविन्नन चित्त उत्पन्न नहीं होगा। गंध एक परमत्थ रूप है और यहाँ विषय के रूप में कार्य करती है। घनविन्नन चित्त और उससे संबंधित 7 चेतसिकाएँ नाम धम्म हैं और वे परिणामी धम्म हैं। कारण गंध है और परिणाम घनविन्नन चित्त या नाक चेतना (प्रत्यक्ष अनुवाद) है। यहाँ रूप रूपी कारण और नाम धम्म रूपी परिणाम के बीच का संबंध अरम्मन है। यही अरम्मन पच्चया है। या विषय स्थिति।

रस या स्वाद एक विषय के रूप में कार्य करता है और यह अरम्मन बन जाता है। इसे रसरम्मन या स्वाद विषय कहा जाता है। इस स्वाद के कारण जीव्विन्नन चित्त उत्पन्न होता है। जीव् का अर्थ है जीभ से संबंधित। जीव्विन्नन चित्त जीभ चेतना (प्रत्यक्ष) या स्वाद चेतना है। यहाँ कारण परमत्थ रूप स्वाद या रस है और प्रभाव या परिणाम जीव्विन्नन चित्त और उससे संबंधित 7 चेतसिक हैं। यहाँ कारण और परिणामी धम्म के बीच का संबंध अरम्मन है। यही अरम्मन पच्चय है।

फोत्थब्बा या स्पर्श इंद्रिय वस्तु के रूप में कार्य करती है और अरम्मन बन जाती है। इस अरम्मन को फोत्थब्बारम्मन या स्पर्श वस्तु कहा जाता है। जब फोत्थब्बा या स्पर्श इंद्रिय उत्पन्न होती है, तो कायविन्नन चित्त उत्पन्न होता है। काय का अर्थ है शरीर से संबंधित। कायविन्नन चित्त शरीर चेतना (प्रत्यक्ष) या स्पर्श इंद्रिय चेतना है। फोत्थब्बा या स्पर्श तीन प्रकार का हो सकता है।

ये तीन रूप हैं पथवी फोथब्बा, तेजो फोथब्बा और वायो फोथब्बा। पथवी फोथब्बा स्पर्श इंद्रिय है जिसमें कठोरता, कोमलता, ठोसता, चिकनाई और खुरदरापन जैसे गुण होते हैं। यह वह अवस्था है जिसे हम अपने उन अंगों से छूकर अनुभव कर सकते हैं जो स्पर्श इंद्रिय को जानते हैं। तेजो फोथब्बा एक रूप है जिसमें शीतलता और गर्माहट के गुण होते हैं और वायो फोथब्बा एक परमत्थ रूप है जिसमें प्रणोदन, प्रतिकर्षण, दमन, संकुचन, पीछे हटना, धक्का देना, खींचना, आकर्षण, विचलित करना, गति और समर्थन जैसे गुण होते हैं। ये तीन रूप चार महाभूत रूपों में से तीन हैं, अर्थात् पथवी, तेजो, आपो और वायो।

रूपा फोत्थब्बा (पथवी, तेजो, वायो) अरम्मना या वस्तु के रूप में कार्य करता है और यह फोत्थब्बारमन्ना है। इसके कारण कायाविन्नान चित्त का उदय होना है। कारण धम्म रूप है और परिणामी धम्म नाम धम्म है जो कि कायविन्नन चित्त है और इस मामले में यहां 7 सार्वभौमिक चेतासिक हैं। कारण रूप और परिणाम नाम धम्म के बीच के संबंध को अराम्मन कहा जाता है। यह अरम्मना पकाया या वस्तु स्थिति है।

छठा कर्म या छठा अरम्मन विद्यमान है। इस कर्म स्थिति पर आगामी पृष्ठों में चर्चा की जाएगी। अब तक पाँच इंद्रियों का वर्णन किया जा चुका है। इन धर्मों में सत्त या अत्त का कोई अस्तित्व नहीं है। कारण धर्म या पच्चय धर्म परमत्त रूप धर्म हैं और परिणाम धर्म या पच्चयुप्पन्न धर्म नाम धर्म या चित्त और चेतसिका हैं। प्रतीत्यसमुत्पाद धर्म के विपरीत, जो केवल कारण और परिणाम को दर्शाता है, पथाना धर्म में एक अतिरिक्त विशेषता है जिसे प्रतीत्यसमुत्पाद धर्म प्रकट नहीं कर सकता। यह उनके बीच का संबंध है। पथाना धर्म के इस भाग में, कारण रूप है और परिणाम नाम है। इन दोनों के बीच का संबंध अरम्मन या कर्म स्थिति है।

पिछले पृष्ठ पर पाँच इंद्रियों से संबंधित पाँच वस्तुओं या पाँच अरम्मनों पर चर्चा की गई है। ये हैं रूपरम्मन (दृष्टि), सद्धरम्मन (ध्वनि), गंधरम्मन (सूंघना), रसरम्मन (स्वाद) और फोत्तबबरम्मन (स्पर्श इंद्रिय)।

ये पाँचों वस्तुएँ, जो कि परमत्थ रूप हैं, विशिष्ट चित्त के लिए विशिष्ट वस्तु के रूप में कार्य करती हैं। इसका अर्थ यह है कि रूपारम्मन, जो कि वन्न है, एक परमत्थ रूप है और यह चक्खुविन्नन चित्त या दृष्टि चेतना या नेत्र चेतना के लिए अरम्मन के रूप में कार्य करता है। सद्दरामम्मन, जो कि एक परमत्थ रूप है, विशिष्ट चित्त सोतविन्नन चित्त या ध्वनि चेतना या कान चेतना के लिए वस्तु के रूप में कार्य करता है। गंधारम्मन, जो कि एक परमत्थ रूप है, विशिष्ट चित्त घनाविन्नन चित्त या गंध चेतना या नाक चेतना के लिए वस्तु के रूप में कार्य करता है। रसारम्मन, जो कि एक परमत्थ रूप है, विशिष्ट चित्त जीवविन्नन चित्त या स्वाद चेतना या जीभ चेतना के लिए वस्तु के रूप में कार्य करता है। फोथब्बरम्मन, जो कि स्पर्श इंद्रिय चेतना या शरीर चेतना के लिए वस्तु के रूप में कार्य करता है।

फोत्थब्बरम्मन तीन परमत्थ रूपों में से एक हो सकता है, अर्थात् पथवी (ठोसता का बोध), तेज (तापमान का बोध) और वायु (गति का बोध)। ये पाँच अरम्मन या पाँच वस्तुएँ सात परमत्थ रूप हैं, अर्थात् 1. वन्न, 2. सद्दा, 3. गंध, 4. रस, 5. पथवी, 6. तेज और 7. वायु, जो अपने-अपने चित्त के लिए वस्तु का काम करते हैं। यदि ये सात परमत्थ रूप अस्तित्व में नहीं हैं, तो दस द्विपंचविन्नन चित्त कभी उत्पन्न नहीं होंगे। वृद्ध लोगों को खड़े होने और चलने के लिए छड़ी पर निर्भर रहना पड़ता है। जब छड़ी नहीं होती, तो वे खड़े या चल नहीं पाते। अरम्मन (उल्लेखित पाँच अरम्मन या परमत्थ रूपों के संदर्भ में सात) वृद्ध लोगों के चित्त के लिए छड़ी का काम करते हैं। अब तक केवल 10 पंचविन्नना चित्त और 7 परमात्थ रूप तथा उनके संबंधों पर ही चर्चा की गई है।

पहले के पन्नों में वर्णित 89 चित्तों में से 3 चित्त मनोधातु के नाम से जाने जाते हैं। वे हैं पंचद्वारवज्जन चित्त, अकुसल संपतिच्छन चित्त, और कुसल संपतिच्छन चित्त। पंचविन्नान चित्त अपने संबंधित अरम्मना को जानते हैं और उन्हें पंचविन्नान धातु कहा जाता है। पंचविन्नन धातु पंचधातु को जानता है। पंचविन्नन धातु सभी चित्त हैं और पंचधातु सभी रूप हैं। मनोविन्नन धातु वे चित्त हैं जो अपनी वस्तुओं को बहुत अच्छी तरह से जानते हैं। लेकिन उपरोक्त तीन चित्त जो केवल अपना कार्य करते हैं, अन्य मनोविन्नन चित्त की तरह नहीं हैं और उन्हें केवल मनोधातु कहा जाता है। पंचद्वारवज्जन चित्त केवल यह जांचता है कि अराम्मन किस दरवाजे से अंदर आता है। यह चित्त विथि वर में पहला चित्त है। यह भूतकाल के चित्त भावंगा चित्त का स्थान लेता है।

अरम्मना के आधार पर, पंचद्वरवज्जन चित्त विशिष्ट अरम्मना पर निर्भर करता है। यदि पंचरम्मना के मामले में रूपा अरम्मना रूपारम्मना है, तो पंचद्वरवज्जन चित्त रूपारम्मना पर चिंतन करेगा और इस चित्त को चक्खुद्वरवज्जन चित्त या नेत्र द्वार से ध्यान केंद्रित करने वाली चेतना कहा जा सकता है। यदि अरम्मना सद्दराममन है, तो पंचद्वरवज्जन चित्त रूपा ध्वनि या सद्दा पर निर्भर करेगा और इस पंचद्वरवज्जन चित्त को शोतद्वरवज्जन चित्त या कान द्वार से ध्यान केंद्रित करने वाली चेतना कहा जा सकता है। यदि अरम्मना गंध है, तो पंचद्वरवज्जन चित्त गंध पर निर्भर करेगा और इसे घनाद्वरवज्जन चित्त या नाक द्वार से ध्यान केंद्रित करने वाली चेतना कहा जा सकता है। यदि स्वाद की बात हो, तो पंचद्वरवज्जन स्वाद पर निर्भर करेगा और इसे जीवद्वरवज्जन चित्त या जीभ द्वारा चेतना का विज्ञापन कहा जा सकता है। यदि स्पर्श की बात हो, तो पंचद्वरवज्जन चित्त स्पर्श को अपना विषय मानेगा और इसे कायद्वरवज्जन चित्त या शरीर द्वारा चेतना का विज्ञापन कहा जा सकता है।

किसी विथी वर में पंचद्वरावज्जन चित्त के नष्ट होने के बाद, पंचविन्नन चित्त उत्पन्न होता है, जो पाँच अरम्मनों का संगत चित्त होता है। यह चित्त नष्ट हो जाता है और अगला चित्त उत्पन्न होता है। इस चित्त को सम्पतीच्छन चित्त कहते हैं। यह पंचविन्नन चित्त की तरह ही वस्तु को ग्रहण करता है, लेकिन वस्तु के स्वरूप का पूर्ण ज्ञान नहीं रखता। इसलिए इसे पंचद्वरावज्जन की तरह मनोधातु भी कहा जाता है। सम्पतीच्छन चित्त अकुशलता का परिणाम हो सकता है यदि अरम्मन अप्रिय हो, और कुशलता का परिणाम हो सकता है यदि अरम्मन सुखद हो। और सभी तीन मनोधातु जो कि पंचद्वरवज्जन चित्त और 2 संपतिच्चन चित्त हैं, 5 इंद्रियों के अपने संवाददाता अराम्मन को लेंगे जो कि रूपरम्मन, सद्दारम्मन, गंधारम्मण, रसारम्मण, फोत्थिब्बरम्मण हैं।

इसमें, 5 अरम्मना या 7 परमत्थ रूप चित्तों (इस उदाहरण में, 3 मनोधातु) के लिए कर्म का कार्य करते हैं और ये 7 रूप अन्य धर्मों से संबंधित नहीं हैं, बल्कि बताए गए संबंधित चित्तों से संबंधित हैं। यही अरम्मना पच्चय है। या यही कर्म अवस्था है। यहाँ कारण धर्म या पच्चय धर्म 7 परमत्थ रूप या 5 अरम्मना हैं। यहाँ परिणामी धर्म या पच्चयुप्पन्न धर्म पंचविन्नना चित्त और 3 मनोधातु हैं, जो सभी नाम धर्म हैं। इन उदाहरणों में रूप (अरम्मना) और नाम (चित्त और संबंधित चेतसिक) के बीच का संबंध अरम्मना है। ऐसा संबंध प्रतीत्यसमुत्पाद धर्म में नहीं देखा जा सकता। यह पथाना धर्म की विशिष्ट विशेषता है। पथाना धर्म को हमारे दैनिक जीवन में लागू किया जा सकता है। ये पांच इंद्रियां हमारे दैनिक जीवन के अनुभव हैं।

बिना किसी वस्तु या बिना किसी अरम्मन के चित्त उत्पन्न नहीं हो सकता। अब तक, अरम्मन या वस्तु की स्थिति, रूपारम्मन या दृष्टि की वस्तु, सद्धारम्मन या ध्वनि की वस्तु, गंधारम्मन या गंध की वस्तु, रसारम्मन या स्वाद की वस्तु, फोत्तबबरम्मन या स्पर्श की वस्तु के संबंध में पिछले पृष्ठों में चर्चा की जा चुकी है।

ये सभी अराम्मन या वस्तुएं रूप धम्म हैं और इन्हें पंचरामण या 5-इंद्रिय वस्तुएं भी कहा जाता है। वे अपने संबंधित चित्त के लिए वस्तु के रूप में कार्य करते हैं। वन्ना या कूलोर जो कि एक परमत्था रूप है, चित्त, चक्कुविन्नाना के लिए रूपरम्मना या देखने की वस्तु के रूप में कार्य करता है। सद्दा या ध्वनि जो एक परमत्था रूप है, चित्त, सोताविन्नन के लिए सद्दारम्मन या ध्वनि की वस्तु के रूप में कार्य करती है। तो अन्य रूप गंध के रूप में काम करते हैं, जो कि चित्त के लिए गंधारम्मन या गंध की वस्तु के रूप में कार्य करते हैं, घनाविन्नन और रस, चित्त के लिए रसररर्मण या स्वाद की वस्तु के रूप में कार्य करते हैं, जीवविन्नन और चार में से तीन महाभूत रूप अर्थात् पथवी, तेजो, और वायो चित्त, कायाविन्नन के लिए फोथब्बारमण या स्पर्श की वस्तु के रूप में कार्य करते हैं।

फिर से ये सभी 5 अराम्मन या पंचरम्मना तीन चित्तों के लिए वस्तु के रूप में काम करते हैं, जिन्हें मनोधातु के रूप में भी जाना जाता है। वे हैं पंचद्वारवज्जन चित्त, कुसल संपतिच्छन चित्त और अकुसल संपतिच्छन चित्त। इन 5 अराम्मनों के बिना, जो सभी परमत्थ रूप हैं, उपरोक्त चित्त अर्थात् चक्खुविन्नन, सोताविन्नान, घनविन्नान, जीवविन्नान, कायाविन्नान, पंचद्वारवज्जना, कुसल संपतिच्छन, और अकुसल संपतिच्छन चित्त कभी उत्पन्न नहीं होंगे। रूप धम्म और नाम धम्म के बीच इस प्रकार के समर्थन या संबंध को अरम्मना कहा जाता है। पकाया अरम्माना पकाया या वस्तु स्थिति है।

धम्मरम्मना हैं जो मनोविन्नन की वस्तु हैं। धम्मरम्मना मन की वस्तु को संदर्भित करता है। विभिन्न प्रकार की वस्तुएं हैं जो धम्मरम्मना के रूप में काम करती हैं। वे 5 पसादा रूप, 16 सुखुमा रूप, 89 सीता, 52 सीतासिका, निब्बान और पन्नट्टा हैं। पन्नाट्ट परमत्था धम्म नहीं है। लेकिन परमत्था धम्म होने का दिखावा करके परमत्था धम्म चित्तस और सिटासिका के लिए अरम्मना के रूप में काम कर सकते हैं

पांच पसदा रूप परमत्थ रूप हैं। ये हैं चक्खुप्पसाद, सोतप्पसाद, घनप्पसाद, जीव्हप्पसाद और कायप्पसाद। ये सभी पांच रूप रंगहीन हैं, इसलिए इन्हें न तो आंखों से देखा जा सकता है और न ही चक्खुविन्नान चित्त से जाना जा सकता है। ये सभी पांच रूप ध्वनिहीन हैं और सोतविन्नान चित्त से नहीं जाने जाते। ये गंधहीन हैं और घनविन्नान चित्त से नहीं जाने जाते। ये रसहीन हैं और जीव्हविन्नान चित्त से नहीं जाने जाते, और ये स्पर्शनीय वस्तु नहीं हैं और कायविन्नान चित्त से नहीं जाने जाते। ये पांच पसदा रूप पंचविन्नान चित्त से तो नहीं जाने जाते ही हैं, साथ ही पंचद्वरावज्जन चित्त और संपतिचना चित्त से भी नहीं जाने जाते। लेकिन इन्हें अन्य सभी मनोविन्नन चित्तों द्वारा जाना जा सकता है। अतः ये पाँच पसदा रूप मनोविन्नन धातु के लिए मन के विषय के रूप में कार्य करते हैं और इन्हें धम्मरम्मन या मन का विषय कहा जाता है।

16 सुखुमा रूप परमत्थ रूप हैं और वे पंचविन्नन चित्त की वस्तु नहीं हैं और इसलिए वे 3 मनो धातु की वस्तु भी नहीं हैं। अत: वे मनोविन्नन धातु की वस्तु हैं।

16 सुखुम रूप इस प्रकार हैं:

1. itthatta bhava rupa (female faculty)
2. पुरीसत्ता भव रूप (पुरुष संकाय)
3. हृदय रूप (हृदय आधार)

4. जीवित रूप (भौतिक जीवन)
5. आहार रूपा (पोषक तत्व)
6. परिच्छेद रूप (आकाश या अंतरिक्ष)
7. kayavinatti rupa (gesture formation)
8. vacivinatti rupa (speech character)
9. रूपा लाहुता रूपा (अन्य रूपाओं की हल्कापन)
10. रूप मुदुता रूप (अन्य रूप की कोमलता)
11. रूपा कम्मन्नाता रूपा (अन्य रूपाओं की प्रबलता)
12. उपचय रूप (अन्य रूपों का प्रारंभिक निर्माण)
13. संतति रूप (अन्य रूप का निरंतर निर्माण)
14. जराता रूप (अन्य रूप की पुरानीता)
15. aniccata rupa (अन्य रूपों का लुप्त होना)
16. अपो महाभूत रूप (जल तत्व या अन्य रूपों का सामंजस्य)

इन सूक्ष्म पदार्थों या सुखुम रूपों को पांचों भौतिक इंद्रियों द्वारा अनुभव नहीं किया जा सकता है और यदि इन्हें चित्तों द्वारा जाना जाए, जो मनोविन्नन धातु हैं, तो इन्हें धम्मरम्मन कहा जाता है।

चेतना की 89 अवस्थाएँ होती हैं। मानसिक अवस्थाओं की 89 अवस्थाएँ होती हैं। मन की 89 अवस्थाएँ होती हैं। मन की इन 89 अवस्थाओं को चित्त कहा जाता है। ये चित्त ही वास्तविक अस्तित्व हैं। लेकिन जब इन 89 चित्तों की बात की जाती है, तो वे केवल वास्तविकताओं, चित्तों या चेतना के प्रतिनिधि होते हैं।

चित्त निरंतर उत्पन्न होते और लुप्त होते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक चित्तक्खाना नामक एक क्षण के लिए ही विद्यमान रहता है। ये चित्त अभी आपके मन में उत्पन्न हो रहे हैं और कामलोक (4 अपय भूमियाँ, 1 मनुष्यलोक, 6 देवभूमियाँ), रूपलोक (16 रूप ब्रह्मभूमियाँ) और अरूपलोक (4 अरूप ब्रह्मभूमियाँ) सहित सभी लोकों में अन्य सत्तों में भी उत्पन्न हो रहे हैं। ये चित्त जो आपकी चेतना से परे उत्पन्न होते हैं, बहिद्ध चित्त कहलाते हैं।

आपके मन में चित्त हैं, 31 लोकों में विराजमान अन्य प्राणियों के चित्त हैं, आपके क्षेत्र में चित्त हैं और आपसे लाखों-करोड़ों मील दूर अन्य क्षेत्रों में चित्त हैं, और आपकी उपस्थिति में चित्त हैं, और वे तब भी थे जब आप वर्तमान अवस्था में नहीं थे, और जब आप वर्तमान अवस्था में नहीं होंगे तब भी चित्त यहाँ-वहाँ मौजूद रहेंगे। इस संसार में अनंत चित्त हैं और वे निरंतर उत्पन्न और नष्ट होते रहते हैं, और सम्मसंबुद्ध सहित कोई भी उनके उत्पन्न होने और नष्ट होने को नियंत्रित नहीं कर सकता। यही धर्म है और वे धर्म नियम और चित्त नियम के अनुसार व्यवहार करते हैं। यद्यपि असंख्य और अनंत चित्त हैं, फिर भी उनकी विशेषताओं के आधार पर उन्हें 89 चित्तों में संक्षेपित किया जा सकता है।

संक्षेप में, ये 89 चित्त वास्तविक अस्तित्व हैं और आप स्वयं इनके अस्तित्व का परीक्षण और पुष्टि कर सकते हैं, यदि आप सभी 89 चित्तों को जानने के लिए विशेष ज्ञान विकसित करने में सक्षम हों। लेकिन कुछ चित्त आप स्वयं समझ सकते हैं क्योंकि वे इंद्रिय-स्तरों में बार-बार उत्पन्न होते हैं, जो इस समय आपके भीतर उत्पन्न हो रहे हैं जब आप यह संदेश पढ़ रहे हैं। इन 89 चित्तों को कैसे अनुभव किया जा सकता है? आँख से? कान से? नाक से? जीभ से? शरीर से? बिलकुल नहीं। इन सभी 89 चित्तों को नाम धम्म कहा जाता है, ये रूप धम्म नहीं हैं। ये भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं। इसलिए इन्हें किसी भी भौतिक उपकरण द्वारा नहीं पहचाना जा सकता, भले ही कुछ विचित्र भौतिकवादी वैज्ञानिक ईईजी नामक इलेक्ट्रोएन्सेफेलोग्राम और अन्य संबंधित मशीनों द्वारा चित्तों के अस्तित्व को सिद्ध करने का प्रयास करें। लेकिन ये वे वास्तविक इंद्रियाँ नहीं हैं जिन्हें आप जानते हैं।

इन 89 चित्तों को कैसे अनुभव किया जा सकता है? ये सभी चित्त द्वारा ही ज्ञात हैं। इन्हें मन के माध्यम से अनुभव किया जाता है और ये मनोवर्ण चित्तों द्वारा ज्ञात होते हैं। चूंकि इन्हें चित्त द्वारा अनुभव किया जाता है और ये अरम्मना (ज्ञान के विषय) के रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए ये सभी 89 चित्त धम्मरम्मना या मन के विषय हैं। ये नाम हैं, लेकिन ये अरम्मना के रूप में भी कार्य कर सकते हैं। अरम्मना या विषय के रूप में कार्य करने से ये रूप नहीं बन जाते, जो कि पूरी तरह से गलत है। मैंने दो लोगों को इस तरह सोचते हुए पाया है। एक धम्म चर्चा समूह में, और ऐसा प्रतीत होता था कि वह ऐसा मानता है। दूसरे व्यक्ति ने अनजाने में गलत तरीके से यह बात कही। लेकिन 89 चित्त हमेशा नाम धम्म होते हैं, वे कभी भी रूप धम्म नहीं होते। चूंकि इन्हें मन द्वारा जाना जा सकता है, इसलिए मन द्वारा अनुभव किए जाने पर ये धम्मरम्मना या मन के विषय होते हैं।

अरम्मन पच्चया नाम धम्म और नाम धम्म सहित अन्य सभी धम्मों के बीच संबंध को दर्शाता है। धम्म, अरम्मन या कर्ता के रूप में, नाम धम्म चित्त और चेतसिकों का आधार बनता है। अरम्मन या कर्ता के बिना, चित्त और चेतसिकों का अस्तित्व ही नहीं होता। पिछले पृष्ठों

में, पाँच भौतिक इंद्रियों पर विस्तार से चर्चा की गई है। उसके बाद, छठी इंद्रिय, यानी मन का विषय या धम्मरम्मन, पर चर्चा शुरू की गई है।

धम्मरम्मन में छह प्रकार के विषय होते हैं जिन पर मन ध्यान केंद्रित किया जा सकता है। ये हैं: पाँच पसद रूप, सोलह सुखुम रूप, उन्नीस चित्त, पन्नतीस चेतसिक, निर्वाण और पन्नात्त। पन्नात्त को छोड़कर अन्य सभी धम्मरम्मन परमत्त्व धम्म हैं। पन्नात्त परमत्त्व धम्म के स्थान पर अरम्मन के रूप में कार्य कर सकता है। चित्तों के विषय में कुछ सामान्य बातें बताई गई हैं। उन्नीस चित्त हैं जिन पर मन ध्यान केंद्रित किया जा सकता है। वे हैं:

1. सोमनास्सा सहगतम् दिट्ठिगता संपायुत्त असंखरिका लोभा मूला अकुसाला चित्त 2. सोमनास्सा सहगतम् दिट्ठिगता संपायुत्त सासंखारिका लोभा मूला अकुसाला चित्त 3. सोमनास्सा सहगतम् दिट्ठिगता विप्पयुत्त असंखरिका लोभा मूला अकुसाला चित्त 4. सोमनास्सा सहगतम् दिट्ठिगता विप्पयुत्त ससंखारिका लोभ मुला अकुसल चित्त 5. उपेक्खा सहगतम् दिट्ठिगता संपायुत्त असंखरिका लोभा मूला अकुसला चित्त 6. उपेक्खा सहगतम् दिट्ठिगता संपायुत्त ससंखरिका लोभा मूला अकुसाला चित्त 7. उपेक्खा सहगतम् दिट्ठिगता vippayutta असंखरिका लोभा मुला अकुसल चित्त 8. उपेक्खा सहगतम दिट्ठिगता विप्पयुत्त ससंखरिका लोभा मूला अकुसल चित्त

ये आठ लोभ मूल अकुशल चित्त हैं। सो का अर्थ है सुखद, आनंदमय, मनभावन। मनस्स [मन + अस्स] का अर्थ है मन का। सोमनस्स का अर्थ है मानसिक सुख या मानसिक आनंद। सहा का अर्थ है साथ में और गत का अर्थ है जाना। सहगत का अर्थ है साथ में जाना। दित्थी का अर्थ है गलत दृष्टिकोण जो कर्म और कर्म के परिणामों में विश्वास नहीं करता। सम का अर्थ है सही, सत्य। युत्त का अर्थ है मिलाना, समानांतर, सामान्य। सम्पायुत्त का अर्थ है अच्छी तरह मिला हुआ। संखार का अर्थ है तैयार करना, प्रभावित करना, प्रयास करना। संखारिका का अर्थ है प्रेरित, प्रोत्साहित। असंखारिका का अर्थ है बिना प्रेरित।

आठ लोभ मूल चित्त होते हैं। इनमें से चार चित्त मानसिक सुख से उत्पन्न होते हैं और चार चित्त उदासीन भाव से। इनमें से आधे गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होते हैं और प्रत्येक युग्म में एक प्रेरित और एक अनप्रेरित चित्त होता है। इस प्रकार आठ लोभ मूल चित्त होते हैं।

9. डोमानास्सा सहगतम पतिघा संपायुत्त असंखरिका दोसा मूला अकुसाला चित्त

यहां 'दो' या 'दु' का अर्थ है अप्रिय, अरुचिकर, अप्रिय। 'दोमनस्स' का अर्थ है मानसिक असंतोष। 'पतिघा' का अर्थ है प्रहार, विनाश, आक्रमण। ये दोनों चित्त दोषमूल चित्त हैं और दोष चित्त हैं। दोष का अर्थ है घृणा, क्रोध, अरुचि।

11. उपेक्खा सहगतम् विकिसिच्च संपायुत्त मोहा मूल चित्त 12. उपेक्खा सहगतम् उद्धच्चा संपायुत्त मोहा मूल चित्त

विकिचिच्चा का अर्थ है संदेह, अनिर्णय, शंका और उद्धच्चा का अर्थ है बेचैनी, अशांति।

13. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका चक्खुविन्नन चित्त 14. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका सोतविन्नना चित्त 15. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका घनाविन्नाना चित्त 16. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसाला विपाका जीवविन्नान चित्त 17. दुक्ख सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका कायविन्नन चित्त 18. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका संपतिच्चन चित्त 19. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका अकुसल विपाका शांतिराना चित्त

20. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका कुसाला विपाका चक्खुविन्नान चित्त 21. उपेक्खा सहागतम् अहेतुका कुसाला विपाका सोतविन्नाना चित्ता 22. उपेक्खा सहागतम् अहेतुका कुसाला विपाका घनाविन्नाना चित्ता 23. उपेक्खा सहागतम् अहेतुका कुसाला विपाका जीवविन्नन चित्त 24. सुख सहगतम् अहेतुका कुसल विपाका कायाविन्नन चित्त 25. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका कुसल विपाका संपतिच्छन चित्त 26. सोमनास्सा सहगतम् अहेतुका कुसल विपाका शांतिराना चित्त 27. उपेक्खा सहगतम् अहेतुका कुसल विपाका संतिरण चित्त

इनमें से 13 से 27 चित्त विपाक चित्त हैं। ये परिणामी चेतना हैं। परिणामी होने के कारण ये अप्रभावी हैं। अतः इनके उत्पन्न होने से कोई कर्म उत्पन्न नहीं होता। अहेतुक का अर्थ है हेतु रहित। हेतु एक कारण या मूल है। छह हेतु हैं: लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोष और अमोह। अहेतुक चित्तों में इनमें से कोई भी हेतु नहीं होता। चक्खु का अर्थ है नेत्र संबंधी। विन्नाना, वि और नाना से मिलकर बना है। नाना का अर्थ है ज्ञान और वि का अर्थ है विशिष्ट या भेद करने वाला। चक्खुविन्नाना का अर्थ है विशेष रूप से नेत्र से जानना। सोत का अर्थ है कान संबंधी, घना का अर्थ है नाक संबंधी, जिह्वा का अर्थ है जीभ संबंधी और काया का अर्थ है शरीर संबंधी।

सम्पतिच्छना शब्द 'सम' और 'पतिच्छना' से मिलकर बना है। 'सम' का अर्थ है अच्छी तरह से ग्रहण करना। 'पतिच्छना' का अर्थ है ग्रहण करना। 'संपतिच्छना' का अर्थ है अच्छी तरह ग्रहण करना। 'संतिराना' का अर्थ है अच्छी तरह से जांच करना। 'दुक्खा' का अर्थ है असहनीय अनुभूति और 'सुक्खा' का अर्थ है सुखद शारीरिक अनुभूति।

कोई भी वस्तु धम्मरम्मन का विषय हो सकती है। पिछले पृष्ठों में 5 पसदा रूप और 16 सुखुम रूप धम्मरम्मन के रूप में बताए गए हैं। इसके बाद चित्त को मन का विषय या धम्मरम्मन के रूप में चर्चा में रखा गया है। अब तक हमने 89 चित्तों में से 27 चित्तों के बारे में बात की है।

28. उपेक्खा सहगतम पंचदवरवज्जन अहेतुका किरिया चित्त 29. उपेक्खा सहगतम मनोद्वारवज्जना अहेतुका किरिया चित्त 30. सोमनस्सा सहगतम हसितुप्पदा अहेतुका किरिया चित्ता

ये तीनों चित्त क्रिया चित्त हैं। क्रिया चित्त निष्क्रिय चित्त होते हैं। इसका अर्थ है कि वे किसी भी कर्म का उत्पादन नहीं करते और उनका उद्भव निष्पाप होता है। वे किसी भी प्रकार के परिणाम या प्रभाव उत्पन्न नहीं करते। ये तीनों चित्त अहेतुक चित्त हैं। अहेतुक का अर्थ है कि इनमें हेतु या कारण नहीं होता। हेतु या कारण हैं लोभ (आसक्ति), दोष (विरोध), मोह (अज्ञान), अलोभ (दान) या अनासक्ति, अदोष (घृणा) या मेत्त और अमोह (पन्न)।

पंचद्वर का अर्थ है पाँच द्वार। इसका तात्पर्य आँख, कान, नाक, जीभ और शरीर की पाँच इंद्रिय द्वारों से है। अवज्जन का अर्थ है ध्यान देना या चिंतन करना। पंचद्वरवज्जन चित्त इस बात का चिंतन करता है कि अरम्मन कहाँ उत्पन्न होता है, चाहे वह आँख, कान, नाक, जीभ या शरीर में हो। मनो का अर्थ है मन। मनोद्वर का अर्थ है मन का द्वार। मनोद्वरवज्जन चित्त वह चित्त है जो मन के द्वार पर उत्पन्न होने वाले अरम्मन या उसके स्वरूप का चिंतन करता है। तीसवाँ चित्त सोमनस्सा या आनंद से संबंधित है। सोम का अर्थ है अच्छा, सुखद, मनभावन आदि। मन या मनो का अर्थ है मन। अस्स एक ऐसा शब्द है जो स्वामित्व को दर्शाता है। मनस्स का अर्थ है मन का। यहाँ सोमनस्सा का अर्थ आनंद है। हस का अर्थ है स्वभाव। उप्पदा का अर्थ है उत्पन्न होना। हसितुप्पदा का अर्थ है स्वभाव का उत्पन्न होना। हसितुप्पदा चित्त अरहतों का अहेतुका किरिया चित्त है और यह तब उत्पन्न होता है जब अरहत सिर्फ मुस्कुराते हैं..

वर्णित ये सभी 30 चित्त अशोभन चित्त कहलाते हैं। शोभन का अर्थ है सुंदर। ये 30 चित्त अशोभन हैं, यानी सुंदर नहीं हैं। ये सौंदर्यहीन चेतनाएँ हैं, क्योंकि इनमें श्रद्धा, सती, हिरी, भय, अलोभ, क्रोध आदि जैसे सुंदर चेतसिका गुण नहीं हैं।

कुल 24 काम शोभना चित्त हैं। ये 24 चित्त सुंदर चेतनाएं हैं। ये कामवाचार चित्त हैं और काम भूमि में अक्सर प्रकट होते हैं, जैसे कि 4 अपाय भूमियां, मनुष्य भूमि (मानव लोक) और 6 देव भूमियां।

31. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम असंखरिका कामवचर महाकुशल चित्त 32. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम सासंखारिका कामवाचर महाकुशल चित्त 33. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखरिका कामवाचर महाकुशल चित्त 34. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम ससंखारिका कामवाचर महाकुसला चित्त 35. उपेक्खा सहगतम् नाना सम्पायुत्तम असंखरिका कामवाचर महाकुसला चित्त 36. उपेक्खा सहगतम् नाना संपयुत्तम ससंखारिका कामवाचर महाकुसला चित्त 37. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखारिका कामवाचर महाकुसला Citta 38. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् ससंखरिका कामवचरा महाकुशल चित्त

39. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम असंखरिका कामवचर महाविपाक चित्त 40. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम सासंखारिका कामवाचर महाविपाक चित्त 41. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखरिका कामवाचर महाविपाक चित्त 42. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम ससंखारिका कामवाचर महाविपाक चित्त 43. उपेक्खा सहगतम् नाना संपायुत्तम असंखरिका कामवाचर महाविपाक चित्त 44. उपेक्खा सहगतम् नाना संपायुत्तम ससंखारिका कामवाचर महाविपाक चित्त 45. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखरिका कामवाचर महाविपाक चित्त Citta 46. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् ससंखरिका कामवचर महाविपाक चित्त

47. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम असंखरिका कामवचरा महाकिरिय चित्त 48. सोमनास्सा सहगतम् नाना संपायुत्तम सासंखारिका कामवाकर महाकिरिया चित्त 49. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखरिका कामवाचर महाकिरिया चित्त 50. सोमनास्सा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम ससंखारिका कामवाचर महाकिरिय चित्त 51. उपेक्ख सहगतम् नाना संपायुत्तम असंखरिका कामवचरा महाकिरिय चित्त 52. उपेक्ख सहगतम् नाना संपयुत्तम ससंखरिका कामवाचर महाकिरिय चित्त 53. उपेक्ख सहगतम् नाना विप्पयुत्तम असंखरिका कामवचरा महाकिरिया Citta 54. उपेक्खा सहगतम् नाना विप्पयुत्तम् ससंखरिका कामवचरा महाकिरिय चित्त

सोमनस्सा का अर्थ है आनंद। सहगत का अर्थ है साथ उत्पन्न होना या साथ चलना। यहाँ नाना का अर्थ है पन्ना या पन्निन्द्रिय चेतसिका, जो ज्ञान है और कर्मों और उनके प्रभावों एवं परिणामों का ज्ञान है। सम्पायुत्तम का अर्थ है मिश्रण। असंखारिका का अर्थ है अप्रेरित और ससंखारिका का अर्थ है प्रेरित, यानी कार्य करने के लिए प्रेरित होना। काम + अवचार का अर्थ है कामभूमियों में बार-बार उत्पन्न होना। महा का अर्थ है महान। यहाँ महा का प्रयोग केवल अन्य कुशल चित्तों, जैसे रूपकुशल चित्तों और अरूपकुशल चित्तों से भिन्न करने के लिए किया गया है। कामावचार कुशल चित्तों को महाकुशल चित्त कहा जाता है। कुशल का अर्थ है संपूर्ण और वे अच्छे कर्म उत्पन्न करते हैं। विपाक का अर्थ है परिणामी और क्रिया का अर्थ है निष्क्रिय या अप्रभावी। यहाँ उपेक्षा का अर्थ है वह भावना जो दुःख, सुख या सोमनस्सा नहीं है। यह केवल समभाव की भावना है। वर्ग के अनुसार, काम शोभना चित्त में तीन प्रकार के चित्त होते हैं: महाकुशाल,

महाविपाक और महाक्रिया चित्त। प्रत्येक वर्ग में 8 चित्त होते हैं। इनमें से 4 आनंदमय और 4 आनंदहीन होते हैं। प्रत्येक वर्ग में 2 चित्त ज्ञानमय होते हैं। इन चारों युग्मों में प्रेरणा और अनावेग दोनों प्रकार के चित्त होते हैं। इस प्रकार कुल 24 काम शोभना चित्त होते हैं। 30 अशोभना चित्तों के साथ मिलकर कुल 54 कामवाचार चित्त होते हैं।

चर्चा के लिए 35 सीट्स बाकी हैं। वे सभी शोभना चित्त हैं। वे 15 रूपवकार चित्त, 12 अरुपवकार चित्त और 8 लोकुत्तर चित्त हैं। रूपावकार चित्त वे चित्त हैं जो अक्सर रूप ब्रह्म भूमि में उत्पन्न होते हैं। वहाँ 15 रूप ब्रह्म भूमियाँ हैं जहाँ रूपवकार चित्त अक्सर उत्पन्न होते हैं। असन्निसत्ता चतुत्थ झाना रूपा ब्रह्म भूमि में कोई चित्त नहीं है। अरुपवकार चित्त चेतना हैं जो अक्सर अरूप ब्रह्म भूमि में उत्पन्न होती हैं। लोकुत्तर चित्त वह चेतना है जो लोक से परे है अर्थात काम लोक, रूप लोक और अरूप लोक। लोकुत्तर (लोक + उत्तर) चित्त निब्बान को देखता है जो सभी लोकों से परे है और किसी भी रूप या चित्त या सीतासिका से संबंधित नहीं है।

छह ऐसी वस्तुएँ हैं जो हमें इंद्रियों से परिपूर्ण बनाती हैं। इन छह वस्तुओं को अरम्मना कहा जाता है। ये चित्त को इंद्रियों को वस्तुओं के रूप में जानने में सहायता करती हैं। पाँच भौतिक इंद्रिय वस्तुएँ हैं, जिन पर चर्चा की जा चुकी है। छठी इंद्रिय मन की वस्तु है। इन्हें धम्म अरम्मना या धम्मरम्मना कहा जाता है। धम्म के छह वर्ग हैं जो धम्म अरम्मना के रूप में कार्य करते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। अब तक पाँच पसदा रूप, 16 सुखम रूप और चित्त के कुछ भाग पर चर्चा की जा चुकी है। 54 कामवाचरा चित्तों का वर्णन किया गया है।

इसके अतिरिक्त 35 चित्त हैं जो मन या धम्मरम्मन का विषय हो सकते हैं। इनमें 15 रूपावचर चित्त, 12 अरूपावचर चित्त और 8 लोकउत्तर चित्त शामिल हैं। रूपावचर चित्त वे चित्त हैं जो रूपब्रह्म भूमि में बार-बार उत्पन्न होते हैं, भले ही वे मनुष्य और देवता जैसे गैर-ब्रह्मों में भी उत्पन्न हों। रूप का अर्थ है रूपब्रह्म और अवचर का अर्थ है बार-बार उत्पन्न होना। अरूपावचर चित्त का भी यही अर्थ है। लोकउत्तर चित्त वे चित्त हैं जो लोक से पूर्णतः भिन्न और लोकों से परे, जैसे कामलोक, रूपलोक और अरूपलोक, विषय को ग्रहण करते हैं। लोकउत्तर लोक + उत्तर से मिलकर बना है। उत्तर का अर्थ है श्रेष्ठ, उच्चतर, श्रेष्ठ। अतः लोकउत्तर चित्त लोकों से संबंधित नहीं हैं और वे लोकों से परे हैं क्योंकि ये चित्त निर्वाण को अपना आधार मानते हैं।

रूपावचार चित्त में तीन प्रकार के चित्त होते हैं जिन्हें कुशल, विपाक और क्रिया चित्त कहा जाता है। कुशल चित्त कर्म उत्पन्न करने वाले होते हैं। क्रिया चित्त कर्म उत्पन्न न करने वाले होते हैं, जैसे कि विपाक चित्त भी कर्म उत्पन्न न करने वाले होते हैं। लेकिन क्रिया चित्त निष्क्रिय या अप्रभावी होते हैं, जबकि विपाक चित्त कुशल चित्तों के फलस्वरूप होते हैं।

55. वितक्क, विचारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावकार पथमज्जना रूपाकुसल चित्त 56. विकारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहिता रूपावाचार दुतियाज्झाना रूपाकुशल चित्त 57. पिति, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा पथमज्झाना रूपाकुसल चित्त 58. सुखेकागगता सहितं रूपावचारा चतुत्थज्झाना रूपाकुसल चित्त 59. उपेक्खेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा पंचमज्झाना रूपाकुशल चित्ता

60. वितक्क, विचारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावकारा पथमज्जना रूपविपाक चित्त 61. विचारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावाचार दुतियाज्झाना रूपाविपाक चित्त 62. पिति, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा पथमज्झाना रूपाविपाक चित्त 63। सुखेकागगत सहितं रूपवचार चतुत्थज्जहना रूपविपक चित्त 64. उपेक्खेकागगत सहितं रूपवचारा पंचमज्झाना रूपविपक चित्त

65. विटक्का, विचारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं रूपवकारा पथमज्झाना रूपकिरिया चित्त 66. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा दुतियाज्झाना रूपकिरिया चित्त 67. पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा पथमज्झाना रूपकिरिया चित्त 68। सुखेकागगता सहितं रूपवचार चतुत्थज्झाना रूपकिरिया चित्त 69. उपेक्खेकाग्गाता सहितं रूपावाचारा पंचमज्झाना रूपकिरिया चित्ता

ध्यान चित्त में पाँच ध्यान कारक होते हैं जिन्हें वितक्का, विचारा, पीति, सुखा और एकग्गता कहते हैं। सहितम् का अर्थ है साथ-साथ। पथमा का अर्थ है प्रथम, दुतिया का अर्थ है द्वितीय, ततिया का अर्थ है तृतीय, चतुत्थ का अर्थ है चतुर्थ और पंचम का अर्थ है पंचम। ध्यान मन की तल्लीन अवस्थाएँ हैं और ध्यान चित्त अपने विषय में विलीन हो जाते हैं। ध्यान का अर्थ है बहुत ध्यान से देखना। ध्यान इतने निकट होते हैं कि वे विषय में विलीन हो जाते हैं।

12 अरुपवकार चित्त हैं और वे अरूप झाना चित्त हैं। अरूपा झाना वे झाना हैं जो रूपा के साथ बिल्कुल भी व्यवहार नहीं करती हैं। वे हैं

70. आकाशाननचायतन अरूपावकार अरूपकुसल चित्त 71. विन्ननानचायतन अरूपावकार अरूपकुशल चित्त 72. अकिंचन्नायतन अरुपवकार अरूपकुशल चित्त 73. नेवसन्ननसंन्यातन अरूपावकार अरूपकुसल चित्त

74. आकाशाननचायतन अरूपावकार अरुपविपाक चित्त 75. विन्ननानचायतन अरूपावकार अरुपविपाक चित्त 76. अकिंचन्नायतन अरूपावकार अरुपविपाक चित्त 77. नेवसन्नानशन्यातन अरूपावकार अरुपविपक चित्त

78. आकाशाननचायतन अरूपावकार अरुपकिरिया चित्त 79. विन्ननानचायतन अरूपवकार अरूपकिरिया चित्त 80. अकिंचन्नायतन अरूपवकार अरुपकिरिया चित्त 81. नेवसन्ननसंन्यातन अरूपवकार अरूपकिरिया चित्त।

प्रथम ध्यान चित्त तब उत्पन्न होता है जब कामच्छंद निवारण (इंद्रिय सुखदायक विचार), ब्यापाद निवारण (विनाशकारी विचार या दुर्भावना), तीन् मिद्ध निवारण (चित्त और चेतसिकाओं की सुस्ती), उद्धच्च कुक्कुच्च निवारण (पश्चाताप/चिंताजनक विचारों का प्रसार) और विचिच्च निवारण (संदेहपूर्ण विचार) जैसी कोई निवारण धम्म या बाधाएँ न हों। जब ये बाधाएँ दूर हो जाती हैं और पाँचों ध्यान कारक अपनी पूर्ण शक्ति से कार्य कर रहे होते हैं और चित्त विषय में समाहित हो जाता है, तब प्रथम ध्यान चित्त उत्पन्न होता है। जब प्रत्येक निम्न ध्यान कारक विरक्त हो जाता है, तब उच्च ध्यान उत्पन्न होता है। दूसरे ध्यान में विचार विरक्त होता है, तीसरे ध्यान में पीति विरक्त होती है, चौथे ध्यान में सुख विरक्त होता है और पाँचवाँ ध्यान केवल एकग्गत चेतसिका के साथ होता है, जो ध्यान विषय पर एकाग्रता है, लेकिन उपेक्षा वेदन या समभाव की भावना के साथ।

पंचम रूप ध्यान में, विषय का विस्तार पूरे ब्रह्मांड को भर देता है। लेकिन जब रूप की कमजोरी दिखाई देती है, तो उच्चतर ध्यान रूप से विमुख हो जाता है और जब रूप से भरा स्थान खाली हो जाता है, तो केवल असीम स्थान ही शेष रह जाता है। यह स्थान वैसा स्थान नहीं है जैसा आप सोचते हैं। बल्कि यह असीम स्थान का एक आयाम या विचार है जो पंचम ध्यान के विषय के विमोचन से उत्पन्न होता है। जब ऐसा होता है और केवल एकाग्रता और उपेक्षा होती है, तो प्रथम रूप ध्यान उत्पन्न होता है। यह आकाशनंचयतना ध्यान है। आकाश का अर्थ है स्थान। यहाँ असीम स्थान या अनंत स्थान है जो पंचम रूप ध्यान के विषय के विमोचन से उत्पन्न होता है। आयतन का अर्थ है जहाँ चित्त और चेतसिका निवास करते हैं या निर्भर करते हैं। जब कोई ध्यान प्रथम रूप ध्यान चित्त को अपना विषय मानता है, तो उसे द्वितीय रूप ध्यान चित्त कहा जाता है। यह विन्ननंचयतना चित्त है। आकाशनचयतनब चित्त नामक चित्त द्वारा पूर्व में असीम स्थान देखा जाता है। जिस प्रकार आकाश, जो कि स्थान है, असीम है, उसी प्रकार चित्त, जो कि स्थानी है, भी असीम है। जब इस असीम चेतना को देखा जाता है, तब द्वितीय अरूप ध्यान चित्त उत्पन्न होता है।

जब वे चित्त मुक्त हो जाते हैं और जब मन उन चित्तों की अनुपस्थिति, यानी शून्यता या नत्थिभो पन्नत्त पर ध्यान केंद्रित करता है, तब तीसरा अरूप ध्यान उत्पन्न होता है और इसे अकिंचनयतन चित्त कहते हैं। किंच का अर्थ है कुछ, अकिंच का अर्थ है कुछ नहीं या शून्य। अगला चित्त इस चित्त को देखता है और चूंकि यह कहना कठिन है कि सन्ना है या नासन्न, इसलिए इसे नेवसन्ननसन्नयतन चित्त कहते हैं और यह चौथा अरूप ध्यान चित्त है।

नेवासन्नानसन्नयतन ना, एव, सन्ना, नसन्ना और आयतन से मिलकर बना है। ना का अर्थ है नहीं और एव का अर्थ है ऐसा। सन्ना का अर्थ है बोध और नसन्ना का अर्थ है अबोध। आयतन का अर्थ है जहाँ चित्त और चेतसिका निवास करते हैं या निर्भर करते हैं। यह विषय चौथे अरूप ध्यान का विषय है। यह परमत्थ धम्म है और चित्त है। यह तीसरा अरूप ध्यान है।

वह अरूपा झान चित्त वस्तु को शून्यता के रूप में ग्रहण करता है। इसलिए यह कहना बहुत कठिन है कि इस चित्त में सन्नाटा है या बोध, और यह कहना भी उतना ही कठिन है कि इस चित्त में बोध नहीं है। अतः इसे न तो बोध और न ही अबोध कहा जाता है।

जब मन चित्त और ध्यान की अवस्था में होता है, तो वह पूर्णतः शांत और पाप-वंचनाओं से मुक्त होता है। परन्तु यह रूपा ध्यान वास्तव में पूर्णतः शांत नहीं होता, क्योंकि यह किसी भी क्षण रूपा ध्यान में और फिर कामभूमि में वापस जा सकता है। ऐसी अस्थिरता या इस प्रकार के परिवर्तन को दूर करने का कोई उपाय अवश्य होना चाहिए। परन्तु इन आठ ध्यानों का प्रयोग करके धर्मों का पुनः चिंतन किया जाता है।

धम्म का अभ्यास करने वाला व्यक्ति आंतरिक और बाह्य रूप से धम्म का चिंतन करता है और धम्म को उसकी समग्रता में देखता रहता है। वह चित्त के उत्पन्न होने पर उत्पन्न होने वाली भावनाओं का चिंतन करता है। वह चित्त का चिंतन करता है और देखता है कि वे किस प्रकार के चित्त हैं। वह निवारण की अनुपस्थिति आदि जैसे उत्पन्न होने वाले धम्मों का चिंतन करता है। जैसे-जैसे वह पुराने उत्पन्न अस्वास्थ्यकर तत्वों से बचने, अविकसित अस्वास्थ्यकर तत्वों के उत्पन्न होने को रोकने, नए उत्पन्न होने वाले स्वास्थ्यकर तत्वों को विकसित करने और विद्यमान स्वास्थ्यकर तत्वों को बढ़ाने का अभ्यास करता है, उसका प्रयास उसकी जागरूकता को सुदृढ़ करता है।

उन्हें पूर्ण स्थिरता और शांति प्राप्त करने की प्रबल इच्छा है। उनका मन सद्भावना से प्रेरित है। वे सभी आठ ध्यान अवस्थाओं से गुजर चुके हैं, लेकिन वे जानते हैं कि ये अभी तक पूर्ण शांति नहीं हैं और ये ध्यान अवस्थाएँ अंततः स्थिर नहीं हैं। परन्तु वे शांत हैं और अनेक धर्मों का अनुभव होने के कारण वे सही और गलत का ज्ञान रखते हैं। इसीलिए वे चौथी रूपा ध्यान अवस्था में नहीं ठहरते। उन्हें पूर्ण स्थिरता और पूर्ण शांति की ओर ले जाने वाले नए मार्ग की खोज में दृढ़ विश्वास है। उनकी जागरूकता और ज्ञान उन्हें मार्ग दिखाते हैं। उनका वीर्य या प्रयास अथक है और वे पूर्ण रूप से स्थिर हैं।

जब वह धर्मों का अध्ययन करता है, और जब वह पूर्ण परिपक्व हो जाता है, तब उसे शांति और सुकून मिलता है, और ज्ञानोदय के सभी तत्व प्रकट होते हैं। ये तब होता है जब अष्टांगिक मार्ग प्रकट होता है। इन सब से ठीक पहले उसे रूप और नाम का ज्ञान होता है। ये बिना किसी कारण के उत्पन्न नहीं होते। और वह यह पहचान लेता है कि ये धर्म स्थायी नहीं हैं। इससे उसे यह ज्ञान प्राप्त होता है कि ये दुःख हैं और किसी के भी वश में नहीं हैं। ये निस्वार्थ हैं।

वह चीजों को उत्पन्न होते और लुप्त होते देखता है। ये क्षणिक हैं, जिन्हें वह बाद में बस गुजरते हुए ही देख पाता है। जैसे ही वह उन्हें देखता है, वे गायब हो जाते हैं और वह भयभीत हो जाता है। क्योंकि वे सही चीजें नहीं हैं, इसलिए वह वैराग्य धारण कर लेता है। जैसे-जैसे उसका आसक्ति कम होती जाती है, वह मुक्ति पाने का प्रयास करता है और फिर से उन धर्मों पर चिंतन करने का प्रयास करता है जो उत्पन्न होते हैं और लुप्त हो जाते हैं। तब वह संतुलन देखता है और किसी भी चीज से आसक्त नहीं रहता और उन्हें उनके वास्तविक स्वरूप में स्वीकार करता है।

जब व्यक्ति अच्छे अनुभव प्राप्त करता है, तो उसे क्रमिक ज्ञान प्राप्त होता है जो उसे मोक्ष की ओर ले जाता है। समस्त संसार में अनेक क्लेश हैं, इसलिए क्लेशों को दूर करने के लिए चार अलग-अलग चरण होते हैं। परिपक्व और पूर्ण ज्ञान प्राप्त व्यक्तियों के मामले में ये चरण क्रमिक रूप से घटित हो सकते हैं, लगभग कुछ मिनटों से लेकर घंटों के भीतर। लेकिन परिस्थितियों के आधार पर, इन चार चरणों के घटित होने के विभिन्न तरीके हो सकते हैं।

जब चित्त को पहली बार पूर्ण स्थिरता और परम शांति या निर्वाण का अनुभव होता है, तो उस चित्त को सोतापत्ति मार्ग कुशल चित्त कहा जाता है। सोतापत्ति शब्द सोता और आपापत्ति से मिलकर बना है। सोता का अर्थ है नदी का प्रवाह और आपापत्ति का अर्थ है पहुंचना, प्राप्त करना, पहुंच पाना। मार्ग का अर्थ है पथ, सड़क, रास्ता। यह सोतापत्ति मार्ग कुशल चित्त कुल 89 चित्तों में से 82वां चित्त है। इस अवस्था को पार करने के बाद, मन में कोई गलत धारणा नहीं रह जाती और यह विचार भी समाप्त हो जाता है कि निर्वाण का अस्तित्व अटल और अपरिवर्तनीय है, यहां तक कि अपने प्राणों की आहुति देकर भी। इसका अर्थ है कि उसने सभी संदेहों और गलत धारणाओं को दूर कर दिया है।

अगली बार जब वह निर्वाण का निःसंकोच करता है और निर्वाण को देखता है, तो प्रवाह में रहने के कारण उसका मौजूदा क्लेश कम हो जाता है। जब निर्वाण को देखने वाला यह नया चित्त उत्पन्न होता है, तो इसे निर्वाण दर्शन की दूसरी अवस्था कहा जाता है। इस नए चित्त को सकदागामी मार्ग कुशल चित्त कहा जाता है। यह 89 चित्तों में से 83वां चित्त है। सकदागामी शब्द 'सक' या 'सक्किम' से बना है जिसका अर्थ है एक बार और 'आगामी' का अर्थ है गम या मानव गांव या कामभूमि में आना। इसलिए जब उनकी मृत्यु होती है तो कामभूमि में वापस आने का केवल एक ही मौका होता है, यानी कामभूमि में एक बार पुनर्जन्म। इसका अर्थ है कि उसके बाद वे कभी कामभूमि में वापस नहीं आएंगे, बल्कि रूप ब्रह्मभूमि में जाएंगे यदि वे अभी भी अरहत नहीं हैं।

जब वह तीसरे चरण को पार कर लेता है और निर्वाण को देखता है, जैसा कि वह दो बार देख चुका होता है, यानी सोतापत्ति मार्ग चित्त और सकदागामी मार्ग चित्त में, तब वह क्लेशों को दूर करने के मामले में अधिक परिपक्व हो जाता है। इस बार, वह सभी काम राग और सभी घृणा या दोष को मिटा देता है। जब इस प्रकार का चित्त उत्पन्न होता है, तो इसे अनागामी मार्ग कुशल चित्त कहा जाता है। यह 89 चित्तों में से 84वां चित्त है। अनागामी, अना और आगमी से मिलकर बना है। इसलिए वह काम भूमि में वापस नहीं लौटेगा। जैसे ही ये अनागम मरते हैं, वे 5 शुद्धवास चतुत्थ ध्यान रूप ब्रह्म भूमियों में पुनर्जन्म लेंगे।

जब ये अनागम निर्वाण को फटकारते हैं और निर्वाण को देखते हैं, क्योंकि वे पहले ही तीन बार निर्वाण का दर्शन कर चुके हैं और परिपक्व एवं परिपूर्ण हो चुके हैं, तो वे शेष सभी क्लेशों का पूर्णतया उन्मूलन कर देते हैं। उनका सारा कार्य पूर्ण हो चुका होता है। उनका कार्य क्लेशों का निवारण करना है। जब यह निकटवर्ती चित्त निर्वाण के पास पहुँचता है और उसे देखता है, तो इसे अरहत मार्ग कुशल चित्त कहा जाता है। जैसे ही यह चित्त उत्पन्न होता है, जिस पुग्गला में यह चित्त उत्पन्न होता है, वह अरहत बन जाता है। यह अरहत मार्ग कुशल चित्त 89 चित्तों में से 85वाँ चित्त है।

जैसे ही मग्गा चित्त उत्पन्न होता है, वह लुप्त हो जाता है और उसके तुरंत बाद उसी स्तर का फल चित्त उत्पन्न होता है। इस प्रकार चार संगत चित्त होते हैं जो मग्गा कुशल चित्तों के परिणाम हैं और इन सभी को विपाक चित्त कहा जाता है। ये लोकउत्तरा विपाक चित्त हैं। अन्य विपाक चित्तों के विपरीत, ये पूर्णतः चेतन होते हैं और निर्वाण के प्रति अत्यंत आनंदमयी होते हैं क्योंकि निर्वाण किसी भी प्रकार के दुख से मुक्त होता है। ये चार चित्त हैं:

86. सोतापट्टी फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 87. सकादगामी फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 88. अनागामी फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 89. अरहट्टा फला लोकुत्तरा विपाक चित्त।

ये 89 चित्त, चित्त ही हैं और ये सभी मन के विषय हो सकते हैं तथा ये धम्मरम्मन हैं। इन 89 चित्तों से अधिक कुछ नहीं है। परन्तु विख्यात या ज्ञानी इन अंतिम 8 लोकउत्तर चित्तों को ध्यान चित्तों के संदर्भ में भी देखते हैं। यद्यपि 8 ध्यान हैं, ध्यान के अनुसार 5 स्तर हैं। अतः कुल 40 लोकउत्तर चित्त हैं (8 > 5 = 40)। इस प्रकार 81 + 40 = कुल 121 चित्त हैं।

81 लोकी चित्त हैं। 8 लोकुत्तारा चित्त हैं। लोकुत्तारा चित्त या अलौकिक चेतना को कभी-कभी झानों के संबंध में माना जाता है। यही कारण है कि जब ये लोकुत्तरा चित्त झाना के आसपास उत्पन्न होते हैं तो उन्हें लोकुत्तरा झाना चित्त कहा जाता है। 5 झान हैं. सभी अरूप झानों में झाना कारक के रूप में एकगाटा होता है और वे 5वें झाना में शामिल होते हैं। तो जैसे 8 लोकुत्तरा चित्त हैं, 40 लोकुत्तरा झना चित्त होंगे।

1. विटक्का, विचारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं सोतापट्टी मग्गा पथमज्जना लोकुत्तरा कुसल चित्त 2. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं सोतापत्ति मग्गा दुतियाज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता 3. पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं सोतापट्टी मग्गा पथमज्जना लोकुत्तरा कुसल चित्ता चित्त 4. सुखेकाग्गाता सहितं सोतापट्टी मग्गा कटुत्थज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता 5. उपेक्खेकाग्गाता सहितम् सोतापट्टी मग्गा पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा कुसाला चित्ता

6. विटक्का, विचारा, पिटि, सुखेकागगता सहितं सोतापट्टी फल पथमज्जना लोकुत्तरा विपाक चित्त 7. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं सोतापत्ति फला दुतियाज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त 8. पिटी, सुखेकाग्गाता सहितं सोतापट्टी फला पथमज्जना लोकुत्तरा विपाका चित्ता 9. सुखेकागगता सहितं सोतापट्टी फल चतुत्थज्झाना लोकुत्तर विपाक चित्त 10. उपेक्खेकाग्गाता सहितं सोतापट्टी फला पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा विपाक चित्त

11. वितक्क, विचारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितं सकादगामी मग्गा पथमज्ज्हाना लोकुत्तरा कुसल चित्त 12. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं सकादागामी मग्गा दुतियाज्झाना लोकुत्तरा कुसाला चित्त 13. पिति, सुखेकाग्गाता सहितम् सकादागामी मग्गा ततियाज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता 14. सुखेकाग्गाता सहितं सकादगामी मग्गा चतुत्थाज्हाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता 15. उपेक्खेकाग्गाता सहितं सकदागामी मग्गा पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता

16. वितक्क, विचारा, पिति, सुखेकागगता सहितं सकादगामी फल पथमज्ज्झाना लोकुत्तरा विपाक चित्त 17. विकारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितं सकादागामी फल दुतियाज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त 18. पिति, सुखेकाग्गाता सहिताम् सकादागामी फला ततियाज्झाना लोकुत्तरा विपाक चित्त 19. सुखेकागगत सहितं सकादगामी फल चतुत्थज्झाना लोकुत्तरा विपाक चित्त 20.उपेक्खेकागगत सहितं सकड़गामी फल पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा विपाक चित्त

21. विटक्का, विचारा, पिति, सुखेकाग्गाता सहितम् अनागामी मग्गा पथमज्जना लोकुत्तरा कुसल चित्त 22. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितम् अनागामी मग्गा दुतियाज्झाना लोकुत्तरा कुसाला चित्त 23. पिति, सुखेकाग्गाता सहितम् अनागामी मग्गा ततियाज्हाना लोकुत्तरा कुसाला चित्त 24. सुखेकागगत सहितम् अनागामी मग्गा चतुत्थज्झाना लोकुत्तरा कुसाला चित्ता 25. उपेक्खेकाग्गाता सहितम् अनागामी मग्गा पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता

26. विटक्का, विचारा, पिति, सुखेकागगत सहितं अनागामी फल पथमज्जना लोकुत्तरा विपाक चित्त 27. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितम् अनागामी फल दुतियाज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त 28. पिटि, सुखेकाग्गाता सहितम् अनागामी फल ततियाज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त 29. सुखेकागगता सहितं अनागामी फल चतुत्थज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त 30.उपेक्खेकाग्गाता सहितम् अनागामी फल पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा विपाका चित्त

31। कुसल चित्त 34. सुखेकागगत सहितम् अरहट्टा मग्गा चतुत्थज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्त 35. उपेक्खेकाग्गाता सहितम् अरहट्टा मग्गा पंचमज्ज्झाना लोकुत्तरा कुसल चित्ता

36. विटक्क, विचारा, पिटि, सुखेकागगता सहितं अरहट्टा फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 37. विकारा, पिटि, सुखेकाग्गाता सहितं अरहट्टा फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 38. पिटी, सुखेकाग्गाता सहितं अरहट्टा फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 39. सुखेकागगाता सहितं अरहट्टा फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 39. फला लोकुत्तरा विपाक चित्त 40.उपेक्खेकागगत सहितं अरहत्ता फला लोकुत्तरा विपाक चित्त।

81 लोकी चित्तों के साथ कुल मिलाकर 121 चित्त होते हैं। चित्त इन चित्तों को अपना विषय बना सकता है। अतः सभी 121 चित्त, चित्त के अरम्मन या विषय हो सकते हैं और इन्हें मन का विषय या धम्मरम्मन कहा जाता है।

कुछ अरम्मनाएँ या वस्तुएँ विशिष्ट चित्तों के लिए होती हैं। पाँच वस्तुएँ भौतिक वस्तुएँ हैं और इन्हें पाँच इंद्रियाँ कहा जाता है। ये हैं रूपारम्मना (दृष्टि), सद्दारम्मना (ध्वनि), गंधारम्मना (सूंघना), रसारम्मना (स्वाद) और फोत्तब्बारम्मना (स्पर्श)। छठी अरम्मना या छठी वस्तु मन की वस्तु है। इसे धम्मरम्मना या मन की वस्तु कहा जाता है।

पिछले पृष्ठों में 5 पसदा रूप, 16 सुखुम रूप या 16 सूक्ष्म पदार्थ और 89 चित्तों पर अरम्मन के रूप में चर्चा की गई है। अन्य धर्म भी हैं जो धम्मरम्मन या मन के विषय के रूप में कार्य करते हैं। ये चेतसिक या मानसिक कारक हैं। हमारे दैनिक जीवन में, हम इन चेतसिकों के संपर्क में आते हैं। उदाहरण के लिए क्रोध, प्रसन्नता, अहंकार, लोभ आदि।

चेतसिकाएँ चित्त से संबंधित होती हैं, इसलिए इन्हें चेतसिकाएँ कहा जाता है। ये मानसिक कारक अपने संबंधित चित्त के साथ उत्पन्न होते हैं और चित्त के विलुप्त होने पर विलुप्त हो जाते हैं। ये मानसिक कारक उसी वस्तु को ग्रहण करते हैं जिसे चित्त ग्रहण करता है। ये सभी उसी वस्तु पर आधारित होते हैं जिस पर चित्त निर्भर करता है या जिसमें चित्त निवास करता है।

ये चेतसिक पृथक सत्ताएँ नहीं हैं। वे हमेशा चित्त में विलीन हो जाते हैं, जिसके साथ वे उत्पन्न होते हैं। वे अविभाज्य हैं। यद्यपि वे अविभाज्य हैं, फिर भी चित्त के कार्य करते समय उन सभी की अपनी-अपनी विशेषताएँ और विशिष्ट कार्य होते हैं। इसलिए इन चेतसिकों या मानसिक कारकों का अलग से अध्ययन करना आवश्यक है। यद्यपि वे चित्त के मिश्रण से अविभाज्य हैं जो मानसिक क्षमताओं की एक सेना का निर्माण करते हैं, फिर भी वे पृथक परमत्थ धम्म हैं क्योंकि उनके अपने लक्षण और कार्य होते हैं।

कुल मिलाकर 52 चेतसिकाएँ हैं। यद्यपि 52 चेतसिकाएँ हैं, वे सभी कभी एक साथ प्रकट नहीं होतीं। चेतसिकाओं के विभिन्न वर्ग हैं और ये वर्ग कभी-कभी एक साथ कार्य करते हैं। चेतसिकाएँ या मानसिक कारक वे धम्म हैं जो चित्त को अपना कार्य करने में सहायता करते हैं। वे चित्त को उनके कार्यों के बारे में सलाह देते हैं और चित्त को उनका वर्णन करते हैं, जो सभी मानसिक शक्तियों का राजा या नेता है।

52 चेतसिकों में से 7 चेतसिक ऐसे हैं जो किसी भी चित्त के लिए सार्वभौमिक हैं और सभी चित्तों में पाए जाते हैं, चाहे वे अकुशल हों, कुशल हों, विपाक हों या क्रियाशील हों। चेतसिक यहाँ राजा चित्त के सेवकों के समान हैं। अतः इन 7 सार्वभौमिक चेतसिकों या सार्वभौमिक मानसिक कारकों को राजा चित्त के स्थायी सेवक कहा जा सकता है। यहाँ मैं इन्हें स्थायी इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि ये चेतसिक प्रत्येक क्षणिक रूप से विद्यमान होकर क्षणभंगुर हो जाते हैं, फिर भी एक ही कार्य को निरंतर करते हैं। स्थायी कहना शायद उपयुक्त न हो, लेकिन प्रत्येक चित्त के साथ इनका उद्भव इन्हें राजा चित्त के स्थायी सेवक बना देता है।

इन्हें सब्बाचित्तसाधारण चेतसिक कहा जाता है। सब्बा का अर्थ है सभी, और साधारण का अर्थ है हमेशा। ये 7 चेतसिक हैं

1. फस्सा या संपर्क 2. वेदना या भावना 3. चेतना या इच्छाशक्ति 4. सन्ना या बोध 5. एकाग्गता या एकाग्रता 6. जीवंतिन्द्रिय या मानसिक जीवन 7. मानसिक या ध्यान

संपर्क या फास्सा एक चेतसिका है। यह किसी भी चित्त के साथ उत्पन्न होता है। इसका कार्य चित्त के साथ अरम्मन और अन्य संबंधित चेतसिकाओं को जोड़ना है। यह संपर्क स्थापित करता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण लोहे की छड़ से पत्थर पर प्रहार करने में देखा जा सकता है। यहाँ पत्थर चक्खुप्पसाद रूप का प्रतिनिधित्व करता है। लोहे की छड़ रूपारम्मन का प्रतिनिधित्व करती है। जब लोहे पर पत्थर से प्रहार किया जाता है तो चिंगारियाँ उत्पन्न होती हैं। जब चक्खुप्पसाद रूप पर रूपारम्मन से प्रहार किया जाता है तो चक्खुविन्नन चित्त चिंगारियों के रूप में उत्पन्न होता है। चिंगारियाँ लोहे की छड़ और पत्थर की सतह के मिलन बिंदु पर उत्पन्न होती हैं। ये तीनों चीजें आपस में मिलती हैं। चक्खुविन्नन चित्त के उत्पन्न होने पर भी ऐसा ही होता है। रूपारम्मन, चक्खु पसदा और चक्खुविन्नन चित्त सभी एक ही बिंदु पर मिलते हैं। यह मिलन फास्सा या संपर्क द्वारा होता है।

किसी भी चित्त में जब फस्सा उत्पन्न होता है, तो हमेशा संपर्क स्थापित होता है। पतिसंधि चित्त के उत्पन्न होते ही फस्सा उत्पन्न हो जाता है। यह फस्सा या संपर्क, पतिसंधि चित्त और अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकाओं के साथ पिछले जन्म के मरण असन्न जावना चित्तों के अरम्मन से मिलने की विशेष व्यवस्था करता है। जब भावांग चित्त उत्पन्न होते हैं, तो फस्सा उत्पन्न होता है और भावांग चित्त और उनके साथ मौजूद चेतसिकाओं के साथ उसी अरम्मन से संपर्क स्थापित करता है। जब कोई प्राणी अस्तित्वहीन हो जाता है, तो मृत्यु से ठीक पहले एक चित्त उत्पन्न होता है जिसे चुति चित्त कहते हैं। उस समय, फस्सा उसी अरम्मन से संपर्क स्थापित करता है जैसा कि पतिसंधि चित्त और भावांग चित्तों के मामले में होता है। जब विति चित्त उत्पन्न होते हैं, तो प्रत्येक विति चित्त में चेतसिका के रूप में फस्सा होता है। फस्सा या संपर्क के बिना, चित्त कभी उत्पन्न नहीं होगा और चित्त द्वारा अरम्मन का कभी पता नहीं चलेगा।

वेदना एक अन्य चेतसिक है। यह भावना है। यह चित्त को अरम्मन का अनुभव करते समय उसे महसूस करने का निर्देश देती है। अरम्मन का ज्ञान या अरम्मन की जागरूकता चित्त का कार्य है। जब चित्त अरम्मन के प्रति जागरूक होता है, तब वेदना या भावनात्मक

मानसिक कारक राजा चित्त को अरम्मन का अनुभव करते समय महसूस करने का निर्देश देते हैं। वेदना अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकों को भी चित्त के साथ महसूस करने में सहायता करती है। भावना के बारे में सभी जानते हैं। भावना एक चेतसिक है। यह वेदना की विशेषता है और कोई अन्य चेतसिक यह कार्य नहीं कर सकती। अन्य चेतसिकों के साथ कुछ भ्रम हो सकता है जो भावना का कार्य नहीं करते हैं। लेकिन इन पर चर्चा तब की जाएगी जब हम आगे बढ़ेंगे। उदाहरण के लिए, मुदिता या सहानुभूतिपूर्ण आनंद, मेट्टा या प्रेमपूर्ण दया, करुणा या करुणा, पीति या आनंद आदि।

चेतना एक चेतसिका है। यह संकल्प है। यह राजा चित्त को अपना कार्य करने के लिए प्रेरित करती है और साथ ही अन्य सह-उत्पन्न चेतसिकाओं को भी अपना कार्य करने का निर्देश देती है। इसका प्रेरक प्रभाव होता है। चेतना राजा चित्त को याद दिलाती है कि उसे अपना कार्य करना है, अर्थात् वस्तु को ग्रहण करना, वस्तु को जानना और उसके आरंभिक या विषय के प्रति सजग रहना। चेतना के बिना चित्त उत्पन्न नहीं हो सकता। चेतना ही सभी क्रियाओं के लिए उत्तरदायी है क्योंकि वह निरंतर प्रेरित और प्रोत्साहित करती है। इसके प्रोत्साहन के बिना चित्त और अन्य संबंधित चेतसिकाएँ कुछ भी नहीं करेंगी और चेतना चेतसिका के बिना वे उत्पन्न भी नहीं होंगी। यह चेतना वास्तव में चित्त और अन्य चेतसिकाओं तथा चित्तज रूपों के लिए सहज कर्म पच्चया या सह-उत्पन्न कर्म स्थितियों के रूप में कार्य करती है।

सन्ना एक अन्य चेतसिका है। उसका कर्तव्य अरम्मना को चिह्नित करना है। वह राजा चित्त को भी सलाह देता है कि वे साथ में अनुभव की गई अरम्मना को चिह्नित करें। सन्ना बोध है। यह अरम्मना को देखता है और उस पर अंकित चिह्नों को जानता है। जब वह राजा चित्त को देखने की सलाह देता है, तो चित्त अरम्मना के प्रति सजग रहते हुए उस चिह्न को भी देखता है। बार-बार होने वाले इस बोध से स्मृतियाँ बनती हैं। सन्ना हमेशा किसी भी चित्त के साथ उत्पन्न होता है। सन्ना के बिना चित्त अलग से उत्पन्न नहीं हो सकता। अरम्मना या वस्तु पर अंकित चिह्नों के माध्यम से सन्ना उत्पन्न होता है। यह सन्ना चित्त के बिना उत्पन्न नहीं हो सकता। जैसे ही चित्त उत्पन्न होता है, वह अरम्मना पर अंकित चिह्नों को देखते हुए उत्पन्न होता है। इन चिह्नों के माध्यम से सन्ना का अतीत के सन्नाओं से संबंध बनता है और ये सभी अरम्मना पर विशिष्ट चिह्नों के आधार पर स्मृति का एक खंड बनाते हैं।

एकाग्रता या एकाग्रचित्तता, चित्त के राजा के सार्वभौमिक मानसिक कारकों या स्थायी सेवकों के समूह में एक अन्य चेतसिका है। एकाग्रता चित्त नहीं है। यह चित्त के साथ उत्पन्न होने वाली चेतसिका है। यह चित्त को स्थिर रहने का निर्देश देती है। यह चित्त को एक बिंदु पर स्थिर होने का निर्देश देती है। जब चित्त कामवाचार महाकुशल चित्त होते हैं, तो उन चित्तों में एकाग्रता चेतसिकाएं अच्छे मानसिक कारक होती हैं। जब वे महाकुशल चित्त एक ही विषय को बार-बार ग्रहण करते हैं, तो उन चित्तों में एकाग्रता को समाधि कहा जाता है।

जीवितेंद्रिय सात सार्वभौमिक मानसिक कारकों में से एक है, जो चित्त राजा के सात स्थायी सेवकों में से एक है। यह मानसिक जीवन है। यह चित्त और उससे संबंधित मानसिक चेतसिकाओं को जीवन शक्ति के रूप में सहारा देता है। जीवितेंद्रिय के बिना चित्त और अन्य चेतसिकाएँ उत्पन्न नहीं हो सकतीं। जीवितेंद्रिय सभी 89 चित्तों या 89 प्रकार की चेतनाओं में से प्रत्येक के साथ हमेशा उत्पन्न होता है।

मनसिकारा एक चेतसिका है और यह ध्यान का प्रतीक है। यह एक वस्तु पर केंद्रित रहता है। यह मार्गदर्शक है। जब यह उत्पन्न होता है, तो यह एक वस्तु पर ही केंद्रित रहता है और किसी अन्य वस्तु की ओर विचलित नहीं होता। यह 89 चित्तों में से प्रत्येक के साथ उत्पन्न होता है। मनसिकारा चित्त को निर्देशित करता है कि वह सीधे उस वस्तु की ओर जाए, न कि उस वस्तु के अलावा किसी अन्य वस्तु की ओर। यह एक मार्गदर्शक की तरह है। इस चेतसिका मनसिकारा द्वारा ही ध्यान उत्पन्न होता है।

छह चेतसिकाएं हैं जो अनेक चित्तों के साथ लचीले ढंग से कार्य करती हैं। ये विशेष मानसिक कारक या राजा चित्तों के लचीले सेवक हैं। ये हैं: वितक्का (प्रारंभिक क्रिया), विचार (निरंतर क्रिया), पीति (आनंद), वीर्य (प्रयास), चंदा (इच्छा) और अधिमोक्खा (निर्णय)। जब ये कुशल चित्तों के साथ उत्पन्न होती हैं, तो कुशल चेतसिकाएं बन जाती हैं। लेकिन जब ये अकुशल चित्तों के साथ उत्पन्न होती हैं, तो अकुशल चेतसिकाएं बन जाती हैं। इसलिए इन्हें राजा चित्त के लचीले सेवक कहा जाता है।

विटक्का एक सिटासिका है और यह प्रारंभिक अनुप्रयोग है। यह वस्तु पर चित्त लगाता है। यह चित्त को वस्तु पर लगाने की सलाह देता है। यह चित्त को धकेलता है और चित्त को वस्तु की ओर जाना पड़ता है जैसा कि विटक्का सलाह देता है। विटक्का विभिन्न प्रकार के होते हैं। काम विटक्का या कामुक विचार, ब्यापदा विटक्का या विनाशकारी विचार, विहिंसा विटक्का या यातना देने वाले विचार, झना विटक्का जो झाना का एक हिस्सा है और यह झाना वस्तुओं पर कुसल चित्त लागू करता है। और अभी भी मग्गा विटक्का और फला विटक्का हैं और उन्हें नोबल अष्टांगिक पथ का सम्मा संकप्पा कहा जाता है।

विचार, वितक्का का मित्र है। विचार निरंतर क्रिया है। जब किसी वस्तु पर क्रिया निरंतर बनी रहती है, तो चित्त उससे दूर नहीं होता। वितक्का किसी वस्तु को पीछे से धक्का देने के समान है, जबकि विचार वस्तु के केंद्र से खींचने के समान है और बल को बनाए रखते

हुए चित्त को वस्तु की ओर आकर्षित करता है। वितक्का और विचार एक साथ काम करते हैं। इन दो चेतसिक गुणों के लिए अनेक उपमाएँ हैं। जब घंटी बजाई जाती है, तो प्रारंभिक ध्वनि वितक्का के समान होती है और घंटी का बजना विचार के समान होता है। विचार बार-बार वस्तु को ग्रहण करता है और उसकी समीक्षा करता है। जब कोई पक्षी जमीन पर विश्राम करते हुए आकाश में उड़ता है, तो पंखों का प्रारंभिक फड़फड़ाना वितक्का के समान होता है और आकाश में निरंतर फड़फड़ाना विचार के समान होता है। इसके अलावा भी अनेक उपमाएँ हैं।

पीति एक चेतसिका है। यह आनंद है। यह समानता है। यह रुचि है। यह चित्त को विषय का आनंद लेने का सुझाव देती है और पीति के कारण चित्त विषय को पसंद करता है। पीति चित्त और अन्य सभी मानसिक शक्तियों को तरोताज़ा करती है। यह चित्त और चेतसिकाओं को ऊर्जा प्रदान करती है। पीति की उपस्थिति में, चित्त और चेतसिकाओं सहित सभी मानसिक शक्तियां प्रसन्न और आनंदित हो जाती हैं। पीति की सबसे निम्न अवस्था समानता है। पीति की विभिन्न अवस्थाएँ होती हैं। ये हैं: थोड़ी रुचि या कुद्दिका पीति, क्षणिक आनंद या खानिका पीति, आनंद का उतार-चढ़ाव या ओकांतिका पीति, रोमांचकारी भावना या परमानंद या उब्बेगा पीति, और व्याप्त आनंद या परमानंद या फराना पीति।

वीरय एक मानसिक कारक है। यह चित्त को प्रयास करने का निर्देश देता है। वीरय वह प्रयास है जो वस्तु से हटे बिना उस पर केंद्रित रहता है। जब वीरय उत्पन्न होता है, तो चित्त और उससे संबंधित सभी चेतसिकाओं में पूर्ण शक्ति आ जाती है और वे सभी वस्तु से हटे बिना एक साथ कार्य करते हैं। वीरय अधिकांश 89 चित्तों में उत्पन्न होता है। अपवाद 10 पंचविन्नन चित्त हैं, जहाँ वीरय की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वहाँ पहले से ही तीन चीजों, अर्थात् रूपरामन्न या दृश्य वस्तु, चक्खुप्पसाद या आँख और चक्खुविन्नन चित्त, पर प्रभाव पड़ता है। ये बिना किसी प्रयास के होते हैं। चक्खुविन्नन चित्त से पहले आने वाले पंचद्वरवज्जन चित्त को भी इसी कारण से वीरय की आवश्यकता नहीं होती। इसी प्रकार 2 सम्पतीच्छन चित्त और 3 सन्तिरण चित्त को भी। अतः वीरय 73 या 89 चित्तों में उत्पन्न होना आवश्यक है। मनोद्वरवज्जन चित्त को वीरय की आवश्यकता होती है क्योंकि उसे वस्तु का चयन करना होता है। अन्य चित्त भी ऐसा ही करते हैं।

चंदा एक चेतसिका है और यह चित्त को लक्ष्य की कामना करने का निर्देश देती है। चंदा में प्रेरक शक्ति होती है। चंदा या कामना चार अधिपति धर्मों में से एक है, अर्थात् चंदा अधिपति, चित्त अधिपति, वीर्य अधिपति और विमांश अधिपति या पन्ना। अधिपति धर्म एक सम्राट की तरह व्यवहार करता है। इसका अर्थ है कि जब वे प्रबल होते हैं, तो वे किसी भी अन्य धर्म का नेतृत्व करते हैं। चंदा चार इद्धिपादों या सफलता के आधारों में से एक है। धर्म की विषयवस्तु अधिपति धर्म के समान ही होती है। चंदा के बिना कुछ भी सिद्ध नहीं किया जा सकता। यह चेतसिका चंदा लोभ नहीं है। यद्यपि लोभ हमेशा चंदा के साथ उत्पन्न होता है, चंदा हमेशा लोभ के साथ उत्पन्न नहीं होता। जब चंदा अलोभ के साथ उत्पन्न होता है, तो वह सम्म चंदा बन जाता है।

अधिमोक्खा, राजा चित्त के छह विशिष्ट मानसिक कारकों या छह लचीले मंत्रियों में से एक चेतसिका है। यह राजा चित्त को विषय पर निर्णय लेने में मार्गदर्शन करता है। अधिमोक्खा की उपस्थिति में, चित्त स्पष्ट रूप से विषय पर निर्णय लेता है। अधिमोक्खा की अनुपस्थिति में, चित्त विषय पर निर्णय नहीं ले पाता और इस प्रकार के चित्त जिनमें अधिमोक्खा नहीं होता, अनिर्णय की स्थिति में आ जाते हैं। दस पंचविन्नन चित्तों में अधिमोक्खा की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि निर्णय लेने के लिए कुछ होता ही नहीं। विचित्र चित्त में, अधिमोक्खा नहीं होता और तब चित्त को यह ज्ञात नहीं होता कि विषय सही है या गलत, और चित्त डगमगाने लगता है।

वस्तुएँ मौजूद हैं। चित्त या चेतना इन वस्तुओं को जानती हैं। लेकिन प्रत्येक विशिष्ट चित्त की अपनी उपयुक्त वस्तु होती है। वस्तुएँ छह प्रकार की होती हैं। पहली पाँच वस्तुओं का वर्णन किया जा चुका है। छठी प्रकार की वस्तु मन की वस्तु है। इन्हें सामूहिक रूप से धम्मरम्मन कहा जाता है। इनमें शामिल हैं: 1. पाँच पसद रूप, 2. 16 सुखुम रूप, 3. 89 चित्त या 89 चेतनाएँ, 4. 52 चेतसिक, 5. निर्वाण और 6. पन्नत्ति।

52 चेतसिकों में से, 7 सार्वभौमिक मानसिक कारकों और 6 विशिष्ट मानसिक कारकों की व्याख्या पिछले पृष्ठ पर की जा चुकी है। इन 13 चेतसिकों को सामूहिक रूप से अन्नसमना चेतसिक कहा जाता है। अन्न या अनेहि का अर्थ है व्यवहार करना। समना का अर्थ है सहमत होना, बराबर होना, उपयुक्त होना या अनुकूलित होना। अतः दोनों ही अकुशल या कुशल चेतसिकों के अनुकूल हैं। 14 मानसिक कारक ऐसे हैं जो पूरी तरह से अकुशल हैं।

वे हैं

ए) 4 मोह जड़ वाले चेतसिका

1. मोह (अकुशल राजा) 2. अहिरिका (अकुशल राजा का दाहिना हाथ) 3. अनोत्तप्पा (अकुशल राजा का बायां हाथ) 4. उद्धच्च (अकुशल राजा का सचिव)

बी) 3 लोभ जड़ वाले चेतसिका

1. लोभ (लोभ चित्तों का राजा) 2. माना (लोभ राजा की रानी) 3. दिठ्थी (लोभ राजा की एक अन्य रानी)

सी) 4 डोसा जड़युक्त सेतासिका

1. डोसा (डोसा चित्तों का राजा) 2. इस्सा (डोसा राजा की पहली जुड़वां रानी) 3. मच्छरिया (डोसा राजा की दूसरी जुड़वां रानी) 4. कुक्कुच्चा (जुड़वां रानियों की बहन)

D) 3 अनिर्दिष्ट अकुशल चेतसिका (इनमें मोह मूल के रूप में मौजूद है)

1. थिना (मिद्धा का मित्र) 2. मिद्धा (थिना का मित्र) 3. विसीकिच्चा (डाउनटोनर)

मोह एक चेतसिका या मानसिक कारक है। मोह स्वयं चेतना नहीं है। परन्तु जब यह चित्त के साथ उत्पन्न होता है, तो यह वास्तविकताओं और सत्यों को इस प्रकार ढक लेता है कि चित्त उन्हें देख न सके। मोह चित्त को भ्रमित होने की सलाह देता है। मोह अंधकार के समान है। इसकी उपस्थिति में सत्य कभी प्रकट नहीं हो सकता।

अहिरिका एक मानसिक कारक है। यह एक प्रकार का अवरोधहीनता है। यह अनैतिकता है। अहिरिका राजा चित्त को लज्जित न होने की सलाह देती है। यह अवरोध को दूर करती है। अवरोध संभावित लज्जाजनक परिणामों का कारण बनता है। लेकिन अहिरिका की उपस्थिति में, क्योंकि अब कोई लज्जा नहीं रहती, सभी अकुशल कार्य बिना किसी अवरोध के किए जा सकते हैं।

अनोत्तप्पा एक मानसिक शक्ति है और यह अकुशल राजा मोह का वामपंथी पक्ष है। यह अहिरिका की तरह ही एक प्रकार का अवरोध-मुक्ति है। यह अवरोध को दूर करता है। वह अवरोध संभावित भयानक परिणामों का कारण बन सकता है। लेकिन अनोत्तप्पा की उपस्थिति में, भय का अभाव होने के कारण, सभी अकुशल क्रियाएं बिना किसी अवरोध के की जा सकती हैं।

उद्धच्चा एक मानसिक तत्व है और जब यह उत्पन्न होती है, तो यह राजा चित्त को विचलित होने की सलाह देती है। उद्धच्चा एक सचिव की तरह है और वह हमेशा अकुशल राजा मोह का अनुसरण करती है। उद्धच्चा, मोह, अहिरिका और अनोत्तप्पा के साथ मिलकर सार्वभौमिक अकुशल चेतसिकों का कार्य करती है। वे प्रत्येक अकुशल चित्त के साथ उत्पन्न होती हैं।

लोभ राज्य के चित्तों में, इन लोभ मूल चित्तों के चेतसिकाओं में, लोभ चेतसिका राजा होता है और वह अन्य संबंधित मानसिक कारकों का नेतृत्व करता है। इस लोभ राजा की दो रानियाँ होती हैं, जिनका नाम है मन चेतसिका और दिठ्ठी चेतसिका। राजा कभी भी दोनों रानियों के साथ एक ही समय में नहीं रहता।

लोभ एक चेतसिका या मानसिक कारक है। जब यह उत्पन्न होता है, तो यह महान राजा चित्त को सलाह देता है, जो इस विषय में सभी मानसिक शक्तियों का नेतृत्व करता है, कि राजा चित्त को उस वस्तु से लगाव रखना चाहिए जिसका वे सामना कर रहे हैं या जिसे वे ग्रहण कर रहे हैं। लोभ आसक्ति है और यह बहुत शक्तिशाली है तथा वस्तु की ओर आकर्षित करती है। जब यह मोह चेतसिका के साथ कार्य करता है, जो सत्य के प्रकाश को आवरण प्रदान करता है, तो लगभग सभी प्राणी उन वस्तुओं की ओर आकर्षित होते हैं जिनसे लोभ को अत्यधिक लगाव होता है।

जब लोभ राजा किसी रुचि की वस्तु की खोज में जाता है, तो उसकी एक रानी उसके पीछे-पीछे जाती है। मन एक चेतसिका या मानसिक कारक है और जब यह जागृत होती है, तो यह महान राजा चित्त को अभिमानी होने की सलाह देती है। मन अहंकार है। मन घमंड है। मन अभिमान है। मन उच्चता है। मन मोह चेतसिका और लोभ चेतसिका के साथ कार्य करती है। जबकि मोह सत्य के प्रकाश को ढक लेता है और लोभ मन सहित सभी मानसिक कारकों को वस्तु की ओर आकर्षित करता है, मन ऐसा व्यवहार करती है मानो वह सबसे शक्तिशाली हो।

जब मन की अनुपस्थिति में लोभ राजा किसी रुचि की वस्तु की खोज में जाता है, तो रानी दिठ्ठी राजा लोभ का अनुसरण करती है। दिठ्ठी एक चेतसिका या मानसिक कारक है। जब यह उत्पन्न होती है, तो यह महान राजा चित्त को गलत दृष्टिकोण से चीजों को देखने की सलाह देती है। दिठ्ठी के कारण, चित्त उस वस्तु को गलत तरीके से समझ लेता है जो वास्तव में उसके अनुमान के अनुरूप नहीं होती। यह चेतसिका दिठ्ठी मोह चेतसिका और लोभ चेतसिका के साथ मिलकर कार्य करती है।

दोष राज्य के चित्तों में, इन दोष मूल चित्तों में स्थित चेतसिकाओं में, दोष चेतसिका राजा हैं और वे अन्य संबद्ध चेतसिकाओं का नेतृत्व करते हैं। इस दोष राज्य में, राजा दोष की तीन रानियाँ हैं। लेकिन ये तीनों रानियाँ कभी भी राजा दोष के साथ एक साथ प्रकट नहीं होतीं।

राजा दोष इनमें से किसी भी रानी के बिना जा सकते हैं। ये तीनों रानियाँ जुड़वाँ बहनें ईसा चेतसिका और मच्छरिया चेतसिका और उनकी छोटी बहन उद्दच्च चेतसिका हैं।

दोष एक चेतसिका है और जब यह उत्पन्न होता है तो महान राजा चित्त को आक्रामक होने की सलाह देता है। दोष की सलाह से राजा चित्त व्याकुल और उत्तेजित हो जाते हैं। इस प्रकार दोष राजा चित्त के विनाशकारी मंत्रियों की सेना का नेता भी है। दोष घृणा, नफरत, अस्वीकार्यता, अधीरता का प्रतीक है और इसमें अनेक गुण समाहित हैं। संक्षेप में, यह घृणा और नापसंदगी से भरा एक उपद्रव है।

ईसा एक चेतसिका है और जब यह उत्पन्न होती है, तो यह महान राजा चित्त को उन लोगों से घृणा करने की सलाह देती है जिन्हें वह धन, सफलता, पद, प्रतिष्ठा, संपत्ति आदि अनेक गुणों में अपने से श्रेष्ठ समझता है। ईसा ईर्ष्या है। यह जलन है। यह नहीं चाहती कि दूसरों के पास बेहतर गुण, बेहतर उपलब्धि, बेहतर पद या बेहतर संपत्ति हो।

दूसरी ओर, मच्छरिया अपने गुणों को छुपाता है। वह नहीं चाहता कि कोई और उसकी संपत्ति और धन का उपयोग करे। मच्छरिया एक चेतसिका है, जो कंजूसी का प्रतीक है, और जब मच्छरिया चेतसिका जागृत होती है, तो वह महान राजा चित्त को भी कंजूस होने की सलाह देती है। मच्छरिया अपनी संपत्ति के उपयोग में दूसरों को शामिल नहीं होने देता।

राजा दोसा की तीसरी रानी कुक्कुच्चा है। कुक्कुच्चा एक चेतसिका है और चिंता का प्रतीक है। जब यह उत्पन्न होती है, तो कुक्कुच्चा चेतसिका महान राजा चित्त को चिंतित होने की सलाह देती है। कुक्कुच्चा उन कार्यों के बारे में चिंतित होती है जो नहीं किए गए हैं जबकि वास्तव में किए जाने चाहिए थे। कुक्कुच्चा उन कार्यों के बारे में भी चिंतित होती है जो किए गए हैं जबकि वास्तव में नहीं किए जाने चाहिए थे। चूंकि सब कुछ हो चुका है, इसलिए इस प्रकार की चिंता को बढ़ाना अच्छा नहीं है और कुक्कुच्चा या चिंता को बढ़ाना एक अकुशल चेतसिका है।

तीन अन्य चेतसिका भी हैं जो महान राजा चित्त के विनाशकारी मंत्री हैं। इनमें दो घनिष्ठ मित्र थिना और मिद्धा तथा एक विचिकिच्च चेतसिका शामिल हैं। थिना आलस्य का प्रतीक है। यह चित्त की सुस्ती है और जब यह उत्पन्न होती है, तो राजा चित्त को भी सुस्त और अपेक्षाकृत कम सक्रिय होने की सलाह देती है। मिद्धा एक चेतसिका है जो मानसिक सुस्ती का प्रतीक है और जब यह उत्पन्न होती है तो आलस्य का कारण बनती है। मिद्धा हमेशा अपने मित्र थिना के साथ ही प्रकट होता है।

वहाँ राजा चित्त का एक विनाशकारी मंत्री रह गया था। यह विचिचिच्च चेतसिका है। विचिचिच्च एक ऐसी चेतसिका है जो अनिर्णय का प्रतीक है। यह किसी विषय पर निर्णय लेने में असमर्थता है। यह संदेह और शंका है। अन्य अकुशल चेतसिकाओं के विपरीत, जो बहुतायत में पाई जाती हैं, विचिचिच्च हमेशा उत्पन्न नहीं होती और न ही बार-बार उत्पन्न होती है। लेकिन जब यह उत्पन्न होती है, तो यह महान राजा चित्त को निर्णय लेने में थका देती है, क्योंकि इस विनाशकारी मंत्री के कारण राजा चित्त किसी विषय पर निर्णय नहीं ले पाते।

वस्तुओं या अरम्मन धम्म में, पहले पांच रूप धम्म हैं और वे 5 भौतिक इंद्रियां हैं जैसे प्रकाश, ध्वनि, गंध, स्वाद और स्पर्श। 6वीं वस्तु या 6ठी इंद्रिय या 6ठी अरम्मना को धम्मरम्मना कहा जाता है और उनमें 5 पसादा रूप, 16 सुखुमा रूप, 89 चित्त, 1 निब्बान, 1 पन्नत्ती और 52 सीतासिका शामिल हैं। 52 चेतसिकों में से जो धम्मरम्मना के रूप में काम कर सकते हैं, 7 सार्वभौमिक मानसिक कारक, 6 विशेष मानसिक कारक और 14 अकुसाला चेतसिक या अस्वास्थ्यकर मानसिक कारकों पर पिछले पृष्ठों में चर्चा की गई है।

इसके अलावा 25 और चेतसिक या 25 मानसिक कारक हैं जो धम्मरम्मन के रूप में कार्य कर सकते हैं। इन 25 चेतसिकों में से 19 चेतसिक सभी प्रकार के शोभन चित्तों या सभी प्रकार की सुंदर चेतना के लिए सार्वभौमिक हैं। यदि किसी चित्त में ये 19 चेतसिक नहीं हैं, तो वह चित्त सुंदर चेतना नहीं है, जिसमें अरहतों का प्रसन्न मन भी शामिल है। इन 19 सार्वभौमिक शोभन चेतसिकों का नेतृत्व सद्ध चेतसिक करते हैं। आसान पहचान और स्मरण के लिए, इन 19 चेतसिकों को 2 समूहों में बांटा जा सकता है। दोनों समूहों में सद्ध चेतसिक शामिल होंगे, क्योंकि वे ही नेतृत्व करते हैं।

वास्तव में ये 19 चेतसिक कभी अलग नहीं हो सकते क्योंकि वे हमेशा एक शोभना चित्त में मिलकर काम करते हैं। ये दो समूह महान राजा चित्त की सेना और नौसेना हैं। सेना में सद्ध चेतसिक सेनापति और नेता होते हैं। नौसेना में भी सद्ध नौसेना के एडमिरल और नेता होते हैं। इस प्रकार चेतसिकों के दोनों समूहों में कुल 10 चेतसिक होते हैं। प्रत्येक समूह में 2 चेतसिक उप-नेता होते हैं और वे नेता सद्ध के बाद दूसरे स्थान पर होते हैं। यह स्मरण में आसानी के लिए है। प्रत्येक समूह में 2 सचिव होते हैं। इस प्रकार नेता, सचिव और 2 उप-नेताओं के बाद 6 अनुयायी बचते हैं। प्रत्येक समूह में 6 अनुयायी होते हैं। फिर से, प्रत्येक समूह में ये 6 अनुयायी एक दूसरे से अलग नहीं हो सकते और वे अलग-अलग समूह में नहीं हो सकते। लेकिन सरलता के लिए उन्हें ऐसा कहा जा सकता है। प्रत्येक समूह में 6 अनुयायी कुल मिलाकर 12 चेतसिक या चेतसिकों के 6 जोड़े बनाते हैं।

सद्धा एक मानसिक तत्व है और यह प्रत्येक सुंदर चेतना के साथ उत्पन्न होती है। जब यह उत्पन्न होती है, तो यह महान राजा चित्त को आत्मविश्वास से भरपूर रहने और अपने सामने आने वाली वस्तु पर भरोसा करने का परामर्श देती है। सद्धा आत्मविश्वास है। यह आस्था है। यह विश्वास है। यह आस्था है। सद्धा आकाश को साफ कर देती है जिससे आकाश में दिखाई देने वाली हर चीज स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। सद्धा एक रत्न के समान है। जब इस रत्न को गंदे पानी में डाला जाता है, तो सारी गंदगी नीचे बैठ जाती है और पानी साफ हो जाता है।

सती, सद्ध की सचिव हैं। सती हमेशा सद्ध के साथ चलती हैं। जब भी सद्ध उठते हैं, सती भी उठ खड़ी होती हैं। सती एक चेतसिका हैं। यह सजगता है। यह सतर्कता है। यह जागरूकता है। यह कार्यों का स्मरण है। यह विस्मृति नहीं है। इसलिए यह नेता सद्ध के सचिव की तरह व्यवहार करती हैं और सद्ध द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य को लिखती हैं। जब सती किसी चित्त में उठ खड़ी होती हैं, तो वह उस चित्त को सचेत रहने और विषय पर ध्यान केंद्रित करने की सलाह देती हैं।

सद्धा चेतसिका नेता के दो प्रतिनिधि होते हैं। वे राजा सद्धा के दाएं और बाएं हाथ के प्रतिनिधि हैं। ये हिरि और ओत्तप्पा चेतसिका हैं। हिरि और ओत्तप्पा चेतसिका हमेशा साथ मिलकर काम करते हैं और एक दूसरे से अविभाज्य हैं। दोनों में समान विशेषताएं हैं: संयम। हिरि और ओत्तप्पा दोनों ही चित्त को बुरे कर्म करने से रोकते हैं। लेकिन हिरि इस विचार से रोकता है कि संभावित भविष्य के परिणामों के कारण, जो शर्मनाक हो सकते हैं, बचना बेहतर है, इसलिए हिरि एक अलग चेतसिका बन जाता है। दूसरी ओर, ओत्तप्पा राजा चित्त को बुरे कर्म करने से रोकता है क्योंकि यह संभावित भविष्य के परिणामों का पूर्वाभास करता है, जो भयावह हो सकते हैं।

ये दो चेतसिकाएँ अत्यंत शक्तिशाली हैं और इन्हें लोकपाल धर्म कहा जाता है। लोक का अर्थ है काम लोक, रूप लोक और अरूप लोक। पाल का अर्थ है रक्षा करना। एक परिवार में पिता और पुत्री, माता और पुत्र होते हैं। माता-पिता को छोड़कर, जिनके दो बच्चे हैं पुत्र और पुत्री, परिवार के अन्य सदस्यों के बीच यौन संबंध नहीं होते। इसकी रक्षा हिरि और ओत्तप्पा चेतसिकाएँ करती हैं। लेकिन जब हिरि और ओत्तप्पा नष्ट हो जाते हैं और जब अहिरिका और अनोत्तप्पा चेतसिकाएँ मोह के साथ आ जाती हैं, तो सब कुछ संभव हो सकता है और वे सुंदर संसार को नष्ट कर देते हैं।

सद्धा चेतसिका (नौसेना में) के एक अन्य सचिव तत्रमज्जतत चेतसिका हैं। यह तत्रमज्जतत चेतसिका एक मानसिक कारक है। यह प्रत्येक सुंदर चेतना के साथ उत्पन्न होती है। यह संतुलनकारी है। यह संबंधित चित्त और अन्य मानसिक कारकों को संतुलित करती है। जब यह किसी चित्त में उत्पन्न होती है, तो यह महान राजा चित्त को संतुलन बनाए रखने का सुझाव देती है। तत्रमज्जतत चेतसिका एक सारथी की तरह व्यवहार करती है जो दो घोड़ों को खींचती गाड़ी चलाता है। यदि सारथी काम न करे, तो एक घोड़ा एक तरफ और दूसरा दूसरी तरफ खिंच सकता है, और इस प्रकार सारथी के काम न करने पर यात्रा लक्ष्यहीन हो जाएगी। लेकिन संतुलनकारी तत्रमज्जतत चेतसिका संतुलन बनाए रखती है और यात्रा को इच्छित मार्ग पर ले जाती है।

फिर भी, नेता सद्ध चेतसिकों के दो उप-प्रतिनिधि होते हैं। ये नौसेना समूह के चेतसिकों में होते हैं और ये अलोभ चेतसिक और आदोसा चेतसिक होते हैं। अलोभ सद्ध एडमिरल के दाहिने विंग के रियर एडमिरल होते हैं और आदोसा बाएं विंग के रियर एडमिरल होते हैं। अलोभ का अर्थ है अनासक्ति। अनासक्ति होने के कारण, यह हमेशा दान करते समय उत्पन्न होती है। इसलिए कभी-कभी इसे दान भी कहा जाता है। लेकिन अलोभ चेतसिक अन्य कुशल और अभ्यक्त चेतसिकों में भी उत्पन्न होते हैं। आदोसा का अर्थ है घृणा न करना। इसे मैत्री के नाम से भी जाना जाता है। इन दोनों चेतसिकों को अलग नहीं किया जा सकता और वे हमेशा साथ मिलकर काम करते हैं।

मुख्य साधक, उनके दो-दो उप-साझीदारों और सचिवों के बारे में व्याख्या के बाद, प्रत्येक समूह में छह अनुयायी शेष रह जाते हैं। इन सभी को यहाँ एक साथ माना जाएगा। चेतसिकों के ये छह जोड़े हमेशा एक साथ उत्पन्न होते हैं और इन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। लेकिन चरित्र के अनुसार, प्रत्येक अनुयायी की अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं। इन बारह चेतसिकों या चेतसिकों के छह जोड़ों की व्याख्या अगले पृष्ठ पर की जाएगी। यहाँ सरल संदर्भ के लिए 19 चेतसिकों की सूची नीचे पुनः दी गई है। साधक दोनों समूहों में शामिल हैं।

चित्त राजा की सेना में शामिल हैं:

1. श्रद्धा या विश्वास (सामान्य)
2. सती या सचेतनता (सचिव)
3. शर्मिंदगी या लज्जा (दक्षिणपंथी लेफ्टिनेंट जनरल या डिप्टी)
4. ओट्टाप्पा या भय (वामपंथी लेफ्टिनेंट जनरल या डिप्टी)
5. चित्तपसद्धि या मन की शांति
6. चित्तलहुता या मन की हल्कापन या प्रसन्नता

7. चित्तमुदुता या मन की लचीलापन
8. चित्तकम्मन्नत या मन की कार्यक्षमता
9. चित्तपगुणत या मन की प्रवीणता
10. चित्तुज्जुकता या मन की सच्चाई

राजा चित्त की नौसेना में शामिल हैं:

1. सद्धा
2. tatramajjhattata या संतुलन
3. अलोभा या अनासक्ति या दान
4. adosa or non aversion or metta
5. कायपसद्धि या मानसिक कारकों की शांति
6. मानसिक कारकों की कायलहुता या उत्प्लावन क्षमता
7. कयामुदुता या मानसिक कारकों की प्लास्टिसिटी
8. कयापगुन्नता या सीतासिका की प्रवीणता
9. चेतसिकाओं की कायुज्जुकता या सीधापन

छह चेतसिकाओं के जोड़े हैं जो हमेशा जोड़े में ही प्रकट होते हैं और अन्य सार्वभौमिक शोभना चेतसिकाओं के साथ समान रूप से पाए जाते हैं। जब मैंने उन्हें राजा चित्त की सेना और नौसेना के रूप में दो समूहों में उल्लेख किया, तो चित्त से संबंधित छह चेतसिकाएं राजा चित्त की सेना में शामिल थीं। अन्य छह चेतसिकाएं राजा चित्त की नौसेना में शामिल थीं। लेकिन वास्तव में कोई सेना या नौसेना नहीं है, बल्कि वे सभी मिलकर काम करते हैं।

ये 6 जोड़े या 12 सेटासिकाएं हैं

1. चित्तपसाद्धि और कायापसाद्धि
2. चित्तलहुता और कायलहुता
3. चित्तमुदुत और कायमुदुत
4. चित्तकम्मनता और कयाकम्मनता
5. चित्तपगुन्नाटा और कयापगुन्नाटा
6. cittujjukata and kayujjukata

ए) चित्तपसाधि और कायापसाधि

चित्तपसद्धि एक चेतसिका है। चित्तपसद्धि, चित्त और पसद्धि से मिलकर बना है। चित्त चेतना है और पसद्धि का अर्थ है शांति, स्थिरता और निर्मलता। जब यह चेतसिका उत्पन्न होती है, तो चित्त को शांत, स्थिर और निर्मल रहने की सलाह दी जाती है। जब आप दान-पुण्य जैसे कार्य करते हैं, तो आप अपने मन में शांति का अनुभव कर सकते हैं। यह चित्तपसद्धि के कारण होता है। यह चेतसिका चित्त को शांत और निर्मल बनाती है।

कायपसद्धि चित्तपसद्धि से बहुत मिलती-जुलती है और इन दोनों में अंतर करना बहुत कठिन है, इन्हें अलग करना तो बिल्कुल असंभव है। लेकिन कायपसद्धि नाम से ही दो पाली शब्द मिलकर बना है: काया और पसद्धि। यहाँ काया का अर्थ है चेतसिकों का समूह या चेतसिकों का समुच्चय, और पसद्धि का अर्थ है शांति और स्थिरता। जैसे चित्तपसद्धि के कारण चित्त शांत हो जाता है, वैसे ही कायपसद्धि चेतसिक के कारण उससे जुड़े चेतसिक भी शांत हो जाते हैं। ये दोनों चेतसिक जुड़वां भाई हैं।

b) चित्तलहुता और कायलहुता

चित्तलहुता एक चेतसिका है और जब यह उत्पन्न होती है, तो यह चेतसिका राजा चित्त को शीघ्र, प्रतिक्रियाशील और हल्का होने का सुझाव देती है। चित्तलहुता चित्त का उत्प्लावन है। इस चेतसिका के कारण, चित्त उन अकुशल चित्तों, अहेतुक विपाक चित्तों या अहेतुक क्रिया चित्तों की तुलना में हल्का हो जाता है, जिनमें चित्तलहुता सहवर्ती चेतसिका नहीं होती। यह चित्तपसद्धि के समान है, जो दान जैसे अच्छे कर्म करने, शील का निर्माण करने या मानसिक स्वास्थ्य को विकसित करने पर उत्पन्न होती है।

कायलहुता चित्तलहुता का जुड़वां भाई है। चित्तलहुता के कार्य करने पर चित्त हल्का हो जाता है, और कायलहुता के कार्य करने से सभी चेतसिक हल्के हो जाते हैं। कायलहुता संबद्ध चेतसिकों का उत्प्लावन बल है। यह चेतसिकों का हल्कापन है। चित्तलहुता और कायलहुता चेतसिक हमेशा एक साथ उत्पन्न होते हैं और एक साथ कार्य करते हैं। उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। और वे अपने दूसरे

जुड़वां भाई के बिना अकेले उत्पन्न नहीं हो सकते। ये दोनों चेतसिक अन्य 5 युग्मों के चेतसिकों के साथ और सर्वव्यापी शोभा चेतसिकों के साथ, जिनमें नेता सद्ध चेतसिक भी शामिल है, एक साथ उत्पन्न होते हैं।

ग) चित्तमुदुत और कायमुदुत

चित्तमुदुत चित्त की कोमलता है। यह एक चेतसिका है। यह लचीलापन है। यह तन्यता है। यह प्रत्यास्थता है। यह अनुकूलनशीलता है। यह प्रभावशीलता है। चित्तमुदुत आसानी से राजा चित्त को विनम्र, कोमल, लचीला और कोमल बना देता है। चित्तमुदुत की उपस्थिति में राजा चित्त मोमबत्ती के समान होता है, जो आग या गर्मी के पास रखी हो और किसी भी रूप में ढल सकती है।

कायमुदूत, चित्तमुदूत का जुड़वां भाई है और यह चेतसिकों की कोमलता या लचीलापन है। कायमुदूत चेतसिक की उपस्थिति में सभी चेतसिक लचीले हो जाते हैं। ये दोनों जुड़वां भाई एक चित्त में एक साथ कार्य करते हैं और अन्य 5 जोड़ी चेतसिकों और अन्य सार्वभौमिक शोभना चेतसिकों के साथ भी इनका उद्‍भव होता है।

d) चित्तकम्मन्नता और कयाकम्मनता

चित्तकम्मन्नत एक चेतसिका है। यह कार्यक्षमता है। यह अनुकूलनशीलता है। यह प्रतिक्रिया देने या काम करने की तत्परता है। जब शोभना चित्त उत्पन्न होता है, तो चित्तकम्मन्नत नामक एक चेतसिका भी उत्पन्न होती है और यह चेतसिका राजा चित्त को काम करने या प्रतिक्रिया देने के लिए तैयार रहने की सलाह देती है। यह एक प्रकार की सतर्कता है। यह कार्यक्षमता है।

कायकम्मन्नत, चित्तकम्मन्नत चेतसिका का जुड़वां भाई है। कायकम्मन्नत चेतसिकाओं की कार्यक्षमता, अनुकूलनशीलता और तत्परता का प्रतीक है। ये दोनों जुड़वां भाई अन्य 5 युग्मों और अन्य सार्वभौमिक शोभना चेतसिकाओं के साथ हमेशा एक साथ प्रकट होते हैं। ये दोनों चेतसिकाएं त्वरित प्रतिक्रिया देने वाली होती हैं।

ई) चित्तपगुन्नाटा और कयापगुन्नाटा

चित्तपगुण्नता एक चेतसिका है और यह चित्त राजा को विषय से परिचित होने की सलाह देती है। यह चित्त की निपुणता है। यह अनुभव की शक्ति है। जब यह उत्पन्न होती है, तो चित्तपगुण्नता एक कुशल कार्यकर्ता के रूप में कार्य करती है और चित्त राजा को कार्य में निपुण होने की सलाह देती है।

कायपगुणत, चित्तपगुणत चेतसिका का जुड़वां भाई है। यह चेतसिकाओं की निपुणता है। यह संबंधित चेतसिकाओं की परिचितता है। ये दोनों जुड़वां भाई एक साथ उत्पन्न होते हैं और अन्य 5 जोड़ियों तथा अन्य सार्वभौमिक शोभना चेतसिकाओं के साथ भी उत्पन्न होते हैं।

च) सिट्टुज्जुकाता और कायुज्जुकाता

चित्तुज्जुकता चित्त की सत्यता है। यह चित्त का सत्यनिष्ठा है। जब चित्तुज्जुकता चेतसिका उत्पन्न होती है, तो यह राजा चित्त को सलाह देती है और चित्त सत्यनिष्ठा अपनाकर सीधा व्यवहार करता है। चित्तुज्जुकता की उपस्थिति में चित्त कभी झूठ नहीं बोलता। यही चित्त की सत्यनिष्ठा है।

कयुज्जुकता चित्तुज्जुकता का जुड़वां भाई है और यह उससे संबद्ध चेतसिकों की सत्यता है। यह चेतसिकों का सद्‍गुण है। जब यह प्रकट होता है, तो यह संबद्ध चेतसिकों को सीधे मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। ये दोनों जुड़वां भाई हमेशा एक साथ प्रकट होते हैं और इनके साथ अन्य 5 जोड़े और अन्य सार्वभौमिक शोभना चेतसिक भी होते हैं, जिनमें सद्ध चेतसिक भी शामिल हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय 6**
हटू निंग द्वारा

अध्याय 6 - आरम्मना पच्चयो
या वस्तु की स्थिति
Ārammana paccayo ti

रूपायतनं चक्खुविन्ननधातुयं, तं सम्पायुत्तकननच धम्मणं अरम्मना पकायेन पकायो। सद्दयातनं सोतविन्ननधातुयं, तम् सम्पायुत्तकनञ्च धम्मणं अरम्मना पकायेन पकायो। गंधायतनं घनविन्नानधातुयं, तं सम्पायुत्तकनञ्च धम्मणं अरम्मना पकायेन पकायो। रसायतनं

जीवविन्ननधातुयं, तं सम्पायुत्तकनञ्च धम्मणं अरम्मना पकायेन पकायो। फोत्थबबायतानं कायविन्ननधातुयं, तं सम्पायुत्तकाननच धम्मणं अरम्मना पकायेना पकायो।

रूपायतनं सद्दायतनं गंधायतनं रसायतनं फोत्थबबायतनं मनोधातुया, तम् सम्पायुत्तकनञ्च धम्मणं अरम्मना पकायेन पकायो। सब्बे धम्म मनोविन्नान धतुया, तम् संपयुत्तकननच धम्मनं अरम्मना पकायेना पकायो। यम यम धम्मम अरब्भा ये ये धम्म उप्पज्जन्ति चित्त चेतसिका धम्म ते ते धम्म तेसम तेसम धम्मनम अरम्मना पकायेना पकायो।

अरम्मना पकाया या वस्तु स्थिति विभिन्न धम्मों के बीच का संबंध है। ये धम्म हैं नाम धम्म, रूप धम्म और पन्नति धम्म। यहां पन्नाति धम्म एक वस्तु के रूप में काम कर सकता है, भले ही यह परमथ्थ धम्म न हो। एक रूपा धम्म जिसे रूपा कहा जाता है जो कि वन्नो या रंग है, नेत्र चेतना के लिए एक वस्तु के रूप में कार्य करता है। नेत्र चेतना या चक्खु विन्नन धातु को रूप या वन्नो या रंग या दृष्टि या दृश्य वस्तुओं पर निर्भर होना पड़ता है। चक्खु विन्नान चित्त (चक्कुविन्नन धातु) से जुड़े सभी मानसिक कारकों को भी रूपरमण पर निर्भर रहना पड़ता है। पकाया धम्म या कारण धम्म वन्नो है। पक्कयुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म चक्खु विन्नान चित्त और संबंधित सिटासिका हैं। पकाया सत्ती या रूप धम्म रूप या वन्नो और नामा धम्म चक्कुविन्नन और संबद्ध सीटासिका के बीच के कारण संबंध को अरम्मना कहा जाता है। यह अरम्मना पकायो या वस्तु स्थिति है।

अन्य वस्तुगत स्थितियों जैसे सद्दा (ध्वनि) जो सद्दारम्मन (श्रव्य वस्तु) के रूप में कार्य करती है, गंध (सुगंध) जो सुगंधित वस्तु) के रूप में कार्य करती है, रस (स्वाद) जो रसारममन (स्वाद वस्तु) के रूप में कार्य करती है, और स्पर्श (स्पर्शी वस्तु) जो स्पर्शनीय वस्तु) के रूप में कार्य करती है, के मामलों में भी इसी प्रकार के निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। लेकिन मन के लिए वस्तुओं के मामले में, वस्तुएं थोड़ी जटिल हैं। मन के लिए वस्तुओं के 6 संभावित प्रकार हैं और इन्हें सामूहिक रूप से धम्मारम्मन या मन की वस्तुएं कहा जाता है।

मन की वस्तु या धम्मरम्मना इन 6 प्रकार के धम्म में से एक हो सकता है। वे (ए) 5 पसादा रूप में से एक हैं जो हैं 1.चक्खु पसादा रूप, 2. सोता पसादा रूप, 3. घना पसादा रूप, 4. जीव पसादा रूप, और 5. काया पसादा रूप; (बी) 16 सुखुमा रूपों में से एक अर्थात् 1.इथि अत्ता भव रूप या इत्थट्टा भव रूप, 2. पुरीसत्ता भव रूप, 3. हदय रूप, 4. जीवित रूप, 5. आहार रूप, 6. परिच्छेद रूप या आकाश रूप, 7. काया विनति रूप, 8। वसी विनति रूप, 9. रूप लहुता रूप, 10. रूप मुदुता रूप, 11. रूप कम्मन्नता रूप, 12. उपाचय रूप, 13. संतति रूप, 14. जराता रूप, 15. अनिच्चता रूप, और 16. आपो रूप जो अपो धातु है; (सी) 89 सिट्टा में से एक; (डी) 52 सीतासिकों में से एक; (ई) निब्बाना; और (च) पन्नति धम्म। तो धम्मरम्मना या मन की वस्तु इन 6 प्रकारों में से एक हो सकती है। (ए) से (सी) तक के विषयों को पिछले पृष्ठों में समझाया गया है। (डी) सीतासिकों के संबंध में 7 सार्वभौमिक सीतासिक, 6 विशेष सीतासिक, 14 अकुसल सीतासिक, और 19 शोभन चित्त साधरण सीतासिक सभी पर चर्चा की गई है। वहाँ 6 शोभन चेतसिकाएँ रह गईं। वे 3 विरति सीतासिक, 2 अप्पमन्ना सीतासिक और 1 पणिन्द्रिय सीतासिक हैं।

तीन विरति चेतसिकाएँ हैं। विरति का अर्थ है परिहार। यह विशेष रूप से तब टालना है जब ऐसी स्थितियाँ हों जो ऐसे कार्यों को करने के लिए प्रेरित कर सकती हैं जिनसे बचना चाहिए। वे हैं 1. काया दुकारिता विरति या सम्मा कम्मंता, 2. वैसी दुकारिता विरति या सम्मा वका, और 3. दुजिवा विरति या सम्मा अजीवा। ये सिटासिकाएँ भी एक प्रकार के निषेध हैं। लेकिन हिरी और ओट्टप्पा के विपरीत, वे संभावित भविष्य के प्रभावों या परिणामों पर विचार करने के बजाय विशेष कार्रवाई पर निर्देशित होते हैं। जब उस कृत्य पर चिंतन किया जाता है जो काया दुकारिता है, तो यह परिहार सम्मा कम्मंता है। यदि कृत्य वैसी दुकारिता है, तो चेतसिका सम्मा वाचा बन जाती है और जब यह दुजीव कृत्य का परिहार है, तो यह सम्मा अजीव चेतसिका है। मार्ग और फल के समय आर्य अष्टांगिक मार्ग को छोड़कर, ये तीनों चेतसिक कभी एक साथ उत्पन्न नहीं होते और न ही दो चेतसिक एक साथ उत्पन्न होते हैं।

अन्य 2 सीतासिकाएँ हैं जिन्हें अप्पमन्ना सीतासिकाएँ कहा जाता है। इन्हें अप्पमन्ना इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये दोनों चेतसिक उन वस्तुओं को ग्रहण करते हैं जो असीम या असीम हैं। ये दो चेतसिकाएँ करुणा चेतसिका और मुदिता चेतसिका हैं। दोनों चेतसिकों को उस वस्तु की ओर निर्देशित किया जाता है जो पन्नत्ती है अर्थात सत्त पन्नत्ती है। इसका मतलब यह है कि वे उन वस्तुओं को लेते हैं जो परमार्थ धम्म या अंतिम वास्तविकताएं नहीं हैं। सट्टा पन्नत्ती पर 2 अलग-अलग सीटासिकाएं हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि वस्तुओं के चरित्र एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। जबकि करुणा सत्त्व पन्नत्ती का उद्देश्य लेती है जो दोषपूर्ण परिस्थितियों में हैं, मुदिता सत्त पन्नत्ती का उद्देश्य लेती है जो समृद्ध परिस्थितियों में हैं।

एक चेतसिका शेष रह गई जिसे पन्निन्द्रिय चेतसिका कहते हैं। यह सबसे महत्वपूर्ण चेतसिका है। क्योंकि यही एकमात्र चेतसिका है जो हमें अरहत्त मार्ग नाना की प्राप्ति की ओर ले जाती है। इस चेतसिका के बिना, चाहे अन्य चेतसिकाएँ कितनी भी अच्छी क्यों न हों, अरहत्त मार्ग नाना की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती।

पन्निन्द्रिय चेतसिका या पन्ना एक चेतसिका है। यह राजा चित्त का रचनात्मक सेवक है। लेकिन पन्निन्द्रिय चेतसिका स्वयं चित्त नहीं है। यह राजा चित्त को वास्तविक चीजों को देखने का मार्गदर्शन करती है। यह चीजों पर सकारात्मक प्रकाश डालती है। पन्ना धर्म पर प्रकाश डालती है। अन्य चेतसिकाओं में पन्ना सबसे शक्तिशाली चेतसिका है। पन्ना चेतसिका बोधिपक्खीय धर्मों के विभिन्न स्थानों पर सेवा करती है, जैसे कि इद्धिपाद धर्म (सफलता का आधार), बल धर्म (शक्ति का बल), इंद्रिय धर्म (संपन्नता), ज्ञान का कारक (बोझ्झंग धर्म) और मार्ग धर्म (मार्ग कारक)। पन्ना चार अधिपति धर्मों में से एक अधिपति धर्म के रूप में भी शामिल है। पन्ना को विज्या के नाम से भी जाना जाता है। कभी-कभी इसे नाना भी कहा जाता है।

छह विषय या छह अरम्मन हैं। पहले पाँच विषय पाँच भौतिक इंद्रियाँ हैं, अर्थात् दृष्टि, श्रवण, गंध, स्वाद और स्पर्श। छठी इंद्रिय मन का विषय है। इसे धम्मरम्मन कहते हैं। छह प्रकार के धम्म हैं जो मन के विषय के रूप में कार्य कर सकते हैं। ये हैं पाँच पसद रूप, 16 सुखुम रूप, 89 चित्त, 52 चेतसिक, 1 निर्वाण और 1 पन्नात्ति। पहले चार प्रकारों का विस्तृत वर्णन पिछले पृष्ठों में किया गया है। दो और प्रकार हैं जो मन के विषय के रूप में कार्य कर सकते हैं। ये हैं निर्वाण और पन्नात्ति।

निब्बाना पाली भाषा का शब्द है और यह निर्वाण से बना है, जो नि और वना से मिलकर बना है। नि का अर्थ है निक्खंत, यानी वना के बंधन से मुक्त होना। वना वे धर्म हैं जो संसार में विभिन्न जीवों को बांधते हैं। अतः निब्बाना का अर्थ है संसार के बंधन से मुक्त होना। यह बंधन तन्हा है।

यद्यपि परम सत्य के रूप में केवल एक ही निर्वाण है, फिर भी निर्वाण के दो रूप बताए जाते हैं। परन्तु दोनों एक ही हैं और एक ही प्रकार के हैं। संसार में रहने वाले या यात्रा करने वाले के दृष्टिकोण से इन्हें दो प्रकार का माना जाता है: सौपादीशेष निर्वाण और अनुपादीशेष निर्वाण। सौपादीशेष निर्वाण वह निर्वाण है जब संसार में अरहत निरोध समाधि में रहते हैं। अरहत जिस अवस्था में रहते हैं उसे सौपादीशेष निर्वाण कहते हैं। क्योंकि निर्वाण तब प्राप्त होता है जब अरहत संसार में पंचखंड के साथ होते हैं।

एक अन्य निर्वाण वह अवस्था है जब अरहत खंड परिनिर्वाण प्राप्त करते हैं। यानी जब अरहतों की मृत्यु होती है, तब कुछ भी शेष नहीं रहता और न ही कुछ निरंतर बना रहता है। यही अनुपदिशेष निर्वाण है। अरहतों के चुति चित्त के तुरंत बाद, न तो कर्मज रूप रहता है, न चित्तज रूप और न ही आहारज रूप। केवल उत्तुज रूप ही शेष रह जाता है। उत्तुज रूप इस संसार के अन्य निर्जीव रूपों के समान ही जीवन से रहित होते हैं। यही वह अवस्था है जिसे सभी बौद्ध अपने पच्चीम भाव या अंतिम जीवन के बाद प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

फिर भी तीन प्रकार के निर्वाण माने जाते हैं। वास्तव में ये सभी एक ही अवस्था हैं, और यही निर्वाण है, इससे अधिक कुछ नहीं। लेकिन संसार में रहने वालों के दृष्टिकोण से, निर्वाण के तीन प्रकार माने जाते हैं: सुन्नत निर्वाण, अनिमित्त निर्वाण और अप्पनिहित निर्वाण।

सुन्नत निर्वाण पूर्णतया अरम्मना या तन्हा के उत्पन्न होने के किसी भी कारण से मुक्त है। परम अर्थ में इसमें अत्त्व या अहंकार नहीं होता। निर्वाण अत्जीव या किसी भी आत्मा या किसी भी जीवन से मुक्त है। अतः, जब कोई जीवन, आत्मा या ऐसी किसी भी चीज से मुक्त होता है, तो उस निर्वाण को सुन्नत निर्वाण या शांति की शून्यता कहा जाता है। जब आर्य होने वाले धर्म का अनात्म के रूप में चिंतन कर रहे थे, तब उन्होंने मार्ग काल में जो निर्वाण देखा, उसे सुन्नत निर्वाण कहा जाता है। यह अनात्म है, न अत्त्व, न जीव, न जीवन, कुछ भी नहीं है, केवल सुन्नता है। अतः यह सुन्नत निर्वाण है।

अनिमित्त निर्वाण का अर्थ है राग, क्लेश और आधारों से मुक्त निर्वाण। जब आर्य चित्त के उत्पन्न होने से ठीक पहले अनित्य अवस्था में धम्म का अवलोकन कर रहे थे और उन्होंने निर्वाण को अनित्य अवस्था में देखा, तो इस निर्वाण को अनिमित्त निर्वाण कहा जाता है। क्योंकि इसमें कोई निच्च निमित्त या स्थायी निमित्त नहीं होता। इसलिए इस निर्वाण को अनिमित्त निर्वाण कहते हैं।

अप्पनिहित निर्वाण का अर्थ है निर्वाण वह नहीं है जिसके लिए तन्हा, राग, क्लेश आदि जैसी सांसारिक या इंद्रिय सुखदायक चीजों की लालसा करनी पड़ती है। जब आर्य दुख के रूप में धर्म का चिंतन कर रहे हों, और उन्हें मार्ग काल में निर्वाण दिखाई दे, तो उस निर्वाण को अप्पनिहित निर्वाण कहा जाता है। क्योंकि निर्वाण तन्हा, राग, क्लेश आदि से मुक्त होता है, जिनके उपस्थित होने पर लालसा उत्पन्न होती है। लेकिन ऐसी कोई लालसा न होने के कारण ही इस निर्वाण को अप्पनिहित निर्वाण कहते हैं। यद्यपि निर्वाण को तीन प्रकारों में माना जाता है, फिर भी सार और परम अर्थ में केवल एक ही निर्वाण है।

निर्वाण अन्य धर्मों के समान नहीं है। यह रूप धर्म नहीं है। निर्वाण को नाम धर्म के माध्यम से जाना जा सकता है, इसलिए निर्वाण नाम धर्म में समाहित है। परन्तु परम वास्तविकता का निर्वाण केवल मंगल चित्त और फल चित्त द्वारा ही देखा जा सकता है। जब हम निर्वाण पर चर्चा कर रहे होते हैं, तब कोई भी निर्वाण को देख नहीं रहा होता। हम सब निर्वाण की तुलना अपने कष्टों के अनुभवों से कर रहे होते हैं। हम इसे केवल अग्नि की अनुपस्थिति के रूप में देखते हैं। वास्तव में, निर्वाण केवल मंगल चित्त और फल चित्त द्वारा ही देखा जा सकता है।

जब ऐसे लोकुत्तर चित्त उत्पन्न होते हैं, तो निब्बाण मग्गा के चित्त और फला धम्म के चित्त के लिए वस्तु के रूप में काम करता है। तो निब्बान भी एक प्रकार का अराम्मन है और यह धम्मरम्मन है। यह धम्मरम्मना निब्बाना नाम धम्म मग्गा चित्तस और फला चित्तस द्वारा देखा जाता है। तो यहाँ पकाया धम्म निर्वाण है। पक्कयुप्पन्ना धम्म यहां मग्गा चित्तस और फला चित्तस है। कारण धम्म निब्बान और परिणामी धम्म मग्गा चित्त और फला चित्त के बीच के संबंध को अरम्मना कहा जाता है। तो यह पकाया सत्ती अरम्मना है। यह वस्तु स्थिति है. यह अरम्माना पकायो है।

कुछ धर्म ऐसे होते हैं जो विभिन्न चित्तों के लिए वस्तु या अरम्मन का काम करते हैं। इन धर्मों में पंच अरम्मन या पांच इंद्रिय विषय शामिल हैं, जैसे विभिन्न रंगों और चमक का प्रकाश, ध्वनि और आवाज, गंध और सुगंध, स्वाद और विभिन्न स्पर्श। ये पंच अरम्मन द्वि पंच विन्नन चित्तों के लिए अरम्मन का काम करते हैं।

ये छठी इंद्रिय या छठी वस्तु है। इसे सामूहिक रूप से धम्मरम्मना कहा जाता है। क्योंकि इस 6वीं वस्तुओं में जो कुछ भी शामिल है वह सभी धम्म हैं। धम्मरम्मना में 5 पसादा रूप, 16 सुखुमा रूप, 89 चित्त, 52 सीतासिका, 1 निब्बान और 1 पन्नत्ती धम्म शामिल हैं। अब तक 5 पसादा, 16 सुखुमा, 89 चित्त, 52 सीतासिका और 1 निब्बाना सभी पर पिछले पृष्ठों में चर्चा की गई है।

पन्नत्ती एक अरम्मन के रूप में कार्य करता है और यह छठी इंद्रिय है। यह धम्मरम्मन है। पन्नत्ती का अनुभव केवल मन द्वारा ही किया जा सकता है। अन्य कोई इंद्रिय पन्नत्ती धम्म का अनुभव नहीं कर सकती। पन्नत्ती का ज्ञान और अनुभव केवल चित्त द्वारा ही किया जा सकता है, जो नाम धम्म है। पन्नत्ती एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें अधिकांश लोग, या लगभग सभी लोग और सभी प्राणी भ्रमित हो जाते हैं। यहां तक कि धम्म के ज्ञाता भी पन्नत्ती धम्म को लेकर कुछ हद तक भ्रमित रहते हैं।

पन्नत्ती एक धर्म है। इसे अनुभव किया जा सकता है। इसे जाना जा सकता है। लेकिन जब धर्मों को परम इंद्रिय से देखा जाता है, तो पन्नत्ती धर्म परम वास्तविकता नहीं रह जाता। पन्नत्ती का कभी उदय नहीं होता। क्योंकि यह परम धर्म के रूप में कभी विद्यमान नहीं होता। यह परम वास्तविकता के रूप में कभी विद्यमान नहीं होता। चूंकि पन्नत्ती का उदय नहीं होता, क्योंकि यह वास्तविकता नहीं है, इसलिए यह नष्ट भी नहीं होता।

पन्नत्ती धम्म को समझने में असमर्थता के कारण इस पर बहुत बहस हुई है। पन्नत्ती न तो उत्पन्न होती है और न ही नष्ट होती है। कुछ लोग कहते हैं कि पन्नत्ती उत्पन्न होती है और नष्ट होती है। उनका तर्क है कि पन्नत्ती, अरम्मन के रूप में, उत्पन्न होती है और नष्ट होती है। यह गलत है। पन्नत्ती न तो उत्पन्न होती है और न ही नष्ट होती है क्योंकि यह परम अर्थ में विद्यमान नहीं है। यह परम सत्य नहीं है, यह परम वास्तविकता नहीं है।

वे तर्क दे सकते हैं कि परिणत्ती अरम्मना के रूप में क्यों उत्पन्न होती है और नष्ट हो जाती है। यह एक गलत धारणा है। वास्तव में जो उत्पन्न होता है वह चित्त है। वास्तव में जो नष्ट होता है वह चित्त है। परिणत्ती न तो उत्पन्न होती है और न ही नष्ट होती है। मैं इन्हें दोहरा रहा हूँ क्योंकि यह महत्वपूर्ण है। जब कोई चित्त, जो परिणत्ती धारण करता है, उत्पन्न होता है, तो वह तुरंत नष्ट हो जाता है। चित्तों के कार्यों के अनुसार, आगे उत्पन्न होने वाले चित्त अपने कार्य करते हैं। चित्त उत्पन्न होते हैं और नष्ट हो जाते हैं।

उदाहरण: जब हम किसी वृक्ष के बारे में सोचते हैं, तो हमारे मन में कोई वृक्ष परम वास्तविकता के रूप में नहीं होता। लेकिन एक चित्त उत्पन्न होता है जो वृक्ष को अपना विषय मानता है। क्योंकि वह चित्त अनित्य और क्षणभंगुर है, इसलिए वह विलीन हो जाता है। यहाँ ऐसा प्रतीत होता है कि चित्त उत्पन्न होता है और विलीन हो जाता है, जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है। वृक्ष के विचार के उत्पन्न होने से ठीक पहले, कई चित्त उत्पन्न हो सकते हैं जो वास्तविकताओं को अपना विषय बनाते हैं। वृक्ष को अपना विषय मानने वाले चित्त के उत्पन्न होने से पहले, हम अपने मन में रंग, रूप और आकार के बारे में सोच सकते हैं।

वास्तव में, पन्नत्ती न तो उत्पन्न होती है और न ही नष्ट होती है। पन्नत्ती मन के लिए एक विषय के रूप में कार्य करती है। अरम्मना या विषय की इस स्थिति में, पन्नत्ती धम्म परमत्थ धम्म का रूप धारण कर लेती है, मानो वह परमत्थ धम्म हो, जबकि वास्तव में वह ऐसा नहीं है। इसीलिए पन्नत्ती धम्म धम्मायतन नहीं है।

क्योंकि पन्नति न तो उत्पन्न होती है और न ही नष्ट होती है, इसलिए पन्नति धम्म में अनित्यता, दुःख या अनात्म का कोई प्रमाण नहीं है। इसका कारण यह है कि पन्नति धम्म आरंभ से ही परम वास्तविकता के रूप में विद्यमान नहीं है। कुछ उच्च चित्त ऐसे हैं जो पन्नति धम्म को अपना विषय मानते हैं। ये सभी चित्त रूपावचर चित्त हैं। कुछ कामावचर चित्त पन्नति धम्म को अपना विषय मानते हैं। कुछ अरूपावचर चित्त भी पन्नति धम्म को अपना विषय मानते हैं।

लेकिन यह निश्चित है कि सभी 8 लोकुत्तरा चित्त कभी भी पन्नत्ती धम्म को अपने उद्देश्य के रूप में नहीं लेते हैं। सभी लोकुत्तरा चित्तों का अरम्मना केवल निब्बाना है जो एक अंतिम वास्तविकता है। सभी लोकुत्तरा चित्त केवल निब्बाना को अपनी वस्तु के रूप में लेते हैं। कोई

अन्य वस्तु लोकुत्तारा चित्त की वस्तु नहीं हो सकती। केवल निब्बाना सोतापट्टी मग्गा सीता और फला सीता, सकादागामी मग्गा और फला चित्त, अनागामी मग्गा और फला चित्त, और अरहट्टा मग्गा और फला चित्त के अरम्मना या वस्तु के रूप में काम कर सकता है।

सभी रूपवकार चित्त यानि कि सभी 5 रूपाकुसल चित्त (जो कि 1 झाना, 2रा झाना, 3रा झाना, 4था झाना और 5वा झाना हैं), सभी 5 रूपविपाक चित्त (जो पूर्व 5 चित्त के परिणामी चित्त हैं), और सभी 5 रूपाकिरिया चित्त (जो 1 झाना, 2रा झाना, 3रा हैं) झाना, 4थे झाना और अरहतों के 5वें झाना चित्त) पन्नत्ती धम्म को अपनी वस्तु के रूप में लेते हैं। रूपवाकर चित्त कभी भी पन्नत्ती धम्म के अलावा किसी अन्य वस्तु को अपने अरम्मन या वस्तु के रूप में नहीं लेते हैं।

पन्नत्ती धम्म एक रोचक विषय है। यह न तो उत्पन्न होता है और न ही नष्ट होता है। यह कोई घटना नहीं है, बल्कि एक घटना मात्र है। इसमें अनित्यता, दुःख और अनात्म जैसे किसी भी प्रकार के तिलक्खना नहीं समाहित हैं। पन्नत्ती परम वास्तविकता नहीं है, न ही परम सत्य है, परन्तु यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण धम्म है। पन्नत्ती के बिना हम कुछ भी नहीं समझ सकते।

इसीलिए धर्म अध्ययन में हमें पन्नात्ति धर्म का अध्ययन करना आवश्यक है। यदि पन्नात्ति को नहीं समझा गया, तो परमत्था धर्म भी नहीं समझा जा सकेगा। जब धर्मों को नहीं समझा जाता, तो इस संसार या जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाना कठिन हो जाता है, जो कि एक अनंत, आरंभहीन चक्र है। तो पन्नात्ति का अर्थ क्या है?

पन्नात्ती का अर्थ है नाम, विचार, धारणा, अवधारणा, पदनाम, वर्णन, अभिव्यक्ति या प्रकट करना। पन्नात्ती एक ऐसा धर्म है जो हमें परमत्थ धर्म और पन्नात्ती धर्म दोनों से परिचित कराता है। अतः यह स्पष्ट है कि पन्नात्ती हमें पन्नात्ती सहित सब कुछ समझने में सहायता करता है।

हालांकि दोनों ही परम वास्तविकता या परम सत्य के रूप में विद्यमान नहीं हैं, फिर भी पन्नत्ति धम्म के दो रूप हैं। ये दो प्रकार हैं अत्थपन्नत्ति और सद्दपन्नत्ति। सद्दपन्नत्ति ध्वनि या वाणी पर आधारित है जो अत्थपन्नत्ति का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि अत्थपन्नत्ति किसी भी पन्नत्ति धम्म का आंतरिक अर्थ है।

सद्दपन्नति का उदाहरण जल है। परमत्थ दृष्टि से देखने पर जल का कोई अंश दिखाई नहीं देता। निःसंदेह जल पन्नति धर्म है। परन्तु जब भी इस संसार में किसी को जल दिखाया जाता है, तो वे उसे जल ही समझते हैं। जल का यही मूल स्वरूप है जो परम वास्तविकता के रूप में विद्यमान नहीं है। इसके मूल स्वरूप में निहित इस अर्थ को अत्थपन्नति कहते हैं। कोई अन्य पदार्थ जल का स्थान नहीं ले सकता। यही अत्थपन्नति है।

दूसरी ओर, सद्दापन्नत्ती ध्वनि या स्वर पर आधारित है जिसका उपयोग मनुष्य जल के अर्थ को व्यक्त करने के लिए करते हैं। उदाहरण के लिए, जब कोई ध्वनि जल का उच्चारण करती है, तो जो लोग इसे पहले कभी नहीं सुनते और न ही यह जानते हैं कि जल ही जल है, उन्हें यह समझ में नहीं आएगा। जब कोई वक्ता जल का उच्चारण करता है और श्रोता अंग्रेजी नहीं जानते और न ही उन्हें अंग्रेजी का ज्ञान है, तो वे यह नहीं समझ पाएंगे कि उन्हें जल के बारे में बताया जा रहा है। लेकिन जब उन्हें जल दिखाया जाता है, तो वे निश्चित रूप से समझ जाएंगे कि उन्होंने जो सुना वह वास्तव में जल के बारे में था, जिसे वे पहले से जानते हैं।

पानी को अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाओं में भी ध्वनि या उच्चारण के आधार पर अलग-अलग तरह से व्यक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, पानी, उदाका, आपा, यय, सुई, मित्सु आदि। ये सभी शब्द अपने आप में विशिष्ट हैं और प्रत्येक शब्द अपने-अपने भाषा-भाषी को पहचान प्रदान करता है। लेकिन सार रूप में, ये सभी एक ही हैं, और वह है पानी। पानी के रूप में पहचाने जाने वाले इस अंतर्निहित स्वभाव को अत्थपन्नत्ती कहते हैं। इसी अर्थ को व्यक्त करने वाली अन्य सभी ध्वनियाँ सद्दपन्नत्ती कहलाती हैं।

पन्नत्ती अत्यंत आवश्यक है। पन्नत्ती के बिना हम किसी भी विषय पर चर्चा नहीं कर सकते। हमें यह जानना अनिवार्य है कि पन्नत्ती धर्म क्या है और परमार्थ धर्म क्या है। यह इस बात पर निर्भर करेगा कि हमने कितना गहन ज्ञान प्राप्त किया है। अन्यथा पन्नत्ती धर्म और परमार्थ धर्म में अंतर करना बहुत कठिन है और इसके लिए व्यावहारिक अनुभव की भी आवश्यकता होती है।

6 अलग-अलग अट्ठापन्नट्ट हैं। वे हैं 1.विज्जमना पन्नट्टा, 2.विज्जमना पन्नट्टा, 3.विज्जमनेनाविज्जा पन्नट्टा, 4.विज्जमनेनाविज्जा पन्नट्टा, 5.विज्जमनेनाविज्जा पन्नट्टा, 6.विज्जमनेनेविज्जा पन्नट्टा।

इन पन्नाट्ट धम्मों के उदाहरण हैं

1. विजयमाना पन्नात्ता

सद्दा। यह ध्वनि है। इसका मूल स्वरूप या मूल अर्थ वह ध्वनि है जिसे हम अपने कानों से सुन सकते हैं। हम चाहे जिस भी भाषा का प्रयोग कर रहे हों, वे शब्द जो ध्वनि को उसके आठपन्नत्त रूप में दर्शाते हैं, वह यह है कि ध्वनि एक वास्तविकता है और परम सत्य है। यह सिद्ध किया जा सकता है क्योंकि ध्वनि का अस्तित्व है। अतः इस प्रकार के आठपन्नत्त को विज्यामन आठपन्नत्त कहते हैं। विज्या का अर्थ है भेदक ज्ञान। यहाँ मन का अर्थ है निर्माण माप। अतः विज्यामन का अर्थ है ज्ञान का निर्माण। यद्यपि ध्वनि शब्द का कोई अस्तित्व नहीं है, जो एक आठपन्नत्त है, परम वास्तविकता नहीं, फिर भी यह ज्ञान निर्माण के विचार को सामने लाता है। अतः यहाँ उदाहरण के रूप में सद्दा को विज्यामन आठपन्नत्त कहा जाता है।

2. अविज्जामना पन्नात्ता

जल। यह एक ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग जल के अर्थ को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। परन्तु परम अर्थ में जल का कोई अस्तित्व नहीं है। जल कोई परम वास्तविकता नहीं है। जब लोग इस परिणत विषय को नहीं समझते, तो वे विभिन्न युगों और पृष्ठभूमियों के दार्शनिकों द्वारा प्रतिपादित पुरानी ज्ञान की बातों का हवाला देते हुए अंतहीन बहस करने का प्रयास करते हैं। वास्तव में परम अर्थ में जल का कोई अस्तित्व ही नहीं है। जिसे हम जल समझते हैं, वह जल नहीं है। यह एक स्पष्ट, रंगहीन पदार्थ है जो परिवेश के तापमान और मौसम के अनुसार अलग-अलग तीव्रता के प्रकाश के रूप में हमारी आँखों में प्रतिबिंबित होता है। जिसे हम सुनते हैं, वह जल नहीं है। यहाँ तक कि मनोद्वार द्वारा अनुभव किया जाने वाला अपो रूप भी जल नहीं है। अतः परम अर्थ में जल का कोई अस्तित्व ही नहीं है। अतः यह शब्द जल, जो परिणत, अत्थपरिणत है, किसी परम अर्थ को प्रकट नहीं करता और न ही ज्ञान का निर्माण करता है। अतः यह अविज्माना परिणत है।

3. vijjamanenavijja pannatta

चक्खु विन्नना। चक्खु एक विज्मण पन्नत्त है। विन्नना भी विज्मण पन्नत्त है। दोनों ही ज्ञान का निर्माण करते हैं और इन दोनों के संयोजन से बना नया शब्द चक्खु विन्नना भी ज्ञान का निर्माण करता है। चक्खु विन्नना परम सत्य के रूप में विद्यमान है और इसका परम अर्थ, परम भाव है। अतः यह परम सत्य, परममत्त धम्म की समझ उत्पन्न करता है। इसलिए इस प्रकार के पन्नत्त को विज्मण विज्मण पन्नत्त कहा जाता है।

4. अविज्जमनेणविज्जा पन्नट्ट

राजा पुत्र। परम अर्थ में कोई राजा नहीं होता। परम अर्थ में कोई पुत्र नहीं होता। इसलिए राजा पुत्र को अविज्मानेनाविज्जा पन्नत्त कहा जाता है।

5. avijjamanenavijja pannatta

इत्थी सद्दो। स्त्री की आवाज़। परम अर्थ में स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन आवाज़ या ध्वनि है जो परम वास्तविकता है और ज्ञान का निर्माण करती है। इसलिए इत्थी सद्दो या स्त्री की आवाज़ को अविज्मानेनाविज्जा पन्नात्ता कहा जाता है।

6. vijjamanenāvijja pannatta

चक्खु द्वार। चक्खु विद्यमान है, जो परम वास्तविकता है। लेकिन कोई द्वार नहीं है। यह शब्द एक परिच्छेद है और इसे विजयमनेनाविज्ज परिच्छेद कहा जाता है।

धम्म महासमुद्र या विशाल महासागरों से भी व्यापक है। धम्म इन महासागरों से भी बड़ा है। धम्म इन महासागरों से भी गहरा है। धम्म अनंत है। धम्म असीम है। धम्म अनंत है। एक बार बुद्ध ने कहा, हे भिक्षुओं, जो धम्म मैं तुम्हें उपदेश देता हूँ, वह मेरे हाथ में रखे इन पत्तों के समान है। जो धम्म मैं जानता हूँ, वह इस पूरे जंगल के पत्तों से भी अधिक है। लेकिन बुद्ध ने संसार से ऊपर उठने के लिए आवश्यक सभी धम्मों का उपदेश दिया।

धम्म जटिल और पेचीदा होते हैं। धम्म और उनके संबंध प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म में प्रस्तुत किए जाते हैं, जो कि आश्रित उत्पत्ति या आश्रित सह-उत्पत्ति का सिद्धांत है। प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म इतना व्यापक और गहरा है कि बुद्ध ने एक बार पूज्य आनंद से कहा था, "भंते, प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म मुझे इतना स्पष्ट है कि आनंद, ऐसा मत कहो, प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म तुम्हारी समझ से कहीं अधिक व्यापक है।"

अधिक सूक्ष्म, अधिक जटिल और अधिक पेचीदा धम्म पत्थाना धम्म कहलाता है। बुद्ध अरहत्त फल समापत्ति में 49 दिनों तक रहे, जो कि 7 सप्ताह के बराबर है और इसे शास्त्रीय रूप से सत्तासत्ता कहा जाता है। पहले सप्ताह में, बुद्ध ने प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म का चिंतन किया। दूसरे सप्ताह में, बुद्ध बरगद के वृक्ष (बोधि वृक्ष) के उत्तर-पूर्व में गए, जहाँ उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ और उन्होंने सम्मासम्बोधि नाना

तथा सब्बन्नुत नाना प्राप्त किया। वहाँ से बुद्ध ने लगभग 7 दिनों तक सिंहासन (घास से बना आसन) को देखा। अगले सप्ताह, यानी तीसरे सप्ताह में, बुद्ध ने बोधि वृक्ष के उत्तर में रत्न से बने चबूतरे पर विचरण किया। चौथे सप्ताह में, उन्होंने पत्थाना धम्म का चिंतन किया।

पथाना धम्म पर चिंतन करने से पहले, बुद्धत्व की किरणें नहीं थीं। जब उन्होंने पथाना धम्म पर चिंतन किया, तो उनके शरीर से छह प्रकार की बुद्धत्व किरणें उत्पन्न हुईं जो पूरे ब्रह्मांड में फैल गईं। पथाना धम्म सर्वत्र सबसे कठिन धम्म है। पथाना धम्म सबसे गहरा, सबसे व्यापक और सबसे विशाल है। पथाना धम्म, प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म से कहीं अधिक विस्तृत है।

विभिन्न प्रकार के धर्मों के बीच अनगिनत संबंध हैं और वे सभी किसी न किसी रूप में परस्पर जुड़े हुए हैं। पथाना धर्म को समझना कठिन है। फिर भी, पथाना धर्म वास्तव में हमारे दैनिक जीवन की घटनाओं को प्रतिबिंबित करता है और पथाना धर्म से परे कुछ भी नहीं है। यदि लोग इस बात को समझें तो वे प्रसन्नतापूर्वक पथाना धर्म का अध्ययन करेंगे और इसे अपने दैनिक जीवन में लागू करेंगे। लेकिन पथाना धर्म को समझना कठिन है। इसके लिए, सबसे पहले हमें यह जानना होगा कि धर्म क्या हैं। इनके बारे में परिचय पृष्ठ में चर्चा की गई है।

कुछ धर्म ऐसे हैं जो सदा सत्य हैं और जिनका वास्तविक अस्तित्व है, और इन सभी को परम सत्य या परम वास्तविकता कहा जाता है। इन सत्यों या वास्तविकताओं को परमार्थ धर्म कहते हैं। परमार्थ, परम और अत्थ से मिलकर बना है। अत्थ का अर्थ है सार और परम का अर्थ है उच्चतर, श्रेष्ठ, उच्चतर। अतः परमार्थ का अर्थ है वह सार जो असामार्थ धर्मों से सदा उच्चतर और श्रेष्ठ होता है। ये उच्चतर धर्म हैं। असामार्थ धर्म पन्नत्ति धर्म हैं। परम अर्थ में, इन धर्मों का अस्तित्व नहीं है। परन्तु पत्तना धर्म में सभी धर्म, उनके अंतर्संबंध और अंतर्संबंध, जिनमें पन्नत्ति धर्म भी शामिल हैं, समाहित हैं।

परमत्था धम्मों की व्याख्या पिछले पृष्ठों में की जा चुकी है। इसके बाद हम पहले सिद्ध धर्म, हेतु सिद्ध धर्म पर विचार करेंगे। हेतु का अर्थ है मूल या कारण। छह हेतु या छह मूल हैं: लोभ, दोष, मोह, अलोभ, अदोष और अमोह। इन्हें मूल इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये सभी अपने संबंधित धम्मों के विकास में सहायक होते हैं, इसलिए इन्हें धर्म की मूल अवस्थाएँ या हेतु सिद्ध कहा जाता है।

हेतु या मूल स्थिति के इस पकाया में, जो 24 स्थितियों में से एक है, कारण धम्म या पकाया धम्म लोभ, दोसा, मोह, अलोभा, अडोसा और अमोहा सिटासिका हैं। इन 6 धम्मों के कारण पकायुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म हैं 2 एकहेतुका चित्त और उनके साथ सीतासिक, 22 द्विहेतुका चित्त और उनके साथ सीतासिक, और 47 तिहेतुका चित्त और उनके साथ सीतासिक। और इसमें चित्तज रूप भी शामिल हैं जो इन सहेतुका चित्तों से उत्पन्न हुए हैं। अतः छह धर्म अन्य धर्मों के लिए मूल अवस्थाएँ हैं, जो उन पर निर्भर करते हैं, जैसे कि पेड़ की जड़ें पूरे पेड़ को पानी, खनिज, पोषक तत्व आदि प्रदान करके सहारा देती हैं। कारण धर्म पच्चय धर्म और परिणामी धर्मों या पच्चयुप्पन्न धर्म के बीच के संबंध को हेतु पच्चय कहा जाता है।

अरम्मन पच्चया में, विभिन्न धर्म अरम्मन या विषय के रूप में कार्य करते हैं। इन्हें विषय अवस्था कहा जाता है। लगभग सभी धर्म अरम्मन या विषय के रूप में कार्य कर सकते हैं। विभिन्न चमक वाले रूप या रंग को रूपारम्मन या दृष्टि का विषय या नेत्र चेतना का विषय कहा जाता है, या इन्हें दृश्य विषय भी कहा जाता है। यह रूप जो अरम्मन के रूप में कार्य करता है, रूपारम्मन कहलाता है। यह पहले चक्खुविन्नन चित्त के लिए और बाद में मनोविन्नन चित्त के लिए कार्य करता है। ध्वनियाँ षटविन्नन चित्त या कान चेतना के लिए विषय या अरम्मन के रूप में कार्य करती हैं और इसे सद्दराममन या श्रवण विषय कहा जाता है। गंध घनाविन्नन चित्त के लिए विषय के रूप में कार्य करती है और इसे गंधराममन या सुगंधित विषय कहा जाता है। रस जीवविन्नन चित्त के लिए विषय के रूप में कार्य करता है और इसे रसराममन कहा जाता है। पथवी या तेजो या वायो जो कि फोत्थब्बा धातु हैं, कायाविन्नन चित्त के लिए वस्तु के रूप में काम करते हैं और उन्हें फोत्थब्बारमण कहा जाता है।

कारण धम्म या पकाया धम्म हैं रूपरम्मन, सद्दारम्मन, गंधारम्मण, रसारम्मण और फोत्थब्बारमण। उनके परिणामी धम्म या पचायुप्पन्ना धम्म हैं चक्खुविन्नान चित्त, सोताविन्नान चित्त, घनविन्नान चित्त, जीवविन्नान चित्त, और कायविन्नान चित्त और उनसे जुड़े सीतासिका। लेकिन ये 5 अराम्मन रूप धम्म का समर्थन नहीं करते हैं, भले ही वे रूप धम्म हों। इन कारण धम्म और परिणामी धम्म के बीच के संबंध को वस्तु स्थिति या अरम्मना पकायो कहा जाता है।

छठा विषय या छठा अरम्मन है। इसे सामूहिक रूप से धम्मरम्मन कहा जाता है, क्योंकि यह विभिन्न धम्मों का संग्रह है। चित्तों के लिए विषय बनने वाले धम्म छह प्रकार के होते हैं: 1. पसद रूप, 2. सुखुम रूप, 3. चित्त, 4. चेतसिक, 5. निर्वाण और 6. पन्नत्त धम्म। ये सभी मन के लिए विषय बन सकते हैं और ये सभी कारण धम्म या पच्चय धम्म हो सकते हैं, और इनसे उत्पन्न चित्त पच्चयुप्पन्न धम्म कहलाते हैं। धम्मरम्मन के इन कारण धम्मों और उनसे उत्पन्न धम्म चित्तों और चेतसिकों के बीच के संबंध को अरम्मन पच्चय कहा जाता है।

जबकि हेतु पकायो नाम धम्म को नाम धम्म और रूप धम्म दोनों से जोड़ता है, अरम्मना पचायो रूप धम्म, नाम धम्म और पन्नत्त धम्म को केवल नाम धम्म से जोड़ता है। 7 रूप हैं जो 5 अराममानों के रूप में काम करते हैं, अर्थात् रूप या वन्नो, सददा, गंध, रस, पथवी, तेजो

और वायो। लेकिन छठे भाव में, सभी रूप धम्म, निब्बान और पन्नट्टा धम्म सहित सभी नाम धम्म चित्त के लिए वस्तु के रूप में काम कर सकते हैं। तो वस्तु स्थिति या अरम्मना पकायो रूप के लिए नहीं है बल्कि केवल नाम धम्म के लिए है। अगला पकायो है अधिपति पचायो।

हटू निंग द्वारा

अध्याय 7 - अधिपति पच्चयो
या प्रमुखता की स्थिति
चार अधिपति धर्म हैं: चंद अधिपति, चित्त अधिपति, वीर्य अधिपति और विमंसा अधिपति। चंद, चंद चेतसिका है और यह इच्छा या संकल्प है, जिसे कभी-कभी इच्छाशक्ति भी कहा जाता है। चित्त सभी चेतसिकाओं का नेतृत्व करता है और जब यह अधिपति धर्म बन जाता है, तो यह सब कुछ व्यवस्थित करता है। वीर्य, वीर्य चेतसिका है और यह प्रयास है। विमंसा अधिपति, पान्निन्द्रिय चेतसिका है और यह ज्ञान है।

लेकिन अधिपति पकाय में चित्त, सीतासिका, रूप और निब्बान के बीच जटिल संबंध हैं जो एक नाम धम्म भी है। अधिपति पकायो नाम धम्म और रूप धम्म को नाम धम्म और रूप धम्म से जोड़ता है। ऐसे जटिल धम्मों के बीच दो प्रकार के सहसंबंध हैं। वे अरम्मना अधिपति और सहजता अधिपति पकायो हैं।

अरम्मनाधिपति पकायो से पता चलता है कि रूप धम्म और नामा धम्म कारणों के रूप में या पकाया धम्म अन्य नाम धम्मों का समर्थन करते हैं जो परिणामी धम्म या पचायुप्पन्ना धम्म हैं। धम्मों के बीच इस प्रकार के समर्थन और संबंध को अरम्मना अधिपति पकायो कहा जाता है।

सहजता अधिपति पकायो के मामले में, नाम धम्म पकाया धम्म या कारण धम्म के रूप में कार्य करते हैं और नाम धम्म और रूप धम्म को नाम धम्म के कारण उत्पन्न होना पड़ता है और इन परिणामी धम्मों को पकायुप्पन्न धम्म कहा जाता है जबकि कारण नाम धम्म को पकाया धम्म कहा जाता है।

अट्ठाईस रूप हैं जो सभी निप्पन्न रूप हैं। जब ये सभी रूप इत्थारम्मन यानी सुखद या आनंददायी वस्तुएँ होती हैं, तो वे नाम धम्म चित्तों के लिए अरम्मन या वस्तुएँ बन जाती हैं, जो अष्ट लोभ मूल चित्तों में से एक हो सकती हैं, या अष्ट कामावकार महाकुशल चित्तों में से एक हो सकती हैं। यदि इनमें ज्ञानपूर्ण ध्यान हो, यानी पन्ना और मानसिक चेतसिका हो, तो ये अष्ट कामावकार महाक्रिया चित्तों में से एक हो सकती हैं। जब ये अट्ठाईस रूप सुखद होते हैं और इन चित्तों के लिए अरम्मन के रूप में कार्य करते हैं, तो ये अट्ठाईस रूप प्रमुख धम्म बन जाते हैं और इन्हें अरम्मन अधिपति पच्चया कहा जाता है।

क्योंकि वे अरम्माना के रूप में काम करते हैं और वे उल्लेखित सीताओं के उद्भव के लिए अग्रणी हैं। इस प्रकार रूपा धम्म ऊपर उल्लिखित नामा धम्म चित्तों के लिए अरम्मना अधिपति के रूप में कार्य करता है। अन्य अरम्मना अधिपति धम्म हैं जो नामा धम्म के लिए अरम्मना के रूप में काम करते हैं। कुल 89 चित्तों में से 2 मोहा मुला चित्त, 2 दोसा मुला चित्त और 1 दुक्खा सहगाता कायविन्नन चित्त को बाहर करने के बाद वे 84 चित्त हैं। दोसा चित्त, मोह चित्त और वह दुक्ख सहगतम कायविन्नन चित्त, नाम धम्म के लिए अधिपति धम्म के रूप में काम नहीं कर सकते। तो इन 5 Cittas को 89 Cittas से बाहर रखा गया है। जब ये 84 चित्त उत्पन्न होते हैं और फिर से ये मन का विषय बन जाते हैं, तो वे अधिपति धम्म के रूप में काम करते हैं और इस प्रकार के अधिपति को अरामम्मा अधिपति कहा जाता है। ये 84 चित्त 8 महाकुशल चित्त और 8 महाकिरिया चित्त के उत्पन्न होने का कारण बन सकते हैं।

52 चेतसिकों में से 5 चेतसिक अरम्मन अधिपति धम्म के रूप में कार्य नहीं करते हैं। ये हैं दोष (विरोध), इस्सा (ईर्ष्या), मच्छरिया (कंजूसी), कुक्कुच्चा (चिंता) और मोह (अज्ञान) या भ्रम। ये 5 चेतसिक नाम धम्म के लिए अरम्मन अधिपति के रूप में कार्य नहीं करते हैं। अन्य 47 चेतसिक जब उत्पन्न होते हैं और मन द्वारा निर्देशित या ध्यान में लाए जाते हैं, तो ध्यान देने वाला मन आठ कामवाचार महाकुशल चित्तों में से एक हो सकता है, आठ कामवाचार महाक्रिया चित्तों में से एक हो सकता है। इसलिए ये 47 चेतसिक अरम्मन या विषय के रूप में कार्य करते हैं और ऐसा करने पर वे उन 16 चित्तों को धम्म का मार्गदर्शन करते हैं और ये 47 चेतसिक अरम्मन अधिपति धम्म हैं।

एक अन्य धर्म है जिसे नाम धर्म कहा जाता है और यह मन के सार या विषय के रूप में कार्य कर सकता है। जब यह मन के विषय के रूप में कार्य करता है, तो यह अन्य नाम धर्मों का मार्गदर्शक भी बन जाता है। उस नाम धर्म को निर्वाण कहा जाता है। निर्वाण मन का सार या विषय हो सकता है, लेकिन यह सख्ती से सीमित है और सच्चा निर्वाण केवल आठ लोकउत्तर चित्तों द्वारा ही देखा जा सकता है।

जब आठ लोकउत्तर चित्त उत्पन्न होते हैं और वे निर्वाण को देखते हैं, तो वह निर्वाण वास्तव में उन मार्ग चित्तों और फल चित्तों का सार या विषय बन जाता है। उसी समय निर्वाण प्रमुख धर्म या अधिपति धर्म बन जाता है। नाम धर्म निर्वाण उन चार मार्ग चित्तों और चार फल चित्तों का सार या विषय बन जाता है जो नाम धर्म हैं।

18 इथरम्मन निप्पन्ना रूप बनाते हैं (28 परमत्था रूप में 10 रूप शामिल नहीं हैं और केवल 18 रूप निप्पन्ना रूप हैं), 2 डोसा मूला सीता, 2 मोहा मूला सीता, और 1 दुक्खा सहगत कायाविन्नन सीता को हटाने के बाद 89 सीता में से 84 सीता, 47 डोसा, इस्सा, मैकचरिया, कुक्कुक्का और मोहा के बहिष्कार के बाद 52 सीतासिकों में से सीतासिक और 1 नाम धम्म निब्बाना उनके संबंधित नाम धम्म के लिए अरम्मना के रूप में काम कर सकते हैं। ये धम्म पकाया धम्म या कारण धम्म या कंडीशनिंग धम्म हैं।

पक्कयुप्पन्ना धम्म या उपर्युक्त धम्मों के परिणामी धम्म हैं 8 लोभा मूल चित्त, 8 कामवकार महाकुशल चित्त, 8 कामवकार महाकिरिया चित्त और 8 लोकुत्तर चित्त अर्थात 4 मग्गा चित्त और 4 फला चित्त। ये धम्म, जो कि सभी नाम धम्म हैं, पकाया धम्म से उत्पन्न हुए हैं। इन उपर्युक्त पकाय धम्मों और पचायुप्पन्न धम्म के बीच के संबंध को अधिपति पकाय कहा जाता है। पुनः यह अधिपति पकाय अरम्मना है और इसलिए इस पृष्ठ की पूरी स्थिति को अरम्मना अधिपति पकायो कहा जाता है।

आदिपति पकायो में दो प्रकार के पकाय होते हैं। वे अरम्मानाधिपति पकाया और सहजाताधिपति पकाया हैं। अरम्मनाधिपति पकाया में, पकाया धम्म या कारण कंडीशनिंग धम्म 18 निप्पन्न रूप हैं, जो सभी इत्थारम्मना या सहमत वस्तुओं के रूप में काम करते हैं, 2 डोसा सीता, 2 मोहा चित्त और 1 दुक्खा सहगत कायाविन्नान चित्त के बहिष्कार के बाद 89 कुल चित्त में से 84 चित्त, 47 सीतासिक के बहिष्कार के बाद डोसा, इस्सा, मैकचरिया और कुक्कुक्का के 4 डोसा जड़ित सीतासिका और 1 मोहा सीतासिका, और 1 निब्बाना।

जब ये धम्म अरम्मना के रूप में काम करते हैं, तो वे सभी प्रमुख धम्म बन जाते हैं जिन्हें अधिपति कहा जाता है। निब्बाना 8 लोकुत्तारा चित्तों के लिए धम्म का नेतृत्व कर रहा है। 18 निप्पन्न रूप का इत्तारम्मन 8 लोभा मूल चित्त, 8 महाकुशल चित्त और 8 महाकिरिया चित्त के लिए प्रमुख धम्म के रूप में काम करता है। 84 चित्त और 47 सीतासिका नाना सम्पायुत्त महाकुशल चित्त और महाकिरिया चित्त के लिए अग्रणी धम्म हो सकते हैं। तो ये सभी अरम्मानाधिपति पकाया हैं।

मोहा चित्त और दोसा चित्त और दुक्खा सहगत कायविन्नन चित्त अधिपति धम्म के रूप में धम्म का नेतृत्व नहीं कर सकते। वे अन्य पकाय में व्यवहार करेंगे लेकिन अधिपति पचाय में नहीं। चूंकि मोहा सीतास और दोसा सीतास अरम्मानाधिपति के रूप में काम नहीं कर सकते हैं, उनके संबंधित सीतासिका दोसा, इस्सा, मैकचरिया, कुक्कुक्का और मोहा सीतासिका अरम्मानाधिपति पकाया के रूप में काम नहीं कर सकते हैं।

इन कारणात्मक सशर्त धम्मों के कारण पक्कयुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म 8 लोभा मूल चित्त, 8 महाकुशल चित्त, 8 महाकिरिया चित्त और 8 लोकुत्तर चित्त, दोसा, इस्सा, मैकचरिया, कुक्कुक्का और मोह सीतासिका को छोड़कर 47 सीतासिका हैं। तो यहाँ कारणात्मक कंडीशनिंग धम्म रूप धम्म या 18 निप्पन्न रूप, 84 चित्त का नाम धम्म, 47 सीतासिका और 1 निब्बान हैं। अतः कारणात्मक धम्म रूप और नाम हैं। लेकिन इन कंडीशनिंग धम्मों के कारण परिणामी धम्म डोसा, इस्सा, मैकचरिया, कुक्कुक्का और मोहा के बहिष्कार के बाद सभी चित्त (8 लोभा मूल चित्त, 8 महाकुशल चित्त, 8 महाकिरिया चित्त, और 8 लोकुत्तर चित्त) और सीतासिका 47 के नाम धम्म हैं।

तो अरम्मानाधिपति पकाया में, रूप धम्म और नाम धम्म कारणात्मक अनुकूलन धम्म के रूप में काम करते हैं और वे परिणामी धम्म के उद्भव का कारण बनते हैं जो सभी नाम धम्म हैं। अरम्मानाधिपति पकाया धम्म में कोई भी परिणामी रूप धम्म नहीं है।

अधिपति पकाय में, अधिपति पकाय दो प्रकार के होते हैं। वे अरम्मना अधिपति पकाया और सहजता अधिपति पकाया हैं। अरम्मानाधिपति पकाया को पिछले पृष्ठों में समझाया गया है। इस पृष्ठ में, सहजता अधिपति पकाया पर कुछ विवरणों पर चर्चा की जाएगी।

ऐसे धम्म हैं जो अग्रणी भूमिका निभाते हैं। इन्हें अधिपति धम्म कहा जाता है। वे सभी नाम धम्म हैं। वे हैं चित्त, चंदा चेतसिका, वीर्य चेतसिका और पन्निंद्रिय चेतसिका। अधिपति धम्मों के रूप में उन्हें 1. चंदाधिपति, 2. चित्ताधिपति, 3. वीर्याधिपति, और 4. विमंसाधिपति कहा जाता है।

ये सभी नाम धम्म हैं और ये अधिपति धम्म तभी बनते हैं जब चित्त अपना जावना कार्य कर रहे होते हैं। अन्य समय में, वे बिल्कुल भी अधिपति धम्म नहीं हैं। ऐसे धम्मों के उदाहरण जो अधिपति धम्म नहीं हो सकते, वे गैर जावना चित्त हैं और इन गैर जावना चित्तों के चंदा, वीर्य और पन्निन्द्रिय चेतसिका बिल्कुल भी अधिपति धम्म नहीं हैं। अत: अधिपति धम्म केवल जवना चित्त में ही देखे जाते हैं।

कुल 89 चित्त हैं। यद्यपि 89 चित्त हैं, वे अपना-अपना कार्य करते हैं और दूसरों का कार्य नहीं करते। कार्य के अनुसार, चित्तों के 14 कार्य हैं।

1. पतिसंधि किक्का या लिंकिंग फ़ंक्शन
2. भावंगा किच्चा या जीवन निरंतर कार्य
3. अवज्जना किक्का या विज्ञापन फ़ंक्शन
4. दस्सना किक्का या देखने का कार्य
5. सवाना किक्का या श्रवण क्रिया
6. घयाना किच्चा या सूंघने का कार्य
7. sayana kicca or tasting function
8. फुसाना किक्का या स्पर्श क्रिया
9. संपच्चना किक्का या प्राप्त करने का कार्य
10. संतिराना किक्का या जांच कार्य
11. वोत्थापना किच्चा या निर्धारण कार्य
12. जवाना किक्का या मानसिक आवेग कार्य
13. तदारम्मना किक्का या प्रतिधारण कार्य
14. cuti kicca or dying function

इन कार्यों में से केवल जवान किच्चा या मानसिक आवेग ही अधिपति धम्म हो सकता है। जवान चित्त के 55 प्रकार हैं।

वे 29 कामवाकर जवना चित्त और 26 महागाता चित्त हैं। महागत का अर्थ है श्रेष्ठ। वे झाना सीतास या मग्गा सीतास या फला सीतास हैं।

29 कामवाकर जवना चित्त हैं

- 12 akusala cittas
- 1 ahetuka hasituppada citta
- 8 महाकुसला चित्त
- 8 महाकिरिया चित्त

26 महाग्गता चित्त हैं। वे हैं:

- 5 rupakusala cittas
- 5 rupakiriya cittas
- 4 arupakusala cittas
- 4 arupakiriya cittas
- 4 magga cittas
- 4 फला चित्त

29 कामवचरा जवना चित्त में, 2 मोह चित्त और 1 हसितुप्पा चित्त अधिपति धम्म के रूप में काम नहीं कर सकते। तो 55 जावना सिट्टा में से 3 सिट्टा बचे हैं और 52 जावना सिट्टा होंगे।

इन 52 जवान चित्तों में चित्त और चेतसिका दोनों भाग होते हैं। जब चित्त प्रबल होता है, तब इन सभी 52 चित्तों को चित्तधिपति धर्म कहा जाता है। चित्त प्रधान होने के कारण, इन 52 चित्तों में चंदा, वीर्य और पन्ना को अपने-अपने चित्तों की इच्छा का पालन करना पड़ता है।

इन 52 चित्तों में से यदि चंद प्रमुख धर्म बन जाए, तो चंद अन्य सभी चेतसिकों और इन 52 चित्तों के चित्त के लिए अधिपति पच्चय धर्म का कार्य करता है। यही चंदाधिपति धर्म है। यदि इन 52 चित्तों में वीर्य प्रमुख धर्म बन जाए, तो इन 52 चित्तों के सभी चेतसिकों को वीर्य धर्म की इच्छा का पालन करना होगा। इसी प्रकार, जब इन 52 चित्तों में पन्ना प्रमुख धर्म बन जाए, तो इन 52 चित्तों के सभी चेतसिकों को उस पन्ना की इच्छा का पालन करना होगा।

प्रत्येक जवान चित्त में, चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाएँ एक ही समय में एक ही क्षण में उत्पन्न होती हैं, जैसे मोमबत्ती की रोशनी एक ही समय में ऊष्मा और प्रकाश दोनों प्रदान करती है। ये चेतसिकाएँ चित्त के साथ ही उत्पन्न होती हैं और इन्हें सहजता पच्चया कहा जाता है। लेकिन जब ये, अर्थात् चंद, वीर्य और पन्ना, अलग-अलग चित्त का नेतृत्व करते हैं, तो इन्हें सहजताधिपति पच्चया कहा जाता है।

जब 52 चित्त उत्पन्न होते हैं, तो उनके चेतसिका भी उत्पन्न होते हैं, और जब चित्त अत्यंत शक्तिशाली होकर नेतृत्व करता है, तब वह चित्तधिपति धम्म कहलाता है। प्रत्येक 52 चित्तों के मामले में सहजताधिपति पच्चय धम्म चित्त होता है, और सहजताधिपति पच्चयुप्पन्न धम्म या परिणामी धम्म उनके संबंधित चेतसिका होते हैं। परिणाम कारणों के साथ उत्पन्न होते हैं, और इसे सहजता पच्चय कहा जाता है। लेकिन चूंकि 52 चित्त प्रमुख धम्म हैं, इसलिए यह केवल सहजता पच्चय नहीं बल्कि सहजताधिपति पच्चय है।

उसी प्रकार जब चंदा या वीर्य या पन्ना प्रमुख धम्म या अधिपति धम्म बन जाते हैं, तो वे सहजाधिपति पकाया धम्म या कारण कंडीशनिंग धम्म के रूप में कार्य करते हैं और चंदा, वीर्य और पन्ना को छोड़कर सभी 52 चित्त और उनके संबंधित सीतासिका जब वे धम्म का नेतृत्व कर रहे होते हैं तो पकायुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म बन जाते हैं। चूंकि कारणात्मक कंडीशनिंग धम्म और परिणामी धम्म एक साथ उत्पन्न होते हैं, इसलिए उन्हें सहजता कहा जाता है और पकाया या स्थिति को सहजताधिपति पकायो कहा जाता है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 8
हटू निंग द्वारा

अध्याय 8 - अनंतारा पच्चयो
या निकटता की स्थिति
कुल 89 चित्त होते हैं। किसी भी समय एक चित्त विद्यमान रहता है और जैसे ही वह चित्त क्षीण होता है, चित्त नियम के अनुसार अगला चित्त उत्पन्न हो जाता है। लेकिन यदि क्षीण हो रहा चित्त किसी अरहत का चुति चित्त है, तो वह आगे कुछ भी उत्पन्न नहीं करेगा, यानी अरहत के चुति चित्त के बाद कोई और चित्त नहीं रह जाता।

अरहत चुति चित्तों के अलावा, अन्य सभी 89 चित्त, चाहे वे चुति हों या नहीं, पूर्ववर्ती चित्त के समाप्त होने के तुरंत बाद एक नया चित्त उत्पन्न होता है। राजा की मृत्यु के समय युवराज स्वतः ही राजा बन जाता है। इसी उपमा के अनुसार, पूर्ववर्ती चित्त (अरहतों के चुति चित्त को छोड़कर सभी 89 चित्त) का समाप्त होना या पूर्ववर्ती चित्त का समाप्त होना, नए चित्त के उत्पन्न होने का कारण बनता है।

अतीत के चित्त में उसके चेतसिका होते हैं। अतः चित्त और चेतसिका दोनों के देहत्याप से अगले उत्पन्न होने वाले चित्त और उसके चेतसिका प्रभावित होते हैं। इस स्थिति को निकटता या अनंतर पच्चया कहते हैं। अनंतर शब्द अना और अंतर से मिलकर बना है। अना का अर्थ है 'नहीं', 'कुछ नहीं'। अंतर का अर्थ है अंतराल, रिक्त स्थान। अतः अनंतर का अर्थ है कोई अंतराल नहीं, या इसका अर्थ है निकटता।

चक्खु विन्नन धातु तम संपयुत्तका च धम्म मनोधातुया तम संपायुत्तकाननच धम्मनं अनंतरा पकायेन पकायो।

चक्कु विन्नान धातु चक्कु विन्नान चित्त है। इससे जुड़े धम्म 7 सार्वभौमिक चैतसिक हैं जिन्हें चरण या संपर्क, वेदना या भावना, चेतना या इच्छा, सन्ना या धारणा, एकागता या एक बिंदु, जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन, और मनसिकारा या ध्यान कहा जाता है। जब लुप्त हो जाते हैं, तो ये 8 धम्म अर्थात चित्त और 7 सीतासिका अगले उत्पन्न होने वाले नाम धम्म के निकटता नामक स्थिति की सेवा करते हैं, जिसे मनोधातु कहा जाता है, जो संपतिच्चन चित्त है।

इस सम्पतिच्चन चित्त में 10 सिटासिकाएँ हैं। वे 7 सार्वभौमिक चेतसिक, विटक्क, विकार और अधिमोक्ख कुल मिलाकर 10 चेतसिक हैं। उपरोक्त नाम धम्म जो कि चक्खु विन्नान चित्त है और इसके सिटासिका 7 सभी पकाया धम्म के रूप में काम करते हैं और इस पकाया को अनंत पकाया कहा जाता है। सम्पतिच्चन चित्त और इसके सह-उत्पन्न होने वाले 10 सिटासिका पच्चयुप्पन्ना धम्म हैं।

पच्चया धम्म और पच्चयुप्पन्ना धम्म के बीच के संबंध को अनंतरा कहा जाता है। यही अनंतरा पच्चयो है। चक्खुविन्नाना चित्त के देहांत होते ही संपच्चना चित्त का तत्काल उद्भव हो जाता है, और यह ऐसा प्रतीत होता है मानो राजा के देहांत होने पर संपच्चना चित्त सिंहासन पर आसीन हो जाता है।

चक्खुविन्नान चित्त या नेत्र चेतना के समाप्त होने के बाद, संपत्चना चित्त नामक एक अन्य चित्त उत्पन्न होता है, जो चक्खुविन्नान चित्त द्वारा ग्रहण की गई वस्तु को ग्रहण करता है। यह नया चित्त, संपत्चना चित्त भी तुरंत ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि यह केवल एक क्षण तक ही रह सकता है।

इसके बाद उत्पन्न होने वाले चित्त को सन्तिरण चित्त या खोजी चेतना कहा जाता है। सम्पतीच्छना चित्त को मनो धातु भी कहा जाता है क्योंकि यह केवल वस्तु को जानता है, उसके सभी गुणों और निहितार्थों को उसके पूर्ण सार में नहीं जानता। पंचद्वरवज्जना चित्त या पंच

इंद्रिय-प्रवेश चेतना भी इसी प्रकार है। दो सम्पतीच्छना चित्त (कुशल विपाक और अकुशल विपाक) और पंचद्वरवज्जना चित्त को मनो धातु कहा जाता है।

मनो धातु केवल वस्तु को जानो। लेकिन मनो विन्नना धातु मनो धातु से कहीं अधिक जानते हैं। शांतिराना चित्त मनो विन्ना धातु हैं।

मनो धातु त.म संपयुत्तका च धम्म मनो विन्नन धातुया त.म संपयुत्तकाननच धम्मन.म अनंतरा पकायेन पकायो.

सम्पतिच्चन चित्त जो चक्खुविन्नन चित्त का अनुसरण करता है एक मनो धातु है। उस मनो धातु में 10 चेतसिकाएँ होती हैं। वे 7 सार्वभौमिक सीतासिका, विटक्का, विचारा, और अधिमोक्खा सीतासिका हैं। ये 10 धम्म सम्पायुत्तका च धम्म या सहवर्ती धम्म हैं।

संपच्चना चित्त के नष्ट होते ही, इसके साथ मौजूद ये दस चेतसिकाएँ भी नष्ट हो जाती हैं। इनके नष्ट होने से सन्तिरण चित्त नामक अगले चित्त के उत्पन्न होने की स्थिति उत्पन्न होती है, जो मनो विन्नन धातु का एक प्रकार है। यदि यह चित्त उपेक्ख चित्त है, तो इसके साथ दस चेतसिकाएँ होती हैं। ये दस चेतसिकाएँ उसी प्रकार की होती हैं जो संपच्चना चित्त में उत्पन्न होती हैं।

पिछला चित्त संपच्चना चित्त कहलाता है। यह मनो धातु है। इसके बाद उत्पन्न होने वाला चित्त सन्तिरण चित्त कहलाता है। यह मनो विन्नना धातु है। संपच्चना चित्त का लुप्त होना राजा की मृत्यु के समान है। राजा की मृत्यु होते ही युवराज स्वतः ही राजा बन जाता है। संपच्चना चित्त के लुप्त होने से सन्तिरण चित्त का उदय होता है।

इस संदर्भ में सिद्धया धर्म संपत्वना और उससे संबंधित दस चेतसिकाएँ हैं। उनका निष्फल होना सन्तिरण चित्त के पुनरुद्भव का कारण है। अतः वे सिद्धया धर्म हैं। सन्तिरण और उससे संबंधित दस चेतसिकाएँ परिणामी धर्म हैं और उन्हें सिद्धायुप्पन्न धर्म कहा जाता है।

कारण-प्रेरित धम्म और परिणाम-प्रेरित धम्म के बीच के संबंध को अनंतार सिद्धाय कहते हैं। अनंतार, अना और अंतरा से मिलकर बना है। अना का अर्थ है 'नहीं', 'कुछ नहीं'। अंतरा का अर्थ है अंतराल, रिक्त स्थान। अनंतार का अर्थ है कोई अंतराल नहीं, कोई रिक्त स्थान नहीं। अतः कारण-प्रेरित धम्म और परिणाम-प्रेरित धम्म के बीच कोई अंतर नहीं होता, और इसी को अनंतार कहते हैं। यही अनंतार सिद्धाय है।

सोतविन्नान धातु त.म संपयुत्तका च धम्म मनो धातुय त.म संपयुत्तकाणच धम्मना.म अनंतरा पकायेन पकायो. धम्मों के बीच का यह संबंध भी चक्कुविन्नान चित्त और संपतिच्चन चित्त के समान है।

मनो धातु त.म संपयुत्तका च धम्म मनो विन्नान धातुया त.म संपयुत्तकाननच धम्मना.म अनंतर पकायेन पकायो. सोतविन्नन धातु का पालन करने वाला संपतिच्चन चित्त भी समाप्त हो जाता है और इसके बाद शांतिरण चित्त आता है जो ध्वनि वस्तु की जांच करता है। यह मामला भी चक्कुविन्नाना चित्त और निम्नलिखित चित्त के समान है।

पुनः घनविन्नन धातु के बाद मनो धातु सम्पतिच्चन चित्त आता है। और इसके बाद फिर से मनो विन्नना धातु शांतिराना चित्त आता है। इन घटनाओं की तरह, जीवविन्नान चित्त और निम्नलिखित चित्त, कायाविन्नान चित्त और निम्नलिखित चित्त भी चक्कुविन्नान चित्त और सोतविन्नान चित्त की तरह ही करते हैं।

पुनः प्रत्येक मनो विन्नन धातु के बाद अन्य मनो विन्नन धातु भी आती है। चित्त की सभी प्रक्रियाओं में, जो एक के बाद एक चित्त की एक श्रृंखला बनाती हैं, जिसे विथि वर कहा जाता है, वे बिल्कुल चित्त नियम या चित्त के नियम के नियमों का पालन करती हैं।

यदि पूर्वगामी चित्त कुसल धम्म है, तो निम्नलिखित चित्त भी कुसल धम्म है। पूर्वगामी कुसल धम्म समाप्त हो जाता है और अगले उत्पन्न होने वाले कुसल धम्म के लिए स्थिति पैदा करता है। तो यह अनन्तर पकाया है। यदि पूर्वगामी चित्त कुसल धम्म है, तो निम्नलिखित चित्त अभ्यक्त धम्म भी हो सकता है। रिश्ता अनंतर पकाया है। अव्यक्त धम्म गैर कर्म सृजनात्मक धम्म हैं।

यदि अग्रदूत अकुसाला धम्म है, तो अगला चित्त अकुसाला धम्म होगा और वे अनंत पकाया द्वारा वातानुकूलित हैं। यदि यह अकुसाला धम्म है, तो अगला चित्त अभी भी अभ्यक्त धम्म हो सकता है। यह रिश्ता भी अनन्तर पकाया है।

यदि अभ्यकता धम्म चित्त से पहले आता है, तो अगला उत्पन्न होने वाला चित्त अभ्यकता धम्म हो सकता है। यह भी अनंतर पच्चय है। इस अभ्यकता धम्म के बाद कुशल धम्म भी आ सकता है। यह अनंतर पच्चय है। इसी प्रकार, अभ्यकता धम्म के बाद अकुशल धम्म भी आ सकता है। और इस संबंध को अनंतर पच्चय कहते हैं।

पच्चया धम्म चित्त और चेतसिका का त्याग है। पच्चयुप्पन्न धम्म चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाओं का अनुसरण करता है। पच्चया धम्म और पच्चयुप्पन्न धम्म के बीच के संबंध को अनंतार पच्चयो कहा जाता है।

अध्याय 9 - समानान्तरा पकायो
या निकटता की स्थिति
समनन्तरा पचायोति- चक्खु विन्नन धातु तम संपयुत्तका च धम्म मनो धातुया तम संपयुत्तकाननच धम्मनं समानान्तरा पचायेन पचयो।

राजा की मृत्यु होने पर युवराज स्वतः ही उस देश का राजा बन जाता है जहाँ दिवंगत राजा का शासन था। राजत्व की निरंतरता और तर्कसंगतता तब अधिक होती है जब राजा की मृत्यु नहीं होती, बल्कि वह संन्यास लेकर उच्चतर मानसिक साधना के लिए वनवास जाने पर अपना राजत्व युवराज को सौंप देता है। पहले उदाहरण को अनंतार पच्चया और दूसरे उदाहरण को समनंतार पच्चया कहा जाता है।

अन्यथा समनंतर पच्चया में पच्चया का लगभग सारा वर्णन अनंतर पच्चया के समान ही है। लेकिन कुछ अपवाद हैं जहाँ समनंतर पच्चया अनंतर पच्चया के समान नहीं है। उपरोक्त पाली संदेश केवल यह उद्धृत करने के लिए है कि यह पट्ठाना धम्म में व्यक्त किया गया है। इसका अर्थ यह है कि...

समनंतरा पकाय या सन्निहित स्थिति में --- कक्खु विन्नन धातु या चक्कु विन्नन चित्त और उससे संबंधित धम्म जो कि सीतासिका हैं [संपयुत्तका च धम्म] मनो धातु (1 पंचद्वार अवज्जन चित्त या 5-द्वार विज्ञापन चेतना, और 2 संपतिच्छन चित्त या चेतना प्राप्त करना) और इसके उत्पन्न होने की स्थिति देता है। धम्म के साथ [अर्थात सीतासिका]।

दोबारा

मनो धातु तम संपयुत्तका च धम्म मनो विन्नन धातुय तम संपयुत्तकननच धम्मनं समानान्तर पचायेन पचयो।

मनो धातु (3 चित्तों में से एक, 1 पंचद्वार अवज्जन चित्त और 2 संपतिच्छन चित्त) और उससे जुड़े धम्म [सिटासिका] मनो विन्नन धातु के लिए सन्निहित स्थिति देते हैं [10 पंच विन्नान चित्त और 3 मनोधातु को घटाने के बाद 89 चित्तों में से 76 चित्त] और उनसे जुड़े धम्म [cetasikas]।

यह भी सही है

1. सोताविन्नन धातु से मनो धातु और मनो धातु से मनो विन्नन धातु
2. घनाविन्न धातु से मनो धातु और मनो धातु से मनो विन्नन धातु
3. जीवविन्नन धातु से मनो धातु और मनो धातु से मनो विन्नन धातु
4. कायविन्नन धातु से मनो धातु और मानो धातु से मानो विन्नन धातु

पुरिमा पुरिमा कुसल धम्म पछिमानं पछिमानं कुसलनं धम्मनं समानान्तरा पक्केयेन पकायो।

पुरिमा का अर्थ है आगे या आगे जाना और पछिमा का अर्थ है पीछे या आखिरी या वह जो किसी या किसी चीज़ के पीछे है। पुरिमा पुरिमा का अर्थ है वह धम्म जो अन्य धम्मों के सामने जाता है या वह धम्म जो उसके बाद आने वाले धम्मों से पहले उत्पन्न होता है। यदि पूर्वगामी धम्म कुसल धम्म हैं (8 कामकुसल चित्त, 5 रूपकुसल चित्त, 4 अरूपकुसल चित्त और 4 लोकुत्तरा कुसल चित्त हैं) तो निम्नलिखित धम्म कुसल धम्म होंगे [8 काम कुसल, 5 रूप कुसल, 4 अरूप कुसल, और 4 लोकुत्तारा कुसाला]।

पुरिमा पूरिमा कुसल धम्म पच्छिमानं पछिमानं अभ्यक्तनं धम्मणं समानंतरा पकायेन पकायो। जब पूर्ववर्ती धम्म कुसल धम्म हैं, तो अगले निम्नलिखित धम्म अभ्यक्त धम्म भी हो सकते हैं। अभ्यक्त धम्म कुसल धम्म नहीं हैं और वे अकुसल धम्म नहीं हैं। वे विपाक धम्म या किरिय धम्म हैं और उनमें कोई कर्म बल नहीं है।

यह उद्धरण कहता है कि कुसल धम्म का अनुसरण अभ्यक्त धम्म द्वारा किया जा सकता है। उदाहरण हैं

7वें महाकुशल जवना चित्त के अंत में 1 तदारम्मन चित्त या प्रतिधारण चेतना का अनुसरण होता है, जो विपाक चित्त में से एक है। तदारम्मना चित्त 3 शांतिराना चित्त और 8 महाविपाक चित्त हैं। सभी विपाक चित्त हैं जबकि महाविपाक चित्त सहेतुका विपाक हैं, 3 शांतिराना चित्त अहेतुका विपाक चित्त हैं।

पुरिमा पुरिमा अकुसल धम्म पच्छिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं समानान्तरा पक्केयेन पचायो।

यदि पूर्ववर्ती धम्म अकुसाला हैं, तो अगले निम्नलिखित धम्म अकुसाला धम्म हो सकते हैं। अकुसाला जावना में, लगातार 7 चित्त हैं। सभी अकुसाला चित्ता हैं। पहले अकुसाला के बाद अगला अकुसाला धम्म होता है और यह 6वें अकुसाला जवना चित्त तक होता है।

पुरिमा पुरिमा अकुशल धम्म पच्छिमानं पछिमानं अभ्यकतानं धम्मनं समानान्तरा पक्केयेन पचायो।

फिर जब पूर्ववर्ती धम्म अकुसाला धम्म हैं, तो अगला निम्नलिखित धम्म अभ्यक्त धम्म भी हो सकता है। उदाहरण है 7वां अकुसाला जवना चित्त, उसके बाद विपाक चित्त का पहला तदारम्मन चित्त है जो एक अभ्यक्त धम्म है।

पुरिमा पुरिमा अभ्यक्ता धम्म पछिमानं पछिमानं अभ्यक्तानं धम्मणं समानान्तरा पक्केयेन पचायो।

जब पूर्ववर्ती धम्म अव्यक्त धम्म हैं, तो अगले निम्नलिखित धम्म भी अव्यक्त धम्म हो सकते हैं। सम्पतिच्चन चित्त या मनो धातु एक विपाक चित्त है और यह अभ्यक्त धम्म है और इसके बाद शांतिराना चित्त आता है जो एक विपाक चित्त और अभ्यक्त धम्म है।

पुरिमा पुरिमा अभ्यक्ता धम्म पच्छिमानं पछिमानं कुसलनं धम्मनं समानान्तरा पकायेन पकायो।

जब पूर्ववर्ती धम्म अभ्यक्त धम्म हैं, तो अगला धम्म कुसल धम्म हो सकता है। यह वोत्थापना चित्त में देखा जाता है जो मनो द्वार अवज्जना चित्त है और यह किरिया चित्त है। तो यह अभ्यक्त धम्म है। इसके बाद कुसाला जवना सिट्टास आता है।

पुरिमा पुरिमा अभ्यक्ता धम्म पच्छिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं समानान्तरा पक्केयेन पचायो।

येसं येसं धम्मनं समनन्तरा ये ये धम्म उप्पज्जन्ति चित्त चेतसिका धम्म ते ते धम्म तेसम तेसम धम्मनम समानान्तरा पचायेन पकायो।

पुरीमा का अर्थ है, जो पूर्व दिशा से पहले आता है या जो सबसे पहले घटित हुआ है। पुरीमा का अर्थ है वे धर्म जो अन्य धर्मों से पहले घटित हुए हैं। इस वाक्य में यदि ये धर्म अभ्यकता धर्म हैं, तो पच्चिमा या अनुवर्ती धर्म अकुशल धर्म हो सकते हैं। और यह संबंध समनंतर पच्चया है।

अकुशल जवान विथी वर में या अकुशल तरीके से प्रतिक्रिया करते हुए चित्तों की प्रक्रिया में, यदि विथी वर अति महंत अरम्मन है या यदि वस्तु अत्यंत स्पष्ट है, तो 14 विथी चित्त होते हैं। 1. अतित भावांग चित्त (पूर्व जीवन निरंतरता), 2. भावांग चलन (स्पंदित जीवन निरंतरता) और 3. भावांगुप्पच्छेद (अवरोधित जीवन निरंतरता) के नाम पर 3 भावांग चित्तों के समाप्त होने के बाद, उपरोक्त 3 भावांग चित्तों के साथ कुल 17 चित्तों का निर्माण होता है।

14वें विथि चित्त के अंत में या 17वें चित्त के अंत में अराम्मन या वस्तु के रूप में काम करने वाला मूल रूप भी 14वें विथि चित्त या 17वें चित्त के साथ गायब हो जाता है। 3 भावांग चित्त के बाद, अकुसाला जावना वीथि में पहला विथि चित्त पंचद्वार अवज्जना चित्त है। यह चित्त किरिया चित्त है। यह अहेतुका किरिया चित्त है। यह एक किरिया चित्त है जो जावना किक्का या मानसिक आवेग कार्य का काम नहीं कर सकता है। लेकिन यह अवाजना का काम या विज्ञापन का काम करता है। चूँकि यह एक किरिय चित्त है इसलिए यह एक अभ्यक्त धम्म है।

पंच द्वार अवज्जन चित्त के बाद पंच विन्नान चित्त या 5-इंद्रिय चेतना आती है। यह चित्त विपाक चित्त है। यह अहेतुका चित्त है। यह देखने का काम कर रहा है कि क्या चित्त चक्खु विन्नान है, अगर सोता विन्नना है तो सुन रहा है, अगर घना विन्नना है तो सूंघ रहा है, अगर जीव विन्नना है तो चख रहा है, अगर काया विन्नना है तो उसे छू रहा है। चूँकि यह विपाक चित्त है इसलिए यह अव्यक्त धम्म भी है। पूर्वगामी पंचद्वारवज्जन चित्त है जो एक अभ्यक्त धम्म है और इसके बाद पंच विन्नान चित्त है जो एक अभ्यक्त धम्म भी है। यह भी समानान्तर पकाया है।

पंच विन्नाना चित्त के समाप्त होने के बाद सम्पचित्छना चित्त या ग्रहणशील चेतना उत्पन्न होती है। यह अहेतुका चित्त है। यह एक विपाक चित्त है। क्योंकि यह एक विपाक चित्त है, इसलिए यह अभ्यक धम्म है। पूर्वोक्त चित्त पंच विन्नाना चित्त भी अभ्यक धम्म है और इसके बाद सम्पचित्छना चित्त आता है, जो भी अभ्यक धम्म है। फिर सम्पचित्छना चित्त या ग्रहणशील चेतना के बाद सन्तिरण चित्त या अन्वेषणशील चेतना आती है। सन्तिरण चित्त एक अहेतुका चित्त है। यह एक विपाक चित्त है। इसलिए यह भी अभ्यक धम्म है। पूर्वोक्त चित्त सम्पचित्छना चित्त है, जो अभ्यक धम्म है और इसके बाद सन्तिरण चित्त आता है, जो भी अभ्यक धम्म है।

जब सन्तिरण चित्त या अन्वेषण चेतना समाप्त हो जाती है, तब वोत्थपन चित्त या निर्धारण चेतना उत्पन्न होती है। यह चित्त मनोद्वरवज्जन चित्त है, जो निर्धारण का कार्य करता है या वोत्थपन किच्चा करता है। मनोद्वरवज्जन चित्त क्रिया चित्त है, इसलिए यह अभ्यकत धर्म भी

है। इससे पहले वाला चित्त सन्तिरण चित्त है, जो अभ्यकत धर्म है, और इसके बाद मनोद्वरवज्जन चित्त आता है, जो निर्धारण का कार्य करता है या वोत्थपन किच्चा करता है, जो फिर से अभ्यकत धर्म है। और यह समननातर पच्चया के अनुरूप है।

जैसे ही विथि वर अकुसाला विथि वर है, जैसे ही वोत्थापना चित्त [मनोद्वारवज्जन चित्त] का निधन हो जाता है, वहां पहला अकुसाला जवना चित्त का अनुसरण होता है। तो पूर्वगामी चित्त मनोद्वारवज्जन चित्त है जो एक अभ्यक्त धम्म है और इस अभ्यक्त धम्म के बाद पहला अकुसाला जवना चित्त है जो एक अकुशल धम्म है। तो यह इंगित करता है कि पुरिमा पुरिमा अभ्यक्ता धम्म पछिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं समाननतारा पकायेना पचायो।

यहां कारण धर्म या सहायक धर्म या पच्चय धर्म, वोत्थापन चित्त या मनोद्वर अवज्जन चित्त है, जो अभ्यकत धर्म है, और परिणामी धर्म या पच्चयुप्पन धर्म या सशर्त धर्म, प्रथम अकुशल जवान चित्त है [यह बारह अकुशल चित्तों में से एक हो सकता है]। कारण धर्म और परिणामी धर्म के बीच के संबंध को समनंतर पच्चय कहा जाता है, क्योंकि इनके बीच कोई अंतराल नहीं होता। पच्चयुप्पन, पच्चय और उप्पन से मिलकर बना है। पच्चय का अर्थ है आधार और उप्पन का अर्थ है उत्पन्न। पच्चयुप्पन का अर्थ है वे उत्पन्न वस्तुएँ जिन्हें आधार या सशर्त बनाया गया है।

प्रतीत्यसमुप्प धर्म या आश्रित उत्पत्ति, कारण और परिणाम के बीच ऐसा कोई विशेष संबंध नहीं दर्शाता है। प्रतीत्यसमुप्प धर्म केवल कारण और परिणाम को क्रमबद्ध रूप से प्रकट करता है, यह बताए बिना कि इन दोनों धर्मों के बीच संबंध कैसे स्थापित होता है। जबकि पथाना धर्म निश्चित रूप से उनके बीच संबंध को प्रकट करता है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 10
हटू निंग द्वारा

अध्याय 10 - सहजता पकायो

या चेतना की स्थिति
सहजता पकायो ती - कत्तारो खांधा अरूपिनो अन्नमन्नम सहजता पकायेना पकायो।

सहा का अर्थ है साथ में, समानांतर, एक ही समय में, एक साथ आना। जाति या जाता का अर्थ है उत्पन्न होना या ऊपर आना। सहजता का अर्थ है एक साथ ऊपर आना। पच्चया का अर्थ है आधार, स्थिति, समर्थित स्थिति, कारण। अतः सहजता पच्चया का अर्थ है वह स्थिति जो परिणाम के साथ आती है। ति या इति का अर्थ है इस प्रकार, जैसा कि। अतः सहजता पच्चयो आरे कत्तरो खान पच्चयो।

चट्टारो का अर्थ है ये चार धम्म। खंधा का अर्थ है समूह। अरूपिनो का अर्थ है निराकार। अतः चट्टारो खंधा अरूपिनो का अर्थ है ये चार निराकार समूह। अन्नमन्नम, अन्न और अन्नम से मिलकर बना है। इसका अर्थ है एक दूसरे से। यानी एक दूसरे से संबंधित है और दूसरा पहले से, और यही एक दूसरे से संबंधित है। यह कहा जा सकता है कि वे एक दूसरे के साथ क्रिया कर रहे हैं। ये चार खंधा अन्नमन्न सहजता पच्चया के रूप में कार्य करते हैं।

इसका अर्थ यह है कि एक खंध अन्य तीन खंधों के लिए पच्चय धम्म का कार्य करता है। इसी प्रकार, अन्य तीन खंध भी अन्य तीन खंधों के लिए पच्चय धम्म का कार्य करते हैं। इसे समझने के लिए पांच खंधों या पांच स्कंधों का ज्ञान होना आवश्यक है; इन पांच खंधों के ज्ञान के बिना सहजत पच्चय, विशेषकर अन्नमन्न सहजत पच्चय, को नहीं समझा जा सकता।

पांच खंड या पंच खंड हैं

1. रूपा खंडा या सामग्री समुच्चय
2. वेदना क्षन्ध या भावना समूह

3. सन्ना खंडा या धारणा समूह
4. संखारा खंड या गठन समुच्चय
5. विन्नाना क्खंध या चेतना समूह

सरल अंग्रेजी में लिखना आसान है। लेकिन उन्हें और स्पष्टीकरण की आवश्यकता होगी। यदि भौतिक तत्वों के समूह को स्पष्ट न किया जाए तो गैर-बौद्धों के लिए उनका कोई अर्थ नहीं होगा। नाम-रूप अंतःक्रिया के क्षेत्र में रूप की भी स्पष्ट भूमिका होती है। रूप के बिना, चित्त और चेतसिका उत्पन्न नहीं हो सकते, सिवाय कुछ अपवादों के जब वे अरूप ब्रह्म लोकों में हों।

नाम-रूप के परस्पर संबंध के संदर्भ में, हमें एक उदाहरण की आवश्यकता है। आइए देखने की घटना का उदाहरण लें। आप कुछ देखते हैं या कोई और कुछ देखता है। धम्मों का उद्भव और विनाश होता है। ये विभिन्न आकृतियों और रूपों के वन्न या रंग हैं जो दृष्टि चेतना या चक्खु विन्नन चित्त के लिए रूपारम्मन या विषय के रूप में कार्य करते हैं। वह वन्न एक रूप है और यह रूपखंड या भौतिक समुच्चय है। इसी प्रक्रिया में चक्खु पसद या चक्खुप्पसद या दृष्टि इंद्रिय आधार का उद्भव होता है। यह एक अन्य रूप या पदार्थ है और यह भी भौतिक समुच्चय या रूपखंड है।

जबकि वन्नो या रंग आरम्मन या वस्तु का कार्य करता है, वहीं चक्खु पसदा रूप चित्तों की संपूर्ण श्रृंखला के लिए द्वार का कार्य करता है। चक्खु पसदा रूप संबंधित चित्तों और चेतसिकाओं के लिए आधार का भी कार्य करता है। इस पूरी प्रक्रिया में 14 विथी चित्त होते हैं।

1. पंचद्वरवज्जन चित्त में उपेक्खा वेदना या उदासीन भावना है। 2. पंचविन्नान चित्त या चक्कुविन्नान चित्त में यहाँ उपेक्खा वेदना या उदासीन भावना है। 3. सम्पतिच्चन चित्त या चेतना प्राप्त करने में उपेक्खा वेदना या उदासीन भावना भी होती है। 4. शांतिराना चित्त या जांच चेतना में उपेक्खा वेदना या उदासीन भावना हो सकती है या सोमनास्सा वेदना या मानसिक आनंद हो सकता है। 3 शांतिराना चित्त या 3 जांच चेतना हैं। एक है अकुसल विपाक का उपेक्खा शांतिराना और दूसरा है कुसल विपाका का उपेक्खा शांतिराना और फिर भी एक तीसरा शांतिराना है और यह कुसल विपाका है और इसमें सोमनासा वेदना या मानसिक आनंद है।

5. वोत्थापन चित्त या निर्धारण चेतना, जो मनोद्वार वज्जन चित्त या मन द्वार विमुख चेतना है। इसमें उपेक्षा वेदना या उदासीन भाव होता है। इस पाँचवें विथी चित्त के बाद लगातार सात जावना चित्त आते हैं।

6 से 12. जावना चित्त या मानसिक आवेगी चेतना। जैसा कि यह उदाहरण पंचद्वार विथि वर जावना चित्त है, पंचद्वार विथि वर के होंगे। 5 इंद्रिय द्वार पर 29 जवना चित्त हैं। ये 29 जवना चित्त हैं 12 अकुसाला चित्त, 1 हसीतुप्पदा चित्त, 8 महाकुशल चित्त, और 8 महाकिरिया चित्त।

उनमें से 4 लोभ चित्त सोमनस्सा चित्त या मानसिक आनंद के साथ चेतना हैं, 1 हसीतुप्पा चित्त एक सोमनस्सा चित्त है, 4 महाकुशल चित्त सोमनस्सा चित्त हैं और 4 महाकिरिया चित्त सोमनस्सा चित्त हैं। तो 13 सोमनासा काम जवना चित्त होंगे। 2 डोसा सिट्टा डोमानासा सिट्टा हैं और उनमें मानसिक नाराजगी है। 29 चित्तों में शेष सभी चित्त उपेक्खा चित्त हैं और वे 4 उपेक्खा लोभा चित्त, 2 उपेक्खा मोहा चित्त, 4 उपेक्खा महाकुशल चित्त और 4 उपेक्खा महाकिरिया चित्त हैं।

तो 13 सोमनासा चित्त (4 लोभा, 1 हसीतुप्पदा, 4 महाकौशल, 4 महाकिरिया), 2 डोमनस्सा चित्त (2 दोसा मूल चित्त, और 14 उपेक्खा चित्त (4 लोभा, 2 मोह, 4 महाकुशल, 4 महाकिरिया) हैं। इन चित्तों में वेदना चेतसिका वेदना खखंड या हैं। समुच्चय महसूस करना.

7वें जवना चित्त के बाद 2 क्रमिक तदारम्मन चित्त या 2 प्रतिधारण चेतना आती है। ये 2 चित्त मौजूदा अरम्मना को तब तक बरकरार रखते हैं जब तक कि दूसरा तदारम्मना चित्त समाप्त नहीं हो जाता। ये तदारम्मन चित्त 11 चित्त (3 शांतिराना चित्त और 8 महाविपाक चित्त) हैं। फिर उनके पास वेदना या भावना तो है ही। एक शांतिराना सोमनास्सा चित्त है और अन्य 2 शांतिराना चित्त उपेक्खा चित्त हैं। महाविपाक चित्त में से 4 सोमनस्सा चित्त हैं और अन्य 4 उपेक्खा चित्त हैं। तो 11 तदारम्मन चित्त में 5 सोमनस्सा चित्त और 6 उपेक्खा चित्त हैं। इन 11 चित्तों में से प्रत्येक में वेदना वेदना खंड या भावना समुच्चय हैं।

ऊपर दिए गए उदाहरण में प्रत्येक चित्त में सन्ना या बोध होता है और इन्हें सन्ना खंड या बोध समूह कहा जाता है। कुल मिलाकर 52 चेतसिकाएँ हैं। एक वेदना है और दूसरी सन्ना, जिनमें से प्रत्येक का अलग-अलग खंड होता है, इस प्रकार शेष 50 चेतसिकाएँ बचती हैं। ऊपर दिए गए उदाहरण विथी वर में 14 विथी चित्त हैं। वेदना और सन्ना को हटाने के बाद जो बचता है वह संखार खंड या निर्माण समूह है। निर्माण जैसे वीर्य या प्रयास, मानसिका या ध्यान, दोष या घृणा आदि, अपनी विशिष्ट भूमिकाएँ निभाते हैं, इसलिए इन्हें निर्माण या संखार खंड कहा जाता है। इस उदाहरण में सभी 14 विथी चित्त चेतना हैं और इन्हें चेतना समूह के रूप में जाना जाता है।

रूप खंड के बहिष्कार के बाद अन्य सभी 4 खंड जिन्हें नाम खंड के नाम से जाना जाता है, एक दूसरे के लिए अन्नमन्ना सहजता पकाय के रूप में काम करते हैं।

रूपा क्षन्ध या भौतिक समुच्चयों को बाहर करने के बाद, अन्य सभी चार नाम क्षन्ध या अभौतिक समुच्चय एक दूसरे के लिए अन्नमन्ना सहजता पच्चया या पारस्परिकता की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

वह है विन्नन खंड या चेतना समुच्चय, वेदना खंड या भावना समुच्चय के लिए अन्नमन्ना सहजता पकाया या परस्पर सहमति की स्थिति के रूप में कार्य करता है। यहां विन्नन कखंड का अर्थ है अति महंत अरम्मना में 14 विथि चित्त या बहुत स्पष्ट वस्तु विथि वर चित्त। उनमें से प्रत्येक के पास सन्ना या धारणा भी है और वे सन्ना खंड या धारणा समुच्चय हैं और विन्नन खंड फिर से वेदना खंड के अलावा सन्ना खंड के लिए पारस्परिक सहमति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

इन 14 विथी चित्तों में से प्रत्येक में चेतसिकाएँ होती हैं और इन्हें संखार खंड या निर्माण समूह के रूप में जाना जाता है। यहाँ 14 विथी चित्तों में संखार या निर्माण समूह हैं, जैसे कि चेतना (इच्छाशक्ति), वीर्य (प्रयास), मानसिक (ध्यान) आदि, और ये सभी अपनी-अपनी विशिष्ट भूमिकाएँ निभाते हैं। वेदना और सन्ना को छोड़कर, जो अलग-अलग खंड या समूह हैं, अन्य सभी चेतसिकाओं को सामूहिक रूप से संखार खंड के रूप में जाना जाता है। वेदना खंड और सन्ना खंड की तरह, विन्नाना खंड भी संखार खंड या निर्माण समूहों के लिए पारस्परिक सामंजस्य की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

विन्नाना क्षन्ध अन्य तीन नाम क्षन्धों के लिए कारण कारक के रूप में कार्य करता है, जो पारस्परिकता और चेतना का संयोजन है। इसी प्रकार, सन्ना क्षन्ध या बोध समूह अन्य तीन नाम क्षन्धों (विन्नाना क्षन्ध या चेतना समूह, वेदना क्षन्ध या भावना समूह और संस्कार क्षन्ध या निर्माण समूह) के लिए अन्नमन्ना सहजता और चेतना समूह के संयोजन के रूप में कार्य करता है।

इसी प्रकार, वेदना क्षन्ध या भाव समूह, चेतना समूह, अनुभूति समूह और निर्माण समूह के लिए पारस्परिकता की शर्त के रूप में कार्य करता है। संस्कार समूह भी चेतना समूह, अनुभूति समूह और वेदना क्षन्ध या भाव समूह के लिए पारस्परिकता की शर्त के रूप में कार्य करता है।

ये चारों नाम क्षन्ध एक दूसरे के लिए नन्नमन्ना सहजता पच्चया या पारस्परिकता का सूत्रपात करते हैं। किसी भी क्षण वे एक साथ उत्पन्न होते हैं और उसी समय एक दूसरे के लिए अन्नमन्ना सहजता पच्चया या पारस्परिकता का सूत्रपात करते हैं। अन्नमन्ना शब्द 'अन्न' और 'अन्न' से मिलकर बना है। अन्न का अर्थ है जानना, अनुभव करना, बोध करना। अन्नमन्ना का अर्थ है एक दूसरे को जानता है। यहाँ अन्नमन्ना का अर्थ है एक दूसरे का सहारा है और इसके विपरीत भी, और जब एक अनुपस्थित होता है तो संपूर्ण अस्तित्व संभव नहीं होता।

तिदंत या तीन पैरों वाली मेज एक या दो पैरों पर नहीं टिक सकती, बल्कि तीनों पैरों पर ही टिक सकती है। इसी प्रकार, चार नाम क्षन्ध अन्य तीन क्षन्धों के बिना विद्यमान नहीं हो सकते। यही परस्पर संबंध है। वे एक ही समय में उत्पन्न होते हैं। इसलिए इस सशर्त संबंध को अन्नमन्ना सहजता पच्चया कहा जाता है।

जब मोमबत्ती जलाई जाती है, तो उसमें प्रकाश और ऊष्मा दोनों उत्पन्न होते हैं। इन्हें अलग नहीं किया जा सकता और ये साथ-साथ उत्पन्न होते हैं। ऊष्मा उत्पन्न होने पर प्रकाश भी उत्पन्न होता है और यह ठीक उसी समय होता है। अतः, जो स्थिति किसी दूसरी चीज़ को प्रभावित करती है, वह उसके परिणाम के उत्पन्न होने के साथ ही उत्पन्न होती है। इसे सहजता पच्चय कहते हैं।

कारण धम्म या कंडीशनिंग धम्म या पकाया धम्म वेदना खंड या सन्ना खंड या संखा खंड या विन्नन खंड है और परिणामी धम्म या वातानुकूलित धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म फिर से कंडीशनिंग खंड को छोड़कर 4 खंडों में से एक है। कारण धम्म और परिणामी धम्म के बीच के संबंध को सहजता पकाया के रूप में जाना जाता है और इस उदाहरण में यह अन्नमन्ना सहजता पकाया है।

कत्तारो महा भूत अन्नमन्नं सहजता पकायेन पकायो।

चतुरो महा भूता का अर्थ है चार महाभूत रूप या चार महान तत्व। पदार्थ के संदर्भ में, केवल ये चार रूप ही पदार्थ के रूप में मौजूद हैं: 1. पथवी (ठोसता या द्रव्यमान), 2. तेज (तापमान), 3. वायु (संयोजकता या दबाव या गति), और 4. आपो (संसंजन या चिपचिपाहट या प्रवाह)। अन्य सभी रूप इन चार महाभूत रूपों पर निर्भर होते हैं। इन्हें महाभूत रूप इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये वह स्थान हैं जहाँ अन्य सभी रूप निवास करते हैं या निर्भर होते हैं, और ये सभी रूपों की भूमि हैं।

उदाहरण के लिए, एक द्रव्यमान है। उस द्रव्यमान में अणु, परमाणु आदि होते हैं। इसमें एक ठोस घटक भी होता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह ठोस, द्रव या गैस है। उस ठोसपन को काया द्वार (काया पसदा रूप) के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है, और काया विन्नाना उस ठोसपन को जानती है, और यह पथवी रूप का गुण है। उस द्रव्यमान का एक निश्चित तापमान होता है। इसे भी काया द्वार (काया पसदा रूप) के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है, और काया विन्नाना या शरीर में मौजूद चेतना उस तापमान को जानती है।

उस द्रव्यमान में उप-परमाणु कण गतिमान होते हैं, अणु में परमाणु गतिमान होते हैं और यौगिक में अणु गतिमान होते हैं, और इन सभी का तापमान एक समान होता है। द्रव्यमान में ये कण एक दूसरे को आकर्षित करते हैं और एक दूसरे का समर्थन करते हैं, और इस समर्थन को काया द्वार (काया पसदा रूप) के माध्यम से महसूस किया जा सकता है, और इस समर्थन या वायु को काया विन्नन चित्त के माध्यम से महसूस किया जाता है। उस द्रव्यमान में संसंजन भी होता है। लेकिन इस संसंजन को केवल तर्क से ही समझा जा सकता है, यह भौतिक इंद्रिय नहीं है, बल्कि मन की उपज है। लेकिन एक रूप के रूप में यह विद्यमान है और यह आपो या संसंजन है।

यदि कोई पिंड है, तो उसमें चारों महाभूत रूप विद्यमान होते हैं। इन चारों महाभूत रूपों में से केवल एक, दो या तीन का प्रकट होना संभव नहीं है। ये तिदंत या त्रिपाटी के समान हैं। त्रिपाटी दो या एक पैर पर नहीं, बल्कि तीनों पैरों पर खड़ी हो सकती है। यही अन्नमान या परस्पर संबंध का नियम है। और क्योंकि ये एक ही समय में प्रकट होते हैं, इसलिए ये एक दूसरे को परस्पर संबंध के नियम से सहारा देते हैं। अतः चारों महाभूत रूप परस्पर संबंध के नियम से एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

ओक्कंटिक्खाने नाम रूपं अन्नमन्नं सहजता पकायेना पकायो।

ओक्कंटिका का अर्थ है अस्तित्व में आना, जन्म लेना, पुनर्जन्म होना, पतिसंधि। खाना का अर्थ है एक क्षण। ओक्कंटिकखाना का अर्थ है अस्तित्व में आने का ठीक क्षण, पुनर्जन्म का ठीक समय, या जीवन का पहला क्षण।

पुनर्जन्म के समय ओक्कंटिकखाना नाम और रूप 4 नाम खंड और 1 रूप खंड हैं। रूप के संबंध में रूप कलाप या कई रूप का समुच्चय है। रूप अकेले नहीं बल्कि कलाप या समग्र रूप से उत्पन्न होता है। मनुष्य या मनुस्सा के लिए पतिसंधि के समय तीन रूप कल्प होते हैं।

ये तीन रूप कल्प या भौतिक समुच्चय हैं

1. काया दशक रूप कल्प 2. भव दशक रूप कल्प 3. वत्थु दशक रूप कल्प

यहां काया का अर्थ है काया पपासदा रूप। दशक का अर्थ है दस रूप से युक्त। तो इस रूप कल्प में 10 रूप हैं। वे 8 अविनिभोग रूप या 8 अविभाज्य सामग्री हैं, 1 काया पपासदा रूप और 1 जीवित रूप कुल मिलाकर 10 रूप को दसक रूप कल्प कहा जाता है। भाव दसका रूप कल्प में काया पपासदा रूप को 2 भाव रूप में से एक या दूसरे द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है जिन्हें इत्थट्टा भाव रूप [स्त्रीत्व] और पुरीसत्ता भाव रूप [पुरुषत्व] कहा जाता है और अन्य रूप काया दसक रूप कल्प के मामले में समान हैं। उसी प्रतीक के द्वारा वत्थु दसका रूप कल्प काया पपासदा रूप को हदय वत्थु या हदय रूप से प्रतिस्थापित कर दिया जाता है।

उपरोक्त पाली वाक्य में Okkantikkhana nāma rūpam का अर्थ है

1. पतिसंधि चित्त और उससे संबंधित चेतसिका [नाम]
2. hadaya vatthu [rupa]

जैसे ही पतिसंधि चित्त उत्पन्न होता है, उससे संबंधित चेतसिकाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। अतः ये चेतसिकाएँ और वह पतिसंधि चित्त एक दूसरे के लिए परस्पर संबंध की स्थिति का कार्य करते हैं। पतिसंधि चित्त पतिसंधि चेतसिकाओं के बिना उत्पन्न नहीं हो सकता और इसके विपरीत भी सत्य है। यह परस्पर संबंध को प्रकट करता है। और फिर वे एक साथ और एक ही समय में उत्पन्न होते हैं। यह सह-उत्पत्ति या सह-संबंध की स्थिति को प्रकट करता है, इसलिए यह अन्नमन्ना सहजता पच्चया या परस्पर संबंध की स्थिति है।

कारणवाचक धर्म चित्त है और परिणामी धर्म चेतसिक हैं। इनके बीच का संबंध अन्नमन्ना सहजता पच्चया है, जो पारस्परिकता और सहानुभूति की स्थिति है।

पतिसंधि कम्मजा रूपा यहां हदया वत्थु है। हदय वत्थु को कर्म के कारण उत्पन्न होना पड़ता है। यह पतिसंधि हदय वत्थु भी पतिसंधि चित्त के आधार पर उत्पन्न होता है और पतिसंधि चित्त को भी हदय वत्थु पर निर्भर रहना पड़ता है और वे पारस्परिकता की स्थिति के रूप में एक दूसरे के प्रति कार्य करते हैं। फिर वे एक साथ उठते हैं और एक ही समय में उठते हैं। जैसे ही वे एक साथ उत्पन्न होते हैं वे एक दूसरे के लिए सहमति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं। तो पतिसंधि चित्त और पतिसंधि कम्मजा रूप हदया वत्थु अन्नमन्ना सहजता पकाया या परस्पर सहमति की स्थिति की सेवा करते हैं। यह हदय वत्थु और पतिसंधि सीतासिका के समान है। तो पतिसंधि चित्त, पतिसंधि सीतासिका, पतिसंधि कम्मजा रूप हदया वत्थु सभी एक दूसरे के लिए अन्नमन्ना सहजता पकाया या पारस्परिक सहमति की स्थिति की सेवा करते हैं।

चित्त चेतसिका धम्म चित्त समुत्थानां रूपणं सहजता पकायेन पकायो।

चित्त और चेतसिका रूपाओं के लिए चेतना की स्थिति का काम करते हैं। कौन से रूपा? वे रूपाएँ जो चित्त से उत्पन्न होती हैं। इन रूपों को चित्तज रूपा या चेतना से उत्पन्न सामग्री कहा जाता है। समुत्थान का अर्थ है 'के कारण'। इसलिए चेतना से उत्पन्न रूपाओं को चित्त समुत्थान रूपा या चित्तज रूपा भी कहा जाता है।

चेतना के कारण उत्पन्न होने वाले 15 रूप हैं, जिन्हें चित्तज रूप कहा जाता है। ये 15 रूप इस प्रकार हैं:

1. kaya vinatti rupa (gesture)
2. vaci vinatti rupa (भाषण)
3. sadda rupa (ध्वनि, आवाज)
4. रूपलहुता रूप (रूप की हल्कापन)
5. रूपमुदुता रूप (रूप का लचीलापन)
6. रूपकम्मन्नता रूप (रूप की व्यावहारिकता)
7. पथवी (ठोसता)
8. तेजो (तापमान)
9. वायो (सहयोगशीलता)
10. एपो (सामंजस्य)
11. वन्ना (रंग)
12. गंध (सूंघना)
13. रस (स्वाद)
14. ओजा या आहार रूपा (पोषण)
15. आकाश रूप या परिच्छेद रूप (अंतरिक्ष)

कुल 89 चित्त या 89 चेतना अवस्थाएँ या 89 मानसिक अवस्थाएँ हैं। वे हैं:

1. 12 akusala cittas
2. 10 panca vinnana cittas
3. 5 अहेतुका विपाका चित्त (2 संपतिच्चन और 3 शांतिराना चित्त)
4. 3 ahetuka kiriya cittas
5. 8 महाकुसला चित्त
6. 8 महाविपाका चित्त
7. 8 महाकिरिया चित्त
8. 5 rupakusala cittas
9. 5 rupavipaka cittas
10. 5 rupakiriya cittas
11. 4 arupakusala cittas
12. 4 arupavipaka cittas
13. 4 arupakiriya cittas
14. 4 lokuttara kusala cittas
15. 4 लोकुत्तरा विपका चित्तस

कुल 89 शहर

इन 89 चित्तों में से 10 पंच विन्ना चित्त किसी भी चित्तजा रूपा का उत्पादन नहीं कर सकते हैं। 4 अरूपविपाक चित्त पतिसंधि चित्त, भावंगा चित्त और कटि चित्त या अरूप ब्रह्मा हैं और वे किसी भी प्रकार का रूप उत्पन्न या उत्पन्न नहीं करते हैं। तो 89 चित्तों (89 - 10 - 4 = 75) में से 75 चित्त चित्तज रूप या चेतना व्युत्पन्न सामग्रियों की उत्पत्ति का कारण बनते हैं। इन 75 चित्तों में से विपाक चित्त हैं जो अरहतों के क्यूटी चित्त के रूप में काम कर सकते हैं और जब यह क्यूटी चित्त या अरहत होता है तो अरहत क्यूटी चित्त कुछ भी उत्पन्न नहीं करता है।

अन्यथा, प्रत्येक क्षण जब भी चित्त उत्पन्न होता है, उसी समय उससे संबंधित चेतसिकाएँ और चित्तज रूप भी उत्पन्न होते हैं। वे एक ही समय में और साथ-साथ उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार वे एक दूसरे के लिए अंतर्संबंध की स्थिति का कार्य करते हैं। चित्तज रूप उस चित्त के

उत्पन्न होने के ठीक उसी समय उत्पन्न होते हैं। परन्तु ये रूप उस प्रकार अंतर्संबंध की स्थिति का कार्य नहीं करते जैसे पतिसंधि कामज रूप हृदय वस्तु के मामले में होता है। अतः इस स्थिति में यह केवल सहजता पच्चय या अंतर्संबंध की स्थिति है।

पच्चया धम्म, या कारण धम्म, या सहायक धम्म, इन तीन धम्मों में से एक है।

1. चित्त
2. cetasikas
3. cittaja rupas

और पच्चयुप्पन धर्म, या परिणामी धर्म, या सशर्त धर्म भी इन्हीं तीन धर्मों में से एक है। परिणाम कारण के उत्पन्न होने के साथ ही उत्पन्न होता है और इसे सहजता पच्चय कहते हैं। यह मोमबत्ती में प्रकाश के समान है, जहाँ ऊष्मा के उत्पन्न होने के साथ ही प्रकाश उत्पन्न होता है और इन्हें अलग नहीं किया जा सकता।

महाभूत उपादा रूपाणं सहजता पकायेन पकायो।

चार महाभूत रूप होते हैं। ये हैं पथवी रूप, तेजो रूप, वायो रूप और अपो रूप। पथवी रूप ठोस अवस्था है और यह कोमल, कठोर या सख्त हो सकती है। यह इतनी कोमल हो सकती है जैसे हथेली से हवा को छूना या लोहे की दीवार जितनी कठोर। तेजो रूप तापन, शीतलता या तापमान की अवस्था है। हमारे आसपास की हर भौतिक वस्तु का तापमान होता है और यह हल्का गर्म, गर्म या ठंडा हो सकता है। वायो रूप दबाव, खिंचाव या गति द्वारा सहारा देने की अवस्था है। हम इस वायो रूप को जल में देख सकते हैं।

यह कहा जा सकता है कि जल में वायु समाहित है और वायु में जल समाहित है। यहाँ जल का तात्पर्य सामान्य जल से है और वायु का तात्पर्य सामान्य वायु या हवा (यदि वह गतिमान हो) से है। परन्तु तत्वीय दृष्टि से वायु या वायुमंडलीय वायु में चारों महाभूत रूप समाहित हैं। इसी प्रकार जल में भी चारों महाभूत रूप समाहित हैं। आपो एक संसंजन की अवस्था है और इसमें चिपचिपाहट, प्रवाह और संसंजन के गुण होते हैं। इसकी उपस्थिति का अनुभव करना कठिन है। हम सामान्य जल में भी आपो का पता नहीं लगा सकते। आपो इतना सूक्ष्म है कि पाँचों इंद्रियाँ इसका अनुभव नहीं कर सकतीं। अतः यह मन का विषय बन जाता है।

चार महाभूत रूप सभी अन्य रूपों का आधार हैं। महाभूत रूपों के बिना अन्य व्युत्पन्न रूप कभी उत्पन्न नहीं हो सकते। कुल 24 व्युत्पन्न रूप हैं और वे सभी चार महाभूत रूपों से उत्पन्न होते हैं। चार महाभूत रूपों के साथ मिलकर ये 24 व्युत्पन्न रूप 28 परमत्थ रूपों का निर्माण करते हैं, जो परमत्थ धर्म कहलाता है। इन 28 रूपों के अतिरिक्त कोई अन्य रूप नहीं हैं और वे परम वास्तविकताएं हैं। वे उत्पन्न होते हैं और नष्ट हो जाते हैं। वे बद्ध धर्म हैं और परिस्थितियों के कारण निरंतर परिवर्तनशील रहते हैं।

ये 24 व्युत्पन्न रूप हैं

1. कक्खु पसादा रूपा (नेत्र संवेदनशीलता)
2. सोता पसादा रूपा (कान संवेदनशीलता)
3. घना पसादा रूपा (नाक संवेदनशीलता)
4. जिव्हा पसादा रूपा (जीभ संवेदनशीलता)
5. काया पसंद रूपा (शरीर की संवेदनशीलता)

ये सभी पाँच पसदा रूप चार महाभूत रूपों पर निर्भर करते हैं। महाभूत रूपों के बिना इनका अस्तित्व संभव नहीं है। लेकिन जब चार महाभूत रूप मौजूद होते हैं, तो इनका अस्तित्व हो भी सकता है और नहीं भी।

1. रूपा (दृश्य वस्तु) जो विभिन्न चमक, विभिन्न रूपों और आकृतियों के रंगों से बनी होती है।
2. सद्दा या ध्वनि
3. गंध या महक
4. रस या स्वाद (9.ए) फोथब्बा या पथवी या तेजो या वायो की शारीरिक भावना)
5. इत्थत्ता भाव रूप (नारीत्व) [इत्थी का अर्थ है स्त्री, अत का अर्थ है शरीर, भाव का अर्थ है अस्तित्व]
6. पुरिसत्ता भाव रूप (पुरुषत्व) [पुरिसा का अर्थ है पुरुष, अत्ता का अर्थ है शरीर, भाव का अर्थ है अस्तित्व]
7. हृदय रूप या हृदय वस्तु। यह शारीरिक हृदय नहीं है। यह मन का केंद्र है।
8. जीवित रूप या जीवन शक्ति
9. आहार रूप या ओज या पोषक तत्व
10. pariccheda rupa or ākāsa or space
11. kaya vinatti rupa or gesture (specific body movement and position showing thoughts)

12. vaci vinatti rupa or speech (specific voice indicates specific thoughts)
13. रूपलहुता, रूपा या पदार्थ की हल्कापन
14. रूपमुदुता रूपा या सामग्री का लचीलापन
15. रूपकम्मन्नता रूपा या सामग्री की व्यावहारिकता
16. उपचय रूपा या पदार्थ का प्रारंभिक निर्माण
17. संतति रूपा या सामग्री का निरंतर निर्माण
18. jaratā rupa or wearing away of material or getting old
19. aniccatā rupa or vanishing of material or disappearance of material

जब इन 24 रूपों में से कोई भी उत्पन्न होता है तो उन्हें उत्पन्न होना पड़ता है क्योंकि वहां 4 महाभूत रूप भी उत्पन्न होते हैं। वे एक ही समय में उत्पन्न होते हैं। इस स्थिति में धम्म एक ही समय में उत्पन्न होते हैं और एक साथ उत्पन्न होते हैं। कारण धम्म या पक्काया धम्म या कंडीशनिंग धम्म परिणामी धम्म या पकायुप्पन्न धम्म या कंडीशनिंग धम्म के साथ उत्पन्न होते हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 11
हटू निंग द्वारा

अध्याय 11 - अन्नामन्ना पैकायो
या पारस्परिकता की स्थिति
अन्नमन्ना पकायो ति- कत्तारो खांधा अरूपिनो अन्नमन्ना पकायना पकायो।

वहाँ चार अरूप खंड या चार नाम खंड हैं। ये चार खंड हैं वेदना खंड या भावना समुच्चय, सन्ना खंड खंड या धारणा समुच्चय, संखा खंड खंड या गठन समुच्चय, और विन्ना खंड खंड या चेतना समुच्चय।

ये चारों धर्म एक दूसरे के लिए अन्नमन्ना पच्चया या पारस्परिकता की स्थिति का काम करते हैं। ये फोटोग्राफी में तिपाई की तरह हैं। तिपाई के तीन पैर होते हैं। ये तीनों पैर तिपाई को खड़ा रखते हैं। जब एक पैर जमीन से हट जाता है तो पूरी तिपाई गिर जाती है। एक पैर या एक फलक पूरी तिपाई को नहीं संभाल सकता और इसी तरह दो पैर या दो फलक पूरी तिपाई को नहीं संभाल सकते। तिपाई को खड़ा रखना तभी संभव है जब उसके सभी पैर सही जगह पर हों।

इसी प्रकार, चार नाम क्षन्ध या अरूप क्षन्ध इन चारों स्कन्धों के बिना अस्तित्व में नहीं रह सकते। यही परस्पर संबंध की शर्त है और प्रत्येक घटक दूसरे घटक पर निर्भर करता है, और इसी प्रकार आगे भी।

कत्तारो महाभूत अन्नमन्न पचायेन पचयो।

किसी भी पदार्थ में चार महाभूत रूप होते हैं। ये चार महाभूत रूप हैं पथवी (ठोसता), तेज (तापमान), वायु (गति) और आसंजन (चिपचिपाहट)। ये चारों रूप एक दूसरे को सहारा देते हैं, ठीक उसी तरह जैसे ऊपर बताए गए तिपाई में होता है। पथवी के अभाव में, अन्य तीन घटक - तेज, वायु और आसंजन - उत्पन्न नहीं हो सकते। तेज के अभाव में पथवी, वायु और आसंजन उत्पन्न नहीं हो सकते। वायु के अभाव में पथवी, तेज और आसंजन उत्पन्न नहीं हो सकते। और आसंजन के अभाव में पथवी, तेज और वायु उत्पन्न नहीं हो सकते। ये सभी एक दूसरे पर निर्भर होते हैं।

ओक्कंटिक्खाने नाम रूपं अन्नमन्न पचायेन पचयो।

ओक्कंटिकखाना ओक्कंटिका और खाना से बना है। ओक्कंटिका का अर्थ है अस्तित्व में आना और खाना का अर्थ है एक क्षण। तो ओक्कंटिकखाना का अर्थ है उस समय जब अस्तित्व में आए या पतिसंध के समय। उस विशेष समय में नाम और रूप होते हैं । ये पतिसंधि नाम और पतिसंधि रूप यानी हदय वत्थु एक दूसरे के लिए पारस्परिकता की स्थिति के रूप में काम कर रहे हैं। अर्थात हदय वत्थु, पतिसंधि चित्त के बिना उत्पन्न नहीं हो सकता है और पतिसंधि चित्त, हदय वत्थु के बिना उत्पन्न नहीं हो सकता है और पतिसंधि चित्त के साथ जुड़े पतिसंधि सीतासिकों के लिए भी यही सच है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 12
हटू निंग द्वारा

अध्याय 12 - निस्साया पक्कायो
या निर्भरता की स्थिति
निस्साय पकायो ति- कटारो खांधा अरुपिनो अन्नमन्नम निस्साया पकायेना पकायो। कत्तारो महा भूत अन्नमन्नं निस्सया पकायेन पकायो। ओक्कंटिक्खाने नाम रूपं अन्नमन्नं निस्सया पकायेना पकायो।

निस्साया पच्चया का अर्थ है आश्रित स्थिति। आश्रित स्थिति के उदाहरण हैं:

1. पेड़ों को धरती या जमीन पर निर्भर रहना पड़ता है, जिसके बिना कोई पेड़ नहीं हो सकता।
2. चित्रकला उस कपड़े पर निर्भर करती है जिस पर उसे चित्रित किया जाता है, जिसके बिना कोई चित्रकला नहीं हो सकती।
3. मिट्टी के बर्तन मिट्टी पर निर्भर करते हैं, इसके बिना मिट्टी का कोई बर्तन बन ही नहीं सकता।

उपरोक्त पाली के पहले वाक्य में कहा गया है कि चार नामखंड या चार अभौतिक समुच्चय हैं। ये चारों समुच्चय एक दूसरे पर निर्भर हैं और इसे अन्नमन्न निस्सय पच्चय या परस्पर निर्भरता कहा जाता है। चूंकि ये चारों नामखंड एक ही समय में उत्पन्न होते हैं, इसलिए वे सहज निस्सय पच्चय या अंतर्संबंधी निर्भरता में आ सकते हैं। इसका अर्थ है कि एक दूसरे के बिना कोई भी उत्पन्न नहीं हो सकता और प्रत्येक को दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है। चूंकि वे एक ही समय में उत्पन्न होते हैं और परस्पर निर्भर होते हैं, इसलिए उन्हें अन्नमन्न निस्सय पच्चय या परस्पर निर्भरता और सहज निस्सय या अंतर्संबंधी निर्भरता दोनों कहा जाता है।

इसी प्रकार चारों महाभूत रूप एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। जब पथवी होता है, तब तेजो, वायो और आपो भी होते हैं, और यही बात अन्य तीनों महाभूत रूपों के लिए भी लागू होती है। एक तत्व के बिना दूसरा तत्व या अन्य तत्व उत्पन्न नहीं हो सकते, और यही परस्पर निर्भर अवस्था है जिसे अन्नमन्न निस्सय पच्चया कहा जाता है। चूंकि ये सभी एक ही समय में उत्पन्न होते हैं, इसलिए इन्हें सहजता निस्सय पच्चया या परस्पर निर्भर अवस्था भी कहा जा सकता है।

इसी प्रकार, गर्भाधान के समय, या पतिसंधि के समय, या पुनर्जन्म के समय, या भूतकाल और वर्तमान जीवन के बीच संबंध स्थापित होने पर, पतिसंधि चित्त और चेतसिका के चार नामक्खंध होते हैं, और नए जीवन में रूपक्खंध के रूप में हृद्य तत्व भी होता है। पतिसंधि चित्त के उत्पन्न होते ही, हृद्य रूप नामक पतिसंधि कर्मज रूप भी उसी समय उत्पन्न हो जाता है, और ये दोनों एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। पंचवोकर भूमि में, या उन लोकों में जहाँ सभी पाँच खंध मौजूद होते हैं, पतिसंधि चित्त, मन के केंद्र हृद्य तत्व (पतिसंधि कर्मज रूप) के बिना उत्पन्न नहीं हो सकता। अतः ये धर्म भी एक दूसरे के पूरक होते हैं, जिन्हें अन्नमन्न निस्सय पच्चय या परस्पर निर्भरता की स्थिति कहा जा सकता है, और इन्हें सहजता निस्सय पच्चय या एकाग्रता निर्भरता की स्थिति भी कहा जा सकता है।

उपरोक्त तीनों उदाहरणों में सिद्ध धर्म, कारण धर्म, परिस्थितिजन्य धर्म या सहायक धर्म निम्नलिखित हैं:

1. प्रत्येक 4 नमक्खंडों या 4 गैर-भौतिक समुच्चयों में से
2. प्रत्येक 4 महा भूत रूप या 4 महान तत्व
3. प्रत्येक 4 पतिसंधि नमकखंड, और पतिसंधि कम्मज हदय वत्थु रूपा

परिणामी धम्म या पच्चयुप्पन्न धम्म या सदृश धम्म या समर्थित धम्म वे सभी धम्म हैं जो कारण धम्म में सूचीबद्ध हैं। कारण और प्रभाव के बीच का संबंध निस्सय पच्चय या आश्रित स्थिति है।

चित्त चेतसिका धम्म चित्त समुत्थानां रूपाणं निस्साय पकायेन पकायो।

धम्म के रूप में चित्त और चैतसिक हैं और चित्त समुत्थान रूप या चित्त व्युत्पन्न रूप या चित्त उत्पन्न रूप भी हैं।

यहां चित्त और चेतसिका के नाम धम्म कारण धम्म के रूप में कार्य कर रहे हैं, जबकि चित्त समुत्थान रूप या चित्त से उत्पन्न रूप अपने कारण चित्त और चेतसिका के लिए आश्रित स्थिति नहीं हैं। अतः यह एकतरफा संबंध है। अर्थात् कारण या कारण धम्म या सहायक धम्म या अभिधारणा धम्म चित्त और चेतसिका हैं, और परिणामी धम्म या अभिधारणा धम्म या सहायक धम्म या सिद्ध धम्म यहां केवल चित्त समुत्थान रूप या चित्तज रूप या चित्त से उत्पन्न रूप हैं। कारण और प्रभाव के बीच के संबंध को निस्सय सिद्धय या आश्रित स्थिति कहा जाता है।

इसका अर्थ यह है कि चित्त और चेतसिका धर्म के बिना ये रूप कभी उत्पन्न ही नहीं होंगे। परन्तु चित्त और चेतसिका अपने बद्ध धर्म चित्तज रूप पर निर्भर नहीं होते।

महा भूता उपादा रूपनं निस्साय पच्चयेन पच्चयो। चार महा भूता रूप या चार महान तत्व 24 उपादा रूपों के लिए आश्रित अवस्था के रूप में कार्य करते हैं। लेकिन चार महा भूता रूप 24 उपादा रूपों पर आश्रित नहीं होते और यह भी एकतरफा संबंध है। कारण या

कारणात्मक धम्म, सहायक धम्म, अभिकारक धम्म, पच्चय धम्म चार महा भूता रूप हैं। सहायक धम्म, परिणामी धम्म, अभिकारक धम्म, पच्चयुप्पन्न धम्म 24 उपादा रूप हैं। कारण और प्रभाव के बीच के संबंध को निस्साय पच्चय या आश्रित अवस्था कहते हैं।

दोहराने के लिए कि क्या 4 महाभूत रूप और क्या 24 उपाद रूप

a) 4 महा भूत रूप (चूंकि अन्य रूप उपादा रूप हैं, इसलिए इन 4 रूपों को अनुपादा रूप कहा जाता है)

1. पथवी या पृथ्वी तत्व
2. तेजो या अग्नि तत्व
3. वायो या वायु तत्व
4. एपो या जल तत्व

b) 24 उपादा रूप

1. कक्खुप्पसदा या कक्खु पसादा या आंखों की संवेदनशीलता
2. कान की संवेदनशीलता या कान की संवेदनशीलता
3. घाना पासाडा या नाक की संवेदनशीलता
4. जिह्वा पसदा या जीभ की संवेदनशीलता
5. काया पसंद या शरीर की संवेदनशीलता
6. रूपा (रंग) या रूप, आकार, आकृति
7. सद्दा या ध्वनि
8. गंध या महक
9. रस या स्वाद (और फोथब्बा या पथवी, तेजो, वायो का स्पर्श)
10. पुरीसत्ता भव रूप या पुरुषत्व
11. itthatta bhava rupa or feminineness
12. हदय रूप जो हदय वत्थु या हृदय है
13. जीवित रूप या जीवन शक्ति
14. आहार रूप या ओज या पोषक तत्व
15. pariccheda rupa or akāsa or space
16. kaya vinatti rupa or gesture
17. vaci vinatti rupa or speech
18. रूपा लहुता रूपा या रूपा का हल्कापन
19. रूपा मुदुता रूपा या रूपा का लचीलापन
20. रूपा कामनान्नता रूपा या रूपा की व्यावहारिकता
21. उपाचय रूपा या रूपा का प्रारंभिक गठन
22. संतति रूप या रूप का निरंतर गठन
23. जराता रूपा या रूपा का बूढ़ा होना
24. एनिकटाटा रूपा या रूपा का निधन

चक्कायतनं चक्कु विन्नान धातुया तम सम्पयुत्तकाणंच धम्मणं निस्साय पकायेन पकायो।

यहां चक्खायतनम का अर्थ है चक्खायतन या चक्खु आयतन या नेत्र संवेदनशीलता या नेत्र आधार या चक्खु पसादा रूप। यह धम्म जो कि चक्खु पसादा रूप है, अब एक कारण धम्म के रूप में काम कर रहा है या धम्म का समर्थन कर रहा है या कंडीशनिंग धम्म या पकाया धम्म कर रहा है।

परिणामी धम्म या वातानुकूलित धम्म या समर्थित धम्म या पच्चायुप्पन्ना धम्म यहां कक्खु विन्नन धातु या चक्कु विन्नन चित्त और चरण या संपर्क, वेदना या भावना, सन्ना या धारणा, चेतना या इच्छा, एकागता या एक बिंदु, जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन, और मानसिकारा या ध्यान के 7 सार्वभौमिक मानसिक कारकों के चेतसिक हैं।

यहां भी एकतरफा संबंध है। यानी चक्खु पसदा रूप, चक्खु विन्नन चित्त और उससे संबंधित चेतसिकों के लिए आश्रित अवस्था का कार्य करता है। लेकिन चक्खु पसदा रूप चक्खु विन्नन चित्त या अन्य चेतसिकों पर आश्रित नहीं है। अतः कारण और परिणाम को धम्म कहा जाता है और कारण और परिणाम के बीच के संबंध को निस्सय पच्चय या आश्रित अवस्था कहते हैं।

सोतायतनं सोता विन्नन धातुया तम सम्पयुतकानंच धम्मणं निस्साय पकायेन पकायो। घनायतनं घन विन्नन धातुता तम संपयुत्तकाणंच धम्मणं निस्साय पकायेन पकायो। जिव्हायतनं जिव्हा विन्नन धातुया तम संपयुत्तकाणंच धमानां निस्साय पकायेन पकायो। कायायतनं काया विन्नन धातुया तम संपयुत्तकाणंच धम्मनं निस्साय पकायेन पकायो।

इसी प्रकार, अन्य सभी 4 पसदा रूप अपने संबंधित विन्नाना चित्तों और उनसे जुड़े 7 सार्वभौमिक मानसिक कारकों (फस्सा, वेदना, चेतना, सन्ना, एकग्गता, जीवितेंद्रिय और मानसिक) के चेतसिकों के लिए आश्रित अवस्था के रूप में कार्य करते हैं। लेकिन नाम धम्म पसदा रूपों के लिए आश्रित अवस्था के रूप में कार्य नहीं करते हैं। इसलिए यह भी एकतरफा संबंध है। 5 पसदा रूपों के बिना 10 पंचविन्नाना चित्तों में से कोई भी उत्पन्न नहीं होगा और इसलिए उनसे संबंधित चित्त, चेतसिक आदि भी उत्पन्न नहीं होंगे, और इस प्रकार कोई काम विषय और काम चित्त नहीं होंगे। यह स्थिति अरूप ब्रह्माओं के मामले में देखी जा सकती है, जिनमें 28 रूपों में से कोई भी नहीं होता है। पसदा रूप अपने संबंधित विन्नाना चित्तों के उत्पन्न होने पर उनके लिए निस्से पच्चय या आश्रित अवस्था के रूप में कार्य करते हैं।

यम रूपम निस्साय मनो धातु च मनो विन्नन धातु च वट्टन्ति, तम् रूपम मनो धातु च मनो विन्नन धातु च तम सम्पायुत्तकानन्च धम्मनं निस्साय पकायेन पकायो।

मनो धातु 3 चित्त हैं। वे अकुसाला और कुसल मूल के 2 संपतिच्चन चित्त और पंच द्वार अवज्जना चित्त हैं। कक्खु विन्नान चित्त या किसी भी पंच विन्नान चित्त के बाद हमेशा मनो धातु का पालन किया जाता है जिसे संपतिच्चन चित्त या चेतना प्राप्त करना कहा जाता है। इस मनो धातु को हदय वत्थु पर निर्भर रहना पड़ता है और हदय वत्थु आश्रित स्थिति के रूप में कार्य करता है। तो अन्य निम्नलिखित मनो विन्नन धातु जैसे कि शांतिराना चित्त या चेतना की जांच करना, वोत्थापना चित्त या चेतना का निर्धारण करना, जावना चित्त या मानसिक आवेगी चेतना, तदारम्मन चित्त या चेतना बनाए रखना सभी को हदय वत्थु पर निर्भर रहना पड़ता है।

यहां हदय वत्थु मनो धातु और मनो विन्नन धातु के लिए कंडीशनिंग धम्म के रूप में कार्य करता है। लेकिन यहां हदय वत्थु, पतिसंधि कम्मजा हदय वत्थु के विपरीत, मनो धातु या मनो विन्नन धातु पर निर्भर नहीं है, जिसे पतिसंधि चित्त पर निर्भर रहना पड़ता है। इस उदाहरण में कारण या कारण धम्म या सहायक धम्म या कंडीशनिंग धम्म या पकाया धम्म हदय वत्थु है और परिणाम या परिणामी धम्म या वातानुकूलित धम्म या समर्थित धम्म या पचायुप्पन्ना धम्म मनो धातु हैं और इससे जुड़े 10 चेतसिक और चित्तज रूप, मनो विन्नन धातु और उनसे जुड़े चेतसिक और उनसे जुड़े हैं। चित्तजा रूपस।

इन उदाहरणों में कारण और परिणाम के बीच के संबंध को निस्सय पच्चय या आश्रित अवस्था कहा जाता है। इसका अर्थ यह है कि जब आश्रित अवस्था नहीं होती, तो आश्रित धर्म उत्पन्न नहीं हो सकते, और इसका अर्थ यह है कि यदि कोई कारण नहीं है, तो कोई परिणाम नहीं होगा। यदि कोई कारण नहीं है, तो कोई परिणाम नहीं होगा।

निस्साया पच्चया या आश्रित स्थिति सहजता निस्साया या संयोजी आश्रित स्थिति हो सकती है, या वस्तु पुरेजाता निस्साया या आधार पूर्व-जन्म आश्रित स्थिति हो सकती है, या वस्तु पुरेजाता निस्साया या आधार पूर्व-जन्म आश्रित स्थिति हो सकती है।

सहजता निस्सय या सहजता पर निर्भर स्थिति को 4 नाम खण्डों अर्थात 89 चित्तों और 52 सीतासिकों (वेदना खंड या वेदाना, सन्ना खंड या सन्ना, संखा खंड या संख या अन्य 50 सीतासिकों के बीच वेदना और सन्ना को 52 सीतासिकाओं से निकालने के बाद, और विन्नन खंड या 89) के बीच परस्पर क्रिया में देखा जा सकता है। Cittas) और अन्य धम्म।

यहां अन्य धम्म वातानुकूलित धम्म या समर्थित धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म हैं और वे 4 नाम खंड (89 चित्त और 52 सीतासिका), चित्तज रूप या चेतना व्युत्पन्न सामग्री, और पतिसंधि कम्मज रूप जो हदय वत्थु हैं। इस उदाहरण में 4 नमकखंडों की स्थिति 4 नमकखंडों और चित्तज रूप और पतिसंधि कम्मज रूप के संबंधित रूपखंडों की है। जैसे ही वे एक साथ उत्पन्न होते हैं, यह सहमति की स्थिति है और चूंकि 4 नमकखंडों को एक-दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है, चित्तज रूप को 4 नमकखंडों पर निर्भर रहना पड़ता है, और पतिसंधि कम्मजा रूप जो हदय वत्थु है, उन्हें भी 4 नमकखंडों पर निर्भर रहना पड़ता है, उन्हें सहमति पर निर्भर स्थिति द्वारा परोसा जा रहा है।

चार महाभूत रूप या चार महान तत्व, चार महाभूत रूपों और अन्य सभी 24 उपाद रूपों के लिए संगति पर निर्भर अवस्था के रूप में कार्य करते हैं। यह पारस्परिकता या अन्नमान्य नहीं है। अतः यह एक मार्ग है और दिशा चार महाभूत रूपों से चार महाभूत रूपों और अन्य 24 उपाद रूपों की ओर है। अर्थात् दिशा 24 उपाद रूपों से चार महाभूत रूपों की ओर नहीं है। इसका अर्थ यह है कि 24 उपाद रूप चार महाभूत रूपों के लिए आश्रित अवस्था के रूप में कार्य नहीं करते हैं। या चार महाभूत रूप 24 उपाद रूपों पर निर्भर नहीं हैं। चार महाभूत रूप और चार महाभूत रूप तथा 24 उपाद रूप एक ही समय में उत्पन्न होते हैं। अतः वे सहज पच्चय या संगति अवस्था हैं। 24 उपदा रूप 4 महाभूत रूपों पर निर्भर होते हैं, इसलिए यह सहजत निस्य या संगति पर निर्भर अवस्था है। 4 महाभूत रूप एक दूसरे के लिए संगति पर निर्भर अवस्था का काम करते हैं।

एक और आश्रित स्थिति है. यह वत्थुपुरेजाता निस्सया या आधार उपस्थिति पर निर्भर स्थिति है। पकाय धम्म या कंडीशनिंग धम्म या सहायक धम्म 6 वत्थु हैं, अर्थात् कक्खु वत्थु या कक्खु पसादा, सोता वत्थु या सोता पसादा, घाना वत्थु या घाना पसादा, जीव वत्थु या जीव पसादा, काया वत्थु या काया पसादा, और हदया वत्थु। वे संबंधित नाम धम्म के लिए शुद्धजता निस्साया पकाया या प्रीनेसेंस निर्भर स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

उदाहरण हैं चक्कु वत्थु रूपा रूपा के उत्पन्न होने के साथ ही उत्पन्न होता है जो वस्तु या अरम्मना के रूप में कार्य कर रहा है। कक्खु वत्थु या चक्खु पसादा पिछले 17 चित्तकखान या 17 क्षण। तो रूपा रूपा या वस्तु या अराम्मन भी करता है। लेकिन जैसे ही चक्खु वत्थु उठता है वहां कोई चक्खु विन्नान चित्त या नेत्र चेतना नहीं होती, बल्कि अतिता भावंगा चित्त होता है। दूसरे क्षण में अभी भी कक्खु विन्नान चित्त नहीं है, बल्कि भावंगा कलना चित्त है। तीसरे क्षण में कोई चक्खु विन्नान चित्त नहीं उठता, बल्कि भवनगुप्पचेड़ा चित्त उत्पन्न होता है। और चौथे क्षण में अभी भी कोई कक्खु विन्नान चित्त नहीं है, बल्कि पंच द्वार अवज्जना चित्त है। चक्खु विन्नन चित्त पाँचवें क्षण में ही उत्पन्न होता है, जब चक्खु वात्थु या चक्खु पसदा रूप पाँच क्षण पहले ही बन चुका होता है। अतः चक्खु पसदा रूप चक्खु विन्नन चित्त से पहले उत्पन्न हुआ, जो उस पर निर्भर करता है। क्योंकि चक्खु वात्थु चक्खु विन्नन चित्त से पहले उत्पन्न हुआ, यह पूर्व-जन्म की स्थिति है। क्योंकि चक्खु विन्नन चित्त को चक्खु वात्थु पर निर्भर होना पड़ता है, यह आश्रित स्थिति है। अतः उनका संबंध पुरेजात निस्सय पच्चया या पूर्व-जन्म आश्रित स्थिति है। लेकिन क्योंकि अभिधारणात्मक धर्म एक रूप [चक्खु पसदाहेरे] है और यह वात्थु धर्म है, इसलिए इस स्थिति को वात्थु पुरेजात निस्सय पच्चया या आधार पूर्व-जन्म आश्रित स्थिति कहा जाता है।

5 पंच पसादा रूप हैं और वे वत्थु धम्म के रूप में काम करते हैं। तो ये 5 धम्म चक्खु पसादा रूप, सोता पसादा रूप, घना पसादा रूप, जिव्हा पसादा रूप, काया पसादा रूपा कंडीशनिंग धम्म के रूप में काम कर सकते हैं जिन्हें वत्थु शुद्धजाता निस्साया या आधार पूर्वाभास निर्भर स्थिति कहा जाता है। कंडीशनिंग धम्म या सहायक धम्म या पकाया धम्म यहां 5 पसादा रूप हैं जिन्हें पंच वत्थु कहा जाता है और वातानुकूलित धम्म या समर्थित धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म संबंधित वत्थु के आधार पर संबंधित अरम्मना के पंच विन्नन चित्त हैं। यह वत्थु शुद्धजाता निस्साया पकाय पंच विन्नान चित्त में अन्य धम्म की स्थिति नहीं बनाता है।

एक और वस्तु पुरेजाता निस्साया या आधारभूत पूर्व-जन्मजात आश्रित अवस्था है। इसका आधार धम्म या पच्चया धम्म या सहायक धम्म हद्य वस्तु है। यह अरम्मना के उत्पन्न होते ही उत्पन्न हो जाता है। लेकिन बाद में आने वाले चित्त जैसे पंच द्वार अवज्जना चित्त या पंच द्वार विज्ञापित चेतना, सम्पतीच्छना चित्त या ग्रहणशील चेतना, सन्तिरण चित्त या अन्वेषी चेतना, बोधपना चित्त या निर्धारक चेतना, जवन चित्त या आवेगी चेतना, तदरामना चित्त या धारण करने वाली चेतना हैं, और इन सभी चेतनाओं को पहले से उत्पन्न हद्य वस्तु पर निर्भर रहना पड़ता है। अतः हद्य वस्तु इन चित्तों से पहले उत्पन्न होती है और पूर्व-जन्मजात अवस्था या पुरेजाता पच्चया के रूप में कार्य करती है, और चूंकि इन चित्तों को हद्य वस्तु पर निर्भर रहना पड़ता है, इसलिए हद्य वस्तु निस्साया पच्चया या आश्रित अवस्था के रूप में भी कार्य करती है। तो हदया वत्थु प्योरजटा निस्साया पकाया या प्रीनेसेंस आश्रित स्थिति के रूप में कार्य कर रहा है। चूँकि यह एक वत्थु है, यह वत्थु शुद्धजता निस्साया पकाया या बेसप्रेनसेंस पर निर्भर स्थिति है।

एक और निस्साय पच्चय या आश्रित अवस्था होती है जिसे वत्तारम्मन पुरेजात निस्साय पच्चय या मूल वस्तु-प्रजनन आश्रित अवस्था कहते हैं। रूप 17 क्षणों तक रहता है जबकि चित्त केवल 1 क्षण तक रहता है। अतः जब रूप अरम्मन या वस्तु के रूप में उत्पन्न होता है, तो यह चेतना के क्रम में बाद के चित्तों से पहले उत्पन्न होता है।

उदाहरण के लिए, सद्दा या ध्वनि। यह उत्पन्न होती है और जब यह अरम्मन या कर्म के रूप में कार्य कर रही होती है, तो इसका सह-उत्पन्न चित्त, जिसे अतित भावंग चित्त कहते हैं, लुप्त हो जाता है और चेतना के उस क्रम में बाद के चित्त उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, बाद के चित्त जवन चित्त या आवेगी चेतना हैं। सद्दा या ध्वनि इन जवन चित्तों से पहले उत्पन्न होती है।

अतः सद्दा रूप या ध्वनि पूर्वजनन अवस्था या पुरेजात पच्चया का कार्य करती है। यह ध्वनि आश्रित अवस्था का कार्य करती है। अर्थात् जवान चित्त इस ध्वनि पर निर्भर होते हैं, जिसके बिना ये जवान चित्त कभी उत्पन्न नहीं हो सकते। अतः यह पुरेजात निस्सया पच्चया या पूर्वजनन आश्रित अवस्था है।

चूँकि सद्दा या ध्वनि उसी समय उत्पन्न होती है जब वत्थ जैसे सोता वत्थु या सोता पसादा रूप और हदय वत्थु उत्पन्न होते हैं, नाम धम्म (जावना चित्त और अन्य मनो विन्नान चित्त) और रूप धम्म के इस संबंध को वत्थारम्मना शुद्धजता निस्स्य पकाया या आधार वस्तु उपस्थिति पर निर्भर स्थिति कहा जाता है।

मृत्यु से ठीक पहले अंतिम हदय वत्थु उत्पन्न होता है। यह चुति चित्त या मरणासन्न चेतना से 16 क्षण पहले उत्पन्न होता है। अतः जब हदय वत्थु 17 क्षण पुराना होता है, यानी जब चुति चित्त उत्पन्न होता है, तब हदय वत्थु और चुति चित्त दोनों एक साथ समाप्त हो जाते हैं।

यदि अंतिम वस्तु के रूप में पंच अरम्मना है तो यह अरम्मना या वस्तु जावना सीतास और अन्य मनो विन्नना चित्ता के लिए प्योरजटा निस्साया पकाया के रूप में काम करेगी। चूँकि यह अरम्मना या वस्तु हदय वत्थु के साथ उत्पन्न होती है और प्योरजटा निस्साया पकाय के रूप में कार्य करती है, जावना चित्तस और अन्य मनो विन्नान सीट्टस के नाम धम्म और रूपा धम्म हडया वत्थू और अरम्मना के बीच का यह संबंध, जो पंच अरम्मना होने पर एक रूप भी है, को वत्थारम्मन प्योरजटा निस्साय पचाया या आधार वस्तु उपस्थिति पर निर्भर स्थिति कहा जाता है।

अध्याय 13 - उपनिषय पच्चयो
या निर्णायक समर्थन की स्थिति
उपनिस्साय पकायो ति- पूरिमा पुरिमा कुसल धम्म पच्चिमानं पच्चिमानं कुसलनं धम्मनं उपनिस्साय पचायेन पकायो।

उपनिषय पच्चयो या निर्णायक समर्थन की स्थिति में, पुरिमा कुसला धम्म जैसे धर्म होते हैं, जिनका अर्थ है लाभकारी धर्मों का त्याग करना। जब ऐसे धर्म अपने बाद आने वाले धर्मों का त्याग करते हैं, तो उसे पच्चिमानं धम्मनं कहा जाता है, जिसका अर्थ है धर्म के बाद आने वाला धर्म। यदि पूर्वोक्त धर्म कुसला धर्म हैं, तो बाद के धर्म भी कुसला धर्म होंगे।

उपरोक्त कुशल धर्म, आगामी कुशल धर्म के लिए उपनिषय पच्चय या निर्णायक आधार का कार्य करता है। उपरोक्त धर्म पच्चय धर्म है, जो सहायक धर्म, कारण धर्म या कारण धर्म है, और आगामी धर्म पच्चयप्पन्न धर्म है, जो सहायक धर्म, परिस्थितिजन्य धर्म या परिणामी धर्म है। उपरोक्त कुशल धर्म और आगामी कुशल धर्म के बीच के संबंध को उपनिषय पच्चय या निर्णायक आधार कहा जाता है।

इस प्रकार का समर्थन प्रथम और द्वितीय, द्वितीय और तृतीय, तृतीय और चतुर्थ, चतुर्थ और पंचम, पंचम और षष्ठम तथा षष्ठम और षष्ठम कुशल जवान चित्तों या संपूर्ण मानसिक आवेगी चेतना के संगम पर सीखा जा सकता है। यह कामवाचार धर्म में कुशल धम्म में निहित है। यह रूपकुशल या अरूपकुशल में निहित नहीं है क्योंकि उनमें ध्यान अवस्था होती है। कुशल जवान चित्तों में, दो कुशल चित्तों के बीच निर्णायक समर्थन की स्थिति होती है।

पुरिमा पूरिमा कुसल धम्म पच्छिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं केसंचि उपनिस्साया पकायेना पचायो।

ऐसे कई उदाहरण हैं जब कुशल धर्मों का विकास अच्छे कर्म, लाभकारी कर्म या पुण्य कर्म के रूप में होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि आरंभ लाभकारी कर्मों से होता है। यह तब देखा जा सकता है जब हम दूसरों को दान देते हैं। दान देते समय हम प्रसन्न होते हैं और ईमानदारी से दूसरों के लिए अच्छा कार्य करते हैं।

लेकिन कभी-कभी उन पुण्य कर्मों के दौरान या उनके आस-पास ऐसे विचार उत्पन्न हो जाते हैं जो कुशल धर्म के अनुरूप नहीं होते और अंततः अकुशल धर्म की ओर ले जाते हैं। जब शुरुआत अच्छी हो लेकिन अंत बुरा हो। ऐसा कभी-कभी होता है और पहले किए गए पुण्य कर्म या कुशल धर्म बाद में होने वाले अकुशल कर्मों के लिए निर्णायक आधार या उपनिषय पच्चय का काम करते हैं।

पुरीमा का अर्थ है आगे आना, पहले जाना। यहाँ कुशल धम्म, जैसे अर्पण करना और कुशल चित्त जो अर्पण करते हैं, आगे आने वाले धम्म या पुरीमा धम्म हैं। जब वे आगे आते हैं, तो उनके बाद आने वाले धम्म पच्छिमा धम्म कहलाते हैं। पच्छिमा का अर्थ है पीछे, अंत में आने वाला। यहाँ पच्छिमा धम्म अकुशल धम्म हैं। इसलिए कुशल धम्म किसी न किसी रूप में अकुशल धम्म के लिए उपनिषय पच्छय का काम कर सकते हैं (केसांची)।

यहां स्थिति न तो निकटता की है और न ही समनंतर पच्चय की। अतः यह आवश्यक नहीं है कि पूर्वोक्त कुशल धम्म के तुरंत बाद अकुशल धम्म आए। ऐसा संभव नहीं है। क्योंकि कुशल धम्म और अकुशल धम्म पड़ोसी नहीं हो सकते और वे कभी भी निकटता या निकटता की स्थिति में उत्पन्न नहीं होते।

लेकिन जैसा कि ऊपर बताया गया है, कुशल धर्म किसी न किसी रूप में अकुशल धर्म का समर्थन कर सकता है और ऐसा कभी-कभी होता है। जैसा कि ऊपर दिए गए उदाहरण में, जब अर्पण किया जाता है तो कुशल धर्म मौजूद होता है। लेकिन पुण्य कर्म करने वालों के मन में अपने कर्मों के प्रति अनुचित विचार हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, उनमें अपने कर्मों के प्रति लोभ या आसक्ति विकसित हो सकती है और यह आसक्ति आगे चलकर अन्य अकुशल धर्मों को जन्म दे सकती है।

पुरिमा पूरिमा कुसाला धम्म पच्छिमानं पछिमानं अभ्यक्तानं धमानां उपनिस्साया पकायेन पचायो।

पुरिमा का अर्थ है पूर्व की ओर जाने से पहले। अतः पुरिमा पुरिमा कुसला धम्म का अर्थ है यदि पूर्वोक्त धम्म लाभकारी हों। पच्चिमा का अर्थ है पश्चिम की ओर वापस आना। पच्चिमानम् पच्चिमानम् अभ्याकतनम् धम्मनम् का अर्थ है अनुसरण किए जाने वाले धम्म अभ्याकत धम्म होंगे।

तो उपरोक्त पाली वाक्य का अर्थ है कि यदि पूर्वगामी धम्म संपूर्ण धम्म है तो अगला धम्म अव्यक्त धम्म होगा। कुसल धम्म कुसल चित्त हैं। 8 महाकुसल चित्त, 5 रूपकुसल चित्त, 4 अरुपकुसल चित्त और 4 लोकुत्तरा कुसल चित्त कुल मिलाकर 21 कुसल चित्त हैं। 17 चित्त लोकी कुसल चित्त या सांसारिक स्वस्थ चेतना हैं और 4 चित्त लोकुतारा कुसल चित्त या सुपरमुंडेन संपूर्ण चेतना हैं।

अभ्याकत धर्म वे धर्म हैं जो न तो कुशल हैं और न ही अकुशल। दो धर्म अभ्याकत धर्म हैं: विपाक धर्म (परिणामस्वरूप) और क्रियात्मक धर्म (निष्क्रिय धर्म)। क्योंकि विपाक धर्म परिणामस्वरूप होते हैं, इसलिए उनसे कोई और परिणाम उत्पन्न नहीं होते। अतः विपाक धर्म अभ्याकत धर्म हैं।

क्रिया चित्त वे जवान चित्त या अरहत होते हैं। अरहत किसी भी प्रकार के कुशल या अकुशल कर्म से पूरी तरह मुक्त होते हैं। इसलिए वे किसी भी समय कोई कर्म उत्पन्न नहीं करते। अरहत बनने के बाद से उन्होंने कभी भी कोई अच्छा या बुरा कर्म नहीं किया है। उनके जवान चित्त या मानसिक आवेगी चेतना, जो कर्मों की ओर ले जाती है, केवल कर्म हैं और वे निष्क्रिय हैं। अर्थात् वे किसी भी प्रकार का कर्म नहीं करते। या उन्हें क्रियाशील भी कहा जा सकता है, क्योंकि उनके जवान चित्त केवल उनके कर्मों का निष्पादन करते हैं और कोई कर्म उत्पन्न नहीं करते। अतः सभी क्रिया जवान चित्त अभ्याक्त धर्म हैं। इसी प्रकार गैर-जवान क्रिया चित्त भी अभ्याक्त धर्म हैं।

जब पूर्वगामी धम्म कुसल धम्म है तो निम्नलिखित धम्म अव्यक्त धम्म हो सकता है। उदाहरण संबंध को 7वें जावना चित्त और प्रथम तदारम्मन चित्त के बीच संबंध के मामले में देखा जा सकता है। 7वाँ जवना चित्त कुसल चित्त हो सकता है जब विथि वर कुसल जवना हो। तो पूर्वगामी धम्म कुसल धम्म है। तदारम्मन चित्त सभी अव्यक्त धम्म हैं। क्योंकि 11 तदारम्मन चित्त हैं और वे सभी विपाक चित्त हैं। 3 शांतिराना चित्त अहेतुका विपाक चित्त हैं और 8 महाविपाक चित्त सहेतुका विपाक चित्त हैं। चूँकि ये सभी 11 चित्त विपाक चित्त हैं, ये सभी अव्यक्त धम्म हैं।

सातवां कुशल जवन चित्त पच्चय धम्म है, जो कारण, सहायक या अभिकल्पित धम्म है। पहला तदारम्मन चित्त परिणामी धम्म है, जो पच्चयुप्पन्न, सहायक या अभिकल्पित धम्म है। ये दोनों उपनिषय पच्चय के द्वारा अभिकल्पित होते हैं। अतः कुशल धम्म और अभ्याकत धम्म के बीच के संबंध को उपनिषय पच्चय या अभिनिषय अपच्चय कहा जाता है।

पुरिमा पूरिमा अकुशला धम्म पच्छिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं उपनिस्साया पकायेन पचायो।

जब पूर्वोक्त धर्म (पुरिमा) अकुशल धर्म हो और पश्चात धर्म भी अकुशल हो, तो पश्चात धर्म पूर्वोक्त धर्म पर निर्भर करता है। पूर्वोक्त धर्म पश्चात धर्म कहलाता है।

निम्नलिखित धर्म परिणामी धर्म, समर्थित धर्म, सशर्त धर्म या पाच्युप्पन्न धर्म कहलाता है। पूर्ववर्ती धर्म और अनुवर्ती धर्म के बीच के संबंध को उपनिषय पच्चय या निर्णायक समर्थन शर्त कहा जाता है।

जब जावना या मानसिक आवेग की अवस्था में होते हैं, तो सात क्रमिक चित्त अवस्थाएँ होती हैं और चित्त अवस्था के ठीक बाद वही चित्त अवस्थाएँ आती हैं। कुछ अन्य परिस्थितियाँ भी होती हैं जिनमें अकुशल अवस्थाएँ सहायक होती हैं, भले ही वे अकुशल अवस्थाएँ तुरंत आसपास न हों।

पुरिमा पुरिमा अकुशला धम्म पच्छिमानं पछिमानं कुसलनं धम्मन केसंचि उपनिस्साया पकायेना पचायो।

पूर्वोक्त अकुशल धम्म एक प्रकार से आगामी कुशल धम्म को प्रभावित कर सकता है। यह उपनिषय पच्चय है और चूंकि यह अनंत पच्चय नहीं है, इसलिए इन अकुशल धम्म और कुशल धम्म का एक दूसरे के निकट होना आवश्यक नहीं है। इसका उदाहरण निम्नलिखित मामले में देखा जा सकता है।

उपरोक्त चित्त दोष चित्त या लोभ चित्त हो सकते हैं। लेकिन कुछ समय बाद जब अगले चित्त कुशल चित्त बन जाते हैं, जैसे कि भेंट, तो यह उपनिषय पच्चय हो सकता है। व्यक्ति किसी चीज की अपेक्षा रख सकता है। अपेक्षा के साथ वह किसी को कुछ भेंट कर सकता है। लेकिन जब वह वास्तव में कुछ भेंट करता है, तो वास्तविक कुशल धम्म उत्पन्न हो सकता है। इस स्थिति में, उपरोक्त लोभ अगले कुशल धम्म को निर्धारित करता है।

पुरिमा पुरिमा अकुशला धम्म पच्छिमानं पछिमानं अभ्यकतानं धम्मनं उपनिस्साय पचायेन पचयो। अकुसल धम्म का अनुसरण विपाक चित्त की तरह अभ्यक्त धम्म द्वारा किया जा सकता है, जैसा कि 7वें जावना अकुसल चित्त और प्रथम तदारम्मन चित्त के मामले में है। लेकिन यह अभ्यक्त किरिय धम्म नहीं है। जैसे अरहतों में कोई अकुसाला या कुसल नहीं है, जिनके जवना चित्त सभी किरिया जवना चित्त हैं।

पुरिमा पुरिमा अभ्यक्ता धम्म पच्चिमानं पछिमानं अभ्यक्तानं धम्मनं उपनिस्साय पचायेन पचाययो। अव्यक्त धम्म का अनुसरण अव्यक्त धम्म द्वारा किया जा सकता है। उदाहरण हैं पंचद्वारवज्जन चित्त और पंचविन्नन चित्त और फिर पंचविन्नन चित्त और संपतिच्चन चित्त इत्यादि के बीच।

इसी प्रकार, जब पूर्ववर्ती धर्म अभ्यक धर्म हो, तो अगला धर्म कुशल धर्म हो सकता है, और यह अकुशल धर्म भी हो सकता है। उपनिषय पच्चय या निर्णायक समर्थन की स्थिति को कवर करने वाले धर्मों की एक विस्तृत श्रृंखला है।

utubhojanampi upanissaya paccayena paccayo.

अनुकूल मौसम धर्म के उद्भव के लिए एक अच्छा सहायक होता है और उत्तु धर्म का निर्णायक समर्थन करते हैं। इसी प्रकार आहार या भोजन भी निर्णायक समर्थन की स्थिति के रूप में धर्म का समर्थन करते हैं।

पुग्गलोपि उपनिषय पच्चयेन पच्चयो। उपयुक्त व्यक्ति धर्म की उत्पत्ति के लिए निर्णायक सहायक कारक हो सकते हैं। इसी प्रकार उपयुक्त भवन, वस्त्र, भोजन, औषधि आदि सभी धर्म की उत्पत्ति के लिए निर्णायक सहायक कारक हैं। उपनिषय पच्चय का व्यापक अर्थ है और ये अनंत हैं।

उपनिस्साया पचायो पण तिविधो होति। अरामानुपनिस्सायो, अनन्तरूपनिस्सायो, पकतुपनिस्सायो सेति।

निर्णायक समर्थन की स्थिति या उपनिषय पच्चयो के अंतर्गत 3 उप-स्थितियाँ हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. ārammanupanissaya paccayo or object decisive support condition
2. anantarupanissaya paccayo or proximity decisive support condition
3. pakatupanissaya paccayo or natural decisive support condition

Tattha ārammanameva garukana.m ārammanupanissayo. कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं जिनका अत्यधिक सम्मान किया जाना चाहिए और वे हैं

1. 18 इत्थ निप्पन्न रूप या 18 वांछनीय वातानुकूलित रूप
2. 84 चित्त (2 दोष मूल चित्त या 2 अप्रिय चेतना, 2 मोह मूल चित्त या अज्ञानी चेतना, 1 दुःख कायविन्नान चित्त को छोड़कर; 89 - 5 = 84 चित्त) ये 5 चित्त वांछनीय नहीं हैं और वास्तव में अवांछनीय चेतना हैं।
3. 47 सिटासिका (52 - 5 अर्थात डोसा, इस्सा, मैकचरिया, कुक्कुक्का, मोहा = 47)
4. 1 निब्बाना

ये चार धर्म, आरम्मनाधिपति या वस्तु प्रधान धर्म हैं और ये आरम्मनुपनिस्सय पच्चयो या वस्तु निर्णायक समर्थन स्थिति के रूप में भी कार्य करते हैं।

Anantara niruddhā citta cetasikā dhammā anantarupanissayo.

अरहतों के लुप्त हो रहे चुति चित्त को छोड़कर, 89 चित्तों के अन्य सभी चित्त और उनके 52 सहयोगी नमक्खंड या मानसिक समूह, अगले उत्पन्न होने वाले 89 चित्तों और 52 चेतसिकों के लिए अनंतरूपनिस्साय पच्चयो के रूप में कार्य करते हैं। यही कारण है कि लुप्त हो रही चेतना और अगली उत्पन्न होने वाली चेतना के बीच कोई अंतर नहीं है, वे एक दूसरे के संपर्क में हैं और निकटता से जुड़े हुए हैं।

रागादयो पण धम्म सद्धादयो च सुखा.म दुक्खा.म पुग्गल्लो भोजन.म उत्तु सेनानांच यथा रहम अज्झत्तनचा बहिद्धा च कुसलधि धम्मना.म, कम्म.म विपाकानन्ति च बहुधा होति पकतुपनिस्सयो।

1. राग, दोष, मोह, मान, दिठ्ठी, पट्टाना
   (इंद्रिय सुख, घृणा, अज्ञान, अहंकार, गलत दृष्टिकोण, अपेक्षा, आसक्ति)
2. saddhā, sīla, suta, cāga, panna
   (विश्वास, नैतिक आचरण, ज्ञान, भेंट, बुद्धिमत्ता)

3. कायिका सुख या शारीरिक सुख
4. कायिका दु:ख या शारीरिक दर्द
5. पुग्गला पर निर्भर रहना
6. भोजन या खाने योग्य खाद्य पदार्थ
7. मौसम की उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियाँ
8. उपयुक्त निवास, बिस्तर, स्थान

ये सभी धम्म 21 कुसल धम्म, 12 अकुसल धम्म, 36 विपाक धम्म, 20 किरिय धम्म के अज्झट्टा या आंतरिक और बहिद्ध या बाहरी धम्म के लिए प्राकृतिक निर्णायक समर्थन स्थिति या पकाटुपनिसया पकायो के रूप में काम करते हैं।

21 कुशल धम्म हैं

1. 8 महाकुसला चित्त
2. 5 रूपाकुसल चित्त या 5 रूपा झानस
3. 4 अरूपाकुशल चित्त या 4 अरूप झाना
4. 4 लोकउत्तरा कुसला चित्त या 4 मार्ग चित्त या 4 पथ चेतना

12 अकुसाला धम्म 12 अकुसाला चित्त हैं और वे 8 लोभा चित्त, 2 डोसा चित्त, और 2 मोहा चित्त हैं।

36 विपाक धम्म हैं

1. 7 अहेतुका अकुशलविपाक चित्तस
2. 8 अहेतुका कुसलविपाक चित्तस
3. 8 sahetuka mahavipāka cittas
4. 5 rupavipāka cittas
5. 4 arupavipāka cittas
6. 4 लोकुत्तर विपाक चित्त या 4 फल चित्त या 4 फल चेतना

20 क्रिया धम्म हैं

1. 3 ahetuka kiriya cittas
2. 8 sahetuka mahakiriya cittas
3. 5 rupakiriya cittas
4. 4 arupavipaka cittas

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 14
हटू निंग द्वारा

अध्याय 14 - पुरेजाता पच्चयो
या पूर्व-जन्म की स्थिति
Purejāta paccayo:

पूरेजटा पकायोति चक्खायतनं चक्खुविन्नान धातुया तम सम्पयुत्तकानन्च धम्मणं पूरेजटा पक्केयेन पकायो।

पुरेजात पच्चयो या पूर्वजात अवस्था, रूप धम्म (अचेतन) और नाम धम्म (चेतन) के बीच एक प्रकार का संबंध है। इस प्रकार के संबंध में सहायक धम्म या कारक धम्म या पच्चय धम्म या कारण धम्म, रूप धम्म या अचेतन वस्तुएं हैं।

यहां समर्थित धम्म या बद्ध धम्म या पच्चयुप्पन्न धम्म या परिणामी धम्म नाम धम्म या चेतन तत्व हैं। यहां उदाहरण एक धम्म के उत्पन्न होने से पहले दूसरे धम्म के उत्पन्न होने का है। आइए हम चक्खुविन्नान चित्त या दृष्टि चेतना का उदाहरण लें।

इस चित्त को हमेशा चक्कायतन या चक्कु पसादा रूप पर निर्भर रहना पड़ता है। लेकिन चक्खु पसादा रूप चक्खुविन्नान चित्त के उत्पन्न होने से पहले उत्पन्न होता है।

एक प्राणी या सत्ता भावांग चित्त के प्रवाह में होती है। एक समय रूपा (दृष्टि) का अरम्मन उत्पन्न होता है और उसी समय चक्खु पसदा रूप भी उत्पन्न होता है। परन्तु उस समय चक्खु विन्नन चित्त नहीं होता, क्योंकि भावांग चित्त का प्रवाह होता रहता है। जैसे ही चक्खु पसदा और रूपारम्मन उत्पन्न होते हैं, भावांग चित्त समाप्त हो जाता है और इसे अतीत भावांग चित्त या भूतकाल भावांग चेतना कहा जाता है।

चक्खु पसदा रूप के द्वितीय क्षण में चक्खुविन्नान चित्त उत्पन्न नहीं हो सकता। क्योंकि रूपारम्मन चक्खुविन्नान चित्त को सहारा देने में इतना दुर्बल होता है कि भावनग चित्त अभी भी विद्यमान रहता है। वह भावनग चित्त अतीत भावनग से संदेश प्राप्त करता है कि कुछ आ रहा है। अतः द्वितीय क्षण में चित्त भावनग चित्त होता है जो हिल गया है या पुनर्जीवित हो गया है और भावनग चलन चित्त कहलाता है।

चक्खु पसदा रूप के तीसरे क्षण और रूपारम्मन के तीसरे क्षण में भी भावांग चित्त मौजूद रहता है। लेकिन यह अंतिम क्षण होता है और इसे अवरुद्ध भावांग या भावांगुप्पच्छेद चित्त कहा जाता है। रूपारम्मन, चक्खुविन्नान चित्त के लिए रूपारम्मन के रूप में कार्य करने के लिए तैयार होता है।

लेकिन चूंकि विथी चित्त या चेतन मन चक्खुविन्नान चित्त भावांग चित्त के तुरंत बाद उत्पन्न नहीं हो सकता, क्योंकि अरम्मन का स्वरूप ज्ञात नहीं है। इसका आकलन पंचद्वर अवज्जन चित्त या पंच इंद्रिय-प्रवेश चेतना द्वारा किया जाता है। इस चित्त के बाद ही चक्खु पसदा रूप के पंचवें क्षण में चक्खुविन्नान चित्त उत्पन्न होता है।

तो यहाँ तीन बातें हैं।

1. rūpa arammana (vanno or sightor colour of a form or shape)
2. कक्खु पसादा (नेत्र संवेदनशीलता)
3. चक्खुविन्नान चित्त (नेत्र चेतना)

पहले दो धम्म रूप धम्म हैं और अंतिम धम्म नाम धम्म है। यहां नाम धम्म दोनों रूप धम्म अस्तित्व के 5वें क्षण में उत्पन्न होता है। तो रूप धम्म नाम धम्म से पहले उत्पन्न होता है। और नाम धम्म रूप धम्म के उत्पन्न होने के कुछ देर बाद उत्पन्न होता है।

अतः रूपा जन्म से पूर्व या अविकसित अवस्था में होते हैं। वे सबसे पहले उत्पन्न होते हैं और बाद में उत्पन्न होने वाले चक्खुविन्नन चित्त (नाम धम्म) की स्थिति का समर्थन करते हैं। पच्चय धम्म या अभिधारणकारी धम्म चक्खु पसदा रूपा है और पच्चयुप्पन्नन धम्म या अभिधारणकारी धम्म चक्खुविन्नन चित्त या नेत्र चेतना है।

यह संबंध purejāta paccayo या पूर्व-जन्मजात अवस्था है। यह पहला उदाहरण है। purejāta paccaya या पूर्व-जन्मजात अवस्थाओं के अन्य उदाहरण निम्नलिखित हैं:

1. सोतायतन या कान की संवेदनशीलता (सोटा पसदा रूपा) और सोताविन्नान चित्त या कान की चेतना
2. घनायतन या नाक की संवेदनशीलता (घना पसदा) और घनाविनना चित्त या नाक की चेतना
3. जिव्हायतन या जीभ की संवेदनशीलता (जिव्हा पसादा) और जिव्हाविनन चित्त या जीभ की चेतना
4. कायायतन या देह संवेदनशीलता (काया पसदा) और कायाविन्नान चित्त या देह चेतना
5. रूपायतन या रूप अरम्मन (रूप/आकार/रंग) और चक्खुविन्नन चित्त या नेत्र चेतना
6. सददायतन या सद अरम्मना (ध्वनि) और सोतविन्नान चित्त या कान चेतना
7. गंधायतन या गंध अरम्मन (सूंघना) और घनविन्नान चित्त या नाक चेतना
8. रसायतन या रस अरम्मन (स्वाद) और जीवविन्नन चित्त या जीभ चेतना
9. फोत्थबायतन या फोत्थब्बा अरम्मना (पथवि ठोसता/तेजो तापमान/वायो दबाव) और कायाविन्नान चित्त या शरीर चेतना।

दस आयतन या दस इंद्रिय आधार हैं जो सभी रूप धम्म या अचेतन अवस्थाएं हैं। इनमें से किसी में भी चेतना की क्षमता नहीं होती। इनमें से पांच अरम्मन या विषय के रूप में कार्य करते हैं और अन्य पांच वस्तु या चेतना के उद्भव के आधार के रूप में कार्य करते हैं और इन्हें पसदा रूप या संवेदनशीलता भी कहा जाता है।

5 आयतन जो अरम्मन या वस्तु के रूप में कार्य करते हैं, वे हैं:

1. रूपायतन (रूप/आकार/रंग)
2. सद्दयातना (ध्वनि)
3. गंधयातन (सूंघना)
4. रसायतन (स्वाद)
5. फोत्थबायतन (स्पर्श_पथवी/ठोसता, तेजो/तापमान, वायु/दबाव)।

ये सभी चक्खुविन्नान चित्त (नेत्र चेतना), सोतविन्नान चित्त (कान चेतना), घनविन्नान चित्त (नाक चेतना), जीवविन्नान चित्त (जीभ चेतना) और कायविन्नान चित्त (शरीर चेतना) की पूर्व-अवस्था के रूप में कार्य करते हैं। क्योंकि ये पाँच रूप अपनी-अपनी इंद्रिय चेतना से पहले उत्पन्न होते हैं।

वे 5 आयतन जो इंद्रिय आधार, वस्तु या चेतना के आधार के रूप में कार्य करते हैं, वे हैं:

1. चक्खायतन या चक्खु पसादा रूप या आँख की संवेदनशीलता
2. सोतायतन या सोता पसादा रूपा या कान की संवेदनशीलता
3. घनायतन या घन पसादा रूप या नाक की संवेदनशीलता
4. जिव्हायतन या जिव्हा पसदा या जीभ की संवेदनशीलता
5. कायायतन या काया पसदा या शारीरिक संवेदनशीलता।

ये 5 रूप अपनी संबंधित इंद्रिय चेतना या विन्नन चित्त से पहले उत्पन्न होते हैं और वे अपने संबंधित विन्नन चित्त के लिए पूर्वजात अवस्था या पुरेजात पच्चयो के रूप में कार्य करते हैं।

रूपायतनं गंधायतनं रसायतनं फोत्थबायतनं मनोधातुया तम संपयुत्तकानन्च धम्मणं पूरेजता पकायेन पकायो।

रूपायतन (रूप/आकार/रंग/प्रकाश), सद्दायतन (ध्वनि), गंधायतन (गंध), रसायतन (स्वाद), और फोत्थबायतन (स्पर्श_ठोसता, तापमान, दबाव) के ये 5 आयतन मनोधातु और मनोधातु के धम्म के लिए प्रारंभिक स्थिति या प्योरजात पकायो के रूप में भी काम करते हैं।

मनोधातु तीन हैं। इनमें पंचद्वरवज्जन चित्त या पांच इंद्रियों से संबंधित चेतना और दो सम्पचित्चन चित्त या ग्रहणशील चेतना शामिल हैं। ये तीन मनोधातु पांच अरम्मना के बाद उत्पन्न होते हैं। इसलिए पांच अरम्मना इन तीन मनोधातुओं के लिए पूर्वज अवस्था या पुरेजात पच्चय का कार्य करते हैं।

5 विन्नान चित्तों के विपरीत, ये 3 मनोधातु पंच वत्थु पर नहीं हैं, अर्थात् कक्कु पसादा, सोता पसादा, घाना पसादा, जिव्हा पसादा, काया पसादा। इसके बजाय सभी 3 मनोधातु को हदय वत्थु या हृदय आधार पर निर्भर या जमीन या खड़ा होना या घर करना होगा।

अति महंत अरम्मन के संदर्भ में, विथी वर में कुल 14 विथी चित्त होते हैं। विथी वर का अर्थ है चेतनाओं की एक श्रृंखला का चक्र, जिनमें से सभी वर्तमान वस्तुओं के प्रति सचेत होती हैं। विथी चित्त वे चेतनाएँ हैं जो वर्तमान वस्तुओं के प्रति सचेत होती हैं। अति का अर्थ है अत्यंत। महंत का अर्थ है महान। अति महंत का अर्थ है बहुत महान। अरम्मन का अर्थ है मानसिक ध्यान का विषय। अति महंत अरम्मन की इस श्रृंखला में कुल 14 विथी चित्त होते हैं। इस श्रृंखला से ठीक पहले कई भावांग चित्त या जीवन निरंतरता चेतनाएँ होती हैं।

जब भी पंचारम्मन का कोई विषय उत्पन्न होता है, अर्थात् दृष्टि, ध्वनि, गंध, स्वाद, स्पर्श, तो उस विषय पर प्रत्यक्ष चेतना उत्पन्न नहीं हो सकती। क्यों? क्योंकि विषय के उत्पन्न होने के समय मन अभी उसे ग्रहण करने के लिए तैयार नहीं होता, क्योंकि वह पिछले जन्म के मारण-आसन-जावण चित्तों में लीन होता है। तीन भावांग चित्तों के टल जाने के बाद ही प्रथम विथी चित्त उत्पन्न होता है।

रूप एक वस्तु के रूप में और रूप एक वस्तु या बोध के आधार के रूप में, प्रथम भावांग चित्त जिसे अतित भावांग चित्त कहते हैं, से उत्पन्न होते हैं। जब ये दोनों रूप तीन क्षणों के हो जाते हैं, तब अंतिम भावांग चित्त उत्पन्न होता है और विलुप्त हो जाता है। जब रूप अपने जीवन के चौथे क्षण में प्रवेश करते हैं, तब पंचद्वर अवज्जन चित्त (जिसे मनो धातु भी कहते हैं) उत्पन्न होता है और इसके बाद पंच विन्नन चित्त आते हैं।

अतः रूप पंच विन्नना चित्त के लिए पूर्व-प्राणकालीन परिस्थितियाँ प्रदान करते हैं। पंच विन्नना चित्त के बाद दो संपत्चना चित्तों में से एक आता है, जिसे ग्रहणशील चेतना कहा जाता है। ये दोनों मनो धातु हैं। प्रथम विथी चित्त भी मनो धातु है।

इसलिए रूप पंचविन्नन चित्त और मनोधातु के लिए पूर्व-प्राण अवस्था का काम करते हैं, और वे मनोधातु के बाद आने वाले मनोविन्नन धातु के लिए भी सहायक होते हैं। मनोधातु और पूर्व-प्रसिद्ध रूप से संबंधित सभी धर्म आपस में जुड़े हुए हैं। रूप उनके लिए पूर्व-प्राण अवस्था का काम करते हैं।

मनो विन्नन धातुया तम संपयुत्तकाननच धम्मणं किंचि काले पुर्जाता पकायेना पकायो, किंची काले न पुर्जाता पकायेना पकायो।

मनो विन्नन धातुएँ और उनके साथ की अवस्थाएँ मौजूद हैं। ये विथी वर में मनोधातु के बाद की चेतनाएँ हैं। कभी-कभी पूर्व-जन्म की अवस्था होती है और कभी-कभी पूर्व-जन्म की अवस्था नहीं होती।

चवत्थुनि पवत्तियं सत्तन्नं विन्नाधातुनं, पंचराम्मननि च पंचविन्नाविथिया शुद्धजात वसनेति एकाधव रूपं नमस्सा पकायो होति।

चवत्तुनि = च वत्थु + नि. वत्थु एक आधार है. वत्थु आधार हैं। चा का अर्थ है छह. चवत्थु का अर्थ है 6 आधार। चवत्तुनि का अर्थ है 6 आधारों पर।

सत्तन्नम का अर्थ है सात होना और विन्नाना धातुनम का अर्थ है चेतना के तत्व। सत्तन्नम विन्नानाधातु का अर्थ है 7 विन्नाना धातु या 7 चेतना तत्व।

ये 7 विन्नाना धातुएँ हैं

1. चक्खुविन्नाना धातु या नेत्र चेतना तत्व
2. sotavinnāna dhātu or ear consciousness element
3. घानाविन्नाना धातु या नाक चेतना तत्व
4. jivhāvinnāna dhātu or tongue consciousness element
5. कायविन्नाना धातु या शरीर चेतना तत्व
6. मनो धातु या मन तत्व
7. mano vinnāna dhātu or mind consciousness elements.

पहली पाँच चेतनाएँ इतनी विशिष्ट होती हैं कि वे अपने-अपने विषय के प्रति विशेष रूप से सचेत होती हैं। इसलिए इन्हें चेतना तत्व या विन्नाना धातु कहा जाता है। अंतिम चेतना मनोविन्नाना धातु है और ये सभी चेतनाएँ मन से उत्पन्न होती हैं और हृदय आधार पर निर्भर करती हैं। ये पूर्व की चेतनाओं द्वारा संसाधित अपने विशिष्ट विषय के प्रति विशेष रूप से सचेत होती हैं।

इन छह प्रकार के विन्नान धातु या चेतना तत्वों के विपरीत, तीन चेतनाएँ ऐसी हैं जो पंच विन्नान चित्त या मनो विन्नान धातु नहीं हैं। ये हैं पंच द्वारवज्जन चित्त या पाँच इंद्रियों को ग्रहण करने वाली चेतना और दो सम्पातिचना चित्त या दो ग्रहणशील चेतनाएँ। अन्य चेतनाओं के विपरीत, ये तीन चित्त केवल अपना कार्य करते हैं और किसी विशिष्ट वस्तु के प्रति पूर्णतः सचेत नहीं हो सकते। इसलिए, क्योंकि वे केवल अपना कार्य करते हैं, उन्हें मनो धातु कहा जाता है। उनमें कोई विन्नान तत्व नहीं होता।

पावत्ति का अर्थ है घटित होना, विद्यमान होना, स्थापित होना। चवत्तुनी पावत्तियम का अर्थ है छह आधारों के माध्यम से स्थापित होना, घटित होना या उत्पन्न होना। इस पच्चयो या स्थिति में, इस स्थिति को पूर्व-जन्मा अवस्था कहा जाता है और यह छह आधारों के माध्यम से होती है तथा यह ऊपर वर्णित सात विन्नान धातुओं का समर्थन करती है या उन्हें प्रभावित करती है।

Ca का अर्थ है और फिर। अतः 6 आधार 7 विन्नाना धातु को पूर्व-जन्म स्थिति के साथ शर्त बनाते हैं और फिर पंचारम्मनानि च पंचविन्नानावीथिया या 5 वस्तुएँ 5-चेतना प्रक्रिया को शर्त बनाती हैं। इस दूसरे भाग का अर्थ है कि 5 वस्तुएँ हैं, अर्थात् रूप अरम्मना या दृष्टि, सद्दारम्मना या ध्वनि, गंधरममन या गंध, रसरममन या स्वाद और फोत्थब्बरम्मना या स्पर्श, और ये पंचविन्नाना विथी चित्तों के लिए शर्त के रूप में कार्य करती हैं।

वसेनेति का अर्थ है 'के माध्यम से'। एकधा व का अर्थ है 'केवल एक ही मार्ग', 'एकल साधन'।

Rūpam namassa paccayo hoti का अर्थ है रूप या अचेतन अवस्था, नाम या चेतन अवस्था।

इसलिए केवल एक ही पच्चयो है जो रूपा स्थिति नामा को परिभाषित करता है और वह पच्चयो या स्थिति पुरेजाता पच्चयो या पूर्व-जन्म स्थिति है।

वहाँ 2 शुद्धजाता पकाया हैं। वे वट्ठु पूर्जाता पकायो और अरम्मना पूर्जाता पकायो हैं।

Vatthu purejāta paccaya are 6 vatthus.

1. चक्कुवत्थु ; यह रूप उसी समय उत्पन्न होता है जब रूप अरम्मना या रूप आकार प्रकाश उत्पन्न होता है। यह चक्खुविन्नन चित्त की स्थिति बनाता है। लेकिन यह चक्कुविन्नन चित्त से पहले उत्पन्न होता है। तो यह वत्थु शुद्धजात पकाया या बेस प्रीनेसेंट स्थिति के रूप में कार्य करता है।

2. सोतावत्थु ; यह रूप उसी समय उत्पन्न होता है जब साद्दा या ध्वनि उत्पन्न होती है। यह सोताविन्नान चित्त की स्थिति बनाता है। लेकिन यह सोताविन्नान चित्त से पहले उत्पन्न होता है।

3. घनवत्थु ; यह रूप घनविन्नान चित्त से पहले उत्पन्न होता है लेकिन यह घनविन्नान चित्त की स्थिति बनाता है। इसलिए इस स्थिति को प्योरजटा या प्रीनेसेंट स्थिति कहा जाता है।

4. जीववत्थु ; यह रूप पहले उत्पन्न होता है और स्थितियां बाद में जीवविन्नन चित्त उत्पन्न होती हैं और इस स्थिति को वत्थु शुद्धजात पकायो या बेस प्रीनेसेंट स्थिति कहा जाता है।

5. कायवत्थु; यह रूप पहले उत्पन्न होता है और बाद में उत्पन्न होने वाली स्थितियों को कायविन्नान चित्त कहा जाता है और इस स्थिति को पूर्व-जन्म स्थिति कहा जाता है।

6. हृदयवत्थु ;

पतिसंधि में, यानी जीवन के प्रारंभ होते ही, हृदय आधार उत्पन्न होता है। यह रूप बाद में उत्पन्न होने वाले मनो विन्नाना धातु को प्रभावित करता है।

पावत्ति अवस्था में, यानी जीवन में जब रूप और नाम का निरंतर उद्भव होता है और चेतना की प्रक्रिया में, या विथि वार अवस्था में, या जीवन के निरंतर प्रवाह में, नाम या चेतना और उनके सहयोगी विद्यमान होते हैं। ये सभी मूल तत्व से बद्ध होते हैं, क्योंकि मूल तत्व शुद्धिजात पच्चया होता है।

वत्तु पुरेजात पच्चया या आधारभूत पूर्व-जन्मजात अवस्था में 6 आधार या 6 वातस होते हैं जो 7 विन्नान धातुओं को प्रभावित करते हैं। आँख, कान, नाक, जीभ, शरीर के 5 वातस या 5 इंद्रिय आधार अपनी-अपनी इंद्रिय चेतना को प्रभावित करते हैं।

लेकिन हृदय या हडया वात इन पांच इंद्रिय आधारों से थोड़ा अलग व्यवहार करता है।

जीवन की शुरुआत होते ही हृदय आधार या हृदय तत्व उत्पन्न होता है। यह रूप अंतिम रूप से कुति चित्त या मरणासन्न चेतना से 17 क्षण पहले उत्पन्न होता है और कुति चित्त के साथ ही इसका भी अंत हो जाता है। जब तक जीवित रहता है, हृदय आधार या हृदय तत्व बाद में उत्पन्न होने वाली चेतना के लिए पूर्व-जन्मा अवस्था के रूप में कार्य करता है, जिसे बाद में उत्पन्न होने वाली अवस्था (वत् पुरेजात) कहा जाता है।

पंच स्वरभूमि में, या उन लोकों में जहाँ सभी पाँच खंध विद्यमान होते हैं, हृदय आधार सभी मानसिक तत्वों का केंद्र होता है, सिवाय दस पंच विन्नान चित्तों के। दस इंद्रिय चेतनाएँ पंच आधार पर स्थित होती हैं, अर्थात् आँख, कान, नाक, जीभ और शरीर।

एक अन्य पुरेजात पच्चयो अरम्मन पुरेजात पच्चयो है। इस अवस्था को कर्म पूर्व-जन्म अवस्था कहा जाता है। पंच अरम्मन पाँच प्रकार के होते हैं और वे उस धर्म से पहले उत्पन्न होते हैं जिस पर वे आधारित होते हैं। रूप और नाम के बीच इस संबंध को प्रकट करने वाले अनेक उदाहरण हैं।

पंच विन्नाना विथिस हैं। इन्हें पंच द्वार विथिस भी कहा जा सकता है।

विथियाँ चेतना की ऐसी श्रृंखलाएँ हैं जो एक निश्चित क्रम में प्रकट होती हैं और उत्पन्न होते समय कभी कुछ चूकती नहीं हैं। यानी वे बिल्कुल सही क्रम में उत्पन्न होती हैं और इसमें कभी कोई गड़बड़ी नहीं होती।

देखने, सुनने, सूंघने, चखने या छूने के लिए चेतना की एक प्रारंभिक अवस्था का होना आवश्यक है। यही पहला विथी वर है। चेतना की मात्रा के आधार पर विथी को नाम दिए जाते हैं।

1. अति महंत अरम्मना विथि वर या तदारम्मन विथि वर
2. महंत अरम्मना विथि वर या जावना विथि वर
3. परिता अरम्मना विथि वर या वोत्थब्बाना विथि वर
4. अति परित्ता अरम्मना विथि वर या मोघ विथि वर

महंत का अर्थ है महान. अति का अर्थ है बहुत अधिक या अत्यधिक। परित्त का अर्थ है छोटा थोड़ा हीन। अति महंत अरम्मना विथि वर में 14 चेतनाएं हैं, महंत अरम्मना विथि वर में 12 चेतनाएं हैं, परित्ता अरम्मना में 6 चेतनाएं हैं और अति महंत अरम्मना वीथि वारा में 0 या कोई वीथि चित्त नहीं हैं। अंतिम वीथी वर को मोघा वीथी वर कहा जाता है। मोघा का अर्थ है खाली व्यर्थ बेकार। इसमें कोई विथि चित्त नहीं है और यह विथि चित्त से खाली या शून्य है। लेकिन केवल भावांग चित्त हैं और केवल 2 भावांग कलना चित्त हैं।

इन सभी शृंखलाओं में एक वस्तु उत्पन्न होती है। वह वस्तु उसी वीथि वर में बाद में उत्पन्न होने वाली चेतना के लिए प्रारंभिक स्थिति के रूप में कार्य करती है। तो ये सभी 5 अरम्मना अरम्मना शुद्धजात पक्कया या वस्तु पूर्ववर्ती स्थिति हैं। इस संबंध में संस्कारित धम्म रूप हैं और संस्कारित धम्म सभी नाम धम्म हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 15
हटू निंग द्वारा

अध्याय 15 - पच्चजाता पकायो
या प्रसवोत्तर स्थिति
पच्चजाता पचायोति_ पच्चजाता चित्त चेतसिका धामा शुद्धजातस्स इमास्सा कायस्सा पच्चाजाता पकायेना पचायो।

पच्छा का अर्थ है बाद में पीछे की ओर आना। पच्छिमा का अर्थ है पश्चिम की ओर पीछे जाना। जाति का अर्थ है उत्पन्न होना। पच्छाजात का अर्थ है बाद में जन्म लेना या बाद में उत्पन्न होना।

पच्छाजात चित्त चेतसिका धम्म का अर्थ है चित्तों और चेतसिकाओं का धम्म जो बाद में उत्पन्न होते हैं।

पुरेजातस्स का अर्थ है जन्म से पूर्व का धर्म, या जन्म से पूर्व का धर्म, या उत्पत्ति से पूर्व का धर्म। इमास्स का अर्थ है यह। इमास्स कायस्स का अर्थ है यह शरीर, यह संयोजन, यह रूप।

इस पच्छाजात पच्चया या जन्मोत्तर अवस्था में, अभिकल्पित धर्म सभी नाम धर्म होते हैं। वे चित्त और चेतसिका होते हैं। अभिकल्पित धर्म सभी रूप होते हैं।

पंचवकार भूमि में या उन लोकों में जहाँ सभी पाँच खंध विद्यमान हैं, नाम धम्म मौजूद होते हैं जो रूप धम्म को जन्मोत्तर अवस्था से प्रभावित कर सकते हैं। इन नाम धम्मों में चार अरूप विपाक चित्त शामिल नहीं हैं। क्योंकि अरूप लोकों में कोई रूप नहीं होता। उदाहरण के लिए, अरूप ब्रह्म भूमि में जन्मोत्तर अवस्था नहीं होती।

इस नवजात अवस्था या पच्चाजात पच्चया की स्थिति में, अभिकारक धम्म हैं

1. कुल 89 चित्तों में से 85 चित्त (4 अरूप विपाक चित्तों को छोड़कर)
2. 52 cetasikas.

और बद्ध धम्म वे रूप हैं जो पतिसंधि चित्त और अन्य चित्तों की उत्पत्ति के समय उत्पन्न होते हैं और जब ये रूप अपनी तिथि काल में होते हैं। इन रूपों में शामिल हैं:

1. ekaja kāya rūpa
2. dvija kāya rūpa
3. tija kāya rūpa
4. catuja kāya rūpa

एकजा का अर्थ है एक कारण से उत्पन्न रूप, द्विज का अर्थ है दो कारणों से उत्पन्न रूप, तिज का अर्थ है तीन कारणों से उत्पन्न रूप और चतुज का अर्थ है चार कारणों से उत्पन्न रूप।

रूपा के उत्पन्न होने के 4 कारण हैं

1. कम्मा
2. चित्त
3. उट्ठु
4. āhāra

ग्यारह एकज रूप हैं। ये सभी केवल कर्म के कारण (नौ रूपों के लिए) या केवल चित्त के कारण (दो रूपों के लिए) उत्पन्न होते हैं। यानी इन नौ रूप धम्मों या दो रूप धम्मों के उत्पन्न होने में किसी अन्य कारण का योगदान नहीं हो सकता। नौ एकज काय रूप सभी कर्मज काय रूप हैं।

1. चक्खुप्पासाद या आंखों की संवेदनशीलता

2. सोतप्पसाद या कान की संवेदनशीलता
3. घनप्पसाद या नाक की संवेदनशीलता
4. जिहप्पसाद या जीभ की संवेदनशीलता
5. कायप्पसाद या शारीरिक संवेदनशीलता
6. पुरिसत्त भाव रूप या पुरुष संकाय
7. इत्थत्ता भाव रूपा या महिला संकाय
8. हदया रूपा या हृदय आधार
9. जीवित रूप या जीवन शक्ति

एक अन्य एकज रूप चित्तज रूप है। ये केवल चित्त के कारण उत्पन्न होते हैं। ये काय विनत्ति रूप और वाचि विनत्ति रूप हैं। काय विनत्ति रूप हावभाव है और वाचि विनत्ति रूप प्राणियों का मौखिक हावभाव, वाणी या आवाज है।

केवल एक ही द्विज रूप है और वह है ध्वनि। ध्वनि चित्त (जैसे आवाज) या उतु (जैसे तापमान में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली प्राकृतिक ध्वनि) के कारण उत्पन्न हो सकती है।

तिजा रूप तीन लहुतादि रूप हैं और ये आहार, चित्त या उतु के कारण उत्पन्न होते हैं। ये कर्म के कारण उत्पन्न नहीं होते। ये तीन रूप हैं रूप लहुता (रूप का हल्कापन), रूप मुदुता (रूप की ढलाईशीलता) और रूप कम्मन्नता (रूप की कार्यक्षमता)।

चतुज रूप नौ होते हैं, जिनमें से आठ अविनिभोग रूप या अविभाज्य रूप तथा एक परिच्छेद रूप या आकाश रूप हैं। आठ अविभाज्य रूप ये हैं:

1. पथवी
2. तेजो
3. वायो
4. एपो
5. वन्ना
6. गंधा
7. रासा
8. āhāra rūpa or oja

रूप पहले उत्पन्न होता है और बाद में उत्पन्न होता है नाम धम्म स्थिति, पहले से ही उत्पन्न रूप धम्म के साथ नवजात अवस्था या पच्चाजता पकायो।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 16
हटू निंग द्वारा

अध्याय 16 - आसेवना पच्चया
या पुनरावृत्ति की स्थिति
Āsevana paccayoti

पुरिमा पुरिमा कुसल धम्म पछिमानं पछिमानं कुसलनं धम्मनं असेवना पकायेन पकायो।

पुरिमा पुरिमा अकुशला धम्म पछिमानं पछिमानं अकुशलानं धम्मनं असेवना पकायेन पकायो।

पुरिमा पूरिमा किरियाब्यकाता धमा पच्चिमानं पच्चिमानं किरियाब्यकातानं धम्मनं असेवना पकायेन पकायो।

In asevana paccayo or repeatition condition_

जब पूर्वगामी (पुरिमा) धम्म कुसल धम्म (संपूर्ण धम्म) हैं तो निम्नलिखित धम्म (पच्चिमानम्) भी कुसल धम्म हैं। पूर्वगामी धम्म कंडीशनिंग धम्म या पकाया धम्म या सहायक धम्म या कारण धम्म के रूप में कार्य करते हैं और निम्नलिखित धम्म पचयुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म या समर्थित धम्म या वातानुकूलित धम्म हैं।

पूर्ववर्ती धर्म और अनुवर्ती धर्म के बीच के संबंध को आसेवन पच्चय या पुनरावृत्ति की स्थिति कहा जाता है। क्योंकि दोनों धर्म बिल्कुल समान हैं। लेकिन पूर्ववर्ती धर्म अनुवर्ती धर्म का समर्थन करता है, इसलिए अनुवर्ती धर्म पूर्ववर्ती धर्म की तुलना में कहीं अधिक शक्तिशाली होते हैं।

जब पूर्ववर्ती धर्म अकुशल होते हैं तो अगला धर्म भी अकुशल धर्म होगा और संबंध असेवन पच्चयो होता है, और जब पूर्ववर्ती धर्म क्रियाभ्याक धर्म होते हैं तो अगला धर्म भी क्रियाभ्याक धर्म होगा।

इसके उदाहरण विथी वर जवान चित्त में देखे जा सकते हैं। लेकिन कुछ अपवाद भी हैं, जैसे कि सभी जवान चित्तों में असेवन पच्चय संबंध नहीं होता।

असेवन पच्चया में गैर-समावेशी धम्म हैं

ए. धम्म को नियंत्रित करने के लिए नहीं हैं

1. अंतिम जवाना चित्त;

ऐसा इसलिए है क्योंकि अंतिम जवान चित्त अगले चित्त को प्रभावित नहीं कर सकता, जो पुनरावृत्ति की स्थिति में अब जवान चित्त नहीं रह जाता है।

2. magga javana citta ;

इसका कारण यह है कि मग्गा चित्त और उसके बाद आने वाला चित्त एक समान नहीं होते। मग्गा चित्त लोकउत्तरा कुशल चित्त होता है और इसके बाद हमेशा लोकउत्तरा फल चित्त आता है। इसलिए यह पुनरावृत्ति की स्थिति नहीं है।

3. फला जवाना चित्त ;

फल प्राप्ति या फल समापत्ति की स्थिति में फल चित्तों की एक श्रृंखला हो सकती है। लेकिन यह क्रम आसेवन पच्चयो या पुनरावृत्ति की स्थिति नहीं है, बल्कि विपाक पच्चयो नामक एक अन्य स्थिति है।

इसलिए 4 मग्गा चित्त, 4 फल चित्त और अंतिम जवान चित्त, कुल मिलाकर 9 जवान चित्त, असेवन पच्चया के रूप में कार्य नहीं करते। अतः 55 जवान चित्तों में से 9 को हटाने पर 46 जवान चित्त शेष बचते हैं, जो पुनरावृत्ति की शर्त के साथ निम्नलिखित जवान चित्तों के कार्य में आ सकते हैं। इस शर्त में इन 46 चित्तों के साथ आने वाले 52 चेतसिक भी शामिल हैं।

बी. असेवन पच्चया या पुनरावृत्ति की शर्त से बद्ध धम्म नहीं

1. पहला जवाना चित्त

ऐसा इसलिए है क्योंकि चित्त भिन्न होंगे और पुनरावृत्ति की स्थिति यहां काम नहीं आएगी।

2. phala javana cittas

इसका कारण यह है कि मैग्गा सीतास असेवना पकाया से फला जवना सीतास के साथ कंडीशन नहीं होता है।

अतः 55 जवान चित्तों में से 4 फल चित्तों को बाहर रखा गया है और केवल 51 जवान चित्त और उनके साथ आने वाले 52 चेतसिका ही असेवन पच्चया में सशर्त धम्म हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 17
हटू निंग द्वारा

अध्याय 17 - कम्मा पच्चयो
या कम्मा की स्थिति
Kamma paccayoti

कुसल कुसलम कम्म विपकाणं खंडनं कत्त च रूपणं कम्म पकायेन पकायो।

चेताना संपयुत्तकाणं धम्मणं तम समुत्थानांच रूपाणं कम्म पकायेन पकायो।

कुशल का अर्थ है लाभकारी कर्म, और ये लाभकारी कर्म विपाकानम खन्धानम या लाभकारी कर्मों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले समुच्चयों को प्रभावित करते हैं या उनका समर्थन करते हैं। ये परिणाम चार विपाक नमक्खंड हैं, अर्थात्

1. वेदना खण्ड या भावना समुच्चय
2. सन्ना खंड या धारणा समुच्चय
3. संखारा खंड या गठन समुच्चय
4. विन्नाना खन्ध या चेतना समूह।

तो सभी दर्द (दुक्ख वेदना), सभी मानसिक दर्द (दोमानस्सा वेदना), सभी वांछनीय स्पर्श (सुख वेदना), सभी वांछनीय मानसिक भावना (सोमनस्सा वेदना) और सभी अस्थिर भावनाएँ जो दुक्ख नहीं हैं, दोमानस्सा नहीं, सुखा नहीं, सोमनस्सा नहीं (उपेक्ख वेदना) सभी पक्कयुप्पन्ना धम्म या परिणामी धम्म या वातानुकूलित धम्म या समर्थित हैं कुसाला या संपूर्ण कृत्यों का धम्म।

क्योंकि ये सभी परिणामी धर्म हैं, इसलिए इन सभी का विपाक धर्म से संबंध है। इन चार विपाक नामक्खन्धों से संबंधित भौतिक विषय भी हैं, जिन्हें कतत्ता रूप कहा जाता है, और ये भी भूतकाल के लाभकारी कर्मों या कुशल कर्मों से प्रभावित होते हैं।

यह बात अकुशल या अस्वास्थ्यकर कार्यों पर भी लागू होती है और ये कार्य अकुशल कर्म बन जाते हैं और बाद में अकुशल विपाक नमक्खंडों का कारण बनते हैं।

किसी भी प्रकार की चेतना या चित्त में चेतना, चेतसिका या इच्छाशक्ति विद्यमान होती है और जब चेतना होती है, तो वह चेतना चित्त के संबंधित धम्म और अन्य चेतसिकाओं और चित्तज या चेतना से उत्पन्न रूप को प्रभावित करती है।

कर्म पच्चया में, पूर्व चेतना और वर्तमान चेतना ही अभिकारक धर्म हैं। जबकि पूर्व चेतनाएँ अपने सम्पायुत्त धर्म या संबंधित धर्म के अनुसार कुशल या अकुशल हो जाती हैं, वर्तमान चेतना को सहज कर्म कहा जाता है और यह चित्तज रूप या कर्म अवस्था वाले चेतनाजनित रूपों का समर्थन करती है।

सहजता चेतन सहजतानं नामरूपणं, नानाक्खनिका चेतना कम्माभिनिब्बत्तनं नामरूपणं कम्म वसेना नामम नामरूपणं पकायो होति।

कुल 89 चित्त हैं। इन 89 चित्तों में से प्रत्येक के साथ चेतना एक संगत चेतसिका के रूप में मौजूद है। यह चेतना चेतसिका इन सभी 89 चित्तों और 52 चेतसिकाओं में से चेतना चेतसिका को अलग करने के बाद प्राप्त होने वाली अन्य 51 चेतसिकाओं के लिए आधारभूत धम्म का कार्य करती है।

इन 89 चित्तों और उनसे संबंधित चेतसिकाओं में पाया जाने वाला पच्चया धम्म या कारण धम्म या सहायक धम्म या कंडीशनिंग धम्म, चेतना चेतसका कहलाता है।

इस प्रकार के संबंध में पचयुप्पन्न धम्म या परिणामी धम्म या समर्थित धम्म या सशर्त धम्म अन्य सभी 51 चेतसिक और 89 चित्त हैं।

इन धर्मों के बीच के संबंध को कर्म परिच्छेद या कर्म परिच्छेद कहा जाता है। और इस कर्म परिच्छेद को सहज कर्म परिच्छेद कहा जाता है क्योंकि अभिकारक धर्म, परिणामी धर्म के साथ ही उत्पन्न होता है। फिर भी, अन्य कर्म परिच्छेद भी होते हैं।

अतीत में, जब अच्छे या बुरे कर्म किए जाते थे, तब विभिन्न चेतनाएँ उत्पन्न होती थीं। इन कर्मों के फलस्वरूप चेतनाएँ उत्पन्न होती थीं। कुशल कर्मों में 19 सार्वभौमिक शुभ चेतनाएँ होती हैं, जो इस प्रकार हैं:

1. श्रद्धा या विश्वास (आस्था)
2. सती या सचेतनता
3. हीरी या नैतिक शर्म
4. ओट्टाप्पा या नैतिक भय

5. अलोभा या अनासक्ति
6. adosa or non aversion
7. tatramajjhattata या संतुलन
8. काया पासद्धि या मानसिक शांति
9. चित्त पसद्धि या मन की शांति
10. काया लाहुता या मानसिक हल्कापन
11. चित्त लहुता या मन की हल्कापन
12. काया मुदुता या मानसिक मोल्डेबिलिटी
13. चित्त मुदुता या मन की ढलाईशीलता
14. काया कामनाता या मानसिक कार्यशीलता
15. चित्त कम्मन्नता या मन की कार्यशीलता
16. काया पगुन्नता या मानसिक प्रवीणता
17. चित्त पगुणत या मन की दक्षता
18. कायुजुकाटा या मानसिक शुद्धता
19. चित्तुजुकाता या मन की सत्यता

अकुशल कर्मों या अशुभ कर्मों में 14 अकुशल चेतसिकाएँ होती हैं और वे इस प्रकार हैं:

1. मोह या अज्ञान]
2. अंतिरिका या निर्लज्जता
3. अनोत्ताप्पा या निर्भीकता
4. उद्दच्च या अपंगता
5. लोभ या आसक्ति
6. माना या अभिमान
7. गलत दृष्टिकोण
8. डोसा या अरुचि
9. ईर्ष्या या जलन
10. मच्छरिया या कंजूसी
11. कुक्कुक्का या चिंता
12. थिना या आलस्य
13. मिद्धा या सुस्ती
14. vicikiccha या संदेह

19 चेतसिका कुसल चेतना के साथ काम करते हैं और वे सभी नानकखानिका कुसल कम्म बन जाते हैं। 14 चेतसिका अकुसल चेताना के साथ काम करते हैं और वे सभी नानकखानिका अकुसल कम्म बन जाते हैं। कुल मिलाकर ये 33 (19 + 14) केतना के साथ मिलकर उनके वातानुकूलित धम्म के लिए नानकखानिका कम्म के रूप में काम करते हैं।

उनके वातानुकूलित धम्म हैं विपाक छत्तिम्स नमकखंड या 36 विपाक चित्त, पतिसंधि कम्मज रूप या नवजात कम्म से जन्मे रूप या जन्म के समय रूप, आसन सत्त कम्मज रूप या असन्नसत्ता ब्रह्मा के रूप और पावत्ती कम्मज रूप या वर्तमान कम्म से जन्मे रूप।

नाना का अर्थ है अनेक रूपों में, विभिन्न रूपों में, विविध रूपों में। खाना का अर्थ है क्षण और खानिका का अर्थ है क्षण से संबंधित या क्षण लेना। नानाखानिका कर्म वे कर्म हैं जो अतीत में किए गए थे और जिनका प्रभाव किसी भी क्षण, अलग-अलग समय अवधि में या विभिन्न अवसरों पर उत्पन्न हो सकता है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 18
हटू निंग द्वारा

अध्याय 18 - विपाका पच्चयो
या विपाक स्थिति या पके हुए परिणाम की स्थिति
विपाक पकायोति विपाका कटारो खंड अरूपिनो अन्नमन्नम विपाक पकायेना पकायो।

विपाका पच्चयो या विपाका अवस्था या पकी हुई अवस्था में चार विपाका नमक्खंड या चार मानसिक समूह होते हैं, अर्थात्

1. वेदना खण्ड या भावना समुच्चय
2. सन्ना खंड या धारणा समुच्चय
3. संखारा खंड या गठन समुच्चय
4. विन्नाना खंडा या चेतना समूह।

ये चार समुच्चय या नाम खंड एक दूसरे के लिए और साथ ही संबंधित चित्तज रूप या चेतना से उत्पन्न रूप के लिए विपाक स्थिति या विपाक पच्चयो के रूप में कार्य करते हैं, सिवाय दो विनत्ती रूपों के, अर्थात् काया विनत्ती और वाचि विनत्ती रूप।

हटू निंग द्वारा

अध्याय 19 - आहारा पच्चयो
या पोषण की स्थिति
Āhāra paccayoti

कबाल्लिकारो अहारो इमास्सा कायस्सा आहार पकायेना पकायो। अरूपिनो आहार संपयुत्तकाणं धम्मणं तम समुत्थानांच रूपाणं आहार पकायेना पकायो।

कबालिनकारा का अर्थ है किसी भी प्रकार के भोजन में निहित भौतिक भोजन या पोषक तत्व। यह आहार रूप या ओज है। आठ अविभाज्य रूप हैं जिन्हें सामूहिक रूप से अविनिभोग रूप कहा जाता है। यह मूल रूप कालप है और सभी कालपों में समाहित है।

कोई भी भौतिक भोजन शरीर के लिए आहार पच्चयो का काम करता है। मानव शरीर में कई रूप होते हैं जैसे पथवी, तेजो, वायो और अपो आदि। ये रूप चार मूल तत्वों द्वारा समर्थित होते हैं और इनके कारण भी होते हैं। भौतिक भोजन, ओज या आहार इनमें से एक कारण है।

तीन अरूप आहार या तीन गैर-भौतिक पोषक तत्व हैं। वे हैं:

1. फासा आहार या संपर्क पोषक तत्व
2. मनोसंचेतना आहार या इच्छा पोषक तत्व
3. विन्ना आहार या चेतना पोषक तत्व

फस्सा या संपर्क चेतसिका का प्रमुख घटक है जो चित्त को वस्तु या अरम्मन से पोषित करता है। फस्सा या संपर्क के बिना चेतना का अस्तित्व नहीं हो सकता। इस प्रकार फस्सा या संपर्क नाम धम्म का पोषण है और इसे नाम आहार या अरूप आहार के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि यह चेतना या चित्त और अन्य संबंधित चेतसिकाओं को अरम्मन प्रदान करता है।

अतीत में कर्म किए जाने पर 29 चेतना-चेतसिकाएँ उत्पन्न हुई थीं। ये चेतनाएँ कर्म बन जाती हैं और भविष्य में इनके फल उत्पन्न करने की क्षमता रखती हैं। ये 29 चेतनाएँ हैं:

1. एल2 अकुसाला सीतास में 12 अकुसाला सीताना या सीताना
2. 8 महाकुशल चित्त में 8 कुसल सीताना या सीताना
3. 5 रूपाकुसल चित्त में 5 रूपा सीताना या सीताना
4. 4 अरूपाकुसल चित्त में 4 अरूप सीताना या सीताना

जब ये 29 चेतना आहार मौजूद होते हैं, तो वे नाम धम्म को पोषण प्रदान कर सकते हैं। चेतना किसी भी चित्त में भी समाहित होती है और वहाँ यह सहज आहार पच्चय या पोषण की स्थिति के रूप में कार्य करती है।

एक तीसरा नाम आहार या तीसरा रूप आहार या चौथा आहार है। यह विन्नान आहार है। यह चेतना है। यहाँ यह भावांग चित्त या जीवन को निरंतर बनाए रखने वाली चेतना है।

कुछ मामलों में, भौतिक शरीर को सहारा देने के लिए आहार शेष नहीं रह जाता और प्राणी मृत्यु की ओर अग्रसर होता है। लेकिन जब तक विन्नाना आहार शेष रहता है, तब तक प्राणी को कुछ और समय तक जीवित रहना पड़ता है, जब तक कि मृत्यु से ठीक पहले अंतिम चेतना जागृत न हो जाए।

अध्याय 20 - इंद्रिय पच्चयो
या संकाय की स्थिति
इंद्रिया पच्चयोति

चक्कुन्द्रियं चक्खु विन्नधातुया तम संपयुत्तकाणंच धम्मणं इंद्रिय पचायेन पचयो।

इंद्रिय पच्चयोति का अर्थ है इंद्रिय पच्चयो इति, यानी यह इंद्रिय पच्चयो है, या यह इंद्रिय अवस्था है। चक्खुन्द्रिय, यानी नेत्र शक्ति, चक्खुविन्नान धातु, यानी नेत्र चेतना तत्व और उससे संबंधित धर्म के लिए अवस्था का कार्य करती है। चक्खुविन्नान धातु, यानी नेत्र चेतना तत्व में सात संबंधित धर्म होते हैं।

वे हैं चरण या संपर्क, वेदना या भावना, चेतना या इच्छा, सन्ना या धारणा, एकगता या एक बिंदु, जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन, और मानसिकारा या ध्यान, चक्खुविन्नन चित्त या चक्कुविन्ना धातु से जुड़े 7 धम्म हैं। वे एक साथ उठते हैं और आंख या चक्खु पसादा रूप या चक्कुंद्रिय इन धम्म के लिए संकाय स्थिति के रूप में कार्य करता है।

कंडीशनिंग धम्म या सहायक धम्म या कारण धम्म या पकाया धम्म चक्खु पसादा रूप है और इसके परिणामी धम्म या समर्थित धम्म या वातानुकूलित धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म हैं

1. cakkhu vinnāna citta
2. चक्खु सम्पहस्सा या नेत्र संपर्क
3. चक्खु सम्फस्सज वेदना या आंखों के संपर्क से उत्पन्न भावना
4. चक्खु संसेंताना या आँख पर इच्छाशक्ति
5. सन्ना या धारणा
6. रूपारम्मन या दृश्य वस्तु के प्रति एकाग्रता या एकाग्रता
7. जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन
8. मनसिकारा या ध्यान

रूप (चक्खु पसदा रूप) और नाम (चक्खुविन्नान चित्त और इसके साथ ऊपर उल्लिखित 7 चेतसिक) के बीच के संबंध को इंद्रिय पच्चयो या संकाय स्थिति कहा जाता है।

वैसे ही

2. सोतिन्द्रियम या सोता इंद्रिया या कान का संकाय सोताविन्नान धातु और उसके सहयोगियों के लिए संकाय स्थिति के रूप में कार्य करता है।

3. घनिन्द्रियम् या घन इन्द्रिय या नाक का संकाय घनविन्न धातु और उसके सहयोगियों के लिए संकाय स्थिति के रूप में कार्य करता है।

4. जिविन्द्रियम या जिव्ह इंद्रिय या जीभ की शक्ति, जिव्हविन्नान धातु और उसके सहयोगियों के लिए एक शक्ति स्थिति के रूप में कार्य करती है।

5. कायिन्द्रियम या काया इंद्रिय या शरीर की शक्ति कायवीनाना धातु और उसके सहयोगियों के लिए शक्ति स्थिति के रूप में कार्य करती है।

रूपजीवितिन्द्रियं कटत्ता रूपाणं इन्द्रिय पकायेन पकायो।

रूप जीवित 28 परमत्थ रूपों में से एक है। इन 28 परमत्थ रूपों की व्याख्या पट्टाना धम्म के पूर्ववर्ती पृष्ठों में की गई है।

काटा का अर्थ है किया हुआ। कटात्ता का अर्थ है जो किया जा चुका है। कटात्ता रूप का अर्थ है वे रूप जो अतीत में किए गए कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। अतः कटात्ता रूप विपाक चित्त के भौतिक समतुल्य हैं। इन कटात्ता रूपों में रूपजीवित रूप, रूप कलाप या

भौतिक समुच्चय में मौजूद अन्य सभी सह-अस्तित्व वाले रूपों जैसे पथवी, तेजो, वायो, आपो और अन्य सभी रूपों के लिए आधारभूत तत्व का कार्य करता है।

अरूपिनो इंद्रिय संपयुत्तकाणं धम्मणं तम् समुत्थानांच रूपाणं इंद्रिय पकायेन पकायो।

अरुपिनो इंद्रिया का अर्थ है गैर-भौतिक क्षमताएं। संपयुत्तकाणं धम्मणं का अर्थ है संबद्ध धम्म। धम्म के इस सेट में सेवारत धम्म अरूप इंद्रिय या नाम इंद्रिय या गैर भौतिक संकाय और उनसे संबंधित नाम धम्म हैं।

तम समुत्थाननच रूप का अर्थ है उन धम्म द्वारा उत्पन्न या उत्पन्न हुआ रूप। ये चित्तज रूप या चेतना से जन्मे रूप हैं और इन रूपों को इंद्रिय के नाम धम्म या नाम इंद्रिय धम्म पर निर्भर रहना पड़ता है।

नाम इंद्रिय हैं

1. मानिन्द्रिय (चेतना या चित्त)
2. जीवितिन्द्रिय (नाम जीवित या नाम जीवन या मानसिक जीवन)
3. satindriya or sati cetasika
4. सद्धिन्द्रिय या सद्ध चेतसिका
5. वीर्यइंद्रिय या वीर्य चेतसिका
6. समदिन्रिया या एकगगाटा सिटासिका
7. पन्निन्द्रिया या पन्ना चेतसिका
8. सोमनसिन्द्रिय या सोमनस्सा वेदना चेतसिका
9. डोमानासिन्द्रिया या डोमानासा वेदना सिटासिका
10. सुखिन्द्रिय या सुख वेदना चेतसिका
11. दुक्खिन्द्रिय या दुक्ख वेदना चेतसिका
12. उपेखिन्द्रिय या उपेक्ख वेदना चेतसिका

ये नाम धम्म और उनसे संबंधित नाम धम्म उनकी चेतना के जन्म या चित्तज रूप के लिए संकाय स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

इंद्रिय पकाया 3 प्रकार के होते हैं।

1. purejātindriya paccaya or prenasent faculty condition
2. रूपजीवितिन्द्रिय पच्चया या भौतिक जीवन संकाय की स्थिति
3. सहजतिन्द्रिय पच्चया या संवेदनशील संकाय स्थिति।

पूर्वजातिन्द्रिय पच्चया अवस्था में, अभिकल्पित धम्म पाँच पसदा रूप हैं, अर्थात् आँख, कान, नाक, जीभ और शरीर, और अभिकल्पित धम्म पंच विन्नाना चित्त और उनके सहयोगी हैं।

रूपजीवितेन्द्रिय पचाया या भौतिक जीवन संकाय स्थिति में कंडीशनिंग धम्म 28 परमार्थ धम्म का जीवित रूप है। वातानुकूलित धम्म हैं पतिसंधि कम्मज रूप या कम्म से जन्मे पुनर्जन्म रूप, असन्नी कम्मज रूप या असन्नसत्ता ब्रह्मा के कम्म से जन्मे रूप, और पावत्ती कम्मज रूप या जीवन क्रम कम्म से जन्मे रूप।

यह थोड़ा जटिल है। पतिसंधि में, यानी जैसे ही एक नए जीवन का आरंभ होता है, रूप उत्पन्न होते हैं और इन सभी रूपों की सेवा जीवित रूप द्वारा रूपजीवितिन्द्रिय पच्चया या भौतिक जीवन शक्ति की स्थिति के साथ की जाती है।

असन्निसत्त चेतनाहीन और अबोधशील प्राणी हैं। परन्तु वे सभी प्राणी हैं और उनका रूप सजीव है। उनके लगभग सभी रूप कर्मज रूप हैं और इन रूपों की सेवा सजीव रूप द्वारा रूपजीवितेंद्रिय पच्चय से की जाती है।

पावत्ती कम्मज रूप या जीवन पथ कर्म से जन्मे रूप हैं। उदाहरण हम अभी देख रहे हैं। जब हम देखते हैं तो चक्खुविन्नन चित्त उत्पन्न होते हैं। इस चक्कुविन्नन चित्त को कक्खु वत्थू या चक्कु पसादा द्वारा कक्खुंद्रिया के रूप में परोसा जाता है। वह चक्कुंद्रिय, चक्खु दसक रूप कल्प में से एक रूप है और वह कल्प सभी रूपजीविता द्वारा संकाय शर्त के रूप में परोसा जाता है। तो सभी पावत्ती कामज रूप को रूपजीवित रूप द्वारा रूपजीवितंद्रिय पकाया के रूप में परोसा जाता है।

नाम इंद्रिय हैं. जैसा कि ऊपर वर्णित है, वे 12 हैं। वे हैं मन या चित्त, जीवितिन्द्रिय चेतसिका, 5 वेदना चेतसिका, सद्धा, वीर्य, सती, एकगता और पन्ना। ये सभी नाम इंद्रियां 89 चेतना या 89 चित्त, 52 सीतासिका या 52 मानसिक कारकों और संबंधित चित्तज रूप या

चेतना से जन्मे रूप और पतिसंधि कम्मज रूप या पुनर्जन्म कम्म से जन्मे रूप के लिए सहजेंद्रिय पचाय या कॉन्सेंट फैकल्टी स्थिति के रूप में काम करते हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 21
हटू निंग द्वारा

अध्याय 21 - झाना पच्चयो
या झान अवस्था या अवशोषण अवस्था
Jhāna paccayoti

झनंगानि झन संपयुत्तकाणं धम्मणं तम समुत्थाननच रूपाणं झण पकायेन पकायो।

झानंगानी का अर्थ है झानंगा या झान अंग या झान के अंग या झान कारक। यहाँ झान कारक या झानंगा अपने संबंधित नाम धम्म और सह-उत्पन्न चित्तज रूपों या चेतना से उत्पन्न रूप के लिए झान पच्चय या झान अवस्था के रूप में कार्य करते हैं।

पाँच झानंग या पाँच झान कारक हैं और वे सभी नाम धम्म और चेतसिका धम्म हैं। ये पाँच झान कारक हैं:

1. विटाक्का या प्रारंभिक आवेदन
2. विचारा या निरंतर अनुप्रयोग
3. पीटी या परमानंद
4. सुखा या सुखा वेदना
5. एकग्गता या एकाग्रता

ये झना पकाया के रूप में कंडीशनिंग धम्म हैं। उनका वातानुकूलित धम्म या धम्म जो इन 5 झन कारकों द्वारा वातानुकूलित है, वे हैं झन चित्त और उनसे जुड़े 35 चेतासिक, सबसे अधिक और सह-उत्पन्न होने वाले चित्तज रूप या झन चेतना से जन्मे रूप जैसे इरिया या मुद्रा के काया विनत्ती रूप।

इन ध्यान कारकों द्वारा किसी भी मुद्रा को ध्यान पच्चय या ध्यान अवस्था के रूप में बनाए रखा जा सकता है। अतः ध्यान में लीन प्राणी लंबे समय तक बैठ, खड़ा या लेट सकता है, जब तक वह ध्यान की अवस्था में रहता है। इस प्रकार नाम धम्म और ध्यान कारक नाम धम्म और रूप धम्म को ध्यान पच्चय या ध्यान अवस्था से जोड़ते हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 22
हटू निंग द्वारा

अध्याय 22 - मग्गा पक्कायो
या पथ की स्थिति
Magga paccayoti_

मग्गंगनि मग्गा संपयुत्तकाणं धम्मणं तम् समुत्थाननच रूपाणं मग्गा पकायेना पकायो।

मग्गा पकायो यह है. मग्गंग या मग्गा के अंग या मग्गा के अंग या पथ चेतना के भाग हैं। ये सभी 8 धम्म चैतसिक धम्म हैं। ये 8 मग्गंग या मग्गा कारक या पथ कारक हैं

1. samma ditthi or pannindriya cetasika of path consciousness
2. सम्मा संकप्पा या मग्गा विटक्का सीतासिका या पथ चेतना का प्रारंभिक अनुप्रयोग

ये उपर्युक्त 2 चेतसिकाएं पन्ना मगगंग या पथ कारकों का ज्ञान समूह हैं।

1. samma vāca or samma vaca cetasika or vaci ducarita virati cetasika or right speech of path consciousness
2. सम्मा कम्मंता या काया दुकारिता विरति चेतसिका या पथ चेतना की सही क्रिया
3. samma ajiva or micchā jiva viratī cetasika or right livelihood of path consciousness

उपरोक्त तीनों चेतसिकाएं सीला मगंगस या नैतिक आचरण के पथ कारकों का समूह हैं।

1. सम्मा वायामा या विरिया चेतसिका या पथ चेतना का सही प्रयास
2. सम्मा सती या सती चेतसिका या पथ चेतना की सही जागरूकता
3. सम्मा समाधि या एकग्गता चेतसिका या पथ चेतना की सही एकाग्रता

ये उपर्युक्त 3 चेतसिकाएं समाधि मगंग या शांति के पथ कारकों का समूह हैं।

ये 8 पथ कारक, मग्गा पच्चया या मग्गा चित्त या पथ चेतना और उनसे जुड़े 36 चेतसिकाओं के नाम धम्म से लेकर चित्तज रूप या पथ चेतना से उत्पन्न रूपों तक, जिनमें इरिय या मुद्रा के कायविनत्ती रूप भी शामिल हैं, के लिए पथ स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 23
हटू निंग द्वारा

अध्याय 23 - सम्पायुत्ता पकायो
या एसोसिएशन की स्थिति
संपायुत्त पच्चयोति

कत्तारो खंडा अरूपिनो अन्नमन्नम संपायुत्त पकायेना पचायो।

संपायुत्त पच्चयो या सहभागिता की स्थिति यह है। चट्टारो का अर्थ है चार। खंधा का अर्थ है समुच्चय। चट्टारो खंधा का अर्थ है 4 समुच्चय। अरूपिनो का अर्थ है गैर-भौतिक या नाम।

4 अरूप खंड या 4 अभौतिक समुच्चय हैं। इन्हें नमकखंडों के नाम से भी जाना जाता है। ये 4 नमकखंड हैं

1. वेदनाकखंड या भावना समुच्चय
2. सन्नक्खन्ध या धारणा समूह
3. शंखरक्खंधा या गठन समुच्चय
4. विन्नानक्खन्ध या चेतना का समूह।

अन्नमन्नम शब्द अन्न + अन्न से मिलकर बना है। इसका अर्थ है एक दूसरे के साथ। अतः अन्नमना का अर्थ है पारस्परिक। ये चारों नमक्खंड एक दूसरे के साथ अन्नमना सम्पायुत्त पच्चया या पारस्परिक संबंध की स्थिति का कार्य करते हैं।

इसका मतलब यह है कि वेदना सन्ना, संखारा और विन्नाना के अन्य 3 नमकखंडों के लिए सहयोगी स्थिति के रूप में कार्य करता है; सन्ना वेदना, संखारा, और विन्नाना के अन्य 3 नमकखंडों के लिए सहयोगी स्थिति के रूप में कार्य करता है; संखारा वेदना, सन्ना और विन्नाना के अन्य 3 नमकखंडों के लिए सहयोगी स्थिति के रूप में कार्य करता है; और विन्ना वेदना, सन्ना और संखारा के अन्य 3 नमकखंडों के लिए सहयोगी स्थिति के रूप में कार्य करता है।

मूल धर्म इन चार नमक्खंडों में से एक है। और अभिकृत धर्म अन्य तीन नमक्खंड हैं। मूल धर्म और अभिकृत धर्म के बीच के संबंध को सम्पायुत्त पच्चयो या सहभागिता कहा जाता है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 24
हटू निंग द्वारा

अध्याय 24 - विप्पयुत्त पच्चयो
या वियोजन की स्थिति
विप्पयुत्त पच्चयोति

रुपिनो धम्म अरुपिनं धम्मणं विप्पयुत्त पकायेन पकायो।

विपयुत्त पचायो या पृथक्करण स्थिति यह है। रूपिनो धम्म का अर्थ है भौतिक पदार्थ या भौतिक धम्म या रूप धम्म। ऐसे रूप हैं जो अरूपिनम धम्म नाम या अरूप धम्म या नाम धम्म के लिए पृथक्करण की स्थिति के रूप में काम करते हैं।

अरुपिनो धम्म रूपिनं धम्मणं विप्पयुत्त पकायेन पकायो।

इसी प्रकार, अरूपिनो धम्म, धम्म, अरूपा या नाम धम्म, रूपीनम धम्मनम या रूपा धम्म या भौतिक धम्म के लिए आधारभूत धम्म, पृथक्करण की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं। रूपा और अरूपा या नाम धम्म एक साथ उत्पन्न होते हैं। लेकिन वे एक दूसरे को स्पर्श नहीं कर सकते। रूपा नामा को स्पर्श नहीं कर सकता और नामा रूपा को स्पर्श नहीं कर सकता, और इसके विपरीत भी।

इन्हें पानी और दूध की तरह मिलाया नहीं जा सकता। ये पत्थर और पानी के मिश्रण के समान हैं। यद्यपि ये एक साथ विद्यमान हैं, फिर भी ये अपने आप में अविभाज्य हैं। अतः प्रत्येक धम्म, यानी जब रूप किसी धम्म को अभिधारण करता है, तो वह रूप नाम धम्म के लिए वियोजन का कार्य करता है और नाम धम्म अभिधारणित धम्म बन जाता है।

जब रूपा धम्म या नाम धम्म, अभिधारणाकारी धम्म बन जाते हैं, तो नाम, रूपा धम्म के लिए वियोजनकारी शर्त के रूप में कार्य करता है और रूपा धम्म अभिधारणकारी धम्म बन जाता है।

विपयुत्त पचयो या वियोग की स्थिति तीन प्रकार की होती है। वे हैं:

1. सहजता विपयुत्त पच्चयो या संकेंद्रित वियोजन स्थिति
2. pacchājāta vipayutta paccayo or postnascent dissociation condition
3. वत्थु शुद्धजात विपयुत्त पैकायो या बेस प्रीनेसेंट डिसोसिएटन स्थिति

1. सहजता विपयुत्त पकाया

पतिसंधि हदय वत्थु 4 पतिसंधि नमकखंड अर्थात् वेदनाखंड, सन्नक्खखंड, शंखखंड और पतिसंधि विन्नकखंड या पतिसंधि चित्त के लिए कंडीशनिंग धम्म के रूप में कार्य करता है। वे दोनों हदय रूप और ये सभी 4 नमकखंड एक साथ उत्पन्न होते हैं और वे एक दूसरे के साथ मिश्रित नहीं होते हैं और वे अलग हो जाते हैं। तो वे सहजता विपयुत्त या चेतना पृथक्करण स्थिति हैं ।

89 चित्तों में से 75 चित्त (पंचविन्नन के 10 विन्नान चित्तों और 4 अरुपविपाक चित्तों को छोड़कर, जिनमें से कोई भी चित्तज रूप या चेतना से उत्पन्न रूप उत्पन्न नहीं करता है) और 52 चेतसिका चित्तज रूप और पतिसंधि कम्मज रूप के लिए सहजता विपयुत्त पच्चय के रूप में कार्य करते हैं।

2. पच्चजाता विपयुत्त पकाया

85 चित्त (4 अरूपविपाक चित्त को बाहर रखा गया है क्योंकि वे चित्तज रूप उत्पन्न नहीं करते हैं) एकज काया, द्विज काया, तिज काया और चतुज काया रूप के लिए पच्छाजात विपयुत्त पच्चया या जन्मोत्तर पृथक्करण स्थिति के रूप में कार्य करता है जब ये रूप अपने थी खान में होते हैं।

एकजा का अर्थ है एक कारण से उत्पन्न, द्विजा का अर्थ है दो कारणों से उत्पन्न, तिजा का अर्थ है तीन कारणों से और चतुजा का अर्थ है चार कारणों से उत्पन्न। रूप 51 अनुखानों या 51 उप-क्षणों या 17 चित्तक्खनाओं या 17 क्षणों तक उत्पन्न होते हैं और बने रहते हैं। रूप की उपादा दुर्बल होती है। लेकिन जब रूप अपने तृतीय खान में पहुँच जाते हैं, तो वे चित्तों या नाम धम्म के साथ अंतःक्रिया कर सकते हैं। जब रूप पहले उत्पन्न होते हैं और 85 चित्त बाद में उत्पन्न होते हैं, तो वे पहले से उत्पन्न रूप को जन्मोत्तर वियोग की स्थिति या पच्छाजात विपयुत्त पच्चया से प्रभावित करते हैं। क्योंकि रूप और नाम आपस में मिश्रित नहीं हो सकते, वे विपयुत्त हैं और क्योंकि 85 चित्त रूप के बाद उत्पन्न होते हैं, वे जन्मोत्तर स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

3. वत्थु शुद्धजात विपयुत्त पकाया

6 वत्थु हैं. वे हैं चक्खु वत्थु, सोता वत्थु, घन वत्थु, जिव्हा वत्थु, काया वत्थु और हदय वत्थु। ये सभी 6 वत्थु रूप 4 अरूपविपाक चित्तों को छोड़कर 7 विन्नों के लिए वत्थु शुद्धजात विपयुत्त पकाय या आधार प्रीनेसेंस पृथक्करण स्थिति के रूप में काम करते हैं क्योंकि ये 4 अरुपविपाक चित्त रूपा के साथ बिल्कुल भी बातचीत नहीं करते हैं। 7 विन्ना चक्खुविन्ना, सोताविन्ना, घनविन्ना, जीवविन्ना, पंचविन्ना चित्त के कायविन्ना और मनोधातु और मनोविन्नाधातु हैं, कुल मिलाकर 7 विन्ना को 6 वत्थु रूप द्वारा वत्थु शुद्धजाता के साथ वातानुकूलित किया जाता है। विपायुत्ता पकाया।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 25
हटू निंग द्वारा

अध्याय 25 - अत्थी पच्चयो

या उपस्थिति की स्थिति
अत्थी पच्चयोटी

कत्तारो खंडा अरूपिनो अन्नमन्नम अत्थि पकायेना पकायो।

चार नामक्खंध होते हैं, जो एक दूसरे के लिए अत्थि पच्चय का काम करते हैं। जब वे एक साथ उत्पन्न होते हैं, तो वे एक दूसरे के लिए सहजतत्थि पच्चय या चेतना की उपस्थिति की स्थिति का काम करते हैं। ये चार नामक्खंध वेदना, सन्ना, संखार और विन्नाना हैं। उदाहरण के लिए, एक दोष चित्त। यह एक क्रोधित चित्त है। वह चित्त विन्नाक्खंध है। चूंकि वह चित्त दोष चित्त है और क्रोधित है, इसलिए उसमें क्रोध की वेदना है और वह वेदनाक्खंध है। घृणाशील मन क्रोधित होने का ज्ञान प्राप्त करता है और वह सन्ना है और वह सन्नाक्खंध है। स्थिति के अनुसार, अन्य चेतसिकाएँ भी होती हैं जैसे चेतना आदि और वे संखारक्खंध हैं। चूंकि वे एक ही समय में एक साथ उत्पन्न होते हैं, इसलिए वे (4 नमक्खंड) एक दूसरे के लिए उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं और यह एक दूसरे के लिए सहजाता अत्ति पच्चया या चेतना उपस्थिति की स्थिति है।

कत्तारो महाभूत अन्नमन्नम अत्थि पकायेन पकायो।

जैसे कि 4 नमकखंड के मामले में ये 4 महाभूत रूप एक दूसरे रूप के लिए अतिथि पकाया के रूप में काम करते हैं। 4 महाभूत रूप हैं और वे पथवि, तेजो, वायो और आपो हैं। प्रत्येक महाभूत रूप अन्य तीन सह-मौजूदा रूप के लिए उपस्थिति शर्त के रूप में कार्य करता है। जैसे ही वे एक साथ उठते हैं, वे सहजता अथि पकाया या एक-दूसरे के प्रति समस्वर उपस्थिति की स्थिति में होते हैं, जैसा कि 4 नमकखंडों के नामा मामले में होता है।

ओक्कंटिक्खाने नाम रूपम अन्नमन्नम अत्थि पकायेना पकायो।

ओक्कंतीखाना = ओकांति + खाना; पुनर्जन्म के समय या पतिसंधि के समय पतिसंधि रूप और पतिसंधि नाम होते हैं। ये हदय वत्थु के 4 पतिसंधि नमकखंड और कट्टा पतिसंधि रूप हैं। प्रत्येक दूसरे के लिए अथि पचायो या उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करता है। जैसे ही वे एक ही समय में उत्पन्न होते हैं, वे एक-दूसरे के लिए सहजता अतिथि पकाया या सहज उपस्थिति की स्थिति के रूप में काम कर रहे होते हैं।

चित्त चेतसिका धम्म चित्त समुत्थानां रूपाणं अत्थि पकायेन पकायो।

चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाएं मौजूद हैं। ये चित्तज रूप या चेतना से उत्पन्न रूप के लिए अत्थि पच्चय का कार्य करती हैं। इस उपस्थिति की स्थिति का अर्थ यह है कि जब उपस्थिति की स्थिति नहीं होती, तो इस उपस्थिति की स्थिति से संबंधित कोई धम्म भी नहीं होता। अतः यदि चित्त और चेतसिकाएं नहीं हैं, तो चित्तज रूप का अस्तित्व ही नहीं होगा।

महाभूत उपादरुपणं अत्थि पकायेन पकायो।

चार महाभूत रूप और चौंतीस उपाद रूप होते हैं। चार महाभूत रूप चौंतीस उपाद रूपों के लिए प्रत्यक्ष सिद्धि या उपस्थिति की स्थिति का कार्य करते हैं। इसका अर्थ यह है कि जब चार महाभूत रूप नहीं होते, तब ये चौंतीस उपाद रूप भी नहीं होते। चार महाभूत रूप इन धर्मों के लिए अभिधारणकारी धर्म हैं और चौंतीस उपाद रूप अभिधारणकारी धर्म हैं। चार महाभूत रूप और चौंतीस उपाद रूपों की व्याख्या रूप खंड में की गई है।

चक्खायतनं चक्खुविन्नान धातुया तम सम्पयुत्तकानन्च धमानां अत्थि पकायेन पकायो।

चक्खायतन या चक्खु पसदा रूप या चक्खु वत्थु, चक्खुविन्नान चित्त और उससे संबंधित 7 चेतसिकों के लिए उपस्थिति की स्थिति या अत्ति पच्चयो का कार्य करता है। इसका अर्थ यह है कि जब चक्खु पसदा रूप नहीं होता है, तब चक्खुविन्नान चित्त और संपर्क, भावना, बोध, संकल्प, एकाग्रता, मानसिक जीवन और ध्यान के 7 चेतसिक भी मौजूद नहीं होते हैं।

वैसे ही

1. सोतायतनम् से सोताविन्नन धातु और सहयोगी
2. घनायतन से घनविन्नान धातु और सहयोगी
3. जीवायतन से जीवविन्नान धातु और सहयोगी
4. काययतन से कायविन्नन धातु और सहयोगी अत्ति पकाया या उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

कंडीशनिंग धम्म आयतन धम्म हैं और कंडीशनिंग धम्म पंचविन्नान धातु और उनसे जुड़े धम्म चेतासिक हैं।

रूपायतनं चक्खुविन्नान धातुया तम संपयुत्तकाणंच धम्मणं अत्थि पकायेन पकायो।

रूपायतन या रूप जो कि वन्नो या रंग या रूप या आकृति है, चक्खुविन्नन चित्त और उससे जुड़े 7 सीतासिकों के लिए अथि पकाया या उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करता है।

वैसे ही

1. सददायतन से सोतविनाना धातु और सहयोगी
2. gandhāyatana to ghanavinnāna dhātu and associates
3. rasāyatana to jivhavinnana dhātu and associates
4. photthabbāyatana to kāyavinnāna dhātu and associates

कंडीशनिंग धम्म हैं पंचायतन रूप यानी रूप या रूप, सद या ध्वनि, गंध या गंध, रस या स्वाद, फोथब्बा या स्पर्श इंद्रिय (पथवी, तेजो, वायो) और कंडीशनिंग धम्म पंचविन्नान चित्त और उनसे जुड़े चेतसिक हैं। कारण धम्म या पकाय धम्म और परिणामी धम्म या पकायुप्पन्ना धम्म के बीच के संबंध को अथि पकाया या उपस्थिति स्थिति कहा जाता है।

पटिच्चसमुप्पादा में पत्थाना धम्म की तरह ऐसा संबंध नहीं दिखाया जाता। पटिच्चसमुप्पादा केवल यह बताता है कि यह कारण है और यह परिणाम है।

रूपायतनं सद्दायतनं गंधायतनं रसायतनं फोत्थबायतनं मनोधातुया तम संपयुत्तकाणंच धम्मणं अत्थि पकायेन पकायो।

कुल पाँच आयतन हैं, जिनमें से सभी रूप धम्म हैं और वे इस प्रकार हैं:

1. रूपायतन या रूपा रूपा या आकार, आकृति, रंग
2. सद्दायतना या ध्वनि
3. गंधायतन या गंध
4. रसायतन या स्वाद
5. फोत्थबायतन या स्पर्श (पथवी, तेजो, वायो)।

ये सभी 7 रूप (4 प्रथम अयातन रूप और पथवी, तेजो, वायो) मनोधातु और उससे जुड़े धम्म के लिए अथि पकायो या उपस्थिति की स्थिति के रूप में काम करते हैं।

मनोधातु हैं

1. पंच द्वार अवज्जन चित्त या 5-इंद्रिय द्वार विज्ञापन चेतना
2. अहेतुका अकुसलविपाक संपतिच्चन चित्त या अकुसलविपाक की चेतना प्राप्त करना
3. अहेतुका कुसलविपाक संपतिच्चन चित्त या कुसलविपाक की चेतना प्राप्त करना

अन्य मनोविन्नान चित्तों के विपरीत, ये 3 चित्त विषय के बारे में पूर्णतः ज्ञात नहीं होते। उदाहरण के लिए, पंचद्वरवज्जन चित्त केवल सूचना देता है और विषय क्या है, यह नहीं जानता। संपत्चना चित्त भी केवल विषय को ग्रहण करते हैं और उसे सन्तिरण चित्तों या अन्वेषी चेतना को हस्तांतरित कर देते हैं, तथा वे विषय को पूर्णतः ज्ञात नहीं होते। इसलिए इन 3 चित्तों को मनोविन्नान चित्त नहीं बल्कि मनोधातु कहा जाता है।

किसी विथी वार या किसी वस्तु के प्रत्यक्ष दर्शन की घटना में 17 चित्तक्खनाएँ होती हैं। पंचायतन या पंचरम्मन उत्पन्न होते ही वे 51 अनुखानों में से 1 उप-क्षण के उपादाखान में विषय के रूप में कार्य नहीं कर सकते। अतः उस प्रथम उप-क्षण अनुखान में विथी चित्त उत्पन्न नहीं हो सकता। इसलिए उस स्थान पर उस समय भावांग चित्त का उत्पन्न होना आवश्यक है। उस चित्त को अतित भावांग चित्त कहते हैं।

भावांग चित्त अत्यंत सूक्ष्म होते हैं और नदी के जल के निरंतर प्रवाह के समान होते हैं। दौड़ते हुए व्यक्ति की तरह, भावांग चित्त चेतना को संकेत देने वाली वस्तु के प्रकट होते ही तुरंत नहीं रुकते। इसके बजाय, व्यक्ति को एक या दो कदम और आगे बढ़ना पड़ता है। अतित भावांग चित्त क्षीण हो जाता है। जब रूप के पहले सत्रहवें भाग के तीसरे अनुखान में से दूसरे में अतित भावांग चित्त प्रकट होता है, तो यह संकेत देता है कि यहाँ एक वस्तु है और आपकी चेतना जागृत होती है। लेकिन यह संकेत अतित भावांग चित्त के साथ ही क्षीण हो जाता है। संकेत प्राप्त होते ही भावांग चित्त का प्रवाह रुक जाता है, लेकिन इसमें दो अतिरिक्त कदम होते हैं।

संकेत प्रवाह को हिला देता है और पहले अतिरिक्त चरण को भावंग चलन चित्त या कंपनशील भावंग चित्त कहा जाता है। इसके बाद अंतिम भावंग चित्त आता है जिसे भावंगुप्पच्छेद चित्त या अवरोधक भावंग चित्त कहा जाता है। ये तीनों भावंग चित्त विथी चित्त नहीं हैं और अभी भी क्रम में नहीं हैं। उस समय 14 चित्तक्खना या 14 क्षण रूप (अरम्मन/वस्तु) के रूप में शेष रह जाते हैं।

प्रथम विथी चित्त पंचद्वरवज्जन चित्त या पंच इंद्रिय-द्वार से संबंधित चेतना है, जिसे मनोधातु कहते हैं। इससे संबंधित दस चेतसिकाएँ हैं: फस्सा (संपर्क), वेदना (भावना), चेतना (संकल्प), सन्ना (बोध), एकाग्ता (एकाग्रचित्तता), जीवंतिन्द्रिय (मानसिक जीवन), मानसिक (ध्यान), वितक्का (प्रारंभिक अनुप्रयोग), विचार (निरंतर अनुप्रयोग) और अधिमोक्खा (निर्णय)। पंचायतन, पंचरम्मन के रूप में कार्य करते हुए, मनोधातु और उससे संबंधित दस चेतसिकाओं के लिए अत्थि पच्चयो या उपस्थिति की स्थिति के रूप में धम्म को अभिव्यक्त करने का कार्य करते हैं।

इस पंचद्वारवज्जन चित्त के बाद पंचविन्नान चित्त आता है और पंचविन्नान चित्त को भी पंचरामण द्वारा अथि पकाया या उपस्थिति की स्थिति के रूप में वातानुकूलित किया जाता है। इसके बाद संपतिच्चन चित्त उत्पन्न होता है। और वे मनोधातु हैं । पंचायतन, पंचरम्मना के रूप में कार्य करते हुए, धम्म को अथि पकाया या संपतिच्चन चित्त की मनोधातु की उपस्थिति की स्थिति के रूप में कंडीशनिंग करने का काम करते हैं। इसका मतलब यह है कि पंचायतन या पंचरम्मना के बिना संपतिच्चन चित्त उत्पन्न होने का कोई कारण नहीं है।

यम रूपं निस्साय मनोधातु च मनोविन्नान धातु च वट्टन्ति, तम रूपम मनोधातुया च मनोविन्नान धातुय च तम सम्पायुत्तकाननच धम्मनम् अत्थि पकायेन पकायो।

इसमें 5 रूप आयतन या 7 रूप हैं जो आराम्मन के रूप में कार्य करते हैं। जब वे उपस्थिति की स्थिति के रूप में सेवा कर रहे होते हैं तो वे मनोधातु (पंचद्वारवज्जन चित्त) और उससे जुड़े 10 सीतासिका, पंचाविनन चित्त और उनसे जुड़े 7 सीतासिका, मनोधातु (संपतिच्चन चित्त) और उसके 10 सहयोगी, और मनोविन्नान धातु (शांतिराना चित्त और 10 या यदि) की सेवा कर रहे होते हैं। सोमनस्सा शांतिराना 11 सीतासिका, वोत्थापना चित्त या मनोद्वारवज्जन चित्त और उसके 11 सहयोगी अर्थात् फस्सा, वेदना, सीताना, सन्ना, एकगगाटा, जीवितिन्द्रिय, मनसिकरा, विटक्का, विचारा, विरिया, और अधिमोक्खा, 29 काम जावना चित्त और उनके सहयोगी, और 11 तदारम्मना Cittas और उनके सहयोगी) उपस्थिति की स्थिति या अत्थी पक्कायो के साथ।

पांच अत्ति पच्चया हैं। वे हैं:

1. sahajāta atthi paccayo
2. purejāta atthi paccayo
3. pacchājāta atthi paccayo
4. āhāra atthi paccayo
5. indriya atthi paccayo

1. sahajātatthi paccayo

इस सिद्धि या स्थिति में ऐसे 3 उदाहरण हैं जिनमें धम्म इस तरह व्यवहार करता है।

2. purejātatthi paccayo

purejātatthi paccayo या prenascence presence condition के 2 उदाहरण हैं।

3. pacchājātatthi paccayo

इस स्थिति में, 4 अरूपविपाक चित्त (जो रूप से संबंधित नहीं हैं) को छोड़कर शेष 85 चित्त शेष रहते हैं। ये 85 चित्त और उनसे संबंधित 52 चेतसिक पूर्व-मौजूद रूपों जैसे पतिसंधि, हदय, वत्थु और हदय, वत्थु (जो चुति चित्त से 17 चित्तक्खना दूर उत्पन्न होते हैं) और जीवन चक्र में उत्पन्न होने वाले अन्य वत्थु रूपों के लिए अभिधारणात्मक धम्म का कार्य करते हैं। ये पच्छाजातथि पच्चयो या जन्मोत्तर उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि नाम धम्म, रूप धम्म से कुछ समय बाद उत्पन्न होते हैं। अतः वे जन्मपूर्व और जन्मपूर्व अवस्था में होते हैं। उनकी उपस्थिति के कारण वे जन्मपूर्व उपस्थिति की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं। इसका अर्थ यह है कि इन स्थितियों के बिना अभिधारणात्मक धम्म उत्पन्न नहीं हो सकते।

4. āhāratthi paccayo

फासा या संपर्क अरम्मना के साथ सभी नाम धम्म को खिलाता है। फ़स्सा के बिना कोई भी नाम धम्म उत्पन्न नहीं हो सकता है और फ़स्सा सभी नाम धम्म के लिए अराहा पकाय के रूप में कार्य करता है।

अतीत में 29 चेतनाएँ हैं जब कुशल या अकुशल धर्म का पालन किया गया था। ये चेतनाएँ नाम धर्म के लिए आहार पच्चय या पोषण की स्थिति का काम करती हैं। इनके बिना आहार नाम धर्म उत्पन्न नहीं हो सकता।

यहाँ विन्नाना आहार हैं। ये विन्नाना, नाम धम्म से जुड़े आहार पच्चय के रूप में कार्य करते हैं और जब ये विन्नाना धम्म नहीं होते हैं, तो उनसे संबंधित धम्म का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

5. indriyatthi paccayo

इस अवस्था में इंद्रियां, अभिशाप धम्म के रूप में विद्यमान होती हैं। वे हैं

1. मानिन्द्रिय या 89 चित्त
2. जीवितिन्द्रिय या मानसिक जीवन (चेतसिका)
3. वेदना चेतसिका (सुखिन्द्रिय, दुक्खिन्द्रिय, सोमनसिन्द्रिय, दोमानसिन्द्रिय, उपेखिन्द्रिय के रूप में)
4. सद्ध चेतसिका सद्धिन्द्रिय के रूप में
5. वीर्य चेतसिक वीर्यइंद्रिय के रूप में
6. sati cetasika as satindriya
7. समाधिन्द्रिय के रूप में एकगता चेतसिका
8. पणिन्द्रिय चेतसिका पणिन्द्रिय के रूप में
9. रूपजीवितिन्द्रिया
10. 5 pasada rūpa as pancindriya

वे उदाहरणों में मौजूद धम्म के अनुसार 89 चित्तों, 52 चेतसिकाओं, चित्तज रूपों या चेतना से उत्पन्न रूप और पतिसंधि कम्मज रूप के लिए कंडीशनिंग धम्म के रूप में कार्य करते हैं।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 26
हटू निंग द्वारा

अध्याय 26 - नत्थी पकायो और विगाटा पकायो
या अनुपस्थिति और गायब होना
नत्थी पच्चायोटी

समानान्तर निरुद्ध चित्त चेतसिका धम्म पतुप्पन्नं चित्त चेतसिकानं धम्मणं नत्थि पकायेन पकायो।

उन्नीस चित्त और उनसे संबंधित पच्चीस चेतसिकाएँ होती हैं। जब एक चित्त अपने संबंधित चेतसिका के साथ नष्ट हो जाता है, तो वे दोनों अस्तित्व में नहीं रहते और इससे अगले चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाओं की उत्पत्ति निर्धारित होती है। चूंकि उन्नीस चित्त हैं, इसलिए प्रत्येक चित्त के नष्ट होने के बाद, विथी वर के अनुसार, बिना किसी रुकावट के अगले चित्त की उत्पत्ति हो जाती है।

उस दिवंगत चित्त की अनुपस्थिति अगले चित्त के उद्भव का कारण बनती है। अभिकारक धम्म अट्ठाईस चित्त और उनसे संबंधित चेतसिकाएँ हैं, और अभिकारक धम्म या समर्थित धम्म या पच्चयुप्पन्न धम्म या परिणामी धम्म भी अट्ठाईस चित्त और उनसे संबंधित 52 चेतसिकाएँ हैं। लेकिन विथी वर के आधार पर, चित्त नियम या चेतना के नियम के अनुसार, किस चित्त के बाद कौन सा चित्त उत्पन्न होना चाहिए, इसका एक निश्चित क्रम होता है।

एक और पच्चया या एक और स्थिति है, जिसका सार लगभग नत्थी पच्चयो या अनुपस्थिति की स्थिति के समान है। लेकिन चूंकि इसके निहितार्थ थोड़े भिन्न हैं और यह एक अलग स्थिति भी है, इसलिए इसका अलग से उल्लेख किया जाना चाहिए। वह पच्चया विगत पच्चया या लुप्त होने की स्थिति है।

Vigata paccayoti

समानान्तर विगता चित्त चेतसिका धम्म पतुप्पन्नं चित्त चेतसिकानं धम्मणं विगत पकायेना पकायो।

विगत का अर्थ है लुप्त होना। विगत पच्चया का शाब्दिक अर्थ है लुप्त होने की अवस्था। यह अवस्था धर्म को उनके अस्तित्व या उपस्थिति से लुप्त होकर उत्पन्न होने में सहायक होती है। इसका अर्थ यह है कि वे पहले विद्यमान थे और अब विद्यमान नहीं हैं, वे लुप्त हो गए हैं। यह लुप्त होना अन्य धर्मों को उत्पन्न होने में सहायता करता है।

उदाहरण हैं

जीवन का पहला चित्त पतिसंधि चित्त या पुनर्जन्म चेतना या सह-चेतना होता है। जब यह अस्तित्व में होता है, तब कोई दूसरा चित्त नहीं होता। लेकिन क्योंकि यह केवल एक क्षण के लिए ही रहता है, इसलिए इसका अंत निश्चित है। यह अंत अगले चित्त के उदय में सहायक होता है। वह अगला चित्त उस जीवन का पहला भावांग चित्त होता है। इसमें अभिधारणा संबंधी धम्म नहीं होता। वह लुप्त हो चुका होता है। उस लुप्त धम्म के लुप्त होने से पतिसंधि चित्त पहले भावांग चित्त के उदय का मार्ग प्रशस्त करता है।

इस प्रक्रिया में प्रयुक्त धर्म पतिसंधि चित्त है और जिस धर्म पर धर्म का प्रभाव है वह प्रथम भावांग चित्त है। इसका अर्थ यह भी है कि पतिसंधि चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाएं प्रथम भावांग चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाओं को प्रभावित करती हैं। यह प्रक्रिया नाम धर्म द्वारा नाम धर्म को प्रभावित करने के लिए है। इस प्रक्रिया में कोई रूप धर्म शामिल नहीं है।

प्रथम भावनगा चित्त के लुप्त होने पर, या किसी भी स्थिति में जब विथी चित्त के उत्पन्न होने की कोई स्थिति न हो, तब भावनगा चित्त का उत्पन्न होना आवश्यक हो जाता है। भावनगा चित्त के लुप्त होने से अगले भावनगा चित्त और उससे संबंधित चेतसिकाओं का उत्पन्न होना अनिवार्य हो जाता है। इस प्रकार कार्य करने वाली स्थिति को विगत पच्चय या लुप्त होने की स्थिति कहा जाता है। सूर्य का प्रकाश लुप्त हो जाने पर सूर्यास्त चंद्रमा को प्रकाशमान होने में सहायक होता है।

जब पूर्व भावांग चित्त नष्ट हो जाता है, तो इस नष्ट होने या लुप्त होने की स्थिति में अगले भावांग चित्त का उदय होता है, यदि विथी चित्त या चुति चित्त के उत्पन्न होने की कोई संभावना नहीं है। यदि अरम्मन उत्पन्न हुआ है, तो पंचद्वरवज्जन चित्त उत्पन्न हो सकता है, या यदि धम्मरम्मन है, तो मनोद्वारवज्जन चित्त उत्पन्न हो सकता है। अवज्जन चित्त के उत्पन्न होने की यह संभावना लुप्त हो चुके पूर्व चित्त की स्थिति के कारण होती है।

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **अध्याय** 27
हटू निंग द्वारा

अध्याय 27 - अविगाता पैकायो
या गैर-लुप्त होने की स्थिति
Avigata paccayoti

कत्तारो खंडा अरूपिनो अन्नमन्नम अविगाता पकायेना पकायो।

अविगाता शब्द 'अ' और 'विगाता' से मिलकर बना है, जहाँ 'अ' का अर्थ है 'नहीं' और 'विगाता' का अर्थ है लुप्त होना। अतः अविगाता का अर्थ है 'अलुप्त न होना'। उदाहरण के लिए, सागर। सागर हमेशा मौजूद है, वह कभी लुप्त नहीं होता, उसका अस्तित्व बना रहता है। इसी 'अलुप्त न होने' के कारण सागर उसमें रहने वाले सभी जीवों का भरण-पोषण करता है।

कत्तारो खंड अरूपिनो हैं या 4 अरूप खंड हैं या 4 नमकखंड हैं। वे हैं वेदनाक्खंधा या अनुभूति समुच्चय, सन्नक्खाखंड या बोध समुच्चय, संखारखंड या गठन समुच्चय, और विन्नानखंड या चेतना समुच्चय।

वे अपने चारों नमक्खंडों में एक दूसरे के लिए अविगता पच्चया के रूप में कार्य करते हैं। जब एक नमक्खंड मौजूद रहता है और लुप्त नहीं होता, तो उसका न लुप्त होना अन्य तीन नमक्खंडों को सहज अविगता पच्चया या निरंतर न लुप्त होने की स्थिति के रूप में सहायता करता है।

चार महाभूता रूप हैं। वे आपस में एक दूसरे के लिए अविगत पच्चायण या अविलुप्त होने की स्थिति का कार्य करते हैं।

ओक्कंटिक्खाने नाम रूपं अन्नमन्नं अविगत पकायेना पकायो।

पतिसंधि पर या जैसे ही एक नया जीवन शुरू होता है, पतिसंधि नाम और रूप उत्पन्न होते हैं। वे 4 विपाक नमकखंड और हदय वत्थु हैं। वे प्रत्येक एक-दूसरे के नाम या रूप के लिए गैर-गायब होने की स्थिति या अविगत पकाय के रूप में कार्य करते हैं। अर्थात हदय वत्थु

रूप 4 विपाक नमकखंडों के लिए अविगत पकाया या गैर-गायब होने की स्थिति के रूप में कार्य करता है और 4 विपाक नमकखंड भी हदय वत्थु के लिए गैर-लुप्त होने की स्थिति के रूप में काम करता है और वे 4 नमकखंडों के बीच एक दूसरे के लिए अविगत पकाया के रूप में भी काम करते हैं।

चित्त चेतसिका धम्म चित्त समुत्थानां रूपणं अविगत पकायेन पकायो।

चित्त और उनसे संबंधित चेतसिकाएँ चित्तज रूप या चेतना से उत्पन्न रूप के लिए आधारभूत धर्म का कार्य करती हैं। इसका अर्थ यह है कि चित्त और चेतसिकाओं के बिना ये चित्तज रूप कभी उत्पन्न नहीं हो सकते। चित्त और चेतसिकाएँ उत्पन्न होती हैं और यद्यपि वे लुप्त नहीं होतीं, फिर भी चित्तज रूप को अविगत पच्चय या अविलुप्त होने की स्थिति से युक्त करती हैं।

महाभूत उपादरूपणं अविगत पकायेन पकायो।

चार महाभूत रूप होते हैं और वे 24 उपाद रूपों के लिए अविगता पच्चया या अविलुप्त होने की शर्त का काम करते हैं। चार महाभूत रूपों के बिना ये 24 उपाद रूप कभी उत्पन्न नहीं हो सकते। चार महाभूत रूप उत्पन्न होते हैं और यद्यपि वे लुप्त नहीं होते, वे 24 उपाद रूपों के लिए अविगता पच्चया या अविलुप्त होने की शर्त का काम करते हैं।

चक्खायतनं चक्खुविन्नान धातुया तम सम्पयुत्तकानन्च धम्मणं अविगत पकायेन पकायो।

चक्खायतनम् या चक्खु पसदा रूप, चक्खुविन्नान चित्त और उससे संबंधित चेतसिका के लिए अविलुप्त न होने के कारण आधारभूत धर्म का कार्य करते हैं। चक्खु पसदा रूप के बिना चक्खुविन्नान चित्त का अस्तित्व ही नहीं होगा। चक्खु पसदा रूप और नाम या चक्खुविन्नान चित्त के बीच इस संबंध को अविगत पच्चया या अविलुप्त होने की स्थिति कहा जाता है। प्रतीत्यसमुप्पाद केवल कारण और परिणाम को प्रकट करते हैं, लेकिन यह नहीं बताते कि कारण और परिणाम आपस में कैसे संबंधित हैं। जबकि पथाना धर्म कारण और परिणाम दोनों को प्रकट करते हैं और एक अतिरिक्त धर्म के रूप में यह भी प्रकट करते हैं कि ये कारण और परिणाम पच्चया से कैसे संबंधित हैं। Cakkha pasada rūpa conditions cakkhuvinnāna citta and its associates with non disappearane condition or avigata paccaya.

वैसे ही

1. सोतायतन से सोतविन्नान धातु
2. ghānayatana to ghāna dhātu
3. jibhāyatana to jivhā dhātu
4. कायायतन से कायविन्ना धातु।

रूपायतनं चक्खुविन्नान धातुया तम सम्पयुत्तकानन्च धम्मणं अविगत पकायेन पकायो।

रूपायतन या रूप रूप या रूप रूप आकार रूप रंग रूप चक्खुविनन धातु और उसके सहयोगियों के लिए कंडीशनिंग धम्म के रूप में कार्य करता है। इस रिश्ते को अविगाता पकाया या गैर गायब होने की स्थिति कहा जाता है।

वैसे ही

1. सद्दायतन से सोतविन्नान धातु
2. गंधायतन से घनविन्न धातु
3. रसायतन से जीवविन्नान धातु
4. फोत्थबायतन से कायविन्नन धातु।

रूपायतनं सद्दायतनं गंधायतनं रसायतनं फोत्थबायतनं मनोधातुया तम संपयुत्तकाणंच धमानां अविगत पकायेन पकायो।

रूपायतन या रूप/आकार, सद्दायतन या ध्वनि, गंधायतन या गंध, रसायतन या स्वाद, फोत्थबायतन या स्पर्श इंद्रिय (पथवी, तेजो, वायो) मनोधातु के लिए गैर-लुप्त होने की स्थिति के रूप में काम करते हैं। मनोधातु 3 हैं. वे पंचद्वारवज्जन चित्त और 2 सम्पतिच्चन चित्त हैं। 5 रूप आयतन 5 पंच अराम्मन होने के कारण मनोधातु या उन 3 चित्त के लिए अविगत पकाया या गैर-गायब होने की स्थिति के रूप में कार्य करते हैं।

यं रूपं निस्साय मनोधातु च मनोविन्नान धातु च वत्तन्ति, तम रूपम मनोधातुया च मनोविन्नान धातु च तम संपयुत्तकाणं धमाणं अविगत पकायेन पकायो।

जब कोई आयतन अरम्मन के रूप में प्रकट होता है, तो चित्तों की एक श्रृंखला क्रमिक रूप से प्रकट होती है, और इन क्रमिक चित्तों को विथी चित्त कहा जाता है। पंचआयतन के अरम्मन के प्रकट होने पर अधिकतम 14 विथी चित्त होते हैं। जब पंचआयतन, जो एक रूप है, विद्यमान और अविनाशी रहता है, तब चित्तों की एक श्रृंखला प्रकट होती है।

1. अतित भावंग चित्त या पूर्व जीवन की निरंतर चेतना
2. भावंगा चल चित्त या स्पंदित जीवन निरंतर चेतना
3. भावंगुप्पच्छेद चित्त या जीवन को निरंतर बनाए रखने वाली चेतना
4. पंच द्वार अवज्जन चित्त या 5-इंद्रिय द्वार विज्ञापन चेतना
5. पंच विन्नान चित्त या 5-इंद्रिय चेतना
6. संपच्चना चित्त या ग्रहणशील चेतना
7. संतिरानबा चित्त या चेतना की जांच
8. वोत्थापना चित्त या चेतना का निर्धारण (मनोद्वारा अवज्जना चित्त द्वारा किया जाता है)
9. जवन चित्त या मानसिक आवेगी चेतना (29 काम जवन चित्तों द्वारा किया गया)
10. javana citta 2
11. javana citta 3
12. javana citta 4
13. javana citta 5
14. javana citta 6
15. javana citta 7
16. तदारम्मन चित्त या चेतना बनाए रखना (8 महाविपाक चित्त और 3 शांतिराना चित्त द्वारा किया गया)
17. tadarammana citta 2.

जब तक रूप (17 चित्तक्खना जीवन) विद्यमान है और यह लुप्त नहीं हो रहा है, तब तक यह इन सभी 14 विथी चित्तों के लिए आधारभूत धर्म का कार्य करता है। 3 भावनगा चित्त वर्तमान अरम्मना से संबंधित नहीं हैं, बल्कि वे अपने स्वयं के विषय से संबंधित हैं, जो उनके लिए वर्तमान विषय है। रूप के अविलुप्त होने से आयतन और अरम्मना इन 14 विथी चित्तों के लिए आधारभूत धर्म का कार्य करते हैं।

रूपा पंचद्वार अवज्जन चित्त की पहली मनोधातु, फिर पंच विन्नान चित्त, फिर संपतिच्छन चित्त की मनोधातु और फिर शांतिराना, वोत्थापना या मनोद्वार अवज्जना चित्त की मनोविन्ना धातु, 29 जावना के लिए अविगत पकाया या गैर-गायब होने की स्थिति के रूप में कार्य करता है। चित्त, और 11 तदारम्मना चित्त।

5 अविगता पकाया हैं। वे हैं

1. सहजताविगत पच्चया या कोनैसेंस गैर-लुप्त होने की स्थिति
2. purejātāvigata paccaya or prenascence non disappearance condition
3. pacchājātāvigata paccaya or post nascence non disappearance condition
4. आहारविगत पकाया या पोषक तत्व गायब न होने की स्थिति
5. इंद्रियाविगत पकाया या संकाय गैर गायब होने की स्थिति।

धर्म उत्पन्न होते हैं और उनके न मिटने से अन्य धर्म भी न मिटते हैं, या यूं कहें कि अविगत पच्चया। सागर हैं और उनके न मिटने से उनमें रहने वाले सभी जीव-जंतुओं के लिए एक शर्त का काम करते हैं।

1. sahajātāvigata paccaya

2. purejātāvigata paccaya or prenascence non disappearance condition

3. pacchājātāvigata paccaya or postnascence non disappearance condition

4. आहारविगत पकाया या पोषक तत्व गायब न होने की स्थिति

5. इंद्रियाविगत पकाया या संकाय गैर गायब होने की स्थिति

टिपिटका >> अभिधम्म पिटक >> पथना >> **हटू निंग द्वारा निष्कर्ष**

निष्कर्ष

जो भी प्राणी सोच रहे हैं, जो भी अनुभव कर रहे हैं, जो भी सांसारिक लोग लिख रहे हैं, कह रहे हैं, बोल रहे हैं, चर्चा कर रहे हैं, उन सब में सार रूप में केवल चार धर्म ही समाहित हैं। इन चार धर्मों से बढ़कर कुछ भी नहीं है। इन चार धर्मों को परम धर्म या अंतिम वास्तविकताएँ कहा जाता है क्योंकि जब इनका अंतिम रूप से अवलोकन किया जाता है, तो विश्लेषण करने पर इन चार वास्तविकताओं में से केवल एक ही वास्तविकता दिखाई देती है।

परमत्थ पाली भाषा का शब्द है। यह परम और अत्थ से मिलकर बना है। अत्थ का अर्थ है सार, आंतरिक अस्तित्व। परम का अर्थ है सर्वोच्च, सर्वोच्च, उत्कृष्ट, सर्वोत्तम। अतः परमत्थ धम्म का अर्थ है सर्वोच्च आंतरिक सार या परम वास्तविकता।

जो कुछ भी हो, जहाँ भी हो और जब भी हो, ये परमार्थ धर्म घटित होते हैं। परन्तु निर्वाण संखत धर्म नहीं है, न ही यह उत्पन्न होता है, न ही नष्ट होता है, और न ही यह घटित होता है। अतः इस संसार में, इस पृथ्वी पर, इन 31 लोकों में जो कुछ भी घटित होता है, वह सब रूप धर्म और नाम धर्म के कारण घटित होता है, इससे अधिक कुछ नहीं।

4 परमार्थ धम्म हैं। वे हैं चित्त, सीतासिका, रूप और निब्बान। चित्त और चेतसिका नाम धम्म हैं और रूप रूप धम्म हैं। नाम धम्म और रूप धम्म संखत धम्म या सशर्त धम्म हैं। निब्बाण असंखत् धम्म है और निब्बान कोई सशर्त धम्म नहीं है। सब्बे संखारा अनिच्चति सभी वातानुकूलित धम्म अनित्य हैं। सब्बे संखारा दुक्खति; सभी वातानुकूलित धम्म दुखदायी और अवांछनीय हैं। चित्त और चैतसिक या नाम धम्म और रूप धम्म संखार धम्म हैं। सभी धम्म जो कि चित्त, चेतसिका, रूप और निब्बान हैं, अनत्ता हैं; sabbe dhammā anattati.

अनात्ता पाली भाषा का शब्द है और यह अना और अत्ता से मिलकर बना है। अना का अर्थ है 'नहीं', 'कुछ नहीं' और अत्ता का अर्थ है 'स्वयं'। अनात्ता का अर्थ है 'अनात्म' या 'अहंकार का अभाव'। अतः कोई भी धर्म 'अनात्म' है। किसी भी धर्म को किसी बाहरी शक्ति द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता, बल्कि धर्म स्वतः घटित होते हैं, अपनी राह पर चलते हैं और कोई भी धर्म को प्रभावित नहीं कर सकता।

जब ये धर्म, नाम और रूप घटित होते हैं, तो वे अकेले नहीं घटित होते। बल्कि वे अन्य धर्मों के साथ परस्पर क्रिया करते हैं और प्रत्येक धर्म दूसरे पर निर्भर करता है, और अन्य धर्म भी स्थिति पर निर्भर करते हैं। बुद्ध के दो उपदेश हैं जो सशर्त संबंध को प्रकट करते हैं। ये हैं प्रतीत्यसमुत्पाद धर्म और पथाना धर्म। प्रतीत्यसमुत्पाद धर्म केवल यह दर्शाता है कि एक धर्म उस धर्म को उत्पन्न करता है और वह धर्म इस धर्म को उत्पन्न करता है। लेकिन प्रतीत्यसमुत्पाद कारण और परिणाम के बीच संबंध को नहीं दर्शाता है।

प्रतीत्यसमुत्पाद धम्म के विपरीत, पट्टाना धम्म धम्म और पट्टाना के बीच सभी सशर्त संबंधों को प्रकट करता है और यह भी दर्शाता है कि वे एक दूसरे से कैसे संबंधित हैं। पट्टाना धम्म को बुद्ध की शिक्षाओं के 7 अभिधम्म ग्रंथों में अंतिम ग्रंथ के रूप में उद्धृत किया गया है और यह अब तक का सबसे गहन, सबसे कठिन और सबसे सारगर्भित धम्म है। यदि धम्म को देखा जा सकता है, तो ये पट्टाना धम्म वास्तव में हमारे दैनिक जीवन में घटित हो रहे हैं।

संक्षेप में, 24 पच्चया या 24 स्थितियाँ हैं जिनके द्वारा धर्म एक दूसरे से संबंधित होते हैं या धर्म अन्य धर्मों को 24 स्थितियों से जोड़ते हैं। सभी 24 पच्चया धर्मों की व्याख्या पत्थाना धर्म के इस धारावाहिक पृष्ठ में की गई है। पत्थाना धर्म के 24 ग्रंथों में अधिक विस्तृत जानकारी दी गई है। ये 24 ग्रंथ प्रत्येक पच्चया के लिए एक ग्रंथ नहीं हैं। 24 ग्रंथ पत्थाना धर्म का विस्तृत विवरण हैं। संक्षेप में, 24 पच्चया या 24 स्थितियाँ हैं, हालाँकि इन 24 स्थितियों के अतिरिक्त कई और उप-स्थितियाँ भी हैं।

24 paccaya या 24 स्थितियाँ हैं

1. hetu paccayo या जड़ स्थिति
2. ārammana paccayo or object condition
3. अधिपति पचायो या प्रबलता स्थिति
4. anantara paccayo or proximity condition
5. samanantara paccayo or contiguity condition
6. सहजता पच्चयो या कोनैसेंस कंडीशन
7. annamanna paccayo or mutuality condition
8. nissaya paccayo or dependence condition
9. उपनिस्साय पच्चयो या निर्णायक समर्थन की स्थिति

10. purejāta paccayo or prenascence condition
11. pacchājāta paccayo or postnasence condition
12. āsevana paccayo or repeatition condition
13. कम्मा पकायो या कम्मा स्थिति
14. vipāka paccayo or vipāka condition or cooked result condition
15. आहार पकायो या पोषण की स्थिति
16. इंद्रिय पच्चयो या संकाय स्थिति
17. झाना पच्चयो या झाना स्थिति या अवशोषण स्थिति
18. मैग्गा पैकायो या पथ स्थिति
19. संपायुत्ता पचायो या एसोसिएशन की स्थिति
20. विप्पयुत्त पच्चयो या वियोग की स्थिति
21. अत्थी पक्कायो या उपस्थिति की स्थिति
22. नत्थि पकायो या अनुपस्थिति की स्थिति
23. विगाटा पैकायो या गायब होने की स्थिति
24. avigata paccayo or non disappearance condition